

OM
THE RAMAYANA
OF
VALMIKI

AYODHYA KANDA

(NORTH-WESTERN RECENSION)
CRITICALLY EDITED FOR THE FIRST TIME
FROM ORIGINAL MSS

BY

PI. RAM LABHAYA M. A.
PROFESSOR OF SANSKRIT KHALSA COLLEGE,
AMRITSAR.



JANUARY 1928.

First Edition
1000 Copies }

{ *Price 7-8-0.*

1000
V BOOK AGENCY

ओम्

दयानन्द महाविद्यालय संस्कृत-ग्रन्थमाला

अनेक विद्वानों की सहायता से

भगवद्दत्त

संस्कृताध्यापक वा अध्यक्ष अनुसन्धान विभाग

दयानन्द महाविद्यालय, लाहौर द्वारा

सम्पादित ।

ग्रन्थाङ्क ७ ।

❀ ओम् ❀

वाल्मीकीय-रामायणम्

अयोध्या-काण्डम्

(पश्चिमोत्तरशाखीयम्)

सम्पादक

पं० रामलभाया एम. ए.

प्रो० खालसा कालेज, अमृतसर ।

So :-

आख्यं सम्बत् १९६०८५३०२८ ।

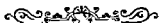
विक्रम सं० १९८४ ।

सन् १९२८ ई० ।

दयानन्दाब्द १०३ ।

प्रथम संस्करण १००० प्रति

मूल्य ७॥) रु०



Printed by Pt MAHAVIR PRASAD

MANAGER VIDYA PRAKASH PRESS, CHANGAR ROAD, LAHORE.

AND PUBLISHED BY

THE RESEARCH DEPARTMENT, D A V. COLLEGE, LAHORE



ग्रन्थमाला के सम्पादक का निवेदन ।

पांच से कुछ अधिक वर्ष हुए जब पं० राम लभाया एम० ए० ने मेरे साथ कुछ दिनों के लिये निवास किया था । उन दिनों परस्पर विचार के अनन्तर हमने निश्चित किया कि पं० राम लभाया दयानन्द कालेज के लिये वाल्मीकीय रामायण की पश्चिमोत्तर शाखा का संपादन करेंगे । उस समय तक इस रामायण का एक भी हस्तलेख हमारे नहीं था ।

मेरी सम्मति से दिसम्बर १९२१ में पं० राम लभाया कैथल गये । परलोकगत लाला रामकृष्ण धकील उन दिनों कैथल में थे । उन के संग्रह से पं० जी रामायण के दो प्राचीन ग्रन्थ लाये । यही रामायण के संशोधन का आरम्भ था । तत्पश्चात् चार वर्षों में पश्चिमोत्तर रामायण के भिन्न २ काण्डों के कोई २०० ग्रन्थ एकत्र कर लिये गये । इन में से पर्याप्त ग्रन्थ प्राचीन संस्कृत लिखित पुस्तकों के एकत्र करने वाले महाशय भजन लाल के परिश्रम से हमारे पास आये हैं । समय २ पर मैंने इन सब का तुलनात्मक दृष्टि से अध्ययन किया है । उस से मे इस परिणाम पर पहुँचा हूँ, कि इस शाखा के यथोचित सम्पादन के लिये कई विद्वानों के भुरि परिश्रम की आवश्यकता है । पं० राम-लभाया ने अपना काम उस समय तक प्राप्त सामग्री द्वारा बड़ी सावधानी से किया था । वे अयोध्याकाण्ड के अतिरिक्त बाल, आरण्य और किष्किन्धा काण्ड के कुछ अंश भी सम्पादन कर गये थे । धन के अत्यन्ताभाव में भी मैंने अयोध्याकाण्ड तथा कथञ्चित् छपवा दिया है । अयोध्याकाण्ड के अन्त में १० अत्यन्तोपयोगी सूचियाँ छापी गई हैं । इनको मैंने अपने निरीक्षण में रिसर्च विभाग के शास्त्री पं० प्रेमनिधि जी से तयार करवाया है । पं० रामलभाया के लालसा कालेज अमृतसर में नियुक्त होने के पीछे पांचवें भाग का मुद्रण पं० प्रेमनिधि जी ने ही कराया है । उन्होंने ने ही पं० रामलभाया की प्रेस कापी शोधि है ।

नई सामग्री की उपस्थिति में मैंने यही उचित समझा है कि अधिक धन एकत्र करके और पूरी सामग्री को काम में लाकर ही आदि काण्ड का प्रकाशन आरम्भ करना चाहिये । यद्यपि रामायण के काम की प्रशंसा प्रो० सिल्वनू जेवी, डा० कीथ, प्रो० हॉपकिन्स आदि बड़े ३ विद्वानों ने की है, परन्तु धन किसी कोने से भी नहीं आया । पञ्जाब गवर्नमेंट तो इस विषय में अत्यन्त ही उदासीन रही है । यद्यपि अपने रिसर्च विभाग में सर जान मैनार्ड के आने पर सहायता की कुछ आशा हुई थी, पर वह सफल नहीं हुई । ऐसी अवस्था में एक ठुक परमात्मा की ही सहायता की आशा है । जब तक वह सहायता किसी निमित्त द्वारा न पहुँचेगी, अगले काण्डों का छापना बन्द ही रहेगा ।

१५ नवम्बर १९२७ }
लाहौर ।

भगवद्भक्त

वाल्मीकीय रामायणम्



ABBREVIATIONS.

N=Nil=(नास्ति)

O=Omission (Psychological),=(त्यक्तम्)

from 2nd. fasciculus onwards. (द्वितीयभागादारम्भ) ।

पू=पूर्वार्ध=(1st. half of a verse).

उ=उत्तरार्ध=(2nd. half of a verse).

व=वङ्गशाखीयं वाल्मीकीय-रामायणम् ।

(Gorresio's Edition).

दा=दाक्षिणात्यशाखीये वाल्मीकीय-रामायणम् ।

(Gujrati Press Edition Bombay, 1913)

DESCRIPTION of MS.

This Ms. has been recently purchased for the Research Library D. A. V. College Lahore.

It is written on country paper, in Devanāgarī script; is generally correct; agrees with क, about 100 years old; obtained from Bahāvalpur state

1. MANUSCRIPT MATERIAL.

All the MSS., collated for the present edition, are written, on country paper, in Devanāgarī script.

1. कै—about 100 years old, almost correct, writes च for त very often.
2. ल—about 100 years old, almost correct, agrees with कै.
3. म—about 100 years old, incorrect at many places, agrees with कै.
4. पं—dated Vikrama samvat 1808, incorrect at many places, sometime agrees with कै.
5. अ—dated Vikrama samvat 1875, writes च for व, very often; obtained from Alvara State.
6. कु—dated Vik. samvat 1885, writes च for य, and स for श, very often; transcribed in kuruksetra.
7. शु—dated Vik. sam. 1512, writes अ for म, often, and names बालकाण्ड as बालचरित and includes it in the Ayodhyā kānda; loan from Bh. Or. R. I. Poona. No. 123/1884-87.
8. चं—dated Vikrama samvat 1924, copied, by my maternal grand-father, from an old MS.
9. दी—dated Vikrama samvat 1869, obtained from Dirghapur (Bharatpur State).
10. रा—about 200 years old, obtained from near about Rāma Mandira (Nasik).
11. पू¹—about 150 years old, loan from Bh. Or. Research Institute, Poona. No. 181, Vish. col.
12. पू²—about 200 years old loan from Bh. Or. Research Institute, Poona. No. 34/1883-84.

2. COLLATION.

MS. No. 1, is the basic one, collated from the beginning to the end of the Kānda.

MSS No, 2 and 3, collated from the 16th sarga on wards

MS No 4 left out where found too divergent

MSS No 5 and 6 collated from the 5th sarga on wards since the 1st four sargas are not to be found therein

MSS No 7-12 collated for the 1st four sargas with a view to determine their affinity to the main Recension, and to enable scholars to judge their relative value for the future work on Ramayana. These MSS are too divergent on wards

3 SOURCES OF MSS

MS No 1 and 6 were a loan from L Rama Krishna Pleader Kanthal, but later on purchased for the Library after his death

MS No 2 loan from Mahant Hari Dass through Pt Bhagat Rama B A Librarian Medical College Lahore

MSS No 3-5,9,10 belong to the D A V College Research Library

4 CLASSIFICATION OF MSS

- 1 के, ल, म—represent the main group
- 2 अ, कु—represent the subgroup and, at times, exhibit a tendency to coincide with the Bengal version
- 3 प—stands midway between के, ल, म group on one side and अ, कु group on the other.
- 4 गु—represents a strange Sub-Recension and preserves divergent readings
- 5 दीं, चं, रा, पूं—represent another Sub-Recension

5 DIACRITICAL SIGNS & ABBREVIATIONS

* indicates doubtful authenticity, when prefixed to

hemistiches, but when appended to readings, it indicates obscurity or anomaly.

? indicates uncertainty.

() indicates emendation, except in the case of uncommon portions of the readings, that, for the sake of brevity, have been enclosed within such brackets along with their respective MSS, in the critical notes.

[] when placed round readings, indicates restoration; but when placed round hemistiches, verses, and passages, it indicates insertion.

A signifies addition on-wards.

O + नास्ति + (त्यक्तमस्ति or only त्यक्तम्) = omission.

6. METHOD OF DEGREE FIGURES

The degree figures invariably refer to those to which they have been appended, but when they repeat, they refer to the intervening unmarked portion as well, whenever there is any.

7. CRITICAL PRINCIPLES FOLLOWED IN THE CONSTITUTION OF THE TEXT.

The Eclectic Method has been avoided as far as possible. Emendations and Restorations have been proposed in rare cases only.

8. PROSPECTUS.

A detailed introduction will be given after the publication of the last fasciculus of this Kāṇḍa.

It is intended to add various important Indices and Appendices at the end of every Kāṇḍa.

9. EPILOGUE.

Despite my strenuous efforts, the printing errors have persisted. These have been corrected and referred to in the errata.

Research Library, }
D. A. V. College, Lahore. }

Rāma Ladhāyā

१. हस्तलेख सामग्री ।

समस्त हस्तलेख, जो प्रस्तुत संस्करण के लिये मिलाये गये, देशी कागज पर देवनागरी में लिखे हुए हैं ।

१. कै—लगभग १०० वर्ष पुराना, प्रायः शुद्ध, 'त' को बहुधा 'त्' लिखता है, केथल से प्राप्त ।
२. ल—लगभग १०० वर्ष पुराना, प्रायः शुद्ध, 'कै' से मिलता है । लाहौर से प्राप्त ।
३. म—लगभग १०० वर्ष पुराना, बहुधा अशुद्ध, 'कै' से मिलता है । मच्छीहट्टा लाहौर से प्राप्त ।
४. पं—वि० सं० १८०८ का, बहुधा अशुद्ध, कई स्थलों में कै से मिलता है । पञ्चवटी से प्राप्त ।
५. अ—वि० सं० १८७५ का, 'व' को बहुधा 'व' लिखता है । अलवर से प्राप्त ।
६. कु—वि० सं० १८८५ का, 'व' को 'व' और 'श' को बहुधा 'स' लिखता है । कुरुक्षेत्र से प्राप्त ।
७. गु—वि० सं० १५१२ का, प्रायः 'ग' को 'ग्र' लिखता है । बालकाण्ड को बालचरित लिख के अयोध्याकाण्डान्तर्गत देता है । भण्डारकर प्राच्य अनुसन्धान समिति पूना से मांग । हस्तले० गुजराती है । संख्या १२३/१८८४-८७ ।
८. चं—वि० सं० १९२४ का, मेरे नाना की एक पुरातन हस्तलेख से लिखी प्रति । अपने मातुल पं० गोविन्दराम वकील 'चनियोट' से प्राप्त ।
९. दी—वि० सं० १८६९ का, दीर्घपुर (भरतपुर) से प्राप्त ।
१०. रा—लगभग २०० वर्ष पुराना, राममन्दिर, पंचवटी, नासिक के समीप से प्राप्त ।
११. पूं—लगभग १५० वर्ष पुराना, भण्डारकर० प्रा० सं० पूना से मांग । संख्या १८१, विधामयाग संग्रह ।

१२. पूं—लगभग २०० वर्ष पुराना, भ० प्रा० सं० पूना से मांग । संख्या ३४/ १८८३-८४ ।

२. हस्तलेखों के प्राप्तिस्थान ।

हस्तले० संख्या १, ६ ला० रामरुष्ण ग्रीडर कैथल से मांगे गये थे । उन की मृत्यु के पश्चात् दयानन्द महा० के अनुसन्धान पुस्तकालय के लिये मोल लिये गये ।

हस्तले० सं० २ श्री पण्डित भक्तराम धी० ए० पुस्तकाध्यक्ष, मैडीकल कालेज लाहौर द्वारा महन्त हरिदास से मांगा गया । हम महन्त जी, या पण्डित जी के बड़े कृतज्ञ हैं ।

हस्तले० सं० ३-५, ९, १० दयानन्द कालेज अनुसन्धान पुस्तकालय के हैं ।

शेर के सम्बन्ध में पहले बताना दिया गया है ।

३. हस्तलेखों का विभागकरण ।

१. कै, ल, म—मूल शाखा का आदर्शविभाग दिखाते हैं ।

२. अ, कु—गौणविभाग है । इसका शुकाय अनेक स्थानों पर चन्द्रशाखा की ओर है ।

३. पं—कै, ल, म तथा अ, कु के मध्य में ठहरता है । कभी एक ओर और कभी दूसरी ओर झुकता है ।

४. गु—विलक्षण गौणविभाग दिखाता है । इसके पाठ पढ़े भिन्न हैं ।

५. दी, पूं, लं, रा, पूं—एक ओर गौणविभाग दिखाते हैं । सम्मत्र है इनकी एक नहीं मूलशाखा ही हो ।

४. हस्तलेखों के पाठों का मिलान ।

हस्तले० संख्या १ हमारा आदर्श है । काण्टाग्रम्भ से अन्त तक मिलाया गया है ।

हस्तले० सं० २, ३ पीछे मिलने के कारण सोलहवें सर्ग से मिलाये गये ।

हस्तले० सं० ४ अत्यन्त विभिन्न स्थानों में नहीं मिलाया गया ।

हस्तले० सं० ५, ६ पांचवें सर्ग से सर्ग १६ । १६ ॥ तक मिलाये गये ।

इन में पहले चार सर्ग नहीं हैं ।

हस्तले० सं० ७ १२ पहले चार सर्गों में उनका मूलशब्दा से सम्बन्ध जानने के लिये मिलाये गये । इस का और भी प्रयोजन था, अर्थात् रामायण पर काम करने वाले भावी विद्वानों को उन के तुलनात्मक मूल्य के जानने में सुविधा हो । ये हस्तले० आगे बहुत विभिन्न हैं ।

५. चिन्ह और संक्षेप ।

* श्लोकादों के पहले सन्देह का घोटक है । पदों के साथ पाठ का संशय घटाता है ।

? अनिश्चय प्रकटाता है ।

() सम्भावित संशोधन बताता है । पर जब टिप्पण में पाठभेदों के मध्य में हस्तलेखों के सङ्केत के साथ आया है, तो उस २ हस्तलेख का पहले पाठ से असामान्य भाग बताता है ।

[] जब पदों के साथ है, तो ध्रुति को पूरित करता है । पर जब श्लोकादों, एक वा अनेक श्लोकों के साथ है, तो प्रक्षेप बताता है ।

A आगे को श्लोकों का प्रक्षेप बताता है ।

O +नास्ति+(त्यक्तमस्ति 'अथवा' त्यक्तम्)=पाठ का छूट जाना ।

६. घटे वाले अंकों का प्रयोग ।

घटे वाले अङ्क सर्वदा उन्हीं पदों को बताते हैं, जिन के साथ कि ये लगाये गये हैं । पर जब एक ही अङ्क दोबारा आता है, तो उन बिना अङ्कित मध्यस्थ पदों को भी साथ ही बताता है, जहां कहीं कि ये आजायें ।

७. ग्रन्थ-सम्पादन का प्रकार ।

जहां तक सम्भव था, विभिन्न गणों के हस्तलेखों के पाठों को चुन कर एक मूलपाठ में देने से संकोच किया गया है । आदर्श हस्तलेखों का पाठ ही मूल में है । सम्भाषित, संशोधन वा पूर्तियां फर्हीं २ ही प्रस्तावित की गयी हैं ।

८. ग्रन्थ में और क्या होगा ?

इस पाण्ड के अन्तिम भाग के साथ एक सुविस्तृत भूमिका होगी । कई अत्यन्त आवश्यक परिशिष्ट और सूचियां देने का भी विचार किया गया है ।

९. जमा याचना ।

अत्यन्त यत्न करने पर भी कुछ अशुद्धियां रह गई हैं । यह अशुद्धियां शुद्धिपत्र में ठीक की गयी हैं ।

अनुसन्धान पुरतफालय } रामलभाया
दयानन्द महाविद्यालय, लाहौर । }

—→ॐ←—

शुद्धिपत्रम् ।

पृष्ठ पङ्क्ति अशुद्धम्	शुद्धम्
१४—३ पूजयामास्तुस्तदा	पूजयामासतुस्तदा
२१—२ धत्वा	थुत्वा
२२—१ रञ्जिता ^३	रञ्जिता ^{३०}
२५—८ गच्छतं	गच्छतां ^४
३१—२ तेषामाञ्जलि०	तेषामञ्जलि०
३८—१८ इषो भाविन्याभिपेचने	इषोभाविन्याभिपेचने
३९—१८ " "	" "
४२—११ विपेशं त०	विपेशान्त०
४३॥—२ संकुल	संकुलं
४५॥—३ सिताम्रं	सिताम्रं

४६n-५	क	कै
४७n-१	नंदन	०नंदन
४७n-१	०वर्द्धन'	०वर्द्धन
४८—४	सा ^२ —ददर्शाथ ^२	सा ^२ ददर्शाथ ^२
४९—१७	साऽसम्पपारे	साऽसम्पपारे
५१n-३	तनेदं	तेनेदं
५६—६	कथ	कथं
५६—३	येनं	येन
६२—१२	दिष्टया	दिष्टथा
६४—३	शुक्लवासिनी	शुक्लवासिनी ^{१७}
७०—१५]] ^{४८}
७१n-५	अभिशाप्य	अभिशाप्य
७२—२०	रामगुणैरियम्	रामगुणैरियम्
७२n-२	नहाविषा	महाविषा
७५—१	गर्हयिष्यन्ति	गर्हिष्यन्ति
८१n-१	शोडशे	षोडशे
८४—६	श्वेतपुष्पाणि	'श्वेतपुष्पाणि
८४—१५	प्रतीहारे	प्रतीहारे
८७—२०	दृश्यते	दृश्यते
८६—१६	रामसाहय	रामसाहय
८८—१५	०योपमा	०योपमाः
९०—६	०धारिभि'	०धारिभि ^८
९०—१५	महाणैः	महाऽणैः
९५—१	०म	०म
९६—७	रामो महारथः	रामो महारथः
घ आजायं .	हेमलोज	हेमलोजं

* ओ३म् *

वाल्मीकीय-रामायणम् ।

* अयोध्या-काण्डम् *

[प्रथमः सर्गः]

कस्यचिन्वथ कालस्य राजा दशरथः सुतम् ।

भरतं कैकयीपुत्रं समाहूयेदमवर्षित् ॥ १ ॥

अयं कैकयराजस्य पुत्रो वसति पुत्रक ।

त्वां नेतुमागतो वीर युधाजिन्मातुलस्तर्व ॥ २ ॥

तस्मान्मातामहं द्रष्टुमितोऽनेन सह त्वया ।

गन्तव्यं पुत्र पश्य त्वं पुरं मातामहस्य तत् ॥ ३ ॥

श्रुत्वा दशरथस्यैतद्भरतः कैकयीमुतः ।

गमनेऽर्थं मतिं चक्रे शशुभ्रसाहितस्तदा ॥ ४ ॥

श्रुत्वा दूतं तुं संग्राहं कैकेयेभ्यो नृपात्मजम् ।

भरतं चाप्यनुज्ञातं राज्ञां राजीप्रलोचनम् ॥ ५ ॥

१ गु, दी, पं—कैकेयी० । पूं, चं, रा—कैकेयी० । २ चं, गु, पूं,
[, दी, रा—इदं वचनमत्र० । पं—अग्रवीद्रघुनन्दनः ३ चं, गु, पूं,
१—कैकेय० । पूं, दी, पं—कैकेय० । ४ रा—दानानुज्ञागतो ।
रा—०लस्तदा । ६ चं, गु, पूं, पूं, दी, रा—नास्ति । ७ रा—दशरथं
पश्यं भरतः । ८ पूं—कैकेयामजः । ९ दी—गमनाय । १० चं, गु,
रा—तु दूतं ११ कै—कैकेयस्य । पूं, कैकेयेभ्यो । १२ चं, गु, पूं, पूं,
१, रा—चाप्यनुज्ञातं । १३ पूं, पूं, रा—राजा ।

प्रहृष्टा तत्र कैकेयी मुदा परमया युता ।
 चिन्तयामास गमनं भरतस्य महात्मनः ॥ ६ ॥
 गमने^{१४} चं मतिं चक्रे तदा तस्य शुभाननीं ।
 गृहे^{१५} मातामहकुले सन्न्यस्तं मन्यते^{१६} हि सा ॥ ७ ॥
 न हि कश्चिद्विशेषो^{१७} मे^{१८} तस्मिन्वापीह^{१९} वां गृहे ।
 स त्वभ्यनुज्ञाय नृपः सुतं सुरसुतोपमम् ॥ २० ॥
 समानयच्च^{२१} कैकेयीं^{२२} तदा राजगृहं प्रति ।^{२३}
 आपृच्छर्थं पितरं^{२४} सौ^{२५} रथं चाक्लिष्टकारिणम् ॥ ९ ॥
 मातृश्वैर्व^{२६} महाबाहुः शत्रुघ्नसहितो ययौ^{२७} ।
 अमात्यैर्वहुभिर्गुप्तो^{२८} रथैश्च शुभवाजिभिः^{२९} ॥ १० ॥
 पादातिनें च मुख्येन वृतः शतसहस्रः ।
 स पित्रा समुपाघ्रायं परिष्यक्तश्च बाहुना ॥ ११ ॥

१४ पं—गमनेय । १५ च, कै—शुभात्मनः । १६ गु—०ऽसन्न्यस्तं ।
 दी—०सन्न्यस्तं । पूं—०सत्यसंमन्यते । पं—०मातामहे सम्यक् सन्न्यस्ते ।
 रा—गृहं मातामहकुलं समानं मन्यते । १७ पूं—०शेषस्तु । १८ कै—
 तस्मिन्वापेह । पं—तस्मिन्वास्तीह । १९ रा—वै । २० दी—नास्ति ।
 २१ चं—सन्मानयंश्च । गु—समागतश्च । रा—समानयंश्च । पूं—
 समानयंश्च । पूं—जगाम सह । २२ गु—कैकेय्या । पूं—कैकय्या ।
 पूं—कैकेयी । २३ पं—स राजा प्रेषयामास तदा शतगृहं प्रति ।
 २४ दी—आपृष्ट्वा । २५ कै—नृपतिं । पं—कुशलं । २६ गु, पूं, दी, पं—
 धीमान् । २७ पूं—मातृश्वैव । २८ पूं, घसि (?) । २९ पूं—आमात्यैः ।
 पं—अमन् मातुलगृहं शीघ्रगैश्चैव वाजिभिः । ३० गु—पदातिना ।
 ३१ दी—सहस्रशैः । ३२ दी—समुपाघ्रातः । गु, पूं, समुपाघ्रातः ।
 चं, पूं, रा—समनुशातः ।

भरतः सिंहविक्रान्तः शत्रुघ्नश्च महामतिः ।^{३३}
 तं तदा प्रस्थितं वीरं भरतं वदतां वरं ॥ १२ ॥
 राजा दशरथो वाक्यमुवाच जनसंसदि ।^{३४}
 प्रस्थितस्त्वं नरवर मातामहगृहं शुभम् ॥ १३ ॥
 संदेशं शृणु मे वत्स तं च कुर्याः समाहितः^{३५} ।
 शत्रुघ्नसहितो गच्छ मातामहकुलं विभो ॥ १४ ॥
 स ते सहायो भविता सं त्वां नित्यमनुव्रतः ।
 तवापि च प्रियतरः प्राणेभ्योऽपि परंतप ॥ १५ ॥
 आत्मवत्स त्वया भ्राता द्रष्टव्यो रक्ष्य एव च ।^{३६}
 गुणपाशशतैर्घद्वस्त्वया हृदि परंतप ॥ १६ ॥
 न जहाति चै शुश्रूषां कदाचिदपि^{३७} तेऽनघै ।^{३८}
 संदेक्ष्यामि चै भूयस्त्वं संदेशं शृणु मे हितम् ॥ १७ ॥

३३ गु, पू—श्लोकान्तं वण्डंयचिहेन प्रदर्शितम् । ३४ पू, दी—प्रणितं ।
 पं—प्रयतं । ३५ गु, चं, पू, दी, रा—वरं । ३६ रा—उवाच राजा राजर्षि
 सस्त्रेण भरतं प्रति । ३७ चं, पू, दी—कुलं । रा—कुलं प्रति ।
 पं—गृहे शुभे । ३८ गु, पू—तच्च । पं—तं कुर्याः सुसमाहितः ।
 गु, दी, रा—कुर्यात् । ३९ पं—शिशो । ४० गु—यस्त्वां । ४१
 केवल कै पं पाठः । ४२ पं—त्वया पुत्र । ४३ पं—सुश्रूष्योहमिव
 त्वया । ४४ पू—संद्रक्ष्यामि । ४५ गु—च तं भूयः संदेशं तव ये हितं ।
 पं—च ते भूयः संदेशं बलवद्वितं । पू, दी—तु (दी—च) तं भूयः
 संदेशं तव यद्वितं । पू—च त्वां भूयः संदेशं तव सि—नं । चं—त्वां
 भूयः संदेशंस्तव सिध्यतां । रा—च तत्रापि संदेशं तव सिध्यतां ।

तव चैव महाभागं शत्रुघ्नस्य च मानदं ।

नित्यशर्त्तु त्वया कार्या शुश्रूषा मातुलस्य वै ॥ १८ ॥

आर्यकर्म च ते नित्यं काले कालेऽभिवादनम् ।

व्रतचर्या च ते पुत्र कर्त्तव्या नियतात्मना ॥ १९ ॥

ब्राह्मणैः सह धर्मात्मन् वासंः सद्भिरुदाहृतैः ।

काले काले यथोक्तं च ब्राह्मणानभिवादये ॥ २० ॥

ब्राह्मणा हि श्रियो मूलं पुरुषस्य शुभार्थिनः ।

सहायार्थे च कर्त्तव्याः प्रणम्य नियतात्मना ॥ २१ ॥

सर्वविधान्तगा धन्या ब्राह्मणा मङ्गलार्थिणाः ।

देवाः पुत्रभवार्थं वै प्रजानां सुरसत्तमैः ॥ २२ ॥

प्रेषिता मानुषं लोकं भूमिदेवा इति श्रुतिः ।

४६ गु—तत्रेव च । ४७ गु, पूं, दी, पं—महाप्राज्ञ । चं, पूं, रा—महा-
घाहो । ४८ चं—सौत्यद । पूं—मानदा । ४९ पूं—नित्यं तस्य ।
पूं—नित्यं शस्य । ५० रा—तु । ५१ कै—आरभ्यकस्य । पं—अर्यकस्य ।
रा—आर्यकर्म । ५२ कै—कर्त्तव्यं । ५३ गु, चं, पूं, दी, रा—कार्यं ।
५४ गु, पूं—वादिनं । ५५ गु, पूं—व्रतचर्याश्चते । दी—व्रतचर्यास्तुते ।
पं—ब्रह्मचर्यावते । रा—व्रतचर्या त्वया । ५६ चं, पूं, दी, रा—वै-
यतात्मना । गु—वै जितात्मना । ५७ गु—वदेथाः समुदाहृतः ।
पं—वदेथाः समुदाहरन् । पूं—वेदे याः समुदाहृताः । दी—वेदे याः
समुदाहृताः । ५८ कै—ब्राह्मणांश्च यथोक्तमभिवादयः । गु, पूं—
यथोक्ते—वादेये । दी, रा—वादेये । रा—यथोक्तं तु० । ५९ पूं, दी,
पं—कर्त्तव्या । ६० चं—मंगला ब्राह्मणा सदा । गु, दी, पं, रा—
मंगल्या ब्राह्मणाः सदा । पूं—मांगल्या ब्राह्मणाः सदा । ६१ चं—
मानुषे । ६२ कै, चं—लोके । ६३ कै—श्रुताः । पूं—स्मृतिः ।

तेभ्यः सर्वाणि शास्त्राणि वेदांश्चिं वदतां वरै ॥ २३ ॥

अर्हं शस्त्रं महार्हं च विधिर्वत् पुत्र धारय ॥

अश्वशृष्टे रथे चैव व्याधामं कुरु नित्यशः ॥ २४ ॥

गन्धर्वविद्यासु तथै पारगो भव पुत्रक ।

अन्येष्वपि च शिल्पेषु यत्नः कार्यः सुतै त्वया ॥ २५ ॥

क्षणमप्यासितुं पुत्रं वृथै नार्हसि सर्वथै ।

कुशलप्रेषणं पुत्रे दूतैः कार्यं सदैव मे ॥ २६ ॥

श्रुत्वै कुशलिनं त्वाऽहं संदेक्ष्यामि सवान्धवः ।

एवमुक्त्वा तु नृपतिर्भरतं चाप्यगद्गदम् ॥ २७ ॥

व्याजहार महातेजा गम्यतां मा विचारय ।

सोऽभिवाद्य जितक्रोधो राजानं शिरसा तदा ॥ २९ ॥

मातरं च महाभागैः शत्रुघ्नसहितस्तदी ।

सै र्ययौ नगरं धीमान् बलेन परिवारितः ॥ २९ ॥

६३ गु, पूं—इत्तानि । दी—दैवतं । पं—ज्ञेयं च । ६५ गु, पूं—वरः ।
 ६६ पं—अर्हं शस्त्रं महार्थं । ६७ रा—विविधं । ६८ गु, पूं—पालय ।
 दी—पारय । ६९ रा—आयामं । ७० चं, पूं, रा—नित्यदा ।
 ७१ के—गांधर्वं । ७२ चं, पं, रा—तदा । ७३ चं, गु, पूं, दी, रा—
 परस् ७४ । पं—मध्यासितुं । ७५ गु—स्थातुं पुत्र । ७६ गु—नान्यथा ।
 के, दी, रा—सर्वदा । ७७ पूं—कुशलं । ७८ चं—चापि दूतैः कुर्याः
 सदैव मे । गु, पूं—दूतैः कुर्याश्चैव सदैव मे । दी, रा—चापि दूतैः
 कार्यं सदैव हि (रा—मे) । ७९ दी—श्रुतं । ८० चं, दी—हि त्वा । गु,
 पूं, रा—हि त्वां । ८१ चं, पूं, दी, रा—नदिष्यामि । ८२ गु, चं, पूं, दी,
 रा—स । ८३ रा—वाक्यगं । ८४ गु, पूं, दी—महाभागं । ८५ के—
 ष्ठया । ८६ गु—प्रययौ । ८७ पूं, दी—नगरं ।

तथाऽनुगम्यमानर्क्षं जैनैः पुरनिवासिभिः ।

रामेण च महाभागो लक्ष्मणेन च वीर्यवान् ॥ ३० ॥

पुरस्कृतो ययौ धीमान् प्रीतिस्त्रिगंधौ हि तस्य तौ^{१२} ।

अभिवाद्य रामं भरतः परिष्पञ्च च लक्ष्मणम् ॥ ३१ ॥

न्यवर्त्तयंत धर्मात्मा तदा सर्वान् सुहृज्जनान् ।

सुहृद्भिः कैश्चिदेवेह सह विद्वद्भिरात्मवान् ॥^{१३} ३२ ॥

अनुगम्यमानो विधिप्रत्यार्तः कृतमङ्गलैः ।

निवर्त्य तं^{१४} जैनं सर्वं प्रययौ शीघ्रवाहनः ॥ ३३ ॥

पुरं^{१५} यातो महातेजा यमध्यांस्ते स धर्मवित् ।

कथायोगेन सुहृदो मनोज्ञेन महाभुजैः ॥ ३४ ॥

दिवसैः कैश्चिदेवाथ सं^{१६} श्रान्तचलमार्हनैः ।

सरितः^{१७} पर्वतांश्चैव व्यतिक्रम्य महाभुजैः ॥ ३५ ॥

उपस्थितो वै नगरं तदा राजगृहं विभुः ।

सं^{१८} दूतं प्रेषयामाम राज्ञो वृद्धस्य धीमतः ॥ ३६ ॥

८८ पूं-०मानैश्च । पं-तदानु० । ८९ चं, गु, पूं, दी, पं, रा-सर्वे । ९० रा-
महायाहो । ९१ पूं-०स्त्रिगंधस्य । पं-०स्त्रिगंधा । ९२ पं-ते । ९३ गु-निवर्त्त-
यत । ९४ गु, चं, पूं, दी, रा-सर्वे सुहृज्जनं । ९५ रा-नास्ति । ९६ के-
प्रयातवृत्त० । रा-०मंगत । ९७ चं, रा-सजनं । पूं-सजनं । गु, दी-स्वजनं ।
९८ गु, चं, रा-पुरं मातामहजितं यदध्या० । रा-०जितं यमध्या० ।
पूं-पुरं मातामहजितां यामध्या० । दी-०मातामहयुतं यदध्या० ।
पं-०तेजामध्ये तेषां । ९९ रा-सुहृदामनुजने । १०० चं, रा-सहानुग ।
दी-सदानुग । १०१ गु-स भिन्नबल० । पूं-अध्यांतबल० । दी-सन्नात-
बल० । १०२ च-स नदी- । पूं, दी, पं-सनदी । १०३ चं, गु, पूं, दी,
रा-सदानुज- । १०४ गु-महा- । १०५ पं, रा-राजागृहं । १०६ गु-संगतं ।

आर्यकस्य महातेजा भरतः प्रियदर्शनः ।
 श्रुत्वा दूतस्य वचनं सं राजा सिंहं मन्त्रिभिः ॥ ३७ ॥
 प्रवेशयामास तदा भरतं नगरोत्तमम् ।
 पुष्पैर्गन्धैश्च धूपैश्च सर्वतः समलङ्कृतम् ॥ ३८ ॥
 राजमार्गस्तदाकीर्णो जलेन च समुक्षितः ।
 समुद्धितर्षताकं च तूर्योत्कृष्टनिनादितम् ॥ ३९ ॥
 वेश्याभिर्वारमुख्याभिर्वाद्यानुगतशोभितम् ।
 पुरतो नृत्यमानाभिर्भरतस्य महात्मनः ॥ ४० ॥
 नरमुख्यैश्च बहुभिः स्रुतमागधवंदिभिः ॥ ४१ ॥
 स्तूयमानो यथान्यायं भरतः प्रविवेश ह ॥ ४२ ॥
 प्रविश्य च गृहं रम्यमभिवाद्यं च मातुलम् ।
 वृद्धं मातामहं चैव तथैव नृपयोपितः ॥ ४३ ॥
 स वै मातामहगृहे सर्वकामैः सुपूजितः ॥ ४४ ॥
 उवास स सुप्तो धीमान् कश्चित्तुं कालं नृपात्मजः ॥ ४५ ॥
 इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे भरतगमनं
 नाम प्रथमः सर्गः ॥ १ ॥

१०७ गु—सह राजा सह । पू—स च राजाद्यं । १०८ पं—
 उपस्थितपताकाश्च । १०९ पू—भैर्योत्कृष्टविनोदितम् । ११० गु—
 “समुद्धितं” इत्याख्य श्लोकार्द्धस्य पाठोऽष्टत्रिंशच्छ्लोकानन्तरं
 दृश्यते, अप्रे च “राजमार्गं” इत्यस्यार्द्धस्य । १११ गु—०भिर्ला-
 स्यानुगतशोभितः । ११२ पं—०मुख्यैः स । ११३ गु—स्तुतो मागधं ।
 ११४ के, चं, रा—गृहे रम्ये अ० । ११५ के—वृद्धयोपितः । ११६ चं, पू,
 रा—सुसहृतः । पं—स पूजितः । गु—पुरस्तरतः । दी—सुसंस्मृतः ।
 ११७ गु—किञ्चित् ॥

[द्वितीयः सर्गः]

कदाचिद्धरतः श्रीमान् वृद्धं मातामहं नृपम् ।
 अभिवाद्य महात्मानमिदं वचनमब्रवीत् ॥ १ ॥
 आचार्याननुगच्छेयं भवतोऽनुमते^१ प्रभो ।
 लेख्यसंस्थानशब्दज्ञानीतिशास्त्रार्थपारगान् ॥ २ ॥
 [विविधासु च विद्यासु सुनिष्ठान् ब्राह्मणानपि]^२
 हस्त्यश्वरथयानेषु तथैव परिनिष्ठितान् ॥ ३ ॥
 गन्धर्वविद्याकुशलाघ्नानाशिल्पविदस्तथा ।^३
 नरान्विनीतान् वृद्धान् वै वेत्तुमिच्छामि तत्त्वतः ॥ ४ ॥
 ब्राह्मणान्वेदविदुषो वृद्धान् परमपूजितान् ।
 व्यादिष्टान् पुरुषांस्तत्रै^४ सर्वविद्याविशारदान् ॥ ५ ॥

१ चं—भवतां प्रीतये । रा—भवतानुमते । २ पूं, पं—०शास्त्र-
 स्यपा० । दी—०शास्त्रानुपा० । रा—०शब्देच ज्योतिः शास्त्रस्यपा० ।
 ३ पूं—विविधायुध- । ४ चं—निष्णातान्० । दी—शिल्पजातिषु चाप-
 रान् । पं—शिल्पजातिषु चापरान् । ५ कै—नास्ति । पं—केनचिद्-
 न्येन उत्तरपार्श्वे लिखितम् । 'राजविद्यान्वितान्वृद्धास्ते (न्ये) तुमी-
 छामि तत्त्वतः ।' इत्यप्यग्रे लिखितं यत्तते । ६ चं, गु, पूं, रा—विनी-
 तान् हस्तिशिक्षासु ह्यपृष्टे तथैव च । दी—नास्ति । ७ चं, गु, पूं,
 रा—गांधर्वेषु (गु—गांधर्वासु) च विद्यासु शिल्पजातिषु चापरान्
 (रा—पारगान्) । कै—गांधर्व० । दी—नास्ति । ८ गु—राजविद्या-
 न्वितान् वृद्धान् । पूं—राजविद्यान्वितान् वृद्धान् । दी—०वृद्धांश्च० ।
 ९ पूं—वक्तुमि० । १० गु—प्राप्तान् । ११ चं, गु, पूं, दी, रा—भवते-
 छामि दिशार्थं मम नित्यतः (दी—नित्यतः) ।

- *उपसेवितुमिच्छामि श्रेयोऽर्था दृढमात्मनः ।
 *भवतोऽनुमते राजन्प्रदेष्टुं तान्ममार्हसि ॥ ६ ॥^{१२}
 श्रुत्वैवं नृपतिर्वाक्यं कैकेयो भरतस्य सः ।^{१३}
 व्यादिदेश प्रहृष्टात्मा तस्याचार्यान्विपश्चितः ॥^{१४} ७ ॥
 *तानुपास्य प्रयत्नेन भरतः कैकेयीसुतः ।^{१५}
 *वेदवेदांगशास्त्राणां पठने तत्परोऽभवत् ॥^{१६} ८ ॥^{१७}
 सर्वविद्यासु कुशलांश्च परं हर्षमवाप ह ।
 प्रदाय शिष्यमात्मानं तेभ्यः स रघुनन्दनः ॥^{१८} ९ ॥
 आचार्येभ्यस्ततो विद्यां धर्मेणाधिजगाम ह ।^{१९}
 *जग्राह वेदवेदांगशास्त्राणि गुणवृद्धये ॥^{२०} १० ॥
 सोऽनुपूर्व्येण तान्सर्वान् परिजग्राह सुव्रतः ।
 सह भ्रात्रो महातेजाः शशुभेन यशस्विना ॥ ११ ॥^{२१}
 एवमाचार्यहस्तेषु वर्तमानो नरोत्तमः ।

१२ चं, गु, पूं, दी, रा—नास्ति । १३ चं, गु, पूं, दी, रा—

श्रुत्या तु भरतस्यैतद्वचः परमहृष्टवान् ।

आशापयत्तदा राजा यदुक्तं भरतेन वै ॥

- १४ पं—घ यशेन । १५ पं—ग्रहणे । १६ चं, गु, पूं, दी, रा—नास्ति । १७
 चं, गु, पूं, दी, रा—श्रुत्या तु भरतो राजा व्यादिष्टान् पुरग्यास्तदा । इत्य-
 धिक्काम्रे । १८ पं—तान् सर्वविद्याकुशलं । कै—शुश्रूषः । १९ गु,
 पूं, दी रा—अन्तदा विद्यां । चं—अन्तदा विद्या । २० दी—अभिजगाम् ।
 २१ चं, गु, पूं, दी, रा—नास्ति । २२ कै—आनुपूर्व्येण ताः सर्वाः । २३ पं—
 भ्रात्रा । २४ पूं—यत्तन्स नग्नत्तम । दी—शयत्तन्व रघूत्तमः । पं—
 यत्तने रघुनन्दन ।

रममाणो नरव्याघ्रः परं हर्षमवाप ह ॥ १२ ॥^{२५}
 शुश्रूषते यथान्याग्यर्माचार्यं नियतेन्द्रियः ।
 अर्थमानप्रदानाभ्यां यथाकालमतन्द्रितः ॥ १३ ॥
 ज्ञानाभ्यासे प्रवृत्तस्य विज्ञानेऽभिरतस्यं चै ।
 एवं कालो व्यतिक्रामत् सुमहान् भरतस्य चै ॥ १४ ॥
 यदा ज्ञानेषुं निष्ठौ वै प्राप्तवान् रघुनन्दनः ।
 ततोऽस्य बुद्धिः सजाता धर्मं श्रोतुं सनातनम् ॥ १५ ॥
 ब्राह्मणेभ्योऽथ वृद्धेभ्यो भिक्षुकेभ्यश्च धार्मिकः ।
 ये चान्ये चै महाभागा धर्मेषु कुशलो द्विजाः ॥ १६ ॥
 तान् सर्वान् स महातेजाः सेवते धर्मकारणात् ॥^{३८}
 अन्तरात्मनि धर्मेभ्यै सततं पर्यवर्त्तत ॥ १७ ॥
 कथाया धर्मयुक्ताया रमते रघुनन्दनः ।

२५ गु-पुस्तके श्लोकत्रय नास्ति। “पर हर्षमवाप ह” इति श्लोकार्द्धे दृष्टि
 प्रमादादग्रेऽवलोक्य मध्यस्थश्लोकत्रय सम्भवत परित्यक्तम् । २६ च,
 दी, रा—शुश्रूषते । २७ गु—यथायोग्य आचार्यान् । दी—०माचार्यान् ।
 २८ रा—ज्ञानाभ्यास० । २९ कै—विज्ञानादिरतस्य च । प—विज्ञाना
 मिरतस्य च । गु—विज्ञान चिरतस्य च । ३० के—व्यतिक्रात । पू—
 विचक्रामत् । रा—०व्यतिक्रामन् । ३१ पू—तु । रा—ह । ३२ गु—ज्ञाने
 सुनिष्ठा । पू—०निष्ठा । ३३ गु—यतिभ्यश्च । पूं—०थ विप्रेभ्यो । ३४
 गु—०भ्योऽथ दी, रा—०भ्योथ । ३५ च, गु, पूं, रा—ऽपि । ३६ दी—
 कुलजा । पू—कुशल० । ३७ गु—ये च धर्मपरायणा । ३८ गु—तपोभि
 निरता त्रित्य सेवते धर्मकारणात् । १२ इत्यधिकम् । ३९ च गु पूं दी,
 रा—धर्मोत्स्य । ४० पूं—न नत पर्यवस्यते ॥१५॥ ४१ गु—धर्मवृत्ताया ।

तपोऽहिंसोरतो नित्यं ये च धर्मपरायणोः ॥ १८ ॥

तान् सर्वान् स महातेजा उपास्ते निर्भृतः शुचिः ।

शास्त्राणि च महाम्राज्ञो नित्यंशो गुणवन्त्यपि ॥ १९ ॥

वेदविद्यासु चान्यासु कुशलः सर्वशास्त्रवित् ।

कृतकृत्यमिवात्मानं मन्यते धर्मसेवनात् ॥ २० ॥

तस्य बुद्धिः समभवत् पितुः सम्प्रेक्षणं प्रति ।

संदिदेश तदौ दूतं ब्राह्मणं शुभलक्षणम् ॥ २१ ॥

अयोध्यां गच्छ भद्रं ते दूत शीघ्रं नृपोत्तमम् ।

पितरं कुशलं ब्रूहि मातृश्च भ्रातरौ तथा ॥ २२ ॥

पृष्ठा च कुशलं तेभ्यो वाच्यो दशरथः प्रभुः ।

मातामहगृहे तात वृत्तं त्वदनुग्रहात् ॥ २३ ॥

यथाऽऽज्ञप्तं कृतं तात महत्तवं शुभं प्रियम् ।

सं तु तेनाभ्यनुज्ञातो भरतेन यशस्विनी ॥ २४ ॥

दूतः परममहृष्टः प्रयातो येन मा पुरी ।

अयोध्यां नगरां रम्यां प्रविवेश महातर्षाः ॥ २५ ॥

४२ कै.—तपांस्त्रिभेद्यने।पं—ऽहिंस्मानायतो।४३ कै.—धर्म०।४४ कै.—
निभृतो भृशम्।पं—निभृतो भुवि।गु—च भृशं शुचिः।दी—निर्धृतः०।रा—
निर्धृतः०।४५ गु—चैव महत्मा।दी—०महामागो।४६ गु—तेजस्वी।४७ गु—
शास्त्रान्नि ते।पू—गुणयत्यपि।दी,रा—गुणधानपि।४८ गु,दी,रा—संप्रेक्षणं।
४९ पू—तथाहं तं।५० पू—शान्तिप्रदं।५१ कै—नरोत्तमम्।५२ पू—
भ्रातरं।५३ गु, पू—वर्तना।चं—वर्तते।५४ पू—सर्वं।५५ पू—
मया तव।५६ चं, कै—०वृत्तं।रा—वृत्तं शुभं।५७ पं—आशु।५८
पू—महान्ना।५९ कै—प्रययां।६० पू—यय।६१ गु—मनुना नि-

यीं सीं राजीवताम्राक्षो राजा दशरथोऽवसर्त्त ।

प्राप्तवानर्थं तां दूतो भरतस्यानुशासनात् ॥ २६ ॥

न्यवेदयत्तं तर्द्राजे मातृभ्योऽथ द्विजस्तर्यां ।

कृतकृत्यो हि^{६६} राजेन्द्र भरतः सत्यविक्रमः ॥ २७ ॥

धनुर्वेदे च वेदे च नीतिशास्त्रे चं पारगः ।

अर्थशास्त्रे चं कुशलो व्यायामे चं तथैव हि^{६९} ।

हस्तिशिक्षासु निष्णांतो रथशिक्षासु निष्ठितैः ॥ २८ ॥

आलेख्ये चैव लक्ष्ये च लंघने प्लवने तथा ।

ज्योतिर्गतिषु निष्णातस्तत्र वाक्येन नोदितः ॥ २९ ॥”

एवंविधानि कर्माणि कृत्वा चं सुबहून्यपि ।

कृतार्थो भरतो राजंस्त्वत्सकाशमुपैष्यति ॥ ३० ॥

मिंतां पुरा । ६२ गु—या संजीवना प्राज्ञो । पूं—यां च० । ६३ गु—ऽन्व-
गात् । पूं, दी, पं—न्वशात् । ६४ गु—प्राप्तवानवता हृष्टो । पं तान्विप्रो ।
६५ गु—निवेदयत् । ६६ गु, पूं, दी—तद्राज्ञो । चं—न्यवेदयत्तत्तद्राज्ञे ।
६७ गु, दी, रा, पं—०तदा । पूं—०तत । ६८ चं, गु, दी—थ । पूं—ह ।
६९ चं रा—०शास्त्रेषु । ७० च, रा—०शास्त्रेषु । ७१ रा—०यामेषु ।
७२ चं, गु, दी—च । ७३ चं—कुशलो । रा—निपुणो । कै—निष्णांत ।
७४ चं, रा—०शिक्षा विशारद । पूं—०शिक्षा विपश्चित । दी—तत्र
वाक्येन नोदित । ७५ पं—लक्षे । गु, पूं, रा—लेख्ये । चं—लेखे ।
७६ चं, पूं, पं—चोदित । ७७ दी—नास्ति । स्पष्टोऽयं लेखकप्रमादः ।
७८ चं, गु, पूं, दी, रा—कृतानि । पं—कृत च । ७९ चं, गु, पूं, दी, रा—
०मुपैष्यति । पं—०मपेक्षते ।

श्रुत्वा राजा प्रहृष्टात्मा दूतस्य वचनं तदा ।

कौशल्याद्याश्च तौ देव्यस्तथोभौ रामलक्ष्मणौ ॥ ३१ ॥

प्रतिसंश्रुत्य नृपतिर्त्तं^३ दूतं भरतस्य तु ।

अभवन्मुदितः श्रीमांस्तदौ दशरथो नृपः ॥ ३२ ॥

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे भरतदूतागमनं

नाम द्वितीयः सर्गः ॥ २ ॥



८० गु—प्रहृष्टाम् । ८१ गु—ध्रुतं । ८२ चं, दी—देव्यस्ता तयो० । गु,
 पूं—देव्यस्त तयो० । पूं—देव्यो वै तयो० । ८३ चं, रा—यचो (रा-घाचो)
 दूतस्य पै तदा । गु, दी—०भरतस्य वै । पूं—०भरतस्य च । ८४ गु—
 ०गता । ८० गु—०प्रयीत् ।

[तृतीयः सर्गः]

गतेऽथ भरते रामो लक्ष्मणश्च महामतिः ।
 पितरं देवसङ्काशं पूजयामास्तुस्तदा ॥ १ ॥
 पितुराज्ञां रघुश्रेष्ठो^१ कृत्वा परमहर्षितौ ।
 पौरकार्याणि सहितौ चक्रतुः कृत्स्नशस्तदा ॥ २ ॥
 मातृणां सर्वकार्याणि कृत्वा च रघुसत्तमौ^२ ।
 गुरोश्च^३ गुरुकार्याणि काले काले त्ववेक्षताम् ॥ ३ ॥
 [राजा दशरथः प्रीतो^४ वैदिकां ब्राह्मणास्तथा] ।
 रामस्य शीलवृत्ताभ्यां सर्वे^५ च विपये जनाः ॥ ४ ॥
 तुण्डुबुः^६ सहिताः सर्वे देवकल्पस्य धीमतः ।
 अथ राजा दशरथः सस्मार प्रेषितौ सुतौ ॥ ५ ॥
 उभौ भरतशत्रुघ्नौ किञ्चिच्छोको^७ बभूव ह^८ ।
 सर्व एव तु तस्येष्टाश्चत्वारः पुरुषर्षभोः ॥ ६ ॥
 एकस्मादभिनिर्भृताः^९ शरीरादिव चाहवः ।
 तेषामिष्टतमो लोके रामो रतिकरः पितुः ॥ ७ ॥

१ चं, रा—महाबलः । गु—महोपनिः । २ दी—नरश्रेष्ठौ । ३ पू—
 रघुनन्दनो । ४ कै—गुरुणां । ५ चं—न्य(न्य)वैक्षतां । कै—त्ववैक्षतां ।
 गु—त्ववेक्षता । पू—न्यवैक्ष्यतां । दी, रा—न्यवेक्षतां । ६ गु—तस्य ।
 ७ गु—ब्राह्मणा नैगमास्तथा । पू—ब्राह्मणा नैगमास्तथा । दी, रा—ब्राह्मणा
 नैगमास्तथा । ८ चं—नारित । ९ गु, पू—तथैव । १० गु—तुतुषुः ।
 रा—रघुः । ११ चं, गु, पू, दी, रा—महातेजाः । १२ दी—च्छोके ।
 १३ चं, दी, रा—तः । १४ पू—पुत्राश्चन्त्याः पुरुषर्षभ । १५ पू—०पिनि-
 र्भृताः । कै—०द्विभृता विष्णोः । पू—०द्विभृता विष्णोः । १६ गु, दी—प्रभुः ।

स्वयंभूरिव भूतानां बभूव गुणवत्तमः ।^{१८}

स हि नित्यं प्रशान्तात्मा मन्दं युक्तं च भाषते ॥^{१८} ॥

नित्यं श्रेष्ठगुणैर्धुक्तः^{१९} प्रज्ञावान् पार्थिवात्मजः ।^{१८}

बहिधर इव प्राणो बभूव गुणैः पितुः^{१९} ॥ ९ ॥

शीलवृद्धान्^{२०} वयोवृद्धान्^{२०} ध्यानवृद्धान्^{२०} सज्जनान् ।

कथयामासे ताद्वित्यमस्त्रयोग्यैन् कथान्तरे^{२१} ॥ १० ॥

कल्याणाभिजनः साधुरदीनः सत्यवाग्जुः ।

पृष्ट्वरपि विनीतैश्च समर्थो धर्मनपुणे ॥ ११ ॥

धर्मशास्त्रार्थतत्त्वज्ञः स्मृतिमान् धर्मकोविदः ।^{२२}

स्मितपूर्वाभिभाषी च कृत्येण^{२३} व्यवसायवान् ॥^{२३} १२ ॥^{२३}

सानुक्रोशः कृतज्ञश्च त्यागी संयमकालवित्^{३४} ।

दृढभक्तिः स्थिरप्रज्ञो गुणग्राह्यनसूयकैः ॥ १३ ॥

निस्तन्द्रीरप्रमत्तश्च निर्दोषः^{३५} परदोषवित् ।

परिग्रहानुग्रहयौ र्थथान्यायमवेक्षिता^{३६} ॥ १४ ॥

कथञ्चिदुपकारेण कृतेनैकेन कस्यचित् ।

न स्मरत्यपकाराणां शतमप्यात्मवत्तया^{३७} ॥ १५ ॥

अर्थकर्माण्युपायैश्चो धर्मेणावेक्षते^{३८} सदा ।

श्रेष्ठं चार्थप्रदानेन प्राप्तो व्यायामिकेषु च ॥ १६ ॥^{३९}

अर्थधर्मावसक्तश्च सुखतत्त्वे च नालसः ।^{४०}

वैहारिकाणां कार्याणां विज्ञातार्थो यथार्थवित् ॥ १७ ॥

आरोहो च विनेता च योक्तो वारणवाजिनाम् ।

३४ पूं-समयकाल० । ३५ चं, दी, पं-गुणग्राही न दूपकः । गु-० हानुसूयकः ।

३६ गु-निस्तन्द्री चाप्रमत्तञ्च । ३७ गु, पूं, दी-स्वदोष० । ३८ चं, पूं-

परिग्रहावग्रहयो० । पूं-०च वेदिता ॥ १६ ॥ दी-०मवेक्षते । गु-परि-

ग्रह स्वमैन्यं हि शत्रुसैन्यमवग्रहः ॥ १४ ॥ ३९ गु-शतमथल्पवित्तया ।

४० गु, पं-आर्थकर्मण्युपा० । पूं, रा-अर्थकर्मण्युपा० । दी-आयुः

कर्मण्युपा० । ४१ गु-०वक्ष्यते । पूं, पं-०वक्ष्यते । दी-०वेक्षिता । ४२

कै-श्रेष्ठः । पं-श्रेष्ठः । ४३ कै-प्राप्तौ । ४४ दी-व्यायामिकेषु । ४५

गु-नास्ति । ४६ गु-अर्थधर्मावसंज्ञेदय मुलतंत्रो न चालयं । १६ ।

चं, रा-अर्थधर्मावसंज्ञेदय (रा-०दयः) सुखतत्त्वेन नालसः (रा-

लालसः) । पूं-अर्थधर्मावसंज्ञेदय मुलतंत्रो न चालसः । पं-०तत्त्वे

न चामवत् । दी-अर्थधर्मावसंज्ञेदय मुलतंत्रो न चालसः । ४७ गु-

वैहारिकां च । ४८ चं, रा-विज्ञानार्थो तथार्थवित् । ४९ चं, रा-आरोह ।

५० चं, गु, पूं, दी, रा-युक्तो । ५१ पूं-यै गजवाजिनां । रा-वानरवा० ।

धनुर्वेदविदां शास्त्रैर्लोकानामतिसम्मतः ॥ १८ ॥

अभियाता प्रहर्ता च सेनानयविशारदः ।

अप्रधृष्यश्च संग्रामे सर्वैरपि^{५२} सुरासुरैः ॥ १९ ॥

अनसूयुर्जितक्रोधो^{५३} न द्वेषो^{५४} न च मत्सरी ।

न चावमन्ता भृत्यानां न च भृत्यवशानुगः ॥ २० ॥

सत्यवादी महोत्साहो वृद्धसेवी जितेन्द्रियः ।

मितपागपि कार्येषु वक्ता वाचस्पतेः समः ॥ २१ ॥

लोकप्रियत्वे चन्द्रस्य वसुधायाः क्षमागुणैः^{५५} ।

बुद्ध्या बृहस्पतेस्तुल्यो वीर्ये च स्याच्छचीपतेः^{५६} ॥ २२ ॥

लोके^{५७} संख्यायमानानां^{५८} प्राज्ञः^{५९} सर्वधनुष्मताम्^{६०} ।

वीर्यवान्न च वीर्येण महता तेन विस्मितः ॥ २३ ॥

स तैः सर्वैः प्रजाकान्तैः^{६१} प्रीतिसञ्जननैः पितुः ।

गुणैर्विरुरुचे रामो दीप्तैः^{६२} सूर्य इवांशुभिः ॥ २४ ॥

तमेवं वृत्तसम्पन्नं रामं सत्यपराक्रमम् ।

लोरुपालोपमं नाथमकामयत^{६३} मेदिनी ॥ २५ ॥

५२ चं, गु शास्त्रे लोकेतिरथ सम्मतः । पू—शास्त्रे लोकाभिरथ संगतः ।
 च, दी, रा—शास्त्रे (रा—श्रेष्ठो) लोकेऽतिरथ सम्मतः । ५३ गु—मेवा-
 नय० । पू—सेवानपिपि० । ५४ चं, गु, पू, दी, रा—मुद्गैरपि । ५५ पू—
 अनुसूयुः । गु—अनुसूयो । ५६ चं, गु, पू, दी, रा, पं—दुष्टो । ५७ गु—
 क्षमा० । पू, पं—क्षमागुणे । ५८ कै—चैत्र शचीपतेः । गु—०पतिः ।
 ५९ कै, पं—०संख्यायमाणां च । पू, दी—लोकसंख्या० । रा—०संख्यो-
 ममामानं । ६० गु—~~पुत्र~~पुत्रः । चं, रा—प्राप्तः । पू—प्रायः । ६१ गु—
 ०धनुभृतां । ६२ पं—प्रजाकामैः । ६३ गु, पू, दी, रा, पं—दीप्तः ।
 ६४ गु—रामं अकामयत ।

अनुरक्ताः^{६५} प्रजास्तं^{६६} हि सानुक्रोशं^{६७} प्रजाहितम्^{६८} ।
^{६९} तं प्रेक्ष्य^{७०} सुमहोत्साहं^{७१} शक्तं च परिपालने ॥ २६ ॥
 वृद्धैः^{७२} श्रुतगुणोपेतैराप्तधर्मार्थतत्परैः ।
 सोऽतिवाल्यात्प्रभृत्येव^{७३} नृपतिः समयोजयत् ॥ २७ ॥
 स्वभावेन विशुद्धेन^{७४} सर्वशास्त्रागमेन च ।
 अभवत्सर्वभूतानामधिको गुणवत्तया^{७५} ॥ २८ ॥
 तमेवं बहुभिर्युक्तं गुणैरनुपमं सुतम्^{७६} ।
 प्रेक्ष्य^{७७} राजा दशरथश्चिन्तयामास तं प्रति ॥^{७८} २९ ॥
 तस्य बुद्धिरियं जाता वृद्धस्य^{७९} चिरजीविनः ।^{८०}
 यौवराज्येऽभिपिञ्चामि सुतं राममिति^{८१} स्थिरां ॥ ३० ॥
 सां तस्य परमा प्रीतिर्हृद्दये पर्यवर्त्तत^{८२} ।
 कदा रामं सुतं द्रक्ष्याम्यभिपिक्तमिति^{८३} प्रभोः ॥ ३१ ॥

६५ गु—अनुरक्तं प्रजानां । ६६ पूं—क्रोशप्रजाहिते । ६७ कै—स
 चोक्ष्य । गु—संप्रेष्य । ६८ गु—सुमनोप्राहं । ६९ चं, रा—बुद्धि । पूं—वृद्धि ।
 ७० चं, पूं, दी, रा—श्रुति० । ७१ चं, पूं, दी, रा—स हि या० । गु—
 तं हि या० । पूं—स त या० । ७२ गु—विबुद्धे(द्धे?)न० । पूं—अति-
 शुद्धेन । ७३ चं, रा—सोऽभवत् । ७४ पूं—वृत्तया । रा—वत्तया ।
 ७५ चं—रनुपमैः सुतं । पूं—रनुपमै सुतं । गु—रनुपमैयुतं । पूं—
 रनवैरैः सुतं । दी—रनवमैः सुतं । रा—रनुपजीविनः । ७६ गु—
 प्रेष्य । ७७ रा—नास्ति । ७८ कै—वृद्धस्याचिरं । ७९ चं—मति स्थिरं ।
 रा—मिति स्थिता । गु—स्थिरं । ८० गु—या । ८१ गु—परिवर्त्तते ।
 ८२ चं, रा—राममहं । ८३ गु—द्रक्ष्ये ह्यभिपिक्तमिति प्रभुः । पूं—
 द्रक्ष्यमभिपिक्तमिति प्रभुः । दी, पूं—रा—प्रभुः ।

वृद्धिकामो हि^{८५} राष्ट्रस्य सर्वभूतानुकम्पकः^{८६} ।

मत्तः प्रियतरो^{८७} लोके पर्जन्य इव वृष्टिमान् ॥ ३२ ॥

यमशक्रसमो^{८८} वीर्ये बृहस्पतिसमो मतौ ।

महीधरसमो धृत्यां गाम्भीर्ये सागरोपमः ॥ ३३ ॥

महीमहमिमां^{८९} कृत्स्नामधितिष्ठन्तमात्मजम् ।

अनेन वयसा दृष्ट्वा जीवनस्वर्गमवाप्नुयाम्^{९०} ॥^{९१} ३४ ॥

[कुलक्रमागतं राज्यं क्रम एवं नियुज्य हि^{९२} ।]^{९३}

ते^{९४} समीक्ष्य महाराजंः समुपेतं सुतं^{९५} गुणैः^{९६} ।

संह निश्चित्यं सचिवैर्यौवराज्यममन्त्रयत् ॥ ३५ ॥

दिव्यं चैवान्तरिक्षं च भौमं चोत्पातजं^{९७} भयम् ।

आचक्षे स^{९८} मेधावी शरीरे^{९९} चात्मनो^{१००} जराम् ॥ ३६ ॥

८५ पूं—ह । ८५ पं—राज्यस्य । ८६ चं—०कंपनः । ८७ कै, दी—प्रिय-
तमो । रा—प्रियश्वरो । ८८ कै—०क्रोपमो । ८९ गु—धीर्ये । पूं, पूं,
दी—धृत्या । पं—धृत्या । रा—भृत्या । ९० गु—महीमिमामहं । ९१
गु—०मधिष्ठित तमात्मजं । पूं—०मभिपिकं तमा० । दी, पं—०मभि-
तिष्ठं० । रा—०मभिपिकुं तथा० । ९२ पूं—०मवाप्तवान् । ९३ चं, पूं,
रा—नास्ति । ९४ चं, पूं, रा—कुल । ९५ पं—मेव हि सुंक्ष्महि । ९६
कै—नास्ति । ९७ गु—समीक्ष्य स तदा राजा । रा—०महाराजा ।
९८ गु—गुणैः सुतं । दी—समुपेतं गुणैः । ९९ चं, गु, पूं, पूं, दी, रा—
स हि । १०० चं, पूं, रा—संमंत्र्य । १ पूं—०यश्च राज्यम् । २ गु—
चोत्पातकं । पूं—चोत्पातिकं । ३ गु, दी—अथ । पूं, पूं, रा—ह ।
४ चं, गु, पूं, रा, पं—शरीरेणात्मनो । ५ गु, पूं, पूं, दी, रा—

एवं चिंतयतस्तस्य रामं प्रति महात्मन ।

सत्तस्य भावं भायज्ञा विजाय ज्ञानरोगिदा । ३०

गुरवो मधिणश्चैव परां प्रीतिमपागमत् । इत्यधिरमग्रे ।

ततस्ते मन्त्रयामासुर्यौवराज्यमभीप्सवः ।

*तस्य धर्मार्थविदुषो भागमाजाय सर्वशः ॥^९ ३७ ॥

*ग्राहणा मन्त्रिमुखाश्च सर्वे वचनमब्रुवन् ।^९

पूर्णचन्द्राननस्यासं सदृशस्यात्मनो गुणैः ॥ ३८ ॥

लोकप्रियत्वं^९ रामस्य बुध्यते^९ वै^९ महात्मनः ।^९

*आत्मनश्च प्रजानां च श्रेयसा च प्रियेण च ॥^{१२} ३९ ॥

*काले^{१३} कांक्षति संयोगं तेन त्वरति भूमिपः ।^{१२}

अर्हत्येप^{१४} हि^{१४} धर्मात्मा यौवराज्यं महारलः ॥ ४० ॥

समर्थः^{१५} सर्वकार्येषु^{१५} शक्रतुल्यपराक्रमः ।^{१५}

एवं सम्मन्य सहिता ऊचुर्दशरथं नृपम् ॥ ४१ ॥

राजेन् धर्मेण धर्मज्ञ^{१६} पृथिवी तेऽनुपालिता ।

गतश्च सुमहान् कालो वृद्धश्चासि^{१७} नरेश्वरं ॥ ४२ ॥

६ चं, गु, पूं, पूं, दी, रा—नास्ति। ७ पूं—पूर्णचन्द्रनिभस्यास्य । ८ पूं—सदस्य नन्दिनो । ९ गु—लोकप्रियस्त्व । पूं, पूं, दी—लोकेप्रि० । १० गु, पूं—बुध्यते यं । पूं—बुध्याय तं । दी—बुध्या ते च । ११ पूं—लोकप्रियत्वे रतिमान् भूमिपाल सुखावहं । १२ पूं—नास्ति । १३ कै—लोके । दी—काल । १४ के, प—अर्हत्येव । १५ गु—सुधर्मात्मा । १६ चं—सर्व कार्येषु कुशल । १७ पूं—०क्रमे । १८ च—पालने विष्णुतुल्यो हि साक्षाद्विष्णुरिवेश्वर । इत्याधिक "०पराक्रम" इत्यनन्तरम् । १९ के—राज० । चं, पूं—राजधर्मेण० । चं—०धर्मेण भूप । पूं—०धर्मज्ञ धर्मेण । २० के—तनुपालिता । गु—चानुपा० । २१ चं, पूं—वृद्धस्याद्य । पूं—वृद्धस्यद्य (द्य ?) दी, रा, पूं—वृद्धोऽस्यद्य । गु, पूं, पूं—नरेश्वर ।

स रामं युवराजानमभिपिञ्चस्व राघवे ।
 तेषां तु^{२३} वचनं श्रत्वा मनोज्ञं हृदयस्थितम् ॥ ४३ ॥
 अनिच्छन्निव^{२४} जिज्ञासुस्तान्^{२५} जनान्^{२६} प्रत्युवाच सः ।
 कथं^{२७} तु^{२८} मयि धर्मेण पृथिवीमनुशासति ॥ ४४ ॥
 भवन्तः कर्तुमिच्छन्ति^{२९} युवराजं ममात्मजम् ।
 ते तमूर्चुर्महात्मानं वृद्धं दशरथं नृपम् ॥ ४५ ॥
 यद्वयः कृतकल्याणौ^{३०} गुणा पुत्रस्य सन्ति ते ।^{३१}
 पुत्रस्ते देवसदृशः स्वाध्यायाचारसंयुतः ॥^{३२} ४६ ॥
 प्रियकृत् प्रियवादी च प्रजानां पितृमातृवत् ।^{३३}
 बहुश्रुतानां वृद्धानां ब्राह्मणानामुपासिता ॥ ४७ ॥
 *दुर्वृत्तानां नियन्ता च विनीतप्रतिपूजकः ।^{३४}
 न ज्ञातिषु न मित्रेषु^{३५} न च जानपदेष्वपि ॥ ४८ ॥
 जनोऽस्त्यगुणवादी यो रामस्य भुवि भूपते^{३६} ।^{३७}
 सशृद्धवालाः पौरास्ते तथा जानपदा जनाः ॥^{३८} ४९ ॥
 गुणानुरक्ता राजेन्द्र राममिच्छन्ति भूपतिम्^{३९} ।

२२ चं, गु, पू, दी, रा—राघवे । २३ गु—तद् । २४ गु—हृदयेऽस्थितं ।
 २५ चं—अनिच्छन्निव । गु—०छन्नपि । पू—अधिष्ठन्निव । २६ रा—तं जनं ।
 २७ चं, पू, रा—इ । २८ पू, दी, रा, पं—कथं तु । गु—अजस्रं (०म्त्रं ?)
 २९ पू, पू, रा—कृतमि० । गु—कृतमिच्छन्तु । ३० ०र्वयो वृद्धा । ३१ चं,
 पू, रा—कृतकल्याणगुणा । ३२ दी—नास्ति । ३३ गु—नियन्ता दुर्वि-
 मीतानां च विनीतः प्रति० । चं, पू, पू, दी, रा—नास्ति । ३४ पं—वृद्धेषु ।
 ३५ दी—भूमिप । ३६ गु—नास्ति । ३७ चं, गु, पू, पू, दी, रा—भूमिपं ।

गुणकीर्त्या नरपते प्रजा रामेण रञ्जिताः^३ ॥ ५० ॥

एतच्छ्रुत्वा स नृपति^३ द्विजानां मन्त्रिणामपि ।

हर्षं परममागच्छतेषां भावन्नतां प्रति ॥^३ ५१ ॥

सह सञ्चिन्त्य सचिवैर्यौधराज्यमचिन्तयत् ।

सर्वान्नगरवास्तव्यान् पृथग्जानपदानपि^३ ॥ ५२ ॥

आनाययामास तदा पृथिव्यां पृथिवीपतिः ।

ततः प्रजाः समागम्य ब्रह्मक्षत्रमुखीस्तथा ॥ ५३ ॥

अनुज्ञातांः प्रविचिशुं नृपतेर्भवनं^३ महत् ।

आसीनं चापि राजानमैक्ष्वाकुं^३ राष्ट्रवर्द्धनम् ॥ ५४ ॥

प्राच्योदीच्यप्रतीच्याश्च दक्षिणात्याश्च भूमिपाः ।

३८ पूं—रक्षिताः । ३९ चं—एतच्छ्रुत्वा यत्रो राजा । रा—एतत्
 श्रुत्वा यत्रो राजा । गु—इति श्रुत्वा तदा राजा । पूं—एतच्छ्रुत्वा तु राजा
 वै । दी—तच्छ्रुत्वा यत्रनं तेषां । ४० पूं—जिज्ञासां । पूं—प्रजानां । अत्र
 'प्रजा' इति बहिर्लेखितं हस्तेनेतरेण विभिन्नमस्याश्च । ४१ चं, पूं—हर्ष-
 तत्वमुपागच्छन् (पूं—त्) तेषां भावानुगं प्रति । रा—हर्षतत्त्वमुपागच्छ तेषां
 भावानुगं प्रति । गु—परं हर्षमुपागच्छत् । पूं, दी—हर्षं परममुपागच्छत् ।
 पं—हर्षेण भाववतां प्रति । ४२ कै, चं, गु, पूं—संविद्य । ४३ चं, पूं, पूं, दी,
 रा—०ममंप्रयत् । ४४ गु, पूं, दी, पं—नानानगरं । ४५ चं, पूं, रा—ऋषीन्जान-
 पदानपि । ४६ चं, पूं—आवाहयामास । पूं, पं—आनापयामास । दी—आनया-
 मास स । ४७ चं, पूं, रा—पृथिव्याः । ४८ गु—प्रजास्तदागत्य । दी—प्रजा
 समायाता । ४९ पूं, पूं, दी, रा, पं—०स्तदा । ५० पं—अनुज्ञायाथ विविशु ।
 ५१ गु—०भुवनं । ५२ कै—०मैक्ष्वाकुं । चं, पं—०मिक्ष्वाकुं । पूं
 मिक्ष्वाकुं । ५३ पं—राज्य । ५४ गु, पूं—०दीच्या । पूं—प्राच्योदीच्याः ।
 चं, दी, रा, पं—प्राच्योदीच्याः ।

म्लेच्छाश्चान्ये^१ सुवर्हवः पार्वतीयाश्च सङ्गताः ॥ ५५ ॥

[उपासाञ्चक्रिरे ग्रीता महेन्द्रमिव देवताः ।

तेषां मध्ये महाराजो देवानामिव^२ वासवः ॥ ५६ ॥

विद्योत्तमानं प्रभया ददर्श सुतमात्मनः ।

गन्धर्वराजप्रतिमं लोके विश्रुतपौरुषम् ॥ ५७ ॥

दीर्घबाहुं महासत्त्वमत्यन्ताप्रियदर्शनम् ।

शैलप्रतिमदन्तीनां ग्रहीतारं^३ विपाणिनाम् ॥ ५८ ॥

लोके विख्यातवीर्याणां श्रेष्ठं सर्वधनुष्मताम् ।

सुवर्षेणैव^४ पर्जन्यं ह्लादयन्तं प्रजागुणैः ॥^५ ५९ ॥

प्रद्योतयन्तं^६ लोकांश्च^७ महस्त्रांशुमिवांशुभिः ।]^८

तद्राजवेश्म मनुर्जयथावत्प्रतिपृग्मितम्^९ ।

ददृशे भीमनिर्हादं वार्योर्धरिव^{१०} सागरः ॥ ६० ॥

तं^{११} जनार्धं^{१२} बहुविधं राजभिः ममलङ्कृतम् ।

ददर्श घृतिमान्^{१३} राजा प्रजापतिरिवापरः ॥ ६१ ॥

^१ म्लेच्छाश्चान्ये । ^२ चं, गु, पू, पू, दी, रा-च बहवः । ^३ रा-०मपि ।
^४ कै-०मानः । पं-०मानः । ^५ रा-दृष्टुः । ^६ चं, पू, रा-शैलश्रापितम् ।
^७ पं-शैलभूतगजानां । ^८ रा-प्रतोहारं । ^९ पं-सुवर्षेणैव । ^{१०} पं-
ह्लादयन्तमिव प्रजाः । ^{११} चं, पू, रा-ह्लादनं सर्वमित्राणां शत्रूणां शोक-
यदनं । ^{१२} चं, पू, रा, पं-गुणैः प्रद्योतयन्तस्तं (चं-०यन्तं तु) (रा,
पं-०यन्तं तं) । ^{१३} पू, दी-जास्ति । ^{१४} पू-०प्रति० । पं-०प्रति-
पृग्मितं । ^{१५} गु-वार्योर्धरिव । पू, दी-वार्योर्धरिव । रा-वार्योर्धरिव ।
^{१६} चं, पू, दी, रा, पं-सागरं । पू-सागरी । ^{१७} पू-ते जनार्धे ।
^{१८} कै-प्रतिमान् । ^{१९} पं-प्रजापतिरिवामरान् ।

अथ राज्ञां विकीर्णेषु आसनेषु समन्ततः ।

राजानमेवाभिमुखं निपेदुर्नियताः प्रजाः ॥ ६२ ॥

तेषां मध्ये महातेजा देवानामिव वासवः ।

शशुभे सर्वसिद्धार्थः^{७३} सर्वाभरणभूषितः ॥ ६३ ॥

ते तु तं सुमहात्मानं पूर्णचन्द्रसमद्युतिम् ।

उपासाञ्चक्रिरे वीराः कुबेरमिव^{७४} नैर्ऋताः ॥ ६४ ॥

सै लब्धमानैर्विनयात्समागतैः पुरालयैर्जानपदैश्च मानवैः ।

उपोषविष्टैश्च नृपैर्नृपो बभौ सहस्रचक्षुर्भगवानिवामरः ॥^{७५} ६५ ॥

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे प्रकृतिसमागमो-
नाम तृतीयः सर्गः ॥ ३ ॥



७३ गु—राज्ञां विकीर्णेषु । पूं—राज्ञा विकीर्णेषु । दी—राजविकीर्णेषु ।
चं—०विकीर्णेषु । ७४ चं—आसनेषु । पं—स्वासनेषु । ७५ पं—०मुखं ।
७६ चं, गु, पूं, पूं, दी, रा—जना । ७७ पूं—सिद्धार्थं । ७८ दी—सर्वा-
भूतिविभूषितः । ७९ कै—०समग्रमम् । पं—पूर्वाचन्द्र समग्रमं । दी—
राजभिः समलङ्कृतं । ८० रा—कुबेरमिव नैर्ऋताः । ८१ पूं—अलक्षमा-
नैर्वि० । ८२ गु—पुरालयैर्० । ८३ रा—समागतैः । ८४, पूं—नास्ति ।
८५ चं, रा—सुखोप० । १८६ पं—०यान् यथामरैः ॥

[चतुर्थः सर्गः]

ततः परिपदः सर्वा^१ आमन्त्र्य वसुधाधिपः ।

द्वितमुद्वर्षणं^२ चैरमुवाचाप्रतिमं^३ वचः ॥ १ ॥

दुन्दुभिस्वनकल्पेनं^४ गम्भीरेणानुनादिनां ।

स्वर्णं^५ भवनं^६ राजा जीमूर्त इव नादयन् ॥ २ ॥

इदमिन्द्राकुभिः पूर्वैर्नरेन्द्रैः^७ परिपालितम् ।

श्रेयसा योक्तुमिच्छामि सुरार्थमखिलं जगत् ॥ ३ ॥

मयाप्यार्चैरितं पूर्वैः^८ पन्थानमनुगच्छत ।

प्रजा पिनीताश्चोत्सेधे^९ यथावदुपशिक्षिताः ॥ ४ ॥

इदं शरीरं कृत्स्नस्य सुरस्य विपये^{१०} चिरम् ।

पाण्डुरस्यातपत्रस्य छायायां धारितं मया ॥ ५ ॥

१ गु-सर्वाध्यामन्त्र्य । २ चं-द्वयोद्ध० । पं-स्फोतमु० । ३ चं,
गु, पूं, पूं, दी, रा-चैरमु० । ४ गु, पूं-दुन्दुभि० । चं, रा-०स्वर० ।
पूं-०भिनिस्य-अकल्पेन । ५ चं, पूं-०नुनादितं (चं-०ते) । दी-०नुना-
दिना । पं-गांधर्वेणानु० । ६ चं, गु, पूं, पूं, दी, रा-स्वनेन । ७ गु, दी-
शुरनं । चं, पूं, रा-भगवान् । ८ पं-जीमूर्तेनेव नादितां । ९ चं,
पूं-सर्धेन० । रा-सर्धेन० । पं-पूर्व न० । १० पूं-०पालिनी । चं, पं-
प्रतिपा० । ११ चं, पूं, रा-जनं । १२ कं-सङ्क्रिगाचरितं । पं-मृया
सायगितं । चं, पूं, रा-अयोध्याचरितं । १३ दी-पूर्व । १४ चं-यर्धेनमनु० ।
पूं-०गच्छत । १५ कं-०धोमोषं । चं-यिनातिग्रे० । गु, पूं, पूं, दी,
रा-विनातसेनेन । १६ पूं, दी-यथादत्तपभिरक्षिताः । पूं-यथादत्तपाभि०
रक्षितं । चं, गु, रा-यथा दत्तपाभिरक्षिताः । १७ पूं-विषयं ।

प्रायो^{१८} चर्षसहस्राणि बहून्यायुश्च पालितम् ।
 जीर्णस्यास्य शरीरस्य विश्राममभिरोचये ॥ ६ ॥
 राजपुङ्गवगुप्तां^{१९} हि दुर्धरामजितेन्द्रियैः^{२०} ।
 परिश्रान्तश्च^{२१} लोकेऽस्मिन् गुप्तां^{२२} धर्मधुरं^{२३} वहन्^{२४} ॥ ७ ॥
 सोऽहं विश्राममिच्छामि कृत्वा सर्वप्रजाहितम् ।
 भवद्भिरपि तत्सर्वमनुमन्तव्यमर्थं मे^{२५} ॥ ८ ॥
 अनुयातो^{२६} हि मे सर्वगुणैर्ज्येष्ठो^{२७} ममात्मर्जः ।
 पुरन्दरसमो वीर्ये रामः परपुरञ्जयः ॥ ९ ॥
 तं चन्द्रमसि पुण्येण युक्ते धर्मभृतां वरम् ।
 यौवराज्ये ऽभिपेक्तास्मि^{२८} प्रातः क्षत्रियपुङ्गवम् ॥ १० ॥
 अनुरूपो हि राज्यस्य लक्ष्मीवान् लक्ष्मणाग्रजः ।
 त्रैलोक्यमपि नाथेन येन स्थान्नाथवत्तरम् ॥ ११ ॥

१८ चं, गु पूं, पूं दी, रा प्राप्य । १९ च, गु पूं पूं, दी, रा-पुगवजुष्टा ।
 २० च, गु, पूं, पूं, दी, रा-दुर्वहाम० । दी-०मज्जतात्मनि । २१ चं-
 परिक्षाता । पूं-परिक्रान्तश्च । रा-परिकाता । पूं-परिश्रातस्य ।
 २२ पू, पूं प-गुर्वी । २३ च, पूं-०धुरंमहत् । पूं० धुरावह ।
 २४ च-धारयामि जना लोके दृढो भूत्वा महोक्षवत् ।
 इदानीं ता समुत्तोर्य मन्त्रिणो त्रिप्रश्नत्रिया । इत्यधिकं 'वहन्' इति पश्चात् ।
 २५ च, गु रा-सर्व० । २६ च, पूं-०मनुवत्तन्ध्वमद्य वै । रा-०मनु
 वर्तव्यम० । दी-०मद्य ते । २७ पूं, पं-अनुजातो । चं, गु, पूं, दी, रा-
 अनुज्ञाते । २८ दी-०जुष्टो० । पं-सर्वगुणज्येष्ठो महामना । २९ गु-
 पुरपुर० । ३० पूं, दी-भिपेक्ता० । ३१ पं-प्रीत. ०पुगवा । ३२ पं-
 राष्ट्रस्य । पूं-राज्या वै । चं, गु पूं, दी, रा-राजा वै । ३३ चं, पूं, रा-
 लक्ष(रा-क्ष्म)णान्वित ।

संयोज्य रामं राज्येन श्रेयमाऽहं महीमिमाम् । ९
 संश्रित्यं रामस्य भुजां^{३९} विहर्ताऽस्मि गतज्वरः ॥ १२ ॥
 इति ब्रुवाणं मुदिता अभ्यनन्दन्नुपं प्रजाः ।
 वृष्टिमन्तं महानादं पर्जन्यामिव^{४०} बर्हिणः ॥ १३ ॥
 तस्य तद्वचनं श्रुत्वा देवकल्पस्य धीमतः ।
 प्रियं चवानुरूपं च वक्तुं^{४१} समुपचक्रमुः ॥ १४ ॥
 दिव्यैर्गुणैर्दक्षममो रामः शक्रममो बले ।
 इक्ष्वाकुभ्यो हि सर्वेभ्यो व्यतिरिक्तो^{४२} विशांपते ॥ १५ ॥
 रामस्य पुरुषो लोके सत्त्वधर्मयशोव्रतैः^{४३} ।
 ममो न विद्यते कश्चिद्विशिष्टः कुत एव तु ॥ १६ ॥
 धर्मात्मा मत्पत्नी च शीलवानमृषकः ।^{४४}
 दान्तः सत्प्रहितः प्राज्ञः कृतज्ञो विजितेन्द्रियः ॥ १७ ॥
 मृदुश्च स्थिरबुद्धिश्च नित्यं दानानुकम्पकः ।

३४ कै, चं, पूं, रा—महीपतिम् । ३५ गु दी—संश्रित्य । ३६ पूं—भुजे ।
 ३७ गु—सर्वेऽनेदन्नुपं । पूं—सर्वे नन्दन्नुपं । पूं—सर्वे चैते नृपे । दी—सर्वे
 नन्दन्नुपं । रा—सर्वे चैते नृपे । ३८ गु पूं, पूं, दी, रा—नगः । ३९ चं, गु, पूं, दी,
 रा वृष्टिमन्तमिवांमोदं गर्जतामिव । पूं—वृष्टिमन्तमिवावृदं गर्जतामिव । पूं—
 षगर्जन्तामिव । ४० पूं—बर्हिणः । ४१ चं—सर्वकल्पस्य । पूं—सर्व्य
 कल्पस्य । रा—सर्वकल्पस्य । ४२ पूं—प्रवतन्मुपचक्रमुः । दी—ञ्चकमे ।
 ४३ पूं—व्यतिरेके । रा—व्यतिरिक्ते । ४४ चं, रा—सत्यधर्मयशोगुणैः ।
 पूं—सत्यधर्मपयोगुणैः । ४५ पूं—समानो । ४६ रा—धर्मयात्रनसूयी च
 सत्यवान् षलयांस्तथा । ४७ गु, पूं, दी, पूं—सांत्वपिता शक्तः । ४८ चं,
 गु, पूं, पूं, दी, रा स्थिरबुद्धिश्च । ४९ चं—०कंपनः ।

प्रियवादी जितक्रोधो दीर्घदर्शी महामंतिः ॥ १८ ॥

बहुश्रुतानां वृद्धानां ब्राह्मणानामुपाभिता ।

तेन तस्यातुलाकीर्तिं यशस्तेजश्च वर्द्धते ॥ १९ ॥

समर्थश्च धनुर्वेदे ह्येष्टे गजे रथे ।

लब्धास्त्रैः शब्दवेधो च दूरपाती दृढायुधः ॥ २० ॥

देवासुरमनुष्याणां संयुगेष्वपराजितः ।

दिव्यमानवसंस्थेषु सर्वास्त्रेषु विशारदः ॥ २१ ॥

यं चोपयाति सद्ग्रामे ग्रामान्ते नगरेपि वां ।

गत्वा सौमित्रिणा सार्द्धं तं जित्वा पिनिवर्त्तते ॥ २२ ॥

मदाज्ये नगराद्गच्छन् कुञ्जरेण रथेन वां ।

राजमार्गेऽपि नो दृष्ट्वा कुशलं परिपृच्छति ॥ २३ ॥

पुत्रेष्वग्निषु दारेषु प्रेष्यशिष्यगणेषु च ।

निरिलेनानुपूर्व्येण पिता पुत्रानिवारसान् ॥ २४ ॥

५० गु महाद्युति । ५१ पूं—वृत्तानां । ५२ पू—वश्यातु० । ५३ गु पूं
 पूं, दी, रा, पं—समाप्तश्च । ५४ दी अश्व० । ५५ गु, पूं, दी—लघ्वस्त्र
 पू—लघ्वस्त्र । पं—लघ्वस्त्र० । ५६ गु, पूं, पूं, दी, रा, पं—०मानुष०
 च—०मानुषस्त्रेषु । ५७ पूं, पं—च । ५८ चं, पूं—विजित्योपनिवर्त्तते
 रा—तं जित्योपनिवर्त्तते । गु, दी—नं जित्योपनिवर्त्तते । पूं—जित्योपा
 निवर्त्तते । ५९ गु, पूं, दी, पं—निर्भयं गच्छन् । रा—तनये गच्छन् । ६०
 चं, पूं, दी—च । ६१ चं, पूं, रा—राजमार्गेण । ६२ गु, पूं, दी, रा, पं
 ०नुपूर्व्येण । पूं—०नुपूर्व्येण ।

शुश्रूषन्ति^३ वचः शिष्याः कच्चित्कर्मसु^३ देशिर्ताः ।
 इति नैः पुरुषैर्व्याध्रैः सदा रामो ऽभिर्भाषते ॥ २५ ॥
 व्यमनेषु च सर्वेषां^३ भृशं भवति दुःखितः ।
 दृष्ट्वा नो ऽभ्युदयं किञ्चित्पितेव पशितुष्यति ॥ २६ ॥
 वर्त्मः श्रेयसि जातस्ते दिष्ट्याऽसौ तव राघवैः ।
 दिष्ट्या रामो गुणैर्युक्तो मारीच इव कश्यपः ॥^३ २७ ॥
 बलमारोग्यमायुश्च रामस्य विदितात्मनः ।
 आशान्ति हि जनः सर्वो राष्ट्रेषु नगरेषु च ॥^३ २८ ॥^३
 अभ्यन्तराश्च बाह्याश्च पौरजानपदा जनाः ।^३
 स्त्रियो वृद्धास्तरुण्यश्च मायं प्रार्तिः समाहिताः ॥ २९ ॥
 सर्वे^३ देवान्नमस्यन्ति रामस्यार्थे महात्मनः ।
 तेषामाशान्तिं^३ च त्वत्प्रसादाच्च युज्यताम् ॥ ३० ॥

६३ गु, पू-शुश्रूषन्ते । ६४ गु-च व. १६५ गु पू ग, पं-कच्चित्क० दी-कच्चित्क० ।
 ६६ गु-देशिना । पू, दी-देशिनाः । ग-देशिताः । चं, पू, पं-देशिताः ।
 ६७ पू-नान् । ६८ गु, दी-व्याध्र । ६९ दी-व्याध्र । ७० पं-
 सर्वेषु । ७१ चं, गु, पू, पू, दी, रा-श्रुत्वा चाभ्युदयं । ७२ पू, दी-
 वर्त्म । ७३ पू, पू, रा, पं-राघव । ७४ पू-नास्ति । ७५ दी-पौरा जान-
 पदा जनाः । ७६ चं, गु, पू, रा, पं-आशान्ति जनाः सर्वे । ७७ दी-
 नास्ति । ७८ गु-आभ्यान्तराश्च । पू-आभ्यान्तराश्च । ग-अभ्यान्तराश्च । पं,
 अभ्यान्तराश्च । ७९ पू, पू, रा, पं-बाह्याश्च । ८० ग प्रायः । ८१ गु, दी-समा-
 हितः । ८२ सर्वे देवा नमः । पू-सर्वान्देवान्नमः । रा-सर्वान् देवा-
 न्नमः । ८३ गु, पू, दी-तेषामाशान्तिं । चं-तेषामाशान्तिं । पू, ग-
 तेषामाशान्तिं । पं-व्यमनेषु ।

वीरमिन्दोवरश्यामं सर्वशत्रुनिर्हणम् ।

पश्येम यौवराज्येस्थं रामं राजीवलोचनम् ॥ ३१ ॥

तं देवदेवोपममात्मवन्तं सर्वस्य लोकस्य हिते निविष्टम् ।

अतीव तं^{८५} क्षिप्रमुदारसचं पुरेऽभिपेक्तुं वरदारहासि त्वम ॥ ३२ ॥

इत्थार्पे रामायणे ऽयोध्याऽंशे प्रकृतिवाक्यं

नाम चतुर्थः सर्गः ॥ ४ ॥



८४ पं—पौरराजान । ८५ पूं—आर्ता चयं । गु, दी—अतीव न । पूं—
अतीव ते । ८६ गु—क्षत्रमुदार० । ८७ गु—अयोध्या पर्वणि ॥

[पञ्चम सर्गः]

तेषामञ्जलिमालास्ताः प्रतिगृह्य समन्ततः ।

हृष्टो दशरथो राजा प्रोवाचेदं वचस्तदा ॥ १ ॥

घन्यो ऽस्म्यनुगृहीतो ऽस्मि भवद्भिः प्रियवादिभिः ।

यन्मे ज्येष्ठं प्रियं पुत्रं युवराजमिहेच्छथ ॥ २ ॥

इति राजा ऽनुभाष्यैतानिदं वचनमब्रवीत् ।

वासिष्ठं वामदेवं च तेषामेवोपभृष्वताम् ॥ ३ ॥

चैत्रः श्रीमानयं मासः पुण्यः पुष्पितकाननः ।

यावराज्याय रामस्य सर्वमेवोपकल्प्यताम् ॥ ४ ॥

आभिषेचनिकं द्रव्यं यत्किञ्चिद् ज्ञापयन्तु माम् ।

यन्मया चोपहर्त्तव्यं रामराज्याऽभिषत्तये ॥ ५ ॥

तौ तथेति प्रतिज्ञाय नृपतेर्वचनात्तदा ।

लेसयाश्चरतुर्द्रव्यं भृष्येवोपभृष्वतः ॥ ६ ॥

कृतमित्येवं चाब्रूतामभिगम्यं नराधिपम् ।

सुप्रोत्तमनसा प्रीतं हर्षयन्तौ पुनर्नृपम् ॥ ७ ॥

ततः सुमन्त्रमाहूय राजा दशरथो ऽब्रवीत् ।

रामः कृतात्मा भवता शीघ्रमानीयतामिति ॥ ८ ॥

१ पं—तेषां प्राञ्जलिमानस्ताः । २ अ, कु—०तान्तेषं भूयो ऽर्घ्योत्तमः ।
 ३ अ, कु—रामाय यौघगायं मे दानुमर्षेय रोचते । ४ कै—सर्वे । ५ अ,
 कु—भरंशे । ६ कै—भाषयन्तु । ७ पं—०पकर्त्तव्यं । ८ अ, कु—०व्यचनं
 गतः । ९ अ, कु—भृष्येवैतं ननेदतु । १० पं—०मित्येवमं ब्रूतामधिगम्य ।
 ११ कै—तु मं नृपम् । पं—पुत्रं नृपं ।

स तथेति प्रतिज्ञाय सुमन्त्रो राजशासनात् ।
 रामं तत्रानिनायार्थं रथेन रथिनां वरं ॥ ९ ॥
 अथ तत्र समानीतास्तदा दशरथं नृपम् ।
 प्राच्योदीच्यप्रतीच्यार्थं दाक्षिणात्याश्च भूमिपाः ॥ १० ॥
 म्लेच्छाश्च यवनाश्चैव शर्काः शैलान्तवासिनः ।
 उपासाञ्चक्रिरे सर्वे तं देवा इव वामनम् ॥ ११ ॥
 तेषां मध्ये स राजर्षिर्मरुतामिव वासवः ।
 प्रासादस्थो रथगतं ददर्शयान्तमात्मजम् ॥ १२ ॥
 गन्धर्वराजप्रतिमं लोके विश्रुतपौरुषम् ।
 दीर्घबाहुं महासत्त्वं मत्तमातङ्गगामिनम् ॥ १३ ॥
 चन्द्रकान्ताननं राममतीवप्रियदर्शनम् ।
 रूपौदार्यगुणैः पुंसां दृष्टिचित्तापहारिणम् ॥ १४ ॥
 धर्माभितप्ताः पर्जन्यं ह्लादयन्तामिव प्रजाः ।
 नातृष्वेवं तमायान्तं वीक्षमाणो नराधिपः ॥ १५ ॥
 अवतार्य सुमन्त्रश्च राघवं स्यन्दनोत्तमात् ।
 पितुः समीपं गच्छन्तं प्राञ्जलिः पृष्ठतोऽन्वगात् ॥ १६ ॥

१२ अ, कु—तत्रानयां चक्रे । १३ अ, कु—वरं । १४ अ, कु—समा
 सानं तदा । १५ पं—०दीच्याश्चप्र० । “श्च” इति लोपव्यञ्जकचिह्नेन
 अङ्कितः । १६ पं—शकः । १७ अ, कु, पं—ते । १८ पं—वासवं ।
 १९ पं—चन्द्रकांत्याननं । २० पं—दृष्टिचिता० । २१ अ, कु—नातृष्वत ।
 २२ पं—०व्यांतमीक्ष० । २३ पं—प्रांजलिं । २४ कै—०न्वयात् ।

स तं कैलासश्रृङ्गाभं प्रासादं नरपुङ्गवः ।
 आरुरोह नृपं द्रष्टुं सहै सूर्तेर्न राघवः ॥ १७ ॥
 स प्राञ्जलिरभिप्रेत्य प्रणतः पितुरन्तिकम् ।
 नाम संश्रावयन् रामो वचन्दे चरणौ पितुः ॥ १८ ॥
 तं दृष्ट्वा प्रणतं पार्श्वे कृताञ्जलिपुटं नृपः ।
 गृहीत्वाऽञ्जलिमाकृष्य सखजे प्रियमात्मजम् ॥ १९ ॥
 तस्यै चाभ्युच्छ्रितं श्रीमान् मणिकाञ्चनभूषितम् ।
 दिदेश राजा रुचिरं रामायानुपमासनम् ॥ २० ॥
 तदासनवरं प्राप्य दीपयामास राघवः ।
 स्वयेव प्रभया मेरुमुदये विमलो रविः ॥ २१ ॥
 तेन विभ्राजता तत्र सा सभाऽपि^३ व्यराजत ।
 विमलग्रहनक्षत्रौ शारदी घोरिवेन्दुना ॥ २२ ॥
 तं स पश्यन्नरपतिस्तुतोप प्रियमात्मजम् ।
 अलङ्कृतमिवात्मानमादर्शतलमास्थितम् ॥ २३ ॥
 स तं सस्मितमाभाप्य पुत्रं पुत्रवतां वरः ।
 उवाचेदं वचो राजा देवेन्द्रमिव कश्यपः ॥ २४ ॥

२५ अ—कैलाश० । २६ कै—सहितस्तेन । २७ अ, कु—पितुरन्तिके ।
 २८ अ, कु—गृहीता० । २९ कै—स्वयमात्मजम् । ३० अ, कु—चाप्यु-
 चितं श्रीमन् । कै—चाभ्युत्थितं० । ३१ अ, कु, पं—भूषणम् । ३२ अ,
 कु—व्यदीपयत । पं—सोदीपयत । ३३ अ, कु—सभाति । ३४ कै—
 विशालग्रह० । ३५ कै—घोरिवेन्दुना । ३६ पं—भूमिपः ।

ज्येष्ठायामसि मे पैत्न्यां सदृश्यां सदृशः सुतः ।
 उत्पन्नः सद्गुणैः पूज्यो मम रामात्मजः प्रियः ॥ २५ ॥
 त्वया यतः प्रजाश्रेमाः स्वगुणैरनुरजिताः ।
 तस्मात्त्वं पुण्ययोगेन यौवराज्यमवाप्नुहि ॥ २६ ॥
 कौमं च त्वं^{४०} प्रकृत्यैव विनीतो गुणर्वानसि ।
 गुणवर्त्त्वात् पितृस्नेहात् पुत्र वक्ष्यामि ते हितम् ॥ २७ ॥
 भूयो विनयमास्थाय भव नित्यं जितेन्द्रियः ।
 कामक्रोधसमुत्थानि त्यज त्वं^{४१} व्यसनानि च ॥ २८ ॥
 परोक्षया ऽपि^{४२} संबुद्धयो राम प्रत्यक्षया तथा ।
 परमां प्रकृतिं दृष्ट्वा परिपाल्याः प्रजास्त्वया ॥ २९ ॥
 निर्ममो^{४३} निरहङ्कारो भूत्वा राम गुणान्वितः ।
 ततः पालय पुत्रेमाः प्रजाः पुत्रानिगौरसान् ॥ ३० ॥
 योधानमात्यान् हस्त्यश्वान् कोपं चावेक्ष्य यत्नवान् ।
 तथा मित्राणि मध्यस्थानमित्रांश्चानुरञ्जय ॥ ३१ ॥
 तुष्टानुरक्तप्रकृतिर्यः पालयति मेदिनीम् ।
 तस्य नन्दन्ति मित्राणि लब्ध्वाऽमृतमिवामराः ॥ ३२ ॥

३७ कै—यत्त्वं । ३८ अ, कु—उत्पन्नस्त्वं गुणज्येष्ठो । ३९ कै, पं—कार्यं ।
 ४० कै, पं—ते । ४१ के—गुणवानपि । ४२ कु—गुणाकरो । अ—गुण
 वत्ये । ४३ पं—त्यजस्व । अ, कु—त्यजेच्च । ४४ अ, कु—निशं बुद्धया ।
 ४५ कै—प्रतिपाल्या । ४६ अ, कु—त्वया प्रजा । ४७ कु—ततस्त्वं ।
 अ—तत्परो । ४८ अ, कु—हस्त्यश्वं । ४९ के—मध्यस्थानमित्राण्यप्यु
 परंजय । पं—मध्यस्था मित्र चैवानुरंजयन् ।

तस्मात्पुत्र त्वमात्मानं नियम्यैवं^{५०} समाचर ।

इति राज्ञो वचः श्रुत्वा नराः प्रियनिवेदिनः ।

त्वरिताः शीघ्रमभ्येत्य कौशल्यायै न्यवेदयन् ॥ ३३ ॥

सा हिरण्यं च गांश्चैव^{५१} रत्नानि विविधानि च ।

व्यादिदेश प्रियारुयेभ्यः कौशल्या प्रमदोत्तमा ॥ ३४ ॥

अथाभिवाद्य राजानं रथमारुह्य राघवः ।

ययौ स्वं द्युतिमान्वेश्म जनैर्वैः पथि पूजितः ॥ ३५ ॥

ते चापि पौरा नृपतेर्वचस्तच्छ्रुत्वा ततोलाभमनन्तमापुः ।

नरेन्द्रमामन्त्र्य गृहाणि गत्वा देवान् समानर्चुरतीवहृष्टाः ॥ ३६

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे रामाभिषेकव्यवसायो

नाम पञ्चमः सर्गः ॥ ५ ॥

५० अ, कु—निशम्यैवं । ५१ अ, कु, पं—गां चैव । ५२ कै—तदा तेभ्यः ।

पं—प्रयतेभ्यः । ५३ कु—०मिवेष्टमापुः । अ—०मिवेष्टिमाप्य । ५४ कै—

गृहांश्च ॥

[षष्ठः सर्गः]

गतेष्वथ नृपो भूयः पौरेषु सह मन्त्रिभिः ।
 मन्त्रयित्वा ततश्चक्रे निश्चयज्ञः स निश्चयम् ॥ १ ॥
 श्व एव पुष्यो भविता सुतो मे श्वो ऽभिपिच्यताम् ।
 रामो राजीनताम्राक्षो यौनराज्य इति प्रभुः ॥ २ ॥A
 अथान्तर्गृह्णामाश्रित्य राजा दशरथस्तदा ।
 सूतमाज्ञापयामास रामं० पुनरिहानय० ॥ ३ ॥
 प्रतिगृह्य० स० तद्वाक्यं सूतः पुनरुपाययौ^१ ।
 रामस्य भवनं शीघ्रं राममानयितुं पुनः ॥ ४ ॥
 तेन चापेदित तस्य रामस्यौगमनं पुनः ।
 द्रष्टुमिच्छति राजा त्वां शीघ्रमागन्तुमर्हसि ॥ ०५ ॥
 श्रुत्वा प्रमाणमत्र त्वं गमनायेति राघवं ।
 इति सूतस्य चः श्रुत्वा रामो ऽपि त्वरयाऽन्वितः ॥ ६ ॥
 प्रययौ राजभवनं पुनर्द्रष्टु नरर्षभम् ।
 स श्रुत्वा समनुप्राप्त रामं दशरथो नृपः ॥ ७ ॥
 तूर्णं प्रवेशयामास निरक्षुः प्रियमुत्तमम् ।
 प्रविशन्नेव च श्रीमान् राघवो भवन पितुः ॥ ८ ॥
 ददर्श पितरं दूरात् प्रणिपत्य कृताञ्जलिः ।
 प्रणमन्तं समुत्थाप्य तं परिप्रेज्य भूमिपः ॥ ९ ॥

१ प—भवति । A प—राममघेदयत्सर्वं प्रणगाद्धृत्तेन न ।
 ०५—नास्ति । (त्यक्तं भाति ।) २ प—पुनरुत्थाययौ । ३ क—रामस्य
 गमन । ०५—नास्ति । (त्यक्तम् ।) ४ क—राघव । ५ प—चानु ।
 ६ प—स । ७ पु—प्रणामान । अ—प्रणामान ।

प्रदिश्य चाम्भे रुचिरमामनं पुनरत्रयीत् ।
 राम वृद्धो ऽस्मि दीर्घायुर्भुक्त्वां भोगान् यथेप्सितम् ॥ १० ॥
 ब्रह्मवादिः प्रतुर्गतस्त्वयेष्टं भूरिदक्षिणः ।
 श्रामिष्टमपत्यं मे मयाऽर्घ्यनुपमं भृवि ॥ ११ ॥
 दत्तामिष्टमधीतं च मया पुरयसत्तम ।
 अनुभूतानि चं तेषां वीर राज्यमुखानि च ॥ १२ ॥
 देवादिपितृपिप्राणामर्षेणो ऽस्मि तथाऽऽत्मनः ।
 न विशिन्मम कर्तव्यं तयान्यत्रामिपेचनात् ॥ १३ ॥
 अतस्त्वां यदहं त्रयां तन्मे न्वं कर्तुमर्हामि ।
 अथं प्रकृतयः सर्वास्तत्रामिच्छन्ति नराधिपम् ॥ १४ ॥
 प्रतस्त्वां यौवराज्ये ऽहमिपेक्ष्यामि पुत्रकं ।
 राक्षन्ते च तयो राम स्वभान् पश्यामि दारुणान् ॥ १५ ॥
 गनिर्गता महोन्वाश्र पंतन्ति सरानिःस्यनोः ।
 जगृष्टं च मे राम नैऋतं दारुणं प्रहः ॥ १६ ॥
 प्राग्दत्तानि दैवज्ञाः पर्याह्वतक्ताहुमिः ।
 प्रापन्तो हि निनिगानामिदृशानां ममृद्धये ॥ १७ ॥

८६ मा. १० अ. ५—मुक्त्वा भोगान् यथेप्सितम् । १०—मुक्त्वा भोगान्-
 यथेप्सितम् । १० अ. ५—ब्रह्मवादिः । ११ अ. ५—श्रामिष्टम् ।
 ११ अ. ५—तन्मे न्वं । ११ अ. ५—वैशानि । १२ अ. ५—पितृभूता-
 ऽस्मि । १० अ. ५—अथ । १३ अं—पुत्रकं । १३ अं—मदा । १८ अ—
 प्राग्दत्तानि दैवज्ञाः । १५ अ. ५—स्यनोः । १६ अं—मदास्यनाः ।
 १६ अं—प्रहः । १७ अ. ५—मार्ग । मुदितं मार्ग । १६ अं—स्य ।

राजा वा मृत्युमाम्मोति रोज्यं वा नैव ऋच्छति ।
 तद्यावदेव चित्तं^{२२} मे न विमुह्यति राघव ॥ १८ ॥
 तावदेवाभिषिच्यस्व चला हि प्राणिनां गतिः ।
 अद्य चन्द्रो ऽभ्युपगंतः पुष्यात्पूर्वं पुनर्वसुम् ॥ १९ ॥
 श्वः पुष्ययोगं नियतं वक्ष्यन्ते देवाचिन्तकाः ।
 तत्र त्वमभिषिच्यस्व मनस्त्वरयतीव माम् ॥ २० ॥
 श्वस्त्वाऽहमभिषेक्ष्यामि यौवराज्ये परन्तप ।
 तस्मात्प्रयाऽद्य व्रतिना निशेयं नियतात्मना ॥ २१ ॥
 सह बध्नोपवस्तव्या दर्भास्तरणशायिनीं ।
 सुहृदस्त्वाऽप्रमत्ताश्चं रक्षन्त्वद्य प्रयत्नतः ॥ २२ ॥
 भवन्ति बहुविधानि कार्याण्येवंविधानि हि^{२३} ।
 निष्कासितश्चं भरतो यावदेव पुरादितः ॥ २३ ॥
 तावदेवामिषेकस्ते प्राप्तकालो मतो मम ।
 कामं खलु सतां वृत्ते भ्राता ते भरतः स्थितः ॥ २४ ॥
 ज्येष्ठानुवर्ती धर्मात्मा सानुक्रोशो जितेन्द्रियः ।
 किन्तु चित्त मनुष्याणां जानाम्येव यथा चंलम् ॥ २५ ॥
 सतां च धर्मकृत्यानि कृतशोभानि राघव ।
 इत्युक्त्वा सो^{२४} ऽभ्यनुज्ञातः शो भाविन्यभिषेचने ॥ २६ ॥

२२ अ, कु—राष्ट्रं वाग्दमृच्छति । पं—ऋच्छति । २३ अ, कु—चेतो ।
 २४ अ, कु—ह्युप० । २५ अ, कु—ऽत्वामभिनिवेक्ष्यामि । २६ अ, कु—
 धर्मसस्तरशा० । २७ अ, कु—सुहृदध्याप्रमत्तास्त्वा । पं—सुहृदस्त्वा—
 प्रपद्यत्य । २८ अ, कु, पं—तु । २९ अ, कु—निर्घासितश्च । ३० अ, कु—
 जानामि चलनात्मकं । प—जानाम्येव० । ३१ अ, कु—इत्युक्तान्मो
 (कु—शो) । ३२ अ—प्यनु० ।

ब्रजेति राज्ञीं काकुत्स्थो जगाम खनिवेशनम् ।
 प्रविश्य चात्मनो वेश्म राज्ञाऽऽदिष्टे ऽभिपेचने ॥ २७ ॥
 तस्मिन् क्षणे ऽभिनिर्गम्ये मातुरन्तःपुरं ययौ ।
 प्रणतस्तत्र तामेवै मातरं क्षौमवासङ्गम् ॥ २८ ॥
 ददर्श याचमानां तां देवतावेश्मनि थियम् ।
 प्रागेव चागता तत्र सुमित्रा लक्ष्मणस्तथा ॥ २९ ॥
 सीता चैवापि^{३६} तच्छ्रुत्वा प्रियं रामाभिपेचनम् ।
 तस्मिन् काले हि कौशल्या तस्यावामीलितेक्षणा ॥ ३० ॥
 सुमित्रयोपास्यमाना सीतया लक्ष्मणेन च ।
 श्रुत्वा पुष्येण पुत्रस्य यौवराज्याभिपेचनम् ॥ ३१ ॥
 प्राणायामेन पुरुषं ध्यायन्ती सा जनार्दनम् ।
 तथा स नियतामेवमभिगम्याभिवाद्य च ॥ ३२ ॥
 उवाच मातरं रामो हर्षयिष्यन्निदं वचः ।
 अम्ये^{३३} पित्रा नियुक्तो ऽस्मि प्रजापालनकर्मणि ॥ ३३ ॥
 भविता श्वो ऽभिपेको मे यथा वै शासनं पितुः ।
 सीतया चोपवस्तव्या रजनीयं मया सह ॥ ३४ ॥
 एवमृत्विगुपाध्यायैः सह मामुक्तवान् नृपः ।
 यानि चात्यन्तयोग्यानि श्वो भाविन्यभिपेचने ॥ ३५ ॥

३३ अ, कु, पं—रामः पितरमभिवाद्याभ्ययाद्गृहं । ३४ अ—विनिगस्य ।
 कु—विनिर्गत्य । पं—विनिर्गम्य । ३५ अ, कु—तत्र तां प्रयतामेव ।
 पं—तत्र तां प्रणतामेव । ३६ अ, कु, पं—चानापिता (पं—चानापिता) ध्रुत्वा ।
 ३७ अ, कु अद्य ।

तानि मे मङ्गलान्यद्य सीतायाश्चापि कारय ।
 एतच्छ्रुत्वा तु कौशल्या चिरकालाभिकाङ्क्षितम् ॥ ३६ ॥
 हर्षवाप्पाकुलं वाक्यमिदं राममभाषत ।
 वत्स राम चिरं जीव हतास्ते परिपंथिनः ॥ ३७ ॥
 ज्ञातीन् मे त्वं^{३६} श्रिया युक्तः सुमित्रायाश्चनन्दय ।
 कल्याणे त्वं च नक्षत्रे मयि जातो ऽसि पुत्रक ॥ ३८ ॥
 येन त्रया दशरथो गुणैराराधितः पिता ।
 अमोघा चार्षे मे^{३७} भक्तिः पुरुषे पुष्करेक्षणे ॥ ३९ ॥
 सैयमिक्ष्वाकुराजर्षिं श्रीस्त्वामद्याश्रयिष्येति ।
 इत्येवमुक्तो मात्रेदं रामो लक्ष्मणमैव वीत् ॥ ४० ॥
 प्राञ्जलिं प्रह्वमासीनमभिर्वाक्ष्य स्मितान्वितः ।
 लक्ष्मणेमा मया सार्द्धं प्रशधि त्वं वसुन्धराम् ॥ ४१ ॥
 द्वितीयो मे ऽन्तरात्मा त्वं त्वामियं श्रीरुपस्थिता ।
 माँमित्रे भुङ्क्ष्व भोगांस्त्वमिष्टान् राज्यफलानि च ॥ ४२ ॥
 जीवितं चापि राज्यं च त्वदर्थमभिकाँमेये ।
 इत्युक्त्वा लक्ष्मणं रामो मातरावभिवाद्य च ।
 अभ्यनुज्ञाय सीता च जगाम स्वं निवेशनम् ॥ ४३ ॥
 इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे रामराज्योपनिमंत्रणं
 नाम षष्ठः सर्गः ॥ ६ ॥

३८ अ, कु, प—वैदेह्याद्यापि(कु—मि) । ३९ अ, कु—ज्ञातीना । ४० अ,
 कु—नदन । ४१ अ, कु—कल्याणवति । प—०त्वं तु । ४२ अ, कु—वत ।
 ४३ पं—या । ४४ अ, कु—०राजर्षे ० । ४५ अ, कु—ज्ञानरम ० । ४६ अ,
 कु—चैय । ४७ प—०भिक्षाक्षये । ४८ अ, कु—०त्राप्य ।

[सप्तमः सर्गः]

ग चिन्तयानो^१ नृपतिःशोभाविन्यभिपेचने ।
 पुरोहितं समाह्वय वसिष्ठमिदमब्रवीत् ॥१॥
 गच्छोपवामं काकुत्स्थं कारयाद्य तपोधन ।
 श्रीयशैराज्यलाभाय बध्वा सह यतव्रतम् ॥२॥
 तथेति च स राजानमुक्त्वा वेदविदां क्रः ।
 स्वयं वसिष्ठो भगवान् यथा रामनिवेशनम् ॥३॥
 उपवामयितुं रामं मंत्रविन्मंत्रपारगः ।
 ब्राह्मं रथवरं युक्तमास्थाय स^२ धृतव्रतः^३ ॥४॥
 ग रामभवनं प्राप्य पांडुराभ्रचयोपमम् ।
 तिस्रः कक्षा^४ रथेनैव विवेश मुनिपुंगवः^५ ॥ ५ ॥
 तमागतमृषिं रामस्त्वरमाणः समंभ्रमः ।
 मानयिष्यन्म मानार्हं निश्चक्राम निवेशनात् ॥ ६ ॥
 अभ्येन्य स्वरमाणश्च रथाभ्याशं मनीषिणः ।
 ततोऽवतारयामास पण्डितं रथात्स्वयम् ॥ ७ ॥ ५१
 स चनें प्रश्रितं दृष्ट्वा प्रमंभाप्य^६ प्रशम्य^७ च ।^८

१ क.—चिन्तयानो । २ क.—मधृतव्रतः 'च' इत्यु रगित्तिवित्तं मकार-
 स्थाने केनचित्, अन्यथा नेतिन्या । अ, कु.—मुपृत० । ३ क.—कक्ष्या ।

४ अ, कु, पं—०मत्तमः ।

५ क.—ने रथाद्यगेहेनं विद्वान्पागतं गुणम्

आलोकात्तरयामास प्रत्युदञ्चन स राधयः

प्रतो यन्ननमाशंशस्तर्म्म रामः कृतांजलिः

गामाद्भिमुत्सन्नर्था संभाप्याभिप्रशम्य च

६ पं स संभाप्य । ७ पं—प्रशम्य । ८ कः स तु प्रविष्य भयनं रामस्य
 मुनिपुंगवः ।

प्रियार्हं हर्षयन् राममिन्दुवाच पुरोहितः ॥ ८ ॥
 प्रसन्नस्ते पिता राम यौवराज्यमवाप्स्यसि ।
 उपवासं भवानद्य करोतु सह सीतया ॥ ९ ॥
 प्रातस्त्वामभिपेक्ता हि यौवराज्ये नराधिपः ।
 पिता दशरथः श्रित्या ययातिं नहुषो यथा ॥ १० ॥
 इत्युक्त्वा स तदा राममुपवासं यतत्रतम् ।
 मंत्रवत्कारयामाम^८ वैदेह्या सहितं मुनिः ॥ ११ ॥
 ततो यथावद्रामेण स राज्ञो^९ गुरुरर्चितः ।^{A2}
 अभ्यनुज्ञाय^{१०} काकुत्स्थं ययौ राजनिवेशनम् ॥ १२ ॥
 सुहृद्भिस्तत्र रामो ऽपि महायैश्च^{११} प्रियंवदैः ।
 सभाजितो विवेशां तस्ताननुज्ञाय^{१२} सर्वशः ॥ १३ ॥
 हृष्टनारीनरयुतं राजवेश्म तदा बर्भा ।
 यथा मत्तद्विजगणं प्रफुल्लनलिनं सरः ॥ १४ ॥
 स राजमवनं गच्छन् मुनिः कैलाससन्निभम् ।^{१३}
 मर्षतो ददृशे मार्गं वमिष्ठो जनमंकुलम् ॥ १५ ॥
 चन्दिदृन्दैरयोध्यायां^{१४} राजमार्गाः समन्ततः ।

८ अ, कु—मंत्रायेत् । ९ कु—राजा । अ—गज- ।

A2 पं—स्वस्ति पुण्याहोपेपु देवतायन्त्रेषु च ॥

प्रसादं गत्रयो राजः शिरसा प्रतिशृणु च ।

स्पर्शयामास शुभ्ये सहस्राणि शयां दश ॥

१० अ, कु—०ज्ञाप्य । ११ अ, कु—महासीनैः । १२ अ, कु—०ज्ञाप्य ।

१३ अ, कु—स राममवताधिर्यान्मुनिः कैलाससन्निभम् । १४ अ, कु—

चुन्दृ० । पं—चेद्वि० ।

बभूवुर्गतिसंवाधा¹⁵ जनर्जातकुतूहलैः ॥० १६ ॥
 तदा¹⁶ हि¹⁷ मृद्यमानस्य¹⁸ हर्षोद्भूतोर्मिभिर्जनैः ।¹⁹
 बभूव राजमार्गस्य सागरमध्येव निस्वनः ॥ १७ ॥
 मित्तसंमृष्टरथ्या हि सा राजपथमालिनी¹⁸ ।
 आसीदयोध्या नगरी समुच्छ्रितगृहध्वजा¹⁹ ॥ १८ ॥
 तदा ह्ययोध्यानिलयः स्त्रीबालसहितो²⁰ जनः²¹ । A3
 रामाभिषेकमाकांक्षन्नाकांक्षन्नुदयं²² रवेः ॥ १९ ॥
 प्रजालंकारभूतं च²³ जनस्यानन्दवर्द्धनम् ।
 उत्सुको ऽभूज्जनो द्रष्टुं तमयोध्यामहोत्सवम् ॥ २० ॥
 एवं तं²⁴ जनसंवाधं राजमार्गं पुरोहितः ।
 व्यूहन्निव जनौघं तं²⁵ तदा राजकुलं ययौ ॥ २१ ॥
 सिताभ्रशिखरप्रख्यं प्रामादमधिरुह²⁶ सः ।
 समियाय नरेन्द्रेण शक्रेणैव बृहस्पतिः ॥ २२ ॥
 तमागतमग्निप्रेक्ष्य हित्वा राजामनं नृपः ।
 पप्रच्छ स च तस्मै तत्कृतमित्यभ्यवेदयत् ॥ २३ ॥
 तेनैव च तदा तुल्याः सहासीनाः मभासदः-।
 आसनेभ्यः समुत्तस्थुः पूजयन्तः पुरोहितम् ॥ २४ ॥

15 पं—०नवद्वा । 16 पं—तथा । 17 कु—भिसृज्यमानस्य । 0अ—
 त्यक्तम् । 18 के—०शालिनी । 19 अ, कु—चहृध्वजा । 20 अ, कु—
 सस्त्रीबालजने । पं—सस्त्रीबालयुवा । 21 कु—नतः । A3 पं—न सुध्याप
 तदा रात्रौ प्रहर्षोत्सुकमानसः । 22 पं—०माकांक्षन्नुदयं च तथा । 23 अ,
 कु—हि । 24 अ, कु—तु । पं—स । 25 पं—तु । 26 अ, कु—
 ०मधिरुह ।

गुरुणा मो ऽभ्यनुव्रातो मनुजौघं तिसृज्य तम् ।

त्रिवेशान्तःपुरं राजा सिंहो गिरिगुहामिव ॥ २५ ॥

तदत्युदग्रप्रमदाजनाकुलं^{२७} महेन्द्रेशमप्रतिमं निवेशनम् ।

सुशोभनं^{२८} चारु^{२९} त्रिवेश पार्थिवःशशीर तारागणमण्डितं^{३०} नमः ॥ २६ ॥

इत्यार्षे रामायणे ऽष्टोध्याकाण्डे रामोत्सवो^{३०}

नाम सप्तमः सर्गः^{३०} ॥ ७ ॥

२७ अ, कु तदत्युदग्र प्रमदा० । प—तदामुदग्र प्रमदा० । २८ अ, कु—
सुशोभयदचार । प—सुशोभयदचार । २९ अ, कु, प—गणमकुल ।
३० अ, कु—रामामिषेकोपयासविधानसर्ग । प—रामाभिषेकं प्रधास
विधानं नाम सप्त ।

[अष्टमः सर्गः]

गते पुरोहिते रामः स्नातः प्रयतमानसः ।
 सह पत्न्या विवेशाथ लक्ष्म्या नारायणो यथा ॥ १ ॥
 प्रगृह्य शिरसा पात्रं^१ हविषो विधिरत्तदा ।
 महते देवतायाज्यं जुहाय ज्वलिते स्नले ॥ २ ॥
 शेषं च हविषस्तस्य प्राश्याशास्यात्मनो^२ हितम्^३ ।
 ध्यायन्नारायणं देवं स्वास्तीर्णो^३ कुशमंस्तरे ॥ ३ ॥
 वाग्यतः सह वैदेह्या भृत्वा नियतमधुनः^४ ।
 श्रीमत्यायतने विष्णोः शिष्ये नरनरात्मजः ॥ ४ ॥
 एकयामावशिष्टाया रात्र्यां च प्रतिबुद्ध्य मः^५ ।
 अलंकारविधिं कृत्स्नं कारयामाम वेश्मनः ॥ ५ ॥
 ततः शृण्वन् शुभा वाचः सूतमागधमन्दिनाम् ।
 परां मन्ध्यामुपामीनो जज्ञाप यतमानसः ॥ ६ ॥
 तुष्टारं^६ प्रणतश्चैत्रं^७ प्रणम्य मधुसूदनम् ।
 त्रिमलक्षोममंवीतो वाचयामाम च द्विजान् ॥ ७ ॥
 तेषां पुण्याहघोषो ऽथ गंभीरमधुरमत्तदा ।
 अयोध्यां प्रयामाम तूर्यघोषविमिश्रितः ॥ ८ ॥
 कृतोपवासं च^८ तदा^९ वैदेह्या^{१०} मह^{११} राघवम्^{१२} ।
 अयोध्यानिलयः श्रुत्वा मरुः प्रमुमुदे जनः ॥^{१३} ९ ॥
 ततः पौरजनः सरुः श्रुत्वा रामाभिषेचनम्^{१४} ।
 प्रमातां रजनीं दृष्ट्वा चक्रे शोभां परां पुनः ॥^{१५} १० ॥

1 अ, कु—पात्री । 2 पं—प्राश्याचम्यत्सनाहित । 3 पं—स्तीर्ण ।
 4 कै—मानस । 5 कै—रात्रौ च प्रतिबुद्ध्य ह । 6 कै—तत म । 7 अ प्रयत० ।
 8 सु सतत० । 9 पं—“च तदा” इत्यागम्य “मिताम” इत्यन्तं त्यक्तम् ।

सिताभ्र^०-शिरसराग्रेषु^८ देवतायतनेषु च ।
 चतुष्पथेषु रथ्यासु चैत्येष्वडालकेषु^९ च ॥ ११ ॥
 नानापण्यसमृद्धेषु वणिजामापणेषु च ।
 कडुंविनां समृद्धानां श्रीमत्सु भग्नेषु च ॥ १२ ॥
 सभासु च^{१०} सुरम्यासु सम्भ्यानामालयेषु च^{१०} ।
 ध्वजाः समुल्लिताश्विनाः पताकाश्चाभयंस्तदा^{११} ॥ १३ ॥
 नटनर्तकमंथानां गायकानां^{१२} च गायताम् ।
 मनःकर्णसुखा वाच^{१३} श्रयन्ते स्म समन्ततः ॥ १४ ॥
 रामाभिष्टयसंयुक्ताः कथाश्चक्रुर्मिथो जनाः ।
 रामाभिषेके सप्राप्ते चत्वरेषु गृहेषु च ॥ १५ ॥
 बालाश्चापि क्रीडमाना गृहद्वारेषु सर्वशः^{१४} ।
 रामाभिषेकमंयुक्ताश्चक्रिरे^{१५} ते मिथः कथाः ॥ १६ ॥
 कृतपुष्पोपहारश्च धूपगन्धाधिवासितः^{१६} ।
 राजमार्गः क्रतुः श्रीमान् परैरं रामाभिषेचने ॥ १७ ॥
 प्रकाशगमनार्थं च निशागमनशंकया ।
 दीपवृक्षांस्तया चक्रुरनुरथ्यासु सर्वशः^{१७} ॥ १८ ॥
 अलकारं पुरस्पर्शं कृत्वा तत्पुरमसिनः ।
 आकाक्षन्तो^{१८} हि^{१९} रामस्य यौवराज्याभिषेचनम् ॥ १९ ॥
 समेत्य संघजः^{१९} सर्वं चत्वरेषु^{१९} सभासु च ।
 कथयन्तो मिथस्तत्र प्रशशसुर्नराधिपम्^{२०} ॥ २० ॥

८ अ, कु-०राग्रेषु । ९ अ कु-चिरेषु । १० अ कु-चय सर्वसु वृक्षेष्या
 लक्षितेषु च । प-च समस्तासु वृक्षेष्वपचनेषु च । ११ अ कु-०स्तथा ।
 १२ अ, कु, प-गायनाना । १३ अ-सर्वत । १४ अ, कु-प-रामाभिष्टय० ।
 १५ अ-०न्धादिधा० । १६ अ, कु-सर्वत । १७ अ, कु-अत्काक्षमाना ।
 १८ नहना । १९ क-चत्वरैषु । २० अ, कु-प्राशंसंस्त्वं नराधिपम् ।

अहो महानयं राजा इक्ष्वाकुकुलनन्दनः^{२१} ।

ज्ञात्वा^{२२} यो^{२३} वृद्धमात्मानं गमं राज्ये जभिषिचति^{२४} ॥ २१ ॥

सर्वे ह्यनुगृहीताः स्मो^{२५} यन्नेो गमो महीपतिः ।

चिराय भविता गोप्ता दृष्टतत्त्वपरावरः ॥ २२ ॥

अनुद्धतमना विद्वान् धर्मात्मा भ्रातृवत्सलः ।

यथा भ्रातृष्वपि^{२६} स्निग्धस्तथास्मास्वपि^{२७} राघवः ॥ २३ ॥

चिरं जीवतु धर्मात्मा राजा दशरथो जनघः^{२८} ।

यत्प्रभादादभिषिक्तं द्रक्ष्यामो राघवं वयम् ॥ २४ ॥

मिथः कथयतामेवं पौराणां शुश्रुवे^{२९} तदा ।

दिग्भ्यो ऽपि श्रुतवृत्तान्तः प्राप्तो जानपदो जनः ॥ २५ ॥

स तु दिग्भ्यः पुरं^{३०} प्राप्तो द्रष्टुं^{३१} गमाभिषेचनम्^{३२} ।

सर्वं^{३३} च^{३४} पूरयामास पुरं^{३५} जानपदो जनः ॥ २६ ॥

जनैर्विस्तैर्विमर्षाद्भिः शुश्रुवे तत्र निःस्यनः^{३६} ।

पर्वश्वदीर्णवैगम्य सागरस्यैव गर्जतः^{३७} ॥ २७ ॥

ततस्तदिन्द्रक्षयमन्निभं पुरं दिदक्षुभिर्जानपदैरुपागतैः ।

समन्ततः मस्त्रनमाकुलं वभावनेकवादोभिरिवार्णवं^{३८} पयः ॥ २८ ॥

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे पुरालंकरणं^{३९}

नामाष्टमः सर्गः ॥ ८ ॥

२१ अ, कु—०चक्रतः । पं—नन्दन । २२ अ—ज्ञान्वात्मो । २३ अ, कु—
भिषेचति । २४ पं—स्म । २५ पं—च भ्रातृपु । २६ पं—० स्मासु च ।
२७ अ, कु—नृपः । २८ पं—शुश्रुमे । २९ अ, कु, पं—पुरी । ३० अ कु,
पं—द्रष्टुकामोभिषेचनं । ३१ अ, कु, पं—रामस्य । ३२ अ, कु, पं—पुरी ।
३३ अ, कु, पं—निस्थनः । ३४ अ, कु—निस्थनः ३५ अ—०वार्णव—
कु—० चार्णवे । ३६ अ, कु, पं—पुरशोभाविधानं ।

[नवमः सर्गः]

ज्ञातिदास्यथ कैकेय्याः सहोढा परिचारिका ।
 प्रामादाग्रमथारूढा^१ तस्मिन् काले षट्च्छया ॥ १ ॥
 सा^२-ददर्शाथ^३ तत्रस्था श्रीमद्राजपथा^४ पुरीम् ।
 ममुच्छितध्वजवती हृष्टपुष्टजनाकुलाम् ॥ २ ॥
 तां च दृष्ट्वा पुरी रम्यामलंकृतजनाकुलाम् ।
 सुदूरस्थां ममासाद्य धार्य^५ कांचिदपृच्छत् ॥ ३ ॥
 कस्मात् पौरजनस्यायमतिहर्षो^६ ऽद्य^७ शंस मे ।
 चिकीर्षितं किं नृपतेः कार्यं पौरजनाप्रियम् ॥ ४ ॥
 उत्तमेन च हर्षेण हर्षिता^८ ऽद्य प्रियेपतः ।
 राममाता धनोत्सर्गं कुरुते केन हेतुना ॥ ५ ॥
 इति पृष्ट्वा तथा धात्री कुञ्जया भृशहर्षिता ।
 आचक्षे यथावृत्तं यौवराज्याभिषेचनम्^९ ॥ ६ ॥
 श्वः^{१०} पुण्ययोगेन^{११} किल^{१२} यौवराज्ये स्वमात्मजम् ।
 अभिषेचयिता राजा^{१३} रामं^{१४} गुणगणाकरम्^{१५} ॥ ७ ॥
 तेनाथ^{१६} हर्षितः सर्वो जनो ऽयमभिषेचने^{१७} ।
 पुरी चालंकृता पौरै राममाता च हर्षिता ॥ ८ ॥
 इति श्रुत्वा^{१८} ऽप्रियं पापा कुञ्जा क्षिप्रममर्षिता ।
 तस्मात्प्रामादशिरादवतीर्य त्वरान्विता ॥ ९ ॥

१ अ, पु, प-०ग्रमुपारूढा । २ अ, पु, ददर्श साथ । ३ पं-०जकथा ।

४ अ, पु-०दभाषत । ५ के-हि । ६ पं-नास्ति । न्यक्तं भाति ।

७ अ, पु-राम राजा । ८ अ, पु-सर्वगुणाकरम् । ९ अ, पु-तेनायं ।

१० अ, पु-रामाभि० ।

संरक्तनयना कोपान् मन्थरा पापनिश्चया ।
 शयानामेव कैकेयीमिदं वचनमब्रवीत् ॥ १० ॥
 उत्तिष्ठ मूढे किं शेषे भयं घोरमुपागतम्^{१०} ।
 समभिप्लुतमात्मानं^{११} दुर्भगे नावबुध्यसे ॥ ११ ॥
 वृथा^{१२} सौभाग्यमानेन दुर्भगे त्वं विदह्यसे^{१३} ।
 गिरिनद्या इव स्रोतस्तव सौभाग्यमस्थिरम् ॥ १२ ॥
 तयैवमुक्त्वा कैकेयी मंथृत्य^{१४} परुषं वचः ।
 कुब्जायाः^{१५} पापदर्शिन्याः^{१६} प्रपुंसुं समुपचक्रमे ॥ १३ ॥
 मन्थरे किं^{१७} नु क्रुद्धाऽसि^{१८} कच्चित्क्षेमं निवेदय ।
 विपण्णवदनां^{१९} हि त्वां लक्षयामि सुदुःखिताम् ॥ १४ ॥
 मन्थरा तद्वचः श्रुत्वा कैकेय्या[ः]^{२०} पुनरब्रवीत् ।
 संरंभामर्पताम्राक्षी वाक्यं वाक्यविशारदा ॥ १५ ॥
 भूयो विपादयिष्यन्ती कैकेयीं पापनिश्चया ।
 रागाद्विभेदयिष्यन्ती किल तस्याहितैपिणी ॥ १६ ॥
 अक्षेमं सुमहदेवि तवेदं समुपस्थितम् ।
 रामं दशरथो राजा यौवराज्ये ऽभिपेक्ष्यति ॥ १७ ॥
 साऽगम्यपारे^{१९} भृशं मग्ना दुःसशोकमहार्णवे ।
 दहमानाऽनलेनेव^{२०} त्वद्विदितार्थमुपागता ॥^० १८ ॥

10 अ, कु, पं—ते घोरमागतम् । 11 कै—०भिप्लुष्टमा० । अ, कु—
 समुपप्लु० । 12 अ, कु—तथा । 13 कै—विमुह्यामि । 14 अ, कु—संरंभ-
 15 अ, कु—कुब्जया पापदर्शिन्या । 16 अ, कु—किमसि क्रुद्धा । पं—
 किमु० । 17 कै—विषण्ण० । पं—विपन्नव० । 18 अ, कु—कैकेयी । कै,
 पं—कैकेय्या । 19 कु—वाचापारे । 20 अ, कु—प्रतप्ताऽस्म्यनलेनेप ।

[नवमः सर्गः]

ज्ञातिदास्यथ कैकेयाः सहोढा परिचारिका ।
 ग्रामादाग्रमधारूढा^१ तस्मिन् काले यदृच्छया ॥ १ ॥
 मा^२-ददर्शाथ^३ तत्रस्था श्रीमद्राजपथा^४ पुरीम् ।
 समुच्छितध्वजवतीं हृष्टपुष्टजनाकुलाम् ॥ २ ॥
 तां च दृष्ट्वा पुरी रम्यामलंकृतजनाकुलाम् ।
 सुदूरस्थां ममामाद्य धार्त्रीं कांचिदपृच्छत्^५ ॥ ३ ॥
 कस्मात् पौरजनस्यायमतिहर्षो^६ ऽद्य शंस मे ।
 चिकीर्षितं किं नृपतेः कार्यं पौरजनाप्रियम् ॥ ४ ॥
 उत्तमेन च हर्षेण हर्षिता^७ ऽद्य त्रिशेपतः ।
 राममाता धनोत्सर्गं कुरुते केन हेतुना ॥ ५ ॥
 इति पृष्ट्वा तया धार्त्री कुञ्जया भृशहर्षिता ।
 आचचञ्चे यथावृत्तं यौनराज्याभिषेचनम्^८ ॥ ६ ॥
 श्वः^९ पुण्ययोगेन^{१०} किल^{११} यौनराज्ये स्वमात्मजम् ।
 अभिषेचयिता राजा^{१२} रामं गुणगणाकरम्^{१३} ॥ ७ ॥
 तेनाथ^{१४} हर्षितः सर्वो जनो ऽयमभिषेचने^{१५} ।
 पुरी चालंकृता पौरैः राममाता च हर्षिता ॥ ८ ॥
 इति श्रुत्वा^{१६} प्रियं पापा कुञ्जा क्षिप्रममर्षिता ।
 तस्मात्प्रामादशिसुरादयतीर्य त्वरान्विता ॥ ९ ॥

१ अ, कु प-०ग्रमुपारूढा । २ अ, कु ददर्शा साथ । ३ पं-०ज्वथा ।
 ४ अ, कु-०दभापत । ५ के-हि । ०पं-नास्ति । त्यक्तं भाति ।
 ६ अ, कु-राम राजा । ७ अ, कु-सर्वगुणाकरम् । ८ अ, कु-तेनाथ ।
 ९ अ, कु-रामाभि० ।

संरक्तनयना कोपान् मन्थरा पापनिश्चया ।
 शयानामेव कैकेयीमिदं वचनमब्रवीत् ॥ १० ॥
 उत्तिष्ठ मूढे किं शेषे भयं घोरमुपागतम्¹⁰ ।
 समाभिप्लुतमात्मानं¹¹ दुर्भगे नावबुध्यसे ॥ ११ ॥
 वृथा¹² सौभाग्यमानेन दुर्भगे त्वं विदह्यसे¹³ ।
 गिरिनद्या इव स्रोतस्तव सौभाग्यमस्थिरम् ॥ १२ ॥
 तयैवमुक्त्वा कैकेयी संश्रुत्य¹⁴ परुषं वचः ।
 कुञ्जायाः¹⁵ पापदर्शिन्याः¹⁶ प्रष्टुं समुपचक्रमे ॥ १३ ॥
 मन्थरे किं¹⁷ नु क्रुद्धाऽसि¹⁸ क्वचित्क्षेमं निवेदय ।
 विपण्णवदनां¹⁹ हि त्वां लक्षयामि सुदुःखिताम् ॥ १४ ॥
 मन्थरा तद्वचः श्रुत्वा कैकेय्याः²⁰ पुनरब्रवीत् ।
 संरंभामर्पताम्राक्षी वाक्यं वाक्यविशारदा ॥ १५ ॥
 भूयो विपादयिष्यन्ती कैकेयी पापनिश्चया ।
 रामाद्विभेदयिष्यन्ती किल तस्याहितैपिणी ॥ १६ ॥
 अक्षेमं सुमहद्देवि तवेदं समुपस्थितम् ।
 रामं दशरथो राजा यौवराज्ये ऽभिपेक्षति ॥ १७ ॥
 साऽन्मयपारे¹⁹ भृशं मग्ना दुःखशोकमहार्णवे ।
 दहमानाऽनलेनेव²⁰ त्वद्विदितार्थमुपागता ॥⁰ १८ ॥

10 अ, कु, पं—ते घोरमागतम् । 11 कै—०मिन्द्रुष्टमा० । अ, कु—
 समुपप्लु० । 12 अ, कु—तथा । 13 कै—विगुह्यति । 14 अ, कु—संरंभ-
 15 अ, कु—कुञ्जया पापदर्शिन्या । 16 अ, कु—विगति प्रदा । पं—
 किमु० । 17 कै—त्रिवर्ण० । पं—विपन्नव० । 18 अ, कु—कैकेयी । कै,
 पं—कैकेय्या । 19 कु—प्राचापारे । 20 अ, कु—प्रतप्ताऽन्मयनलेनेव ।

तव दुःखेन कैकेयी मम दुःखं^१ महद्^२ भवेत् ।
 त्वद्बृद्ध्या मम वृद्धिश्च भवेदिति न संशयः ॥^३१९ ॥^०
 [महीपतिकुले जाता महिषी पृथिवीपतेः ।
 उग्रत्वं राजधर्माणां कथं देवि न बुध्यसे ॥ २० ॥
 धर्मवादी शठो भर्ता श्लक्ष्णावक्ता च दारुणः ।
 शुद्धभावे न जानीषे तेनैवमभिहिंसिता ॥ २१ ॥
 उपस्थितं प्रपुंक्ते ऽसौ त्वयि सर्वमनर्थकम् ।
 अर्थेनैवाद्य ते भर्ता कौसल्यां योजयिष्यति ॥ २२ ॥
 अवरुध्य हि शशेन* भरतं तत्र बंधुषु ।
 कल्पे स्थापयिता रामं राज्ये निहतकंटके ॥ २३ ॥
 शत्रुः पतिप्रवादेन पुत्रेण हितकाम्यया ।
 आशीविष इराकेन भर्ता परिभृतस्त्रया ॥ २४ ॥
 यथा हि कुर्यात्सर्पो वा शत्रुर्वाप्यनप्रेक्षितः ।
 राज्ञा दशरथेनाद्य तथा ते सहमा कृतम् ॥ २५ ॥
 पापेनानृतसत्त्वेन बाला राज्यसुखे स्थिता ।
 रामं स्थापयिता राज्ये सानुबंधा हता ह्यसि ॥ २६ ॥^३
 संप्राप्तकालं कैकेयि क्षिप्रं कुर्यात्मानो हितम् ।^४
 त्रायस्व^५ सुतमात्मानं^६ मां^७ चैवामित्रकर्षणि^८ ॥ २७ ॥

२१ अ, कु—दु खत्तग । २२ अ, कु—तव वृद्धौ हि मे (कु-मम) वृद्धि
 हि गिति मे निश्चिन्ना मति । ०प—नास्ति २३ अ, कु, प—नास्ति ।
 २४ अ, कु, प—तत्प्राप्तकालं कैकेयि कर्तुमर्हसि मेघञ्च । २५ अ, कु, पं
 रश्च पुत्र तथात्मान । -६ अ, कु—०कर्षणे । प—जान्त्रेवामित्रकर्षणी ।

तथा कुरु यथा रामं नाभिपिंचति ते पतिः ।

सकामां कुरु कौशल्यां मा सपत्नीमनिन्दिते ॥ २८ ॥

मन्थराया वचः श्रुत्वा कैकेयी परया^{२७} मुदा^{२८} ।

एकमाभरणं तस्याः^{२९} कुञ्जायाः^{३०} प्रददौ शुभम् ॥ २९ ॥

दत्त्वा चाभरणं श्रीमत् प्रीतिदायं प्रहर्षिता ।

कैकेयी मन्थरामेतत् पुनर्वचनमब्रवीत्^{३१} ॥ ३० ॥

यदिदं मन्थरे मह्यमाख्यातं मत्प्रियं हितम् ।

एतत्ते प्रियमाख्यातुं किं वा भूयः करोमि ते ॥ ३१ ॥^{३२}

[दत्त्वा चाभरणं तस्याः स्थापनीयकमुत्तमम् ।

कैकेयी मन्थरां दृष्ट्वा पुनरेवाब्रवीद्वचः ॥ ३२ ॥]^{३३}

रामे वा भरते वाहं^{३४} विशेषं नोपलक्षये^{३५} ।

तस्माद्दून्यास्मि^{३६} यद्राजा रामं^{३७} राज्ये ऽभिपेक्ष्यति ॥ ३३ ॥

न मे प्रियं^{३८} किंचिदतः परं भवेद् यद्य राजा सुतमेकमात्मजम्^{३९} ।

गुणारुरं राममुदारविक्रमं न र्यावराज्ये^{४०} प्रतिपादयिष्यति ॥ ३४ ॥

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे मन्थराप्रतिबोधनं^{४१}

नाम नवमः सर्गः ॥ ९ ॥

^{२७} अ, कु, पं—हर्षिता ततः । ^{२८} अ, कु, पं—मुक्त्या कुञ्जायै ।

^{२९} पं—मन्थरां चाक्षयमिदं नत्राब्रवीत्पुनः । ^{३०} अ, कु, पं—मन्थरे यत्तया

मेघ प्रियमाख्यातमीभिने । नत्रेदं (पं—तनेदं) प्रतिदायं ते (कु—प्रिय-

माख्यातु) प्रत्या (पं—प्रीता) भूया ददामि ते (पं—य) । ^{३१} अ, कु,

पं नास्ति । ^{३२} अ, कु, पं यापि विशेषे नास्ति कश्चन । ^{३३} अ, कु-

तस्मात्प्रियं मे यद्रामं राजा । पं—तस्मात्प्रियतरं रामं राजा । ^{३४} पं—

ऽप्रियं । ^{३५} कं—शुतमिष्टमात्मजम् । ^{३६} अ, कु—र्यावराज्यं । ^{३७} अ,

कु—मन्थरायन्दिष्यते सर्गः । पं—व्यतिबोधनं नाम सर्गः ।

[दशमः सर्गः]

'इत्युक्त्वा तत्र कैकेय्या तत्परिक्षिप्य' भूषणम् ।
 नाश्रयं मन्थरा चाक्यमिदं भूयो ऽभ्यभाषत ॥ १ ॥
 भयस्थाने किमचले हर्षिता त्वमपण्डिते ।
 शोकसागरसंमग्नमात्मानं नावबुध्यसे ॥ २ ॥
 आशीविपस्त्वां दशतु मृढे पण्डितमानिनि ।
 दुर्भगे चाकृतप्रजे' विपरीतार्थदर्शिनि ॥ ३ ॥
 कौशल्यां सुभगां मन्ये यस्याः पुत्रो ऽभिपिच्यते ।
 गौवराज्ये पैतृके ऽस्मिन् पुण्येण' कृतलक्षणः ॥ ४ ॥
 प्राप्तां सुमहदर्थमृद्धामृद्धिविवर्जिता' ।
 उपस्थास्यसि कौशल्यां दामीव त्वमपण्डिते ॥ ५ ॥
 ऋद्वियुक्ता श्रियाजुष्टा' रामपत्नी भविष्यति ।
 अहृष्टाश्च भविष्यन्ति स्तुपास्ते करुणालये ॥ ६ ॥
 तां तथा भृशमप्रीतां ब्रुवतीं वीच्य' मन्थराम् ।
 प्रीता रामगुणानेव कैकेयी प्रशशंस ह' ॥ ७ ॥
 धर्मात्मा गुरुवती च कृतज्ञः सत्यवाक् शुचिः ।
 रामो राज्ञः सुतो ज्येष्ठो युवराजत्वमर्हति ॥ ८ ॥

1 अ, कु—तत्परित्यज्य । 2 कै—हकृतप्रजे । पं—अकृतप्रजे । 3 कै,
 पं—पुण्येन । 4 पं—वर्जिते । 5 अ, कु—श्रियाविष्टा । 6 अ, कु—
 अश्रीमती त्वमबुद्धा (अ नृद्धा) स्वजनेन विवर्जिता । पं—०अश्री-
 त्मयप्रवृद्ध च स्वजनेन च वर्जिता । 7 अ, कु, पं—प्रेक्ष्य । 8 अ, कु, पं—वै ।

भ्रातृन् सर्वान् स दीर्घायुः पितृवत् पालयिष्यति ।
 मातृणां चैव सर्वा मां प्रियाण्युपहरिष्यति ॥ ०६ ॥
 विशेषतः पूजयति^{१०} कौशल्यामप्यतीत्य^{११} माम् ।
 रामो राजीवताम्राक्षः सर्वत्र^{१२} समदर्शनः^{१३} ॥ १० ॥
 अकल्याणं नास्ति रामे प्रदेपश्च महात्मनि ।
 मंतापं मा कृथास्तस्माच्छ्रुत्वा गमाभिपेचनम् ॥ ११ ॥
 भरतश्चापि रामस्य ध्रुवं वर्षशतात्परम् ।
 पितृपैतामहं राज्यं क्रमप्राप्तमवाप्स्यति^{१४} ॥ १२ ॥
 मा त्वमभ्युदये प्राप्ते ममानन्दे च मन्थरे ।
 भविष्यति च कल्याणे^{१५} कथं^{१६} नु^{१७} परितप्यमे ॥ १३ ॥
 इत्येठचनं श्रुत्वा मन्थरा भृशदुःखिता ।
 दीर्घमुग्धं च निःश्चम्य कैकयीं पुनरब्रवीत् ॥ १४ ॥
 अनर्थदर्शिन्यप्रद्रे^{१८} नात्मानमत्रबुध्यमे ।
 अगाधे दुःखपाताले मज्जन्ती^{१९} त्वमनन्तके ॥ १५ ॥
 भविता राघवो राजा रामस्य च मुनस्ततः ।
 तम्यान्पस्तम्य^{२०} चाप्यन्यो^{२१} वंश्यो^{२२} राजा^{२३} भविष्यति ॥ १६ ॥

१० कै—शुभ्रसं न परिष्यति । ०७—नास्ति । स्वकं मानि । १०
 कै—पूजयति । ११ कै—कौशल्यामप्यवापि । १२ अ, पु, मयंस्य
 प्रियदर्शनः । १३ अ, पु, क्रमात्प्रल० । १४ पै—कल्याणि । १५ कै—
 परमात्यं । पै—वशं गे । १६ कै, पै—दंमिनी मूढे । १७ अ, पु—
 मंजरे । १— पै तद्वत्पदमममे वंश्यो । १९ कै—वंशे० । पै—महागजे ।

राज्यवंशात्^{२०} कैकेयी भरतः परिहास्यते^{२१} ।

न हि राज्ञां सुतः सर्वे राज्ये तिष्ठन्ति भामिनि^{२२} ॥ १७ ॥

बहूनामपि पुत्राणामेको राज्ये ऽभिपिच्यते ।

स्थाप्यमानेषु सर्वेषु सुमहाननयो भवेत् ॥ १८ ॥

तस्माज्ज्येष्ठेषु पुत्रेषु राज्यतन्त्राणि पार्थिवाः ।

आसज्जन्त्यनवद्याङ्गि गुणवत्स्मिन्तरेषु वा^{२३} ॥ १९ ॥

ते^{२४} च ज्येष्ठाः स्वपुत्रेषु ज्येष्ठेष्वेव^{२५} न संशयः^{२६} ।

आसज्जन्त्यसिलं राज्यं न भ्रातृषु कथंचन ॥ २० ॥

अतो^{२७} ऽन्यन्तमपूजार्हस्तव^{२८} पुत्रो भविष्यति ।

अनाथवत्सुखाद्धीनो राजवंशाच्च शाश्वतात्^{२९} ॥ २१ ॥

साऽहं^{३०} त्वदर्थं संप्राप्ता त्वं च मोहान्न^{३१} बुध्यसे^{३२} ।

मपत्निवृद्धौ^{३३} या मे त्वं^{३४} प्रदेयं^{३५} दातुमिच्छामि ॥ २२ ॥

ध्रुवं च भरतं रामः प्राप्य राज्यमकण्ठम् ।

देशान्तरं वासयिता^{३६} देहान्तरमथापि वा ॥ २३ ॥

बाल एव हि^{३७} मातुल्यं^{३८} भरतो नायितस्त्वया^{३९} ।

मन्त्रिकर्षाच्चानुरागो देवि सर्वस्य जायते ॥ २४ ॥

२० अ, पं—राज० । २१ अ, पं—० हास्यति । २२ अ, कु—भामिनी ।
 पं—भामिनि । २३ पं, कु—च । २४ अ, कु—राज्यात्तमेवैकं कुर्वन्ति ते च
 ज्येष्ठे । पं—०ज्येष्ठेषु च । २५ पं—संशयम् । २६ पं, कै—अहो । २७
 कै—नित्यमपूजा० । २८ कै, पं—हास्यति । २९ अ, कु त्वदर्थे । ३० अ,
 कु मां नाप्रबुध्यसे । ३१ अ, कु—मपत्न० । पं—मपत्न्यवृद्धौ । ३२ कै—
 न्यमद्रेयं । पं—वं अद्रेयं । ३३ अ—यानयिता । ३४ कै—महत्सुल्ये
 पं—मातुल्ये । ३५ पं—शायित० ।

शत्रुघ्नो^{१०} भरते रक्तो^{११} लक्ष्मणश्चापि राघवे^{१२} ।

अश्विनोरिव सौभ्रात्रमन्योर्लोकविश्रुतम् ॥ २५ ॥

तस्मान्न लक्ष्मणे किञ्चित्पापं रामः करिष्यति ।

रामस्तु भरते पापं कुर्यादिति न संशयः ॥ २६ ॥

मातामहगृहाद्देवे^{१३} तस्माद्^{१४}यातु^{१५} ते सुतः ।

वनमाश्रयितुं शीघ्रमेतद्वयस्य^{१६} धर्मं भवेत् ॥ २७ ॥

एतत्ते^{१७} ज्ञातिपक्षस्य श्रेयः स्यादिति मे मतिः ।

यदि वा भरतो राज्यं पित्रर्थं^{१८} समवाप्स्यति^{१९} ॥ २८ ॥

म ते^{२०} सुसोचितो बालो रामस्य सहजो रिपुः ।

समृद्धार्थस्य हीनार्थः कथं जीवेत्तवात्मजः ॥ २९ ॥

अभिद्रुतमिवारण्ये मिहेन गजयूथपम् ।

उच्छिद्यमानं^{२१} रामेण भरतं त्रातुमर्हमि ॥ ३० ॥

दर्पाद्धि नित्यनिकृता^{२२} त्वया माभाग्यमत्तयां ।

रामभाता मपत्नी ते कथं धैरं न यातयेत् ॥ ३१ ॥

कृते हि रामे ऽद्य^{२३} महीपतां क्षितां गमिष्यसि त्वं समुता पराभवम् ।

अतो ऽनुमंचितय^{२४} राज्यमात्मजे परस्य चनाद्य विवासकारणम् ॥३२॥

इत्याप्यं रामायणे ऽथोध्याकाण्डे मन्थरावाक्यं

नाम दशमः सर्गः ॥ १० ॥

१० अ, कु.—भरतेऽ हि रामः र्नामिद्वि । ११ अ कु.—राघवे । ३२ अ, कु.—०हादेव । ३३ अ, कु.—०द्वगच्छतु । ३४ अ, कु.—०मेतदस्य । ३५ अ, कु.—एवं ते । ३६ अ, कु.—पितृर्थं धर्मं (कु धर्म्यं) मयाप्स्यति । ३७ अ, कु.—मे । ३८ क.—उच्छिद्यमानं । ३९ अ, कु.—नित्यं निकृता । ४० अ, कु.—द्य । ४१ क.—हि सं० ।

[एकादशः सर्गः]

एवमुक्त्वा तु कैकेयी विनिश्चस्यात्रवीद्वचः ।

सत्यं वदसि मे^१ कुब्जे जाने ते भक्तिमुत्तमाम्^२ ॥ १ ॥न तु^३ पश्याम्युपायं^४ तं^० येन^० शक्येत^० मे^० सुतः^०इदं प्रापयितुं राज्यं पितृपैतामहं बलात् ॥^०२ ॥अनुरक्तो नृपश्चापि^५ रामं गुणगणान्वितम् ।^०स^० कथं^० राममुत्सृज्यं^६ प्राणेभ्योऽपि प्रियं सुतम् ॥ ३ ॥

भरतं नाम मे पुत्रमभिपिञ्चेदकारणम् ।

प्रव्राजयेच्चापि^७ नृपः कथं राममकारणे^८ ॥ ४ ॥

इत्येतद्वचनं श्रुत्वा कैकेय्या मन्थरा ततः ।

उवाचेदं विनिश्चित्य स्वबुद्ध्या^९ पापनिश्चया^९ ॥ ५ ॥इमं राममहं^{१०} क्षिप्रं वनं प्रस्थापयामि ते ।

भरतस्याभिपेकं च कारयामि यदीच्छामि ॥ ६ ॥

श्रुत्वैतन्मन्थराप्राक्यं कैकेयी हृष्टमानसा ।

किञ्चिदुत्थाय शयनात् स्नास्तीर्णादिदमव्रतीत् ॥ ७ ॥

कथय त्वं महाप्राज्ञे केनोपायेन मन्थरे ।

भरतः प्राप्नुयाद्राज्यं रामश्चैव वनं व्रजेत् ॥ ८ ॥

एवमुक्त्वा तथा देव्या मन्थरा पापनिश्चया ।

वाक्यं दुःखाय रामस्य कैकेयीमिदमव्रतीत् ॥ ९ ॥

१ कै मा । २ अ, पु-इमा वाचमनुत्तमा । ३ अ च । ४ पं-०भ्युता ।
 ०पं-त्सत् । ५ अ, पु-ध्याय । ६ प-त्सृज्य । ७ पु-०येष्ठा तं ।
 अ, प-०येद्वापि । ८ पु-०मकारण । अ-रामस्य कारणम् । ९ अ,
 पु-बुद्ध्या पापनिश्चया । १० कै-राममहो ।

यत्त्रिदानीमात्महितं^{११} शृणु मे त्वामिदं^{१२} वचः ।
 यथा ते भरतः पुत्रो राज्यं प्राप्स्यत्यसंशयम्^{१३} ॥ १० ॥
 पुरा देवासुरे युद्धे युद्धसज्जः^{१४} पतिस्तव ।
 याचितो देवराजेन युद्धं कर्तुमिती गतः ॥ ११ ॥
 दिशमास्थाय कैकेयि दक्षिणां दण्डकां^{१५} प्रति ।
 वैजयन्तमिति ख्यातं पुरं यत्र तिमिध्वजः ॥ १२ ॥
 स शंवर इति ख्यातो बहुमायो महासुरः ।
 ददौ शक्राय संग्रामं देवसंघैर्विनिर्जितः^{१६} ॥ १३ ॥
 तस्मिन्महति संग्रामे राजा शस्त्रपरिक्षतः ।
 विजित्याभ्यागतो^{१७} देवि त्वयोपचरितः स्वयम् ॥ १४ ॥
 व्रणसंरोपणं^{१८} चास्य तत्र देवि त्वया कृतम् ।
 परितुष्टेन ते दत्तौ वरौ द्वौ ननु^{१९} भामिनि^{२०} ॥ १५ ॥
 स त्वयोक्तः प्रतिश्रुत्य^{२१} यदच्छेयं^{२२} तदा वरौ ।
 गृहीपामिति तत्रैवं^{२३} तथेत्युक्तं महात्मना ॥ १६ ॥
 अनभिज्ञा ह्यहं देवि त्वयैव कथितं पुरा ।
 पतिं^{२४} वरौ तौ याचस्व^{२५} भरतस्याभिपेचनम् ॥ १७ ॥

११ अ, पु—हंतेदा० । १२ अ, पु—तदिदं । १३ अ, पु—प्राप्तोत्य० ।
 १४ अ, पु—०सहाः । १५ कै—दांडकां । १६ अ, पु—०घोरनि० । १७
 कै—स चित्तदागतो । वं—स चिन्तामागतो १८ अ, पु, वं—०संरोहणं ।
 १९ अ, पु—तत्र । २० अ, पु, वं—भामिनि २१ अ, पु, वं—पतिस्तत्र ।
 २२ कै, वं—यदच्छेयं । २३ अ, पु—तथैव । २४ अ, पु—तौ वरौ याच
 भर्तारं । वं—पतिं यान्वस्य च परी ।

प्रव्राजनं च रामस्य वर्षाणि हि चतुर्दश ।
 क्रोधागारं प्रविश्याद्य^{२५} भूत्वा^{२६} क्रुद्धा^{२७} नृपात्मजे ॥ १८ ॥
 शेषानन्तर्हितायां^{२८} त्वं^{२९} भूमौ मलिनवासिनी ।
 राजानं मा निरीक्षिष्ठा^{३०} मा भाषिष्ठाः^{३१} कथंचन ॥ १९ ॥
 सुप्ता भूमावनाथेव दुःखितेव^{३२} च भामिनि^{३३} ।
 तत्र त्वां शयितां^{३४} राजा स्वयं दुःखसमन्वितः ॥ २० ॥
 प्रसादयिष्यति क्षिप्रं प्रष्टा^{३५} चार्थविनिर्णयम्^{३६} ।
 दायिता त्वं भृशं भर्तुरत्र मे नास्ति संशयः ॥ २१ ॥
 त्वदर्थं हि महाराजः श्रियं दीप्तामपि त्यजेत् ।
 मणिमुक्तासुवर्णानि^{३७} रत्नानि विविधानि च ॥ २२ ॥
 यदि दद्याच्च ते राजा^{३८} मा स्म तेषु मनः कृथाः ।
 यदा तु तौ वरौ दित्सुः स्वयमुत्थापयिष्यति^{३९} ॥ २३ ॥
 सत्येन परिगृह्णैनं याचेथास्त्वं^{४०} तदा वरौ ।
 रामप्रव्राजनायैकं नववर्षाणि पंच च ॥ २४ ॥
 द्वितीयं यौपराज्याय भरतस्य वरं शुभे ।
 तौ^{४१} यौ^{४२} देवासुरे युद्धे वरौ दशरथो ददौ ॥ २५ ॥

२५ के—प्रविश्याद्य । २६ अ, कु—भूत्वा । २७ कै—शया
 नातर्हिता चाल । पं—शयनामन्तरितायास्तथ । २८ अ, कु, पं—निरीक्षस्व ।
 २९ प—भाषस्य । ३० अ, कु, पं—दु खिता नाम (प-राग) भामिनी
 (अ-०नि) । ३१ कु—शायिता । ३२ अ, कु—प्रक्ष्यत्यपि च निर्णयं ।
 पं—दृष्ट्वा घाप्यचानिगता । ३३ कै—यदि मु० । पं—यदा मु० । ३४ अ,
 कु, पं—भर्ता । ३५ अ, कु—०पयत्यति । ३६ अ, कु—०थास्तु । ३७ अ,
 कु—यौ तौ ।

तां स्मारयित्वा याचेथाः पथादेतद्^{३८} वरद्वयम् ।
 रामप्रवाजनं देवि^{३९} राज्यप्राप्तिं सुतस्य च ॥ २६ ॥
 याचेथा भुरि^{४०} कल्याणि मा त्वां कालो ऽत्यगादयम्^{४१} ।
 ध्रुवं प्रवाजितश्चैव रामो भद्रे भविष्यति ॥ २७ ॥
 भोक्ष्यते चापि पृत्रस्ते ध्रुवं राज्यमकंटकम् ।
 येन कालेन काकुत्स्थो वनात्प्रत्यागमिष्यति ॥^{४२} २८ ॥
 भरतो ऽनेन कालेन वद्वमूलो भविष्यति ।
 संगृहीतमनुष्यश्च कोपयांश्च श्रिया युतः ॥ २९ ॥
 ऋजुस्वभावे बुध्यस्व सौभाग्यचलमात्मनः^{४३} ।
 न त्वां क्रोधयितुं शक्तो न च क्रुद्धामुपेक्षितुम् ॥ ३० ॥
^{४४} तत्र प्रियार्थे राजा हि प्राणानपि परित्यजेत् ।
 न व्यतिक्रमितुं^{४५} शक्तस्तत्र वाक्यं महीपतिः ॥ ३१ ॥
 प्राप्तकालं तु^{४६} ते^{४७} मन्ये राजानं^{४८} जितसाध्वसा ।
 रामाभिषेकमंकल्पात् तं^{४९} विगृह्य निवर्तय^{५०} ॥ ३२ ॥
 *पथ्यम्पमध्यं तदधर्म्यं मन्यरावचः ।
 *जिदस्वभारा कंकेयी प्रतिजग्राह मोहिता^{५१} ॥ ३३ ॥
 *स्वभान एष नारीणां मूर्खो ऽपि स्वजनो जनः ।
 *यद्वन्नरोति तदेवाशु संगृह्णन्त्यनिमृश्य^{५२} हि ॥ ३४ ॥

३८ अ, बु—पथादेयं । ३९ अ, बु—धैय । ४० अ, बु—भावि-
 ष्यत्यां ध्रुवं प्राप्स्यति ते सुत । ४१ अ, पं—नास्ति । त्यक्तं माति । ४२
 अ, बु—०५२० । ४३ अ, बु—रात्रि० । ४४ अ, बु—ततो । ४५ अ,
 बु—राजग्ये । ४६ अ, बु—राजानं यिनियन्तय । यं—विगृह्य यिनियन्तय ।
 ४७ अ, बु—नेरिता । ४८ अ, बु—प्राप्तयि० । ४९ अ, बु—नास्ति ।

- *सा तेन कुब्जा वाक्येन मृगीवोत्फुल्ललोचना ।
 *व्याधेन गीतसंलोभादनर्थे सन्निवेशिता ॥ ३५ ॥
 *अर्थाश्चानर्थरूपेण " अनर्थाश्चार्थरूपिणः" ।
 *आविशन्ति विनाशाय नरं तच्चास्य रोचते ॥ ३६ ॥
 अनर्थमर्थरूपेण सा ददर्श तयोदिता ।
 नहि तद्बुधे पापं शापदोषेण मोहिता ॥ ३७ ॥
 केकयेषु^{४०} हि सा^{४१} बाल्ये^{४२} ब्राह्मणं मूर्खरूपिणम्^{४३} ।
 अस्त्रयितवती बाला तेन शप्ता महात्मना ॥ ३८ ॥
 यस्मादस्त्रयसे विभ्रं त्वं रूपमददर्पिता ।
 तस्मादस्त्रयां त्वमपि लोके प्राप्स्यसि कुत्सिताम् ॥ ३९ ॥
 इति शापसमाच्छन्ना मन्थरावशमागता ।
 अतीवहृष्टा कैकेयी मन्थरां परिपस्वजे ॥ ४० ॥
 परिष्वज्य ततो गाढं कैकेयी हर्षपिक्लवां^{४४} ।
 उवाच वचनं धीरा कुब्जां तां पापदर्शिनीम् ॥ ४१ ॥
 *मम्यगुक्तं त्वया कुब्जे मया च प्रतिपूजितं^{४५} ।
 *माहमेताद्विजानामि पूर्वं ते वाक्यमुत्तमम् ॥ ४२ ॥
 *उपायश्चितितः सम्यक् त्वया बुद्धया^{४६} तु^{४७} पण्डिते ।
 *सुष्टु संस्मारिता ते ऽहं यन्मे दशरथो ददौ ॥ ४३ ॥
 *वरौ देवासुरे युद्धे प्राणत्यागं गतो नृपः ।

४४ पं—अर्थास्त्रयनर्थं० । ४५ पं—त्वनर्थां० । *अ, कु—नास्ति ।

५० अ, कु, पं—कैकेयेषु । ५१ पं—बाल्ये च । ५२ अ, कु—रूपं० । ५३

अ—विह्वला । *अ, कु—नास्ति । ५४ पं—प्रतिपालितं । ५५ पं—बुद्ध्या सु- ।

- *मम ह्यङ्गतो राजा तदाऽऽसीच्छरपीडितः ॥ ४४ ॥
 *मया च राक्षसभयात् पतिस्नेहेन रक्षितः ।
 *न खलुऽस्ति बलं किञ्चिन्मम राक्षसवारणे ॥ ४५ ॥
 *मम विद्याबलं त्वस्ति येनाहं दुष्प्रधर्पणा^० ।
 *विद्यायाश्चागम कुञ्जे शृणु वक्ष्याम्यह स्वयम् ॥ ४६ ॥
 *परं रहस्यमपि यत्सुहृदा तदशेषतः ।
 *आख्येयमिति^१ धर्मज्ञाः कथयन्ति मनीषिणः ॥ ४७ ॥
 *न हि मे त्वद्विधा लोके काचिदास्ति हितोपिणी ।
 *मया प्रहसितो बाल्ये मूर्खवेशो द्विजोत्तमः ॥ ४८ ॥
 *जीर्णवस्त्रपरिछन्नः श्मश्रुलस्तृणभूषणः ।
 *भस्मभूषितसर्वाङ्गो घृद्धो हर्षवशं गतः ॥ ४९ ॥
 *अविज्ञातकथाभापश्रेष्ठाभिरनयस्थितः ।
 *प्रसन्नश्चाह मिप्रस्त सस्मिता मधुरा गिरम् ॥ ५० ॥
 *प्रीतो ऽस्मि^२ नृपतेः कन्ये ब्रूहि किं करवाणि ते ।
 *स मया प्रह्वया भूत्वा वध्वा चाजलिकुञ्जलम् ॥ ५१ ॥
 *उक्तो वाक्यमिदं कुञ्जे लज्जया ग्रथिताक्षरम् ।
 *न किञ्चिदहमिच्छामि कृतमेतावता मम ॥ ५२ ॥
 *न्यमे क्रोधं परित्यज्य प्रसन्नस्त्वं द्विजोत्तम ।
 *एवमुक्तेन तु मया तेन हर्षितचेतसा ॥ ५३ ॥
 *ममातिसृष्टा^३ विधेयं बहुमानान्भया घृता^४ ।

*अ, कु—नास्ति । 56 प—०र्षिणी । 57 प—०यमपि । 58 प—ह ।

59 क—०तिरपष्टा । 60 क—घृता ।

- * तदिदं सुष्ठु ते कुञ्जे प्रणीतं बुद्धिनिश्चयात् ॥ ५४ ॥
- * विमृष(श)न्त्या स्वयं बुद्ध्या ममापि रुचितं दृढम् ।
- * रामो यद्यपि धर्मात्मा गुणवान् भ्रातृवत्सलः ॥ ५५ ॥
- * यौवराज्यं महत्प्राप्य व्यत्थाम्यति^१ न संशयः ।
- * राज्यश्रीर्हि मनुष्याणां बंधुस्नेहापहारिणी ॥ ५६ ॥
- * यया^२ कार्यमकार्यं वा संसृष्टो नात्रबुध्यते ।
- * रक्षणार्थं च पुत्रस्य भरतस्य महात्मनः ॥ ५७ ॥
- * अवश्यमेतत्कर्तव्यं वचनं मन्थरे^३ तव ।
- * सा त्वेवमुक्ता कैकेय्या प्रहृष्टा मन्थरामवत् ॥ ५८ ॥
- * प्रत्युवाचाथ कैकेयीमिदं प्रीतिसमन्विता ।
- * दिष्ट्याऽत्रगच्छसि हितं दिष्ट्या मे सफलःश्रमः ॥ ५९ ॥
- * दिष्ट्या पुत्रहितं कर्म कर्तुमद्य व्यवस्यसि ।
- * इदं वचोयुक्तमुदाहृतं मया तवानुरागेण सुखायतिक्षमम् ।
- * अलं विसृष्टेन सुतप्रतीक्षया^४ कुरुष्व मूर्धना प्रणतः^५ प्रसादये ॥६०॥
- ❀ इत्यापि रामायणे ऽपोध्याकाण्डे कैकेयीवाक्यं
- ❀ नामैकादशः सर्गः ॥ ११ ॥



* अ, कु—नास्ति । 61 पं—समेत्य । 62 के—यथा । 63 पं—
मन्थरे वचनं । 64 पं—०तीक्षण । 65 पं—प्रणयात् ।

[द्वादशः सर्गः]

*मन्थरायै ततः प्रीता केकेयी प्रमदोत्तमा ।

*कुण्डले श्रवणान्मुक्त्वा प्रददौ प्रीतिलक्षणम् ॥ १ ॥

*दद्या तु कुण्डले देवी तापनीये अनुत्तमे^१ ।

*अव्यक्तं सुस्मितं कृत्वा मन्थरां प्रशशंस ह ॥ २ ॥

प्रज्ञां ते नावजानामि^३ श्रेष्ठां श्रेष्ठाभिभाषिणि^४ ।

अस्यां पृथिव्यां कुब्जासु^५ बुद्ध्या नास्ति समा^६ त्वया^७ ॥३॥

त्वमेव हि^८ ममार्थेषु^९ नित्ययुक्ता हितैषिणी ।

नाज्ञासिपमहं^{१०} पूर्व-कुब्जे^{११} राज्ञधिकीर्षितम्^{१२} ॥ ४ ॥

सन्ति दुःसंस्थिताः कुब्जे वक्राः परमपापिकाः ।^{१०}

त्वं पद्ममिव^{१३} वातेन^{१४} नामिता प्रियदर्शना ॥^{१५} ५ ॥

उरस्ते समविस्पष्टं^{१६} यावत्स्कन्धौ समुन्नतौ^{१७} ।

अघस्ताचोदरं शान्तं सुनाभमवलक्षितम्^{१८} ॥ ६ ॥

१ पं—त्वनु० । * अ, कु—नास्ति । ३ अ, कु, पं—नाभिजानामि ।
 ४ अ, कु, पं—श्रेष्ठाभिधायनि (पं—नी) । ५ अ, कु—कुब्जेन्या । पं—
 कुब्जेतु । ६ पं—त्वया समा । ७ अ, कु—चैव भक्तो मे । ८ अ, कु—नाहं
 जानामि कुटिलं कुब्जे । पं—जानासि त्वमहं सर्व्वे । ९ कु—रामचयी-
 र्षितं । अ—त्यक्तं । १० पं—०परमपापिनः । कु—सन्ति दुःखस्थिताः
 कुब्जा विरूपा विद्वताननाः । ० अ—नास्ति । त्यक्तमस्ति । ११ कु—त्वं
 तु पद्मांतरनिभा कुब्जे तिप्रि० । अ—त्वं कुब्जे तिप्रि० । पं—०वातेन
 सप्ततः प्रिय० । १२ पं—तु वितिष्ठ्यं यावत्० । अ, कु—नातिनि-
 र्भुग्नामाकंठान्मुत्तमुन्नतं । १३ अ, कु—विलग्नं च यथा शुनः ।

जघनं तव¹⁴ विस्पष्टं रशनागुणशोभितम्¹⁴ ।
जंघे भृशसमन्यस्ते¹⁵ पादौ च वितताङ्गुली¹⁵ ॥ ७ ॥
त्वमायताभ्यां सक्थिभ्यां¹⁶ मन्थरे शुल्कवासिनी ।
अग्रतो मम गच्छन्ती सारसीव¹⁷ विराजसे ॥ ८ ॥
यदिदं¹⁸ ककुदाकारं²⁰ कुब्जं ते चारुशोभने²¹ ।
मतयः क्षत्रविद्याश्च मायाश्चात्र वसन्ति ते ॥ ९ ॥
अत्र ते प्रतिमोक्ष्यामि कुब्जे मालां हिरण्मयीम् ।
अभिपिक्ते च²² भरते राघवे²³ च²³ वनं गते ॥ १० ॥
एतेन²⁴ ते²⁴ सुवर्णेन मणियुक्तेन²⁵ सुन्दरि ।
समृद्धार्था प्रतीताऽहं भूषयिष्यामि ते तनुम्²⁶ ॥ ११ ॥
सुरे च तिलकं कान्तं²⁷ कांचनं कनकप्रभे ।
कारायिष्यामि ते कुब्जे शुभान्याभरणानि च ॥ १२ ॥
यावदग्रनखं²⁸ लिप्ता चन्दनेन सुगन्धिना ।
परिधाय शुभे वस्त्रे देवतेव²⁹ चरिष्यासि²⁹ ॥ १३ ॥
चन्द्रं विस्पृद्धमानेन मुखेन त्वं³⁰ शुभानने ।

14 पं—०रसनोगुण० । अ, कु—न्ते सु (कु—स) निम्नासं रसनादामशो० ।

15 कै—दृशसम० । पं—०प्रततागुली । अ, कु—दीर्घे तनु चेव पादौ

चाप्यायतौ कृशो । 16 के, प—शक्तिभ्या । 17 अ, कु—निल्वा० ।

18 अ, कु—दिट्टिमीव । 19 अ, कु—यष्टेदं । 20 कु—कुदाकारं । 21 अ,

कु—चारुदर्शिनी । (कु—ना) । 22 अ, कु, पे—तु । 23 अ, कु, पे—रामे चैव ।

24 अ—सुजातेन । कु सुजात्येन । पं—जात्येन ते । 26 अ, कु—गडुम् ।

27 अ, कु—चित्र । 28 के—० मुख । 29 अ, कु, पं—देवीव विच० ।

30 अ, कु—च ।

गमिष्यस्यनवधांगि नन्दयन्ती^{३१} सुहृज्जनम् ॥ १४ ॥
 तवापि कुब्जे दास्यो ऽन्याः सर्वाभरणभूषिताः^{३२} ।
 पादौ परिचरिष्यन्ति यथैव मम भामिनि^{३२} ॥^{३३} १५ ॥
 एवं^{३४} प्रशस्ता^{३४} कैकेय्या^{३४} कुब्जा^{३४} भूयोऽब्रवीदिदम् ।
 शयानां शयने शुभ्रे^{३५} त्वरयन्तीव तां भृशम्^{३५} ॥ १६ ॥
 गतोदके सेतुबन्धः^{३६} कल्याणि न विधीयते^{३६} ।
 उत्तिष्ठ कुरु कल्याणं राजानं परिमोहय ॥ १७ ॥
 तथेत्यथ प्रतिज्ञाय मन्थरावचनं तदा^{३७} ।
 भरतस्याभिषेकाय कैकेयी कृतनिश्चया ॥ १८ ॥
 महार्हमणिरत्नाढ्यं मुक्ताहारं वरांगना ।
 अग्रमुच्य तथाऽन्यानि सर्वाण्याभरणानि च ॥ १९ ॥
 भृशं विभेदिता देवी तया मन्थरया तदा ।
 क्रोधागारं प्रविश्यैका^{३८} सौभाग्यबलगर्विता^{३७} ॥ २० ॥
 तप्तहेमोपमत्तनुः कुब्जायास्त्वयशं^{३८} गता^{३८} ।
 संविश्य भूमौ कैकेयी मन्थरामिदमब्रवीत् ॥ २१ ॥
 अत्र^{३९} वा मां मृतां कुब्जे भर्तुरपिदधिष्यसि ।
 चनं वा राघवे याते भरतः प्राप्स्यति त्रियम् ॥ २२ ॥
 न धनानि न वस्त्राणि नालंकारान्न भोजनम् ।

३१ अ, कु, पं—नन्दयन्ती । ३२ अ, पं—भामिनि । ० कु—“भरण०” इत्यारभ्य “कुब्जा भू” इत्यन्तं त्यक्तमास्ति । ३३ अ, कु, पं—देवीं कैकेयीं त्वरयन्त्युत । ३४ अ, कु, पं—न कल्याणि प्रशस्यते । ३५ अ, कु—तत । ३६ कै—प्रविश्यैव । ३७ अ, कु, पं—वर्षिता । ३८ अ, कु, पं—वशात्तुगा । ३९ अ, कु—इह ।

आसेवयिष्ये⁴⁰ ऽहं तावद्यावद्रामो वनं गतः⁴¹ ॥ २३ ॥
 इतीदमुक्त्वा वचनं सुदारुणं निधाय सर्वाभरणानि भामिनी⁴² ।
 असंवृतामास्तरणेन⁴³ मेदिनीमथाधिशिश्ये पतितेव किन्नरी ॥२४॥
 उदीर्णसंरंभमना⁴⁴ वृतानना⁴⁵ तदा विमुक्तोत्तमदामभूषणा ।
 नरेन्द्रपत्नी विमना बभूव सा तमोवृता घौरिवनष्टभास्करा ॥ २५ ॥
 इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे⁴⁶ मन्थरावाक्यं
 नाम द्वादशः सर्गः⁴⁷ ॥ १२ ॥

40 अ, कु-आ (कु-अ) सेविष्ये हाहं । 41 अ, कु-वजेत् । 42
 पं, कु-भामिनी । 43 अ, कु-असंवृतां संस्तरणेन । 44 अ, कु-
 संरंभतमोवृता० । 45 अ, कु-यम प्रमाजनेत्पापचितार्ता । कै-द्वादश
 सर्गः ।

[त्रयोदशः सर्गः]

आज्ञाप्य^१ तु महाराजो राघवस्याभिषेचनम् ।
 कैकेय्याः प्रियमारयातुं प्रिवेशान्तःपुरं ततः^२ ॥ १ ॥
 तां तत्र पतितां भूमौ शयानामतथोचिताम् ।
 प्रतप्त इव दुःखेन शुश्राव जगतीपतिः ॥ २ ॥
 स वृद्धस्तरुणीं भार्यां प्राणेभ्यो ऽपि गरीयसीम् ।
 अपापः पापसंकल्पामुपचक्राम दुःखितः ॥ ३ ॥
 सर्वलोकाप्रियं मूढामनर्थमपि^३ चात्मनः^४ ।
 कर्तुं^५ प्रयतमाना तां ददर्श पतितां भुवि ॥ ४ ॥
 [लतामित्र विनिष्कृतां पतिता देवतामिव ।
 प्रतप्तामित्र दुःखेन विज्ञाय जगतीपतिः ॥ ५ ॥]^६
 करेणुं^७ विपदिग्धेन^८ विद्धा^९ व्याधेन दुःखिताम् ।
 महागज इवासाद्य स्नेहात् पस्पर्श^{१०} ता नृपः^{११} ॥ ६ ॥
 स तां विमृज्य^{१२} पाणिभ्यामतिसत्रस्तचेतनः^{१३} ।
 उवाच राजा कैकेयीं श्वसन्तीमुरगीमिव^{१४} ॥ ७ ॥
 न ते ऽहमभिजानामि क्रोधमात्मनि संयतम् ।

१ कै—आज्ञाप्य । २ अ, कु, पं—नृप । ३ अ, कु—०मनर्थे लोक
 गर्हितम् । प—०मनर्थे लोकविश्रुत । ४ अ, कु, प—अकाक्षमाणा
 सप्राप्तो । ५ अ, कु, प—नास्ति । ६ अ, कु प—करेणुमिव दिग्धेन ।
 ७ प—विद्धामत्यत- । ८ अ, कु—पत्निमार्जं ता । ९ प—विमृज्य । १०
 अ, कु—०स्तलोचन । प—०मस्पृशत्-चेतन । ११ प—०तीं कुररी
 मिव ।

देवि केनाभिश्स्ताऽसि¹² केन वाऽसि विमानिता ॥ ८ ॥
 यदिदं मम दुःखाय शेषे कल्याणि दुःखिता ।
 सति¹³ देवि महाराज्ञि¹³ मयि कल्याणचेतसि ॥ ९ ॥
 भूतोपहतचितेन मम चित्तप्रमाथिनी ।
 सन्ति मे कुशला वैद्याः सुविभक्ताश्च¹⁴ वृत्तिभिः ॥ १० ॥
 अगदां त्वां¹⁵ करिष्यन्ति व्याधिमाचक्ष्व¹⁶ मामिनि¹⁷ ।
 यस्य¹⁸ वाते प्रियं कार्यं येन¹⁹ वा विप्रियं²⁰ कृतम् ॥ ११ ॥
 कः प्रियं लभतामद्य को वा सुमहदाप्रियम् ।
 केन देव्यभिश्स्ताऽमि²¹ केन वाऽसि²¹ विमानिता ॥ १२ ॥
 अवध्यो वध्यतां को ऽद्य²² वध्यो²³ वा को²⁴ विमुच्यताम् ।
 दरिद्रः को भवत्वाढ्यो धनवान् को ऽस्त्वकिंचनः ॥ १३ ॥
 यदस्ति मे धनं किंचित्तस्य देवि त्वमीश्वरी ।
 यावदावर्तते²⁵ चक्रं तावती²⁶ मे²⁷ वसुन्धरा ॥ १४ ॥
 प्राच्याश्च सिन्धुसौवीराः²⁸ सुरसावर्त्तयस्तथा ।
 वंगांगमगधा देशाः समृद्धाः काशिकोसलाः²⁹ ॥ १५ ॥

12 अ, प—०शस्तासि । 13 अ, कु—भूमौ पाशष्वनाथेव । 14 अ, कु—
 संवि० । 15 अ, कु—ते । 16 अ, कु—व्यक्तमाचक्ष्व । 17 कु भाविनि ।
 पं—भाविनी । अ भामिनी । 18 अ, कु—कस्य । 19 अ, कु, पं—केन ।
 20 अ, कु—ते प्रिय । 21 अ, कु, पं—देव्यभिश्स्तासि । 22 अ, कु,
 प—वाद्य । 23 अ, कु—वा । 24 कै—वद्धो । पं—वद्धो । अ, कु—वध्यो ।
 25 के—ऽद्य । 26 अ, कु—०वत्प्रव० । 27 अ, कु—तावदेवा । 28
 प—०सौवीरा । 29 पं—सुराद्ध्ययस्तयस्तथा । 30 पं—काशिकोशलमेकल ।

तत्र जातं बहु द्रव्यं धनधान्यमनन्तकम्^{३१} ।
 ततो वृणीष्व कैकेयि यावच्चं मम शंकमे ॥ १६ ॥
 वयं चैव मदीयाश्च सर्वे तव प्रशानुगाः ।^{३२}
 न ते किञ्चिदभिप्रायं व्याहन्तुमहमुत्सहे ॥^{३३} १७ ॥
 आत्मनो जीवितेनापि ब्रूहि यन्मनसेच्छसि ।^{३४}
 उलमात्मनि जानामि न मा शंकितुमर्हसि^{३५} ॥^{३६} १८ ॥
 करिष्यामि तव प्रीतिं सुकृतेनापि ते शपे ।
 किमायासेन ते भीरु शीघ्रमुत्तिष्ठ शोभने ॥ १९ ॥
 तच्च मे ब्रूहि कैकेयि यतस्ते भयमागतम् ।
 तत्ते ऽहमपनेष्यामि नीहारामिव रश्मिवान् ॥ २० ॥
 पृथिव्या मर्वराजोऽस्मि^{३७} सम्राडस्मि^{३८} महीक्षिताम् ।
 पृथिव्या पररत्नाना प्रथुरस्मि शुचिस्मिते ॥ २१ ॥^{३९}
 ददामि^{४०} यत्ते रुचितं^{४१} कोप मैव^{४२} कृथाः प्रिये ।^{A1}
 [त मन्मथशरैर्निद्धं कामप्रेगप्रशानुगम् ॥ २२ ॥

३१ प—धन० । ३२ प—नास्ति । ३३ प—“आत्मनो” इत्यारभ्य
 'शपे' इत्यन्त “त्प्रमोश्वरा” इत्यनन्त पठ्यते । ३४ कै—किं मतुमर्हसि ।
 ३५ अ, कु—राजराजो । ३६ अ, कु—सम्राट् सर्वे । ३७ प—नास्ति ।
 ३८ अ कु—ददामि । ३९ अ, कु—मिमत् । ४० अ, कु—मात्य ।
 प—माय ।

A1 अ कु—न ते किञ्चिदभिप्रेत न कर्तुमहमुत्सहे ।

आत्मनो जीवितेनापि करिष्ये ते प्रिय प्रिये [१]

अ, कु, प—एवमुक्त्वा समुत्थाय विवक्षुर्भृशमाप्रिय ।

परिपीडयितु भूयो भर्तार साभ्यभाषत [२] ॥

उवाच पृथिवीपालं कैकेयी दारुणं वचः ।] ¹
 नास्मि विप्रकृता ⁴² देव केनचिन्नावमानित ⁴³ ॥ २३ ॥
 अभिप्रायोऽस्ति मे कश्चित्तं मे त्वं कर्तुमर्हसि ⁴⁴ ।
 प्रतिजानीहि तावत् त्वं यदि मे ⁴⁵ कर्तुमिच्छसि ⁴⁶ ॥ २४ ॥
 प्रतिज्ञाते ततोऽहं त्वां वरयिष्यामि काङ्क्षितम् ।
 एवमुक्तस्तया राजा प्रियया स्त्रीवशं गतः ॥^O २५ ॥
 प्रविवेश विनाशाय मृगः पाशमिवाबुधः ।^O
 प्रियां प्रियहिते युक्तां भार्यां नित्यमनुव्रताम् ॥ २६ ॥
 स तां विज्ञाय सन्तप्तां कैकेयीं पार्थिवोऽब्रवीत् ।
 अवलिप्ते न जानासि त्वत्तः प्रियतरो ममू ॥ २७ ॥
 राममेकं वर्जयित्वा लोकेष्वन्यो ⁴⁷ न विद्यते ।
 [तेन ज्येष्ठेन रामेण मुख्येन च महात्मना ॥ २८ ॥
 शपेयं जीवतार्हेण ब्रूहि यन्मनसेच्छसि ।
 यं मुहूर्त्तमपश्यंस्तु न जीवेयमहं शुभे ॥ २९ ॥
 तेन रामेण कैकेयि शपे ब्रूहि किमिच्छसि ।]
 दद्यामहं ⁴⁸ प्रिये सर्वं स्वीयं ⁴⁹ हृदयमप्यहम् ॥ ३० ॥
 अतः समीक्ष्य कैकेयि ब्रूहि यत्साधु मन्यसे ।

41 अ, कु, पं—नास्ति । 42 पं—निर्भसिता । 43 अ, कु, पं—०विप्र-
 विमानिता । 44 अ, कु, पं—अमोप्सितं च (पं-नु)मे किञ्चित् प्रियं कर्तु-
 मिर्हसि । 45 पं—त्वं । 46 अ, कु—तदज्ञातुमिच्छसि । Oपं—नास्ति ।
 47 पं—लोके ह्यन्यो । 48 अ, कु, पं—नास्ति । 49 अ, कु—दास्य ते
 पच्छित्यैर्न प्रिये । पं—दद्याहं प्रत्येदं प्रिये ।

बलमात्मनि पश्यन्ती न विशंकितुमर्हसि^{५०} ॥ ३१ ॥

करिष्यामि तव प्रीतिं सुकृतेनात्मनः शपे ।

तुष्टा तेनैव^{५१} वाक्येन दृष्ट्वाऽतिप्रियमात्मनः^{५२} ॥ ३२ ॥

व्याजहार महाघोरं कैकेयी भृशमप्रियम् ।

यथा च^{५३} धर्म^{५३} शपसे^{५४} वरं मह्यं ददासि च ॥ ३३ ॥

तच्छृण्वन्तु समागम्य देवाः शक्रपुरोगमाः ।

चन्द्रादित्यौ ग्रहाश्चैव नमो रा-यहनी दिशः ॥ ३४ ॥

जगच्च पृथिवी चैव सह गन्धर्वराक्षसैः ।

निशाचराणि भूतानि गृहेषु गृहदेवताः ॥ ३५ ॥

यानि चान्यानि सत्त्वानि जानीयुर्भाषितं तव^{५५} ।

सत्यसन्धो महामागो^{५६} धर्मज्ञः सुसमाहितः ॥ ३६ ॥

वरं मह्यं ददात्येतं^{५७} तन्मे शृणुत देवताः ।

इति देवी महेष्वासं परिगृह्णाभिगम्य^{५८} च ॥ ३७ ॥

ततो वाचमुवाचेदं^{५९} वरदं काममोहितम् ।

पुरा देवासुरे युद्धे वरौ दत्तौ त्वया^{६०} नृप^{६०} ॥ ३८ ॥

परितुष्टेन मे देव^{६१} तौ वरौ त्वं प्रयच्छ मे ।

यस्त्वयाऽयं समारंभो रामं प्रति समाहितः ॥ ३९ ॥

50 कै, पं—विकांक्षितु० । 51 अ, कु, पं—तेनाथ । 52 कै—दृष्ट्वा-
विप्रिय० । 53 अ, कु—धर्मेण । पं—तु धर्म । 54 पं—शपसे । कै—
'शपसे' इति विभिन्नरूपं पार्श्वे लिखितम् । 55 अ, कु—वचः । 56
अ, कु—महाराज्ञो । 57 अ, कु—०त्येय । पं—०त्येतत् । 58 अ, कु—
०मित्वाप्य । 59 अ, कु—वच उवाचेदं । 60 पं—त्वयानघ । 61 अ,
कु—चेदानी ।

अनेनामोतु भरतो यौवराज्याभिपेचनम् ।
 वनं गच्छतु रामश्च चीराजिनजटाधरः ॥ ४० ॥
 नव पंच च वर्षाणि वराचेतौ वृणोम्यहम् ।
 यदि सत्यप्रतिज्ञोऽसि वनं रामं विसर्जय ॥ ४१ ॥
 भरतं चापि मे पुत्रं यौवराज्ये ऽभिपेचय⁶² ।
 एभिर्नचोभिः कैकेय्या हृदि विद्धो नराधिपः ॥ ४२ ॥
 भयेन हृष्टरोमाऽभूद्ब्याघ्रौ गीक्ष्य⁶³ यथा मृगः ।
 सीदन् दुःखेन महता स तेनाभिहतो नृपः ॥ ४३ ॥
 असंबृतायां विमना भूमावुपविवेश सः ।
 अहो धिगिति चाप्युक्त्वा शोकार्तः पतितः क्षितौ ॥ ४४ ॥
 मोहमम्यागमत्सद्यो वाक्शल्याभिहतो हृदि ।
 चिरेण च पुनः संज्ञा प्रतिलभ्यार्तमानसः ॥ ४५ ॥
 कैकेयीमव्रगीत् क्रुद्धो दुःखशोकसमन्वितः ।
 नृशंसे भ्रष्टचारित्रे⁴ कुलस्यास्य विनाशिनि ॥ ४६ ॥
 किं कृतं तव रामेण मया वा पापदर्शने⁶⁵ ।
 यदतीत्यापि कौशल्यां रामस्त्वामनुवर्त्तते ॥ ४७ ॥
 तस्यैव त्वमनर्थाय किमर्थं वै समुद्यता ।
 त्वं मया ऽत्मनिनाशाय भवनं संप्रवेशिता⁶⁶ ॥ ४८ ॥
 राजपुत्रीति विज्ञाय व्याली तीक्ष्णविपा⁶⁷ यथा⁶⁷ ।
 जीवलोको यदा सर्वो रक्तो रामगुणैरियम् ॥ ४९ ॥

62 प—मिषिचय । 63 अ, कु, पं—दृष्ट्या । 64 अ, कु—दुष्टम् । 65 अ—दर्शने । 66 अ, कु, स्व प्र० । 67 अ, कु, प—०नहाविपा ।

अपराधं कमुद्दिश्य त्यक्ष्यामीष्टमहं सुतम् ।

कौशल्यां वा सुमित्रां वा त्यजेयमपि वा श्रियम् ॥ ५० ॥

जीवितं चात्मनो^{६९} रामं नैवाहुं^{७०} पितृवत्सलम् ।

नन्दामि हि प्रियं पुत्रं दृष्ट्वा राममहं सदा ॥ ५१ ॥

अपश्यतः क्षणं तं मे न भवेदिह चेतना ।

तिष्ठेच्छोको विना भूमिं सस्यं च^{७०} सलिलं विना ॥ ५२ ॥

न तु^{७१} रामं विना लोके^{७२} तिष्ठेत्^{७३} प्राणो मम क्षणम्^{७३} ।

तदलं^{७४} त्यज्यतामेप निश्चयः पापनिश्चये ॥ ५३ ॥

अपि ते चरणौ मूर्ध्ना स्पृशाम्येव प्रसीद मे ।

स^{७५} तेन^{७५} वाक्येन महाऽप्रियेण घोरेण राजा हृदये गृहीतः ।

अदृष्टरूपो विमना बभूव व्याघ्राभिपन्नो बलवानिवोक्षा ॥५४॥

लोकस्य नाथोऽपि विपन्ननाथो भृशं गृहीतो हृदये तथैव ।

पपात भूर्मा चरणौ परिस्पृशत् प्रसीद देवीति बचोऽम्पुदीरयन् ॥५५॥

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे चराभियाचनं

नाम त्रयोदशः सर्गः ॥ १३ ॥

६९ अ, कु—यात्मनो । ७० अ, कु—न त्येयं । पं—न चैव । ७० अ, कु—या । ७१ कै—च । ७२ अ, कु—देहे । ७३ अ, कु—तिष्ठेयुस्त्वयो मम । पं—० प्रागम्यै मम । ७४ कै—तदयं । ७५ कै, पं—सत्येन ।

[चतुर्दशः सर्गः]

अतदर्ह महाराजं पतितं पादयोरपि ।

ययातिमिव पुण्यान्ते^१ देवलोकात्परिच्युतम् ॥ १ ॥

कैकेयी पुनरेवेदं घोरं वचनमब्रवीत् ।

अनन्तदुःखसंवीतमतीवभयदर्शनम्^२ ॥ २ ॥कीर्त्यसे त्वं सदा^३ सद्भिः सत्यवादी दृढव्रतः ।मम चेमाँ^४ वरौ दत्त्वा किं विचारयसि प्रभो ॥ ३ ॥

एवमुक्तस्तु कैकेय्या राजा दशरथस्तदा ।

प्रत्युवाच ततः क्रुद्धो निःश्वसन्नतिविह्वलः^५ ॥ ४ ॥मृते मायि गते रामे वनं मनुजपुंगवे^६ ।हन्तानार्ये ममामित्रे सकामा भव कैकयि^७ ॥ ५ ॥

यदा मां गुरवो धृद्धा गुणवन्तो बहुश्रुताः ।

परिग्रक्ष्यन्ति^८ काकुत्स्थं वक्ष्यामि किमहं तदा ॥ ६ ॥

कैकेय्याः प्रियकामेन रामः प्रयाजितो मया ।

यदि सत्यं वदिष्यामि हास्यं तेषां भविष्यति ॥ ७ ॥^{A1}

१ पं—दुर्धर्ष । २ अ, कु—०संविन्नममीता भय० । पं—०संवि-
 न्नमामिते भय० । ३ पं—यदा । ४ अ, कु—चोमाँ । ५ कै, पं—०श्वति-
 विह्वलः । ६ अ, कु, पं—०कुंजरे । ७ अ, कु, पं—७=९ । ८ अ, कु,
 पं—केकयि । ९ अ, कु, पं—९=७ । १० अ, कु—०प्रच्छंति ।

A1 अ, कु, पं—यालिशो यत कामात्मा राज्यं दशरथोऽन्वशात्^१ ।

याजितो यस्य जेतुं प्रियं ज्येष्ठकारणे ॥

गर्हयिष्यन्ति¹¹ च मां नित्यं¹² स्त्रीजितं सर्पसाधवः ।
 गर्हितस्य च मे श्रेयो नेह¹³ नामुत्र विद्यते¹⁴ ॥ ८ ॥
 स्त्रीजितेन¹⁵ नृशंसेन¹⁶ रामः सर्वगुणान्वितः ।
 मया विवासितः¹⁷ पुत्रः स महात्माऽन्तरात्मना¹⁸ ॥ ९ ॥
 वतैश्च ब्रह्मचर्यैश्च¹⁹ गुरुभिश्चापि कर्षितः²⁰ ।
 सुखकालेऽद्य मे पुत्रः कथं वत्स्यति वै वने ॥²¹ १० ॥
 अनियोज्यैत्र तं कृच्छ्रे यदि मे मरणं भवेत् ।
 अनुग्रहः परो मे स्यादिति चैवाभिकांक्षये²² ॥ ११ ॥
 प्रियार्हं च सुखार्हं च प्रियं पुत्रं गुणान्वितम् ।
 कथं वक्ष्याम्यहं पापो²³ वनं गच्छेति राघवम् ॥ १२ ॥
 नृशंसमकृतात्मानं क्लीवसच्रं स्त्रिया जितम् ।
 निरमर्षं²⁴ निरुत्साहमल्पवीर्यं धिगस्तु माम् ॥ १३ ॥
 अकीर्तिरतुला लोके ध्रुवं²⁵ परिभ्रमथ मे । A2
 इति राज्ञो विलपतः शोकसंनिवृत्तचेतमः ॥ १४ ॥

11 अ, कु, पं—इति मां गर्हयिष्यन्ति । 12 कु—नेहामुत्र निगद्यते ।

13 कै—द्विजितेनानृशंसेन । 14 अ, कु—च पितृमान् । पं—च पितृ
 चान् । 15 अ, कु—दुरात्मना । पं—त्यक्तम् । 16 कै—व्रत० । 17 अ,
 कु—०ध्यातिकर्षित । पं—०ध्याभिकर्षित ।

18 अ, कु—सुखकालेन मे पुत्रो वने वृच्छ्रमवाप्स्यति ।

पं—सुखकालोद्य " " " "

19 अ, कु—चाप्यभिकांक्षितं । पं—वान्याभिकांक्षितं । 20 कै—पापे ।

21 अ, कु—निरामर्षं । 22 अ, कु—ध्रुवः ।

A2 अ, कु—सर्वभूतेषु चावहा यथा पापकृतस्तथा ।

अस्तमभ्यगमत्सूर्यो^{२३} रजनी चाभ्यवर्त्तत ।

त्रियामा तु भृशार्त्तस्य सा रात्रिरभवत्तदा ॥ १५ ॥

तथा विलपतस्तस्य राज्ञो वर्षशतोपमा ।

दीर्घमुष्णं^{२४} च^{२५} निःश्वस्य वृद्धो दशरथो नृपः ॥ १६ ॥

करुणं विललापात्तो गगनासक्तलोचनः ।

कैकेयि हा नृशंसाऽमि यन्मामिच्छसि बाधितुम् ॥ १७ ॥

राज्यलोभाच्चया त्यक्तः प्राणांस्त्यक्ष्याम्यसंशयम् ।

हा पुत्र राम धर्मात्मन्^{२६} सद्भक्तं^{२७} गुरुवत्सलम्^{२८} ॥ १८ ॥

कथं त्वामल्पपुण्योऽहं परित्यक्ष्याम्यसंशयम् ।

हा^{२९} रात्रे^{३०} सर्वभूतानां जीवितार्द्रापहारिणि ॥ १९ ॥

नेच्छामि^{३१} हि^{३२} प्रभातां त्वां^{३३} तवायं रचितोऽञ्जलिः^{३०} ।

अथवा गम्यतां शीघ्रं नेमामिच्छामि निर्घृणाम् ॥ २० ॥

अकृतज्ञां चिरं द्रष्टुं कैकेयीं भर्तृघातिनीम् ।

विलप्यैव ततो राजा कैकेयीमुद्यताञ्जलिः ॥ २१ ॥

प्रसादयामास पुनर्वाक्यं चेदमथाब्रवीत्^{३१} ।

साधुवृद्धस्य^{३२} दीनस्य मादृशस्याल्पचेतमः^{३३} ॥ २२ ॥

२३ अ, कु—०मभ्यागम० । २४ अ, कु, पं—स दीर्घमुष्णं । २५ अ, पु—भद्रात्मन् । २६ अ, कु—सद्भक्त । पं—सद्भक्त । २७ अ, कु—गुरुवत्सल । पं—गु[र]वत्सल । २८ अ, पु—हे रात्रि । २९ अ, कु, प—नेच्छाम्यद्य । ३० अ, कु, पं—त्वामभिवाचे वृताञ्जलि । ३१ पं—चेवम० । ३२ अ, कु—स्माच्चि० । पं—प्रवृद्धस्य च । ३३ अ, कु—त्रदृशस्याल्पतेजस ।

प्रसादः क्रियतां देवि राज्ञो भर्तुर्विशेषतः ।^{३४}

कृता ते यदि जिज्ञासा मदीया^{३५} चारुहासिनि ॥०२३ ॥

सत्यमेव स्वमानो मे त्वदधीनो ऽस्मि सर्वदा^{३६} ।०

यद्यदिच्छसि संग्राप्तुं रामप्रव्राजनादृते ॥ २४ ॥

सर्वस्वमपि च^{३७} प्राणास्ते ददानि^{३८} प्रसीद मे ।

शून्येन^{३९} खलु कैकेयि मयैतद् वाक्यमीरितम् ॥ २५ ॥

कुरु साध्वि प्रसादं मे भीतस्य शरणैपिणः^{४०} ।

विशुद्धभास्य^{४१} सुदुष्टभावा^{४१} दुःसातुरस्याश्रुकलस्य^{४१} राज्ञः ।

कृताश्रुपातस्य तथाऽभिधानतोभर्तु^{४३} नृशंसा^{४४} न चकार संज्ञाम्^{४५} ।२६

ततः स राजा पुनरेव मूर्च्छितः प्रियां सुदुष्टां प्रतिकूलभाषिणीम् ।

समीक्ष्य पुत्रस्य विवासकारणं क्षितौ विपण्णो^{४६} त्रिललाप पार्थिवः^{४७} २७

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे दशरथविलापो

नाम चतुर्दशः सर्गः ॥ १४ ॥

३४ अ, कु, पं-शरणागतस्य सुभगे कुरु प्राण प्रसीद मे । ३५ कु-
मयीय । ३६ कु, प-सर्वथा । ० अ-नास्ति । ३७ अ, कु-वा । पं-
शुष्टितम् । ३८ अ, कु, प-ददामि । के-“नि” इति लिखित्वा पश्चात्
तत्रेव “मि” इति वृत्तम् । ३९ अ, कु-सत्येन । ४० अ, कु, पं-शरणा-
धिन । ४१ अ, कु-०हि दुष्टभावा । प-विशुद्धबुद्धेरपि शुद्धभावा ।
४२ अ, कु-भृशार्त्तरूपस्य च तस्य । के-दु सार्त्तिक*स्य वि*क
लस्य । “क*” इति पश्चादुपरि विवृतम् । “*दि” इत्यपि विवृतम् । ४३
अ, कु, पं-०भियाचतो । ४४ के-भर्तुर्भृशं सा । ४५ अ, कु-साक्षा ।
४६ प-निपण्णो । ४७ अ, कु-दु खित ।

[पञ्चदशः सर्गः]

पुत्रशोकातुरं^१ दीनं विसंज्ञं पतितं भुवि ।

विचेष्टमानं भर्तारं कैकेयी वाक्यमत्रवीत् ॥ १ ॥

पापं कृत्वेव^२ भो भर्तर्मम दत्त्वा^३ वरद्वयम् ।

शेषे किं भूतले स्वस्थः^४ सत्ये^५ त्वं स्थातुमर्हसि^६ ॥ २ ॥

आहुः सत्यं परं धर्मं धर्मज्ञाः सत्यवादिनः ।

सत्यादादीति^७ च ज्ञात्वा मया त्वमिह^८ याचितः ॥ ३ ॥

कपोतायाभयं दत्त्वा शिविः^९ किल महीपतिः ।

उत्कृत्य^{१०} च स्वमांसानि दत्त्वा स्वर्गमितो गतः ॥ ४ ॥^{A1}

अलर्कथापि राजर्षिर्ब्राह्मणेनाभियाचितः ।

प्रदायोत्कृत्य नेत्रे द्वे^{११} नाकशृष्टमितो गतः ॥ ५ ॥

सत्यप्रतिज्ञस्तस्मात्त्वं^{१२} प्राक् प्रतिज्ञाय मे वरौ ।^{A2}

१ कै—पुत्रशोकात्तरं । २ पं—०भो भर्तृस्त्वत्वात् । अ, कु—कृत्वेदम-
परं मम० । कै—०भो भर्तृमम० । ३ अ, कु—सन्न । ४ पं—०स्थातुं-
त्वमर्हसि । अ, कु—स्थातुं सत्ये त्वमर्हसि । ५ अ, कु—०यागिति ।
६ अ, कु—त्वमभि- । ७ अ, कु—शैव्यः । ८ पं—उत्कृत्य ।

A 1 अ, कु, पं—सरितां च पतिः सत्यां^१ मर्यादां स्थापिता^२ पुषा ।

समय पालयन्^३ धेरां^४ न लंघयति^५ धेगवान् ॥ ६ ॥

७ अ, कु—स्ये । ८ प—स चाप्रतिज्ञ० । A2 अ, कु—न दद्यामि च^१
वस्मारय लुब्ध कापुरुषो यथा ।

१ प—सत्य । २ प—स्थापित । ३ प—पालयद् । ४ कु—धरो^१ । ५ न लंघयति ।

६ भ—न ।

परित्यज¹¹ सुतं रामं वननासाय पार्थिव¹² ॥ ६ ॥
 न करिष्यसि चेदद्य वचनं मम कांक्षितम् ।
 अग्रतस्ते महाराज¹³ परित्यक्ष्यामि जीवितम् ॥ ७ ॥
 छलपाशेन कैकेय्या बद्ध एवं¹⁴ नराधिपः ।
 न शशाक तदा छेत्तुं बलिः प्रागिव विष्णुना ॥ ८ ॥
 विवर्णवदनश्चापि विभ्रान्तनयनो¹⁵ ऽभनत् ।
 महाधुर्यः श्रमासक्तो¹⁶ युक्तश्चक्रान्तरे यथा ॥ ९ ॥
 विभ्रान्तचित्तनयनो नष्टसंज्ञो ऽतिदुःखितः¹⁷ ।
 कृच्छ्रादिव¹⁸ स धैर्येण संस्तभ्यात्मानमात्मना¹⁹ ॥ १० ॥
 शोकमरंभताम्राक्षः कैकेयीमिदमब्रवीत्²⁰ ।
 धिगस्तु पापशोले त्वां नृशंसे पतिघातेनि⁰ ॥ ११ ॥
 त्यजामि त्वामहं²¹ पापे²¹ निर्धृणां निरपत्रपाम् ।⁰
 न मे त्वया कृत्यमस्ति क्षुद्रया²² पापलुब्धया²³ ॥ १२ ॥^{A3}
 त्वत्कृते चापि भरतं त्यजाम्यनपकारिणम् ।
 एनं विलपतस्त्वस्य राज्ञो दशरथस्य च ॥ १३ ॥

11 अ, कु, पं-परित्यज्य । 12 अ, कु, पं-राघवं । 13 अ, कु, पं-ततो
 राजन् । 14 पं-एव । 15 अ-विभ्रान्तः । 16 अ, कु-धमायुक्तो । पं-
 श्रमाशक्तो । 17 कु-नष्टममिदं विदुःखितं । अ-नष्टसंज्ञोतिदुःखितः ।
 18 अ, कु, पं-कृच्छ्रादेव । 19 अ, कु-०श्यात्मानमत्रयीत् । 20 अ,
 कु, पं-०मभिर्नाक्ष्य ता । 21 पं-त्वां महापापा । कु-०पापो । 0अ-
 नास्ति । 22 पं-क्षुद्रया । 23 अ, कु, पं-राज्यलुब्धया (कु-लुब्धया)
 .A3 अ, कु, पं-मन्त्र (पं-नु) यद्य मया पाणिर्गृहीतो यस्त्यजाम्यहम् ।
 24 अ, कु-नु ।

जगाम सा निशा कृत्स्ना दुःखार्तस्य महात्मनः ।
 अथोपसि प्रभातायां शर्वर्या द्वारमागतः ॥ १४ ॥
 सुमन्त्रः प्राञ्जलिभूत्वा बोधयामास पार्थिवम् ।
 सुप्रभाता निशा राजंस्तवेयं भद्रमस्तु ते ॥ १५ ॥
 बुध्यस्व नरशार्दूल श्रियं भद्राणि चाप्नुहि ।
 पूर्णचन्द्रोदये पूर्णो वर्द्धते सागरो यथा ॥ १६ ॥
 सर्वर्द्धिविभवैः पूर्णस्तथा^{२५} वर्द्धस्व भूपते ।
 यथा रविर्यथा सोमो यथेन्द्रो वरुणो यथा ॥ १७ ॥
 नन्दन्त्यृद्धया श्रिया चैव तथा नन्दस्व^{२६} भूपते ।
 ततः स राजा स्रुतस्य प्रतिबोधनमङ्गलम् ॥ १८ ॥
 श्रुत्वाऽतिशोकसंतप्तस्तमाभाष्येदमब्रवीत्^{२७} ।
 स्रुत किं दुःखितं त्वं मामस्तुत्यं^{२८} स्तोतुमिच्छसि ॥ १९ ॥
 वचोभिरोभिरार्त्तं^{२९} मां^{३०} भूयस्त्वं^{३०} परिक्रन्तसि^{३०} ।
 सुमन्त्रस्तु^{३१} तदा^{३१} श्रुत्वा भर्तुर्दानस्य भाषितम् ॥ २० ॥
 सहसा व्रीडितः^{३२} किञ्चित्स्माद्देशादपागमत् ।
 अत्रान्तरे पापशीला कैकेयी पुनरब्रवीत् ॥ २१ ॥
 चारुप्रतोदेन^{३३} भर्तारं^{३३} सीदन्तं तुदतीव सा ।

२५ अ, कु, पं—पूर्णस्तथा । २६ अ, कु, पं—त्वं नन्द । २७ अ, कु—
 श्रुत्वा हि दुःखसं० । पं—श्रुत्वातिदुःखसं० । २८ कै—०मस्तोत्यं ।
 २९ पं—०रेव राजानं । ३० अ, कु, पं—०स्वयमवुर्तसि । ३१ अ, कु,
 पं—०स्नद्वन् । ३२ पं—व्रीडित । ३३ अ, कु, पं—भर्तारं चारुप्रतोदेन ।

*किमेवं भापसे दीनं वाक्यं त्वं^{३४} प्राकृतो^{३५} यथा ॥ २२ ॥

*राममाहूय नि रूधं वनायाशु^{३६} विसर्जय ।

*यदि सत्यप्रतिज्ञो ऽसि कुरु मे वचनं प्रियम् ॥ २३ ॥

*नायं कालो विपादस्य न मोहस्योपपद्यते ।

*प्रव्राज्य रामं भरतं यौवराज्ये ऽभिपिच्य^{३७} च^{३८} ॥ २४ ॥

*निःसपत्नां^{३९} च मां कृत्वा भगव्य निगतज्वरः ।

*स पुनर्वाक्यतोदेन पीडितो नरपुंगवः ॥^{३६}२५ ॥

*राजा शोकार्तिसन्तप्तः^{४०} सुमन्त्रमिदमब्रवीत् ।

*सत्यपाशनिग्रहो^{४१} ऽसि ह्यत संभ्रान्तमानसः^{४२} ॥ २६ ॥

*रामं द्रष्टुमिहेच्छामि तं च शीघ्रमिहानय ।

इति राज्ञो वचः श्रुत्वा कैकेयी तदनन्तरम् ॥ २७ ॥

स्वयमेराव्रतीत्स्वतमिदं सा^{४३} त्वरयन्त्युत^{४४} ।

नरेन्द्रवचनात्स्वत गच्छ रामं^{४३} त्वमानय^{४३} ॥ २८ ॥

यथा च शीघ्रमेवैति तथैव त्वरयस्व^{४४} च^{४४} ।

कैकेय्या वचनं श्रुत्वा सुमन्त्रः प्रीतमानसः ॥ २९ ॥

*पते श्लोका शोडशे सर्गे (३७—४२) किञ्चित्पाठभेदेन पुनरुक्ता ।

३४ अ, कु, पं—सुप्राकृतो (प—तं) । ३५ अ, कु, पं—वनायाद्य । ३६

अ—मिपिच्यत । पं—मिपिच्यत । ३७ पं—पत्नी । ३८ अ, कु—स

सुग्रो वाक्यतोदेन प्रतोदेनेव पुङ्गव । ३९ अ, कु—कामिसं० । पं—

कामिसं० । ४० अ, कु—पाशविष० । ४१ अ, कु, पं—सूत वि० । ४२

अ, कु—सत्वरयन्त्युत । ४३ अ, कु, पं—त्वं राममानय । ४४ कु—त्वर-

यस्त्वयम् । अ—त्वत्यस्वयम् । पं—त्वरयस्व तं ।

ततः स रामानयने समुत्सुको द्रुतः सुमन्त्रोऽवततार मन्दिरात् ।
 रथं समायोजय योजयेति वै व्रजस्तुरंगाधिकृतं वरेण्यम् ॥ ३० ॥
 ततः सुमन्त्रः प्रययौ रथेन महीपतेर्द्वारमतीत्य सत्वरः ।
 विनिर्गतश्चापि ददर्श विष्टितानपावृतान् मन्त्रिपुरोहितांस्तदा ॥ ३१ ॥

इत्पार्वे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे सुमन्त्रवाक्यं
 नाम पञ्चदशः सर्गः ॥ १५ ॥



45 अ, कु, पं—त्वारेतो विनिर्धयो महीपतीन् (पं—पते.) द्वाङ्गतो
 विलोकयन् । 46 अ, कु, ०—विष्टितानुपागतान् । 47 के, ल—नास्ति ।
 अ, कु—कैकेय्युपालंभो (अ-भं) । पं—रामानयनं ।

[षोडशः सर्गः]

ततस्ते मन्त्रिणः स्रुतं सुमन्त्रं सपुरोहिताः ।
 ऊचुरभ्यागतानस्मान् राज्ञ आनेदयस्व ह ॥ १ ॥
 पश्यामो न च राजानमुदितश्च दिवाकरः ।
 आभिषेचनिकं सर्वं द्रव्यमेवोपकल्पितम् ॥ २ ॥
 औदुम्बरं भद्रपीठं शातकौम-निभूषितम् ।
 गङ्गायमुनयोश्चैत्र सङ्गमादाहृतं पयः ॥ ३ ॥
 याश्चान्याः सरितः पुण्यास्ताभ्यश्च जलमाहृतम् ।
 समुद्रेभ्यश्च सर्वेभ्यः सलिलं समुपाहृतम् ॥ ४ ॥
 सर्वगीजानि गन्धश्च रत्नानि त्रिविधानि च ।
 वाहनं नरमंयुक्तं दर्माः सुमनसः प्रियाः ॥ ५ ॥
 अहतानि च वासांसि भृंगारं च हिरण्मयम् ।
 क्षीरिवृक्षप्रवालाश्च पद्मोत्पलानिभूषिताः ॥ ६ ॥
 पूर्णकुंभाः स्वलंकृत्य काञ्चना उपकल्पिताः ॥
 मंजूकारोचना* चैव लाजा दधि घृतं मधु ॥ ७ ॥
 तथैत्र पुण्यतीर्थेभ्यो मृदापो मंगलानि च ।
 चन्द्रांशुविमलं चांबु माणिदण्डे स्वलङ्कृते ॥ ८ ॥
 चामरव्यजने श्रीमद्रामार्थमुपकल्पिते ।
 पूर्णेन्दुमण्डलाभं च श्रीमन्माल्यनिभूषितम् ॥ ९ ॥

० म—त्यक्तम् । १ म—गंधाद्य । २ म—क्षीरं । ३ म, ल—वि-
 मिथेता । ४ म, ल—काञ्चना तपकल्पिता । लेखकस्य लिपिनिमित्तक
 प्रमाद प्रतीयते । * कै— पायोचना । म—पायोचना । ० म—त्यक्तम् ।

रामस्य यौवराज्यार्थमातपत्रं प्रकल्पितम् ।^०
 मत्तो गजवरश्चैव रथश्चैव प्रतीक्षते ॥^०१० ॥
 श्वेतस्तुरङ्गमश्चैव रामार्थमुपकल्पितः ।^०
 अष्टौ कन्याश्च मंगल्याः सर्वाभरणभूषिताः ॥ ११ ॥
 रूपयौवनसंपन्ना गणिकाश्च स्वलङ्कृताः ।
 श्वेतपुष्पाणि वेणुश्च^१ निखिंशो धनुरेव च ॥ १२ ॥
 हेमदाज्ञाऽभ्यलङ्कृत्य ककुद्भान् पाण्डुरो वृषः ।
 सिंहासनं व्याघ्रचर्म संसिद्धश्च हुताशनः ॥ १३ ॥
 वादित्राणि च सर्वाणि सूतमागधमन्दिनः ।
 आचार्या ब्राह्मणा गावः पुण्याश्च मृगपक्षिणः ॥ १४ ॥
 पौरजानपदश्रेण्यो नैगमानां गणैः सह ।
 एते चान्ये च बहवः प्रीयमाणाः^० प्रियंवचः ॥ १५ ॥
 इक्ष्वाकुराजाभ्युदये यच्चान्यदपि किञ्चन ।
 तत्सर्वं कृतमस्माभिः सूत राज्ञे निवेदय ॥ १६ ॥
 इति तैरेवमाज्ञप्तः प्रतीहारो महीपतेः ।
 अब्रवीत् तानिदं वाक्यं सुमन्त्रो मन्त्रिसत्तमः ॥ १७ ॥
 अहं पृच्छामि वचनात् सुखमायुष्मतां नृपम् ।
 राजसन्दर्शनार्थित्वमयमावेदयामि वः ॥ १८ ॥
 इत्थुक्त्वाऽन्तःपुरद्वारमासाद्य स नरेश्वरम् ।
 सुमन्त्रो नृपतिं सुप्तं मत्वा भूयो व्यबोधयत् ॥ १९ ॥
 वाग्भिः परमजुष्टाभिरभितुष्टाव पार्थिवम् ।

सौमः सूर्यश्च काकुत्स्थ शिवो वैश्रवणोऽपि च ॥ २० ॥

अनिलश्चाग्निरिन्द्रश्च विजयं प्रदिशन्तु ते ।

गता भगवती रात्रिरहः शिवमुपस्थितम् ॥ २१ ॥

प्रतिबुध्यस्व नृपते सर्वकल्याणासिद्धये ।

इन्द्रमस्यां हि वेलायामभितुष्टाव मातलिः ॥ २२ ॥

सोऽजयदानवान् सर्वास्तथा त्वां बोधयाम्यहम् ।

वेदाः सांगास्सर्पिगणा यथा कमलसंभवम् ॥ २३ ॥

ब्रह्माणं बोधयन्त्यद्य तथा त्वां बोधयाम्यहम् ।^०

आदित्यः सह चन्द्रेण यथा भूतधरामिमाम् ॥ २४ ॥

बोधयन्त्यद्य पृथिवीं तथा त्वां बोधयाम्यहम् ।

उत्तिष्ठ त्वं महाभाग कृतकौतुकमंगलः ॥ २५ ॥

निरोचमानो वपुषा मेरोरिन् दिवाकरः ।

इदं तिष्ठति रामस्य सर्वमत्राभिपेक्षने ॥ २६ ॥

पौरजानपदश्रेणी नैगमश्चागतो जूनः ।

अमौ वसिष्ठो भगवान् ब्राह्मणैः सह तिष्ठति ॥ २७ ॥

क्षिप्रमाह्वयतां शीघ्रं राघवस्याभिपेक्षनम् ।

यथा ह्यगोपाः पशवो यथा सैन्यमनायकम् ॥ २८ ॥

एवं प्रजाः प्रजापाल भवन्ति ह्यनधिष्ठिताः ।

चन्द्रहीना यथा रात्रिः सूर्यहीनमहो यथा ॥ २९ ॥

तथा भवति तद्राष्ट्रं यत्र राजा न इदृश्यते ।

गता निशेयं काचित्ते सुखेन नृपसत्तम ॥ ३० ॥

प्रतिबुध्यस्व राजपे^{१०} राजकार्याणि कारय ।

पुरोधसो मन्त्रिणश्च पौरजानपदास्तथा ॥ ३१ ॥

दर्शनं तेऽभिकांक्षन्ति प्रतिगोद्धं त्वमर्हसि ।

तं तथा पुनरेत्यात्र बोधयन्नं नराधिपम् ॥ ३२ ॥

अनु(न्त्र?)भूयत^{११} शोकेन भूय एव नराधिपः ।

स तु शोकाभिसन्तप्तः सुमन्त्रमिदमब्रवीत् ॥ ३३ ॥

शोकरक्तेक्षणो धीमान् बोक्ष्य वाचाऽनघारितम् ।

सुत किं हतरूपं^{१२} मामस्तुत्यं स्तोतुमिच्छसि ॥ ३४ ॥

वाक्यैस्तावत्तु मर्माणि मम भूयो निकृन्तसि ।

सुमन्त्रः कुत्सनां कृत्वा दृष्ट्वा दानं च पार्थिवम् ॥ ३५ ॥

प्रगृहीताञ्जलिस्तत्र ततः किञ्चिदपाक्रमत् ।

ततः पापसमाचारा कैकेयी पार्थिवं वचः ॥ ३६ ॥

उवाच परमं तीक्ष्णं वाक्यज्ञा वाक्यमूर्जितम् ।

किमेतद्ब्रूदसे वाक्यं राजंस्त्वं प्राकृतो यथा ॥ ३७ ॥

म्ना *रामसाहूय प्रिस्रब्धं वनमद्य प्रिसर्जय ।

*यदि सत्यप्रतिज्ञोऽसि कुरुष्व वचनं मम ॥ ३८ ॥

*नायं कालो हि शोकस्थ न मोहस्योपपद्यते ।

*प्रत्राज्य रामं भरतं यौवराज्येऽभिषिच्य च ॥ ३९ ॥

१ म—यथा नायकहीना वै मुक्तानामावली यथा । १० म—राजेंद्र ।

११ म—अव(?)भूयत । ल—अर्ध(?)भूयत । १२ के—हनुरूपं । पञ्चात्

दृष्टितालेन प्रोच्य “किमनुरूपं” इत्येवं विद्यतम् ।

- *निस्सपत्ना च मा कृत्वा भवाद्य विगतज्वरः ।
 स नुन्नो वाक्यसङ्गेन प्रतोदेनेन सद्भवः ॥ ४० ॥
- *ततः स राजा सूतं त पुनरेनाभ्यभाषत ।
 सुमन्त्र नैव सुप्तो ऽस्मि रामं त्वं क्षिप्रमानय ॥ ४१ ॥
- *सत्यपाशनिबद्धो ऽस्मि सूत संभ्रान्तमानसः ।
 *रामं द्रष्टुमिहेच्छामि तं च शीघ्रमिहानय ॥ ४२ ॥
- सुमन्त्रस्तु वचः श्रुत्वा सभार्यस्य नृपस्य ह ।
 निर्जगाम सुसंभ्रान्तस्तस्माद्राजनिवेशनात् ॥ ४३ ॥
- निष्क्रम्य चैव त्वरितं राममानयितुं तदा ।
 रथेन जविताश्वेन राममानयितुं गृहात् ॥ ४४ ॥
- जनौष राजमार्गस्यं प्रतिव्यूहमुपागतम् ।
 शृण्वन् वाचः क्रथयता रामान्बुदयसंयुताः ॥ ४५ ॥
- रामोऽद्य युवराजत्वं प्राप्स्यते नृपशासनात् ।
 अहो महोत्सवो" ऽस्माकमघायं भविता पुरे ॥ ४६ ॥
- अद्याहोऽनुगृहीताः स्म यत्साधुजनवत्सलः ।
 युवराजः किलाघायमस्माकं भविता पुरे ॥ ४७ ॥
- पालयिष्यति नो रामः पिता पुत्रानिवौरसान् ।
 इति तस्य जनौषस्य वचः" शृण्वन्" समन्ततः ॥ ४८ ॥
- ययौ सुमन्त्रस्त्वरितो राममानयितुं गृहात् ।
 ततो ददर्श रुचिर" कैलाससदृशग्रमम् ॥ ४९ ॥

13 कै—महोत्साहो । 14 म—०शृण्वन् वाच । 15 कै—'रुचिर' इति
 पूर्वं लिखित, पश्चात् 'रुधित' इति विकृतम् ।

[रामवेश्म सुमंत्रस्तु त्रिविष्टपसमप्रभम्]¹⁶

महाकवाटपिहितं¹⁷ वितर्दिशतशोभितम् ॥

कांचनप्रतिमैकाग्रं¹⁸ मणिविद्रुमतोरणम् ॥ ५० ॥

शारदाभ्रघनप्रख्यं दीप्तपावकसप्रभम्¹⁹ ।

दामभिर्वरमाल्यैश्च सुमहद्भिरलंकृतम् ॥ ५१ ॥

मुक्तामणिभिराकीर्णं जनैरंजलिसंहितैः²⁰ ।

गन्धान् मनोज्ञान् विसृजद्यथा मलयपर्वतः ॥ ५२ ॥

सारसैश्च मयूरैश्च विनदाद्भिर्विराजितम् ।

मनश्चक्षुश्च भूतानामाददानमिव श्रिया²¹ ॥ ५३ ॥

चन्द्रभास्करसंकाशं कुबेरसदनोपमम् ।

महेन्द्रसन्नप्रतिमं नानापक्षिसमाकुलम् ॥ ५४ ॥

मेरुवेश्मोपमं सूतो रामवेश्म ददर्श ह ।

ततः सनासाद्यमहाधनं महत् प्रहृष्टरोमा स बभूव सारथिः ।

मृगैर्मयूरैश्च समाकुलं सदा गृहं च रामस्य शचीपतेरिव ॥ ५५ ॥

स तत्र कैलासनिभाः स्वलंकृताः प्रविश्य कक्ष्यास्त्रिदशालयोपमा ।

उपस्थितैर्मागधसूतगन्दिभिस्तथैव वैतालिकसौखशायिकैः ॥ ५६ ॥

16 म, ल—नास्ति । 17 कै—“०कवाट०” इति पूर्वं लिखितं पश्चात्

“०कपाट०” इति शोधितम् । 18 कै—०प्रतिभेकाग्रं । 19 कै—“०दीप्त

...समप्रभम्” इति ऋटितं लिखितं, पश्चात् “दीप्तवंतंसमप्रभम्” इत्यं

पूरितम् । 20 कै—०यंजलि० । 21 कै—प्रिया ।

अभिष्टुवद्भिर्गुणतो नृपात्मजं समावृतं राजपथं ददर्श सः ।
 समस्तकक्ष्यं पुरुषैरलंकृतं विनीतवेशैर्वहुभिः-सुरंजितम् ॥ ५८ ॥
 विवेश रामस्य महात्मनो गृहं महीयमानो नृपमन्त्रिसत्तमैः ।
 सितं च शैलोत्तमशृंगसन्निभं महाविमानप्रतिभं जनौघवत् ।
 स भोज्यमानः प्रविवेश तद्गृहं संपूज्यमानो नृपमन्त्रिसत्तमैः ॥ ५९ ॥
 इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे सुमन्त्रप्रेषणं
 नाम षोडशः सर्गः ॥ १६ ॥

[सप्तदशः सर्गः]

जनौघवत्यः^१ सोऽर्तीत्य पट्कक्ष्यास्तस्य^२ वेश्मनः ।
 अविभक्तां^३ ततः कक्ष्यां^४ सप्तमीमाससाद् ह^५ ॥ १ ॥
 युवाभिः पुरुषैर्गुप्तां प्रासकार्मुकधारिभिः^६ ।
 अप्रमादिभिरेकार्ग्रैर्भक्तिमद्भिरलंकृतैः ॥ २ ॥
 तथा कंचुकिभिः^७ शुद्धैः^८ कपायाम्बरधारिभिः ।
 रक्षितामनलंकारैः स्न्यध्यक्षर्वेत्रपाणिभिः ॥ ३ ॥
 ते दृष्ट्वागतं सूतं रामप्रियचिकीर्षवः^९ ।
 समार्याय^{१०} च^{११} रामाय समुपेत्याचचक्षिरे^{१२} ॥ ४ ॥
 श्रुत्वैवाभ्यागतं तं^{१३} तु दूतमभ्यर्हितं^{१४} पितुः ।
 रामः प्रवेशयामास सत्कृत्य^{१५} गृहमात्मनः^{१६} ॥ ५ ॥
 स तं धनदसंकाशमुपविष्टं स्वलंकृतम् ।
 ददर्श सूतः पर्यङ्के^{१७} सौवर्णे^{१८} राङ्गवाश्रिते^{१९} ॥ ६ ॥
 वराहरुधिराभेण सुश्लक्ष्णेन महाभुजम् ।
 अनुलिप्तं महार्णेन चन्दनेन सुगन्धिना ॥ ७ ॥

१ अ, कु—०कीर्णाः । पं—०कोर्णः । २ अ, कु—कक्षास्तस्य । ३
 अ, कु—अविभक्तां । ४ अ, कु, पं—कक्षां । ५ कु—शः । अ, पं—स ।
 ६ अ, कु, पं—०पाणिभिः । ७ अ, कु, पं—०वृद्धैः । ८ पं—०वासिभिः ।
 अ, कु—कापायांवरवासिभिः । ९ पं—०चिकीर्षया । १० अ, कु, पं—
 सह भार्याय । ११ अ, कु, पं—प्रणिपत्य न्यवेदयन् । १२ अ, कु, पं—
 च । १३ अ, कु, पं—सूतमभ्यर्हितं । १४ अ, कु, पं—सत्कृत्यालयमात्मनः ।
 १५ अ, कु, पं—सौवर्णे । १६ अ, कु, पं—पर्यङ्के । १७ कु—०वाश्रिते ।
 अ—०वाश्रिते । पं—०वास्तृते । कु—०वाचिते ।

बालव्यजनधारिण्या सीतया पार्श्वसंस्थया ।
 सपद्मया सेव्यमानं श्रियेव मधुसूदनम् ॥ ८ ॥
 तरुगादित्यसदृशमुज्ज्वलन्तमिव^{१८} श्रिया ।
 धवन्दे राममभ्येत्य सुमन्त्रो विनयान्वितः ॥ ९ ॥
 दृष्ट्वा^{१९} चैनं सुखं प्रह्वो विहारशयनासने ।
 उवाचानन्तरमिदं सुमन्त्रो राजशासनात्^{२०} ॥ १० ॥
 कौशल्या सुप्रजा देवी देव^{२१} त्वां द्रष्टुमिच्छति ।
 कैकेयीसहितो राजा^{२२} गम्यतां यदि रोचते ॥ ११ ॥
 एवमुक्तः सुमन्त्रेण रामो राजीवलोचनः ।
 शिरसा प्रतिगृह्याज्ञां पितुः सीतामथान्रवीत् ॥ १२ ॥
 सीते देवश्च देवी च समागम्य परस्परम् ।
 मम चिन्तयतो^{२३} नूनं यौवराज्याभिषेचनम् ॥ १३ ॥
 ध्रुवं मे^{२४} यतते माता^{२५} कैकेयी मत्प्रियेप्सया^{२५} ।
 अद्यैव मां^{२६} यौवराज्ये^{२६} प्रतिपादयितुं स्वयम् ॥ १४ ॥
 नूनं रहासि राजानं त्वरयत्यैव^{२७} मत्कृते^{२७} ।
 अथवां सहिता राज्ञा मां प्रियं वक्तुमिच्छति ॥ १५ ॥

१८ अ, कु, पं—प्रज्वलन्तमिव । १९ अ, कु—पृष्ट्वा । २० अ, कु—
 शासनं । २१ अ, कु—देवस् । पं—देवदेवस् । म—देवस्त्वं । २२ अ,
 कु—राम । २३ अ, कु—मंत्रयतो । २४ पं—यतति माता मे । २५ अ,
 कु—व्येक्षया । २६ अ, कु—मे यौवराज्यं । २७ पं—प्रहापत्यैव । २८
 कु—मत्कृते त्वरयत्यसौ ।

यादृशीं परिपत्सीते दूतश्चायं यथाविधः²⁸ ।

ध्रुव²⁹ संप्रति मां राजा²⁹ यौनराज्यं³⁰ अभिपेक्षयति³⁰ । १६ ॥

तस्माच्छीघ्रमहं गत्वा पश्यामि जगतीपतिम् ।

एक रहसि कैकेय्या सुखासीनं गतज्वरम् ॥ १७ ॥

इह त्वं परिवारेण सुवमास्व रमस्व च ।

इति सम्मानिता सीता भर्ता त्वसितलोचना ॥ १८ ॥

द्वारान्तमनुव्राज³¹ मंगलान्यपि दध्युर्ष³² ।

राज्यं द्विजातिभिर्जुष्टं राजद्वयाभिषेकयत् ॥ १९ ॥

कर्तुमर्हति ते राजा वासवस्येव लोककृत् ।

दक्षितं व्रतसंपन्नं वराजिनधरं शुचिम ॥ २० ॥

कुरंगशृगपाणं च पश्यन्ती त्वां भवाम्यहम् ।

पूर्वा दिशं चञ्चधरो दक्षिणां पातु ते यमः ॥ २१ ॥

वरुणः पश्चिमामाशां धनेशमूत्तरां दिशम् ।

अथ सीतामनुज्ञाप्य कृतकौतुकमंगलः ॥ २२ ॥

निश्चक्राम सुमन्त्रेण सह रामो निवेशनात् ।

पर्णतादिव निष्क्रम्य³³ सिंहो गिरिगुहाशयः ॥ २३ ॥

मध्यमायां समेयाय कक्षायामर्थिभिर्द्विजैः ।

स सर्वानर्थिनो दृष्ट्वा समेत्य प्रतिनन्द्य³⁴ च ॥ २४ ॥

मेघनादसमारानं मणिहेमनिभूपितम् ।

28 अ, कु-तथा० । 29 अ, कु-ध्रुवमद्येव राजा मां । प-ध्रुवे राज्ये ध्रुवं राजा । 30 के-०पेक्षयते । पं-मं(मा) संप्रत्यभिपेक्षयति । 31 म-द्वारं तमनुत् (घ) प्राज । ल-द्वारातरंमनुव्राज । 32 कै-दध्युपी । म-दध्युपी । 33 म-निष्क्राता । 34 म-०नन्द्यं ।

तथा पावकसंकाशमारुरोहैर्योत्तमम् ॥ २५ ॥

धैर्याघ्रं पुरुषव्याघ्रो राजितं राजनन्दनः ।

मुष्णन्तमिव चक्षुंपि भ्रमया स्तैर्यवर्चसम् ॥ २६ ॥

करेणुशिशुकल्पैश्च युक्तं परमंवाजिभिः ।

सहस्रहयसंयुक्तं रथमिन्द्र इवाशुगम् ॥ २७ ॥

प्रययौ तूर्णमास्थाय राघवो ज्वलितं श्रिया ।

स यर्जन्य इवाकाशे स्वनवान् वै निनादयन् ॥ २८ ॥

केतनाभिर्ययौ श्रीमान्^{३५} महाऽभ्रादिव चन्द्रमाः ।

छत्रचामरपणिस्तु राघवो लक्ष्मणोऽनुजः ॥ २९ ॥

जुगोप भ्रातरं भ्राता रथमास्थाय पृष्ठतः ।

ततो हलहलाशब्दस्तुमुलः समपद्यत ॥ ३० ॥

तस्य निष्क्रामतस्तत्र जनौघस्य समन्ततः ।

ततो हयवरा मुख्या नागाश्च घनसन्निभाः^{३६} ॥ ३१ ॥

अनुजगमुस्ततो रामं शतशोऽथ सहस्रशः ।

अग्रतश्चास्य सन्नद्धाश्चन्दनागुरुवासिताः ॥ ३२ ॥

खड्गचर्मधराः शूरा जग्मू रामस्य पृष्ठतः ।

अथ घादित्रशब्दांश्च स्तुतिशब्दांश्च वंदिनाम् ॥ ३३ ॥

सिंहनादांश्च शूराणां तदा शुश्राव वै पथि ।

हर्म्यवातायनस्थाभिर्भूपिताभिः समन्ततः ॥ ३४ ॥

आकीर्यमाणः पुष्पैश्च ययौ स्त्रीभिररिन्दमः ।

रामं सर्वानवद्याङ्गं रामाश्च प्रीतिसंयुताः ॥ ३५ ॥

वचोभिरग्यैर्हर्म्यस्थाः क्षितिस्थं तं वचंदिरे ।

नूतं नन्दति ते माता कौशल्या भ्रातृनन्दन ॥ ३६ ॥

पश्यन्ती सिद्धमत्र त्वां पि य^{३७} राज्यमुपस्थितम् ।

सर्गसीमतिनीभ्यश्च सातां सीमतिनी वराम ॥ ३७ ॥

अभ्यनदत वै नार्यो रामस्य हृदयप्रियाम् ।

तया सुचरितं देव्या पुरा नून महत्तपः ।

रोहिण्या शाशिनो वेह रामसयोगफाम्भया ॥ ३८ ॥

ततो हलहलाशब्दस्तुमुलस्समजायत ।

उपस्थाने नरेन्द्रस्य त्रिमन्दः सुमहान्पाथे ॥ ३९ ॥

स राघवस्तत्र कथाभिरामः^{३८} शुभ्रात्र लोकस्य समागतस्य ।

आत्माधिकारैर्विनिधाश्च वाचः ब्रह्मरूपस्य पुरे जनस्य ॥ ४० ॥

एष स्वयं गच्छति राघवोऽद्य रात्रः प्रसादात्पृथिवीमलप्स्यत् ।

जाता वयं सर्वसमृद्धकामा येषामयं नो भविता प्रशास्ता ॥ ४१ ॥

लाभो जनस्याथ यदेष सर्गं प्रपत्स्यते राष्ट्रमिदं चिराय ।

न ह्यप्रियं कश्चन जातु किञ्चित्पश्येत दुःखं मनुनाधिपेजस्मिन् ॥ ४२ ॥

सुघोषप्रद्विश्व ह्यैस्ससारथिः पुरःस्थितैरार्थिकश्रुतमागवैः ।

महीयमानः प्रवरैश्च वाजनैरभिष्टुतो वैश्रवणो यथा ययौ ॥ ४३ ॥

करेणुमातंगरथाभ्रसंकुलं महाजनौषप्रतिपन्नचत्वरम् ।

प्रभूतरत्नं बहुमुखसंचयं ददर्श रामो रुचिर महापथम् ॥ ४४ ॥

इत्यार्षे रामायणे ऽष्टोध्याकाण्डे रामानयनं

नाम सप्तदशः सर्गः ॥ १७ ॥

[अष्टादशः सर्गः]

प्रायादेव च काकुत्स्थः संप्रहृष्टसुहृज्जनः ।
 शुश्राव राजमार्गस्थः प्रिया वाचो ऽभ्युदीरिताः ॥ १ ॥
 एष राज्ञः प्रसादेन राघवो रघुनन्दनः ।
 ह्लादयन् पौरहृदयान्यतुलां प्राप्स्यति श्रियम् ॥ २ ॥
 जनस्यास्य महानेप लाभो यद्वाघवो बली ।
 राज्यं प्राप्स्यति दुर्धर्षः सकोशबलवाहनम् ॥ ३ ॥
 सुगृहैरभ्रसंकाशैः^१ पाण्डुरैरुपशोभितम् ।
 राजमार्गं ययौ रामो मध्येनागुरुधूपितम् ॥ ४ ॥
 उत्तमानां च गंधानां क्षौमपट्टांबरस्य च ।^०
 चन्दनानां च मुख्यानामगुरुणां च धूपितम् ॥ ५ ॥
 आघट्टाभिश्च मुख्याभि र्मणिभिः स्फाटिकैरपि ।
 शोभमानमसंवाधं नरेन्द्रपथमुत्तमम् ॥ ६ ॥
 संवृतं विविधैः पुण्यै^२ र्भक्ष्यैरुच्चावचैस्तथा^३ ।
 ददर्श तं राजमार्गं दिव्यं राजसुतस्तथा ॥ ७ ॥
 आशीर्वादान् बहून् शृण्वन् सुहृद्भिः समुदीरितान् ।
 यथाहं तांश्च संपूज्य सर्वानेव नरान् ययौ ॥ ८ ॥
 पितामहैराचरितं तथैव प्रापितामहैः ।
 अद्य^४ संप्राप्य तं मार्गमभिपिक्तोऽनुपालय ॥ ९ ॥
 यथा स्म लालिताः पित्रा यथा सर्वैः पितामहैः ।

१ म, ल—स्वगृ० । ०म—त्यक्तम् । २ म, ल—पुण्यै । ३ म—
 यचैरपि । ४ कै—अभ्य— ।

ततः सुरसतरं सर्वे वत्स्यामस्त्वेषि राजनि ॥ १० ॥
 अलमघाभियुक्तेन परमार्थैरलं च नः ।
 साधु पश्याम निर्यातं रामं राज्ये प्रतिष्ठितम् ॥ ११ ॥
 अतो हि नः प्रियतरं नान्यत् किञ्चिद् भविष्यति ।
 रामाभिषेकादन्यत्र जीवितादपि च प्रियम् ॥ १२ ॥
 एताश्चान्याश्च सुहृदामुदासीनकथाः शुभाः ।
 आत्मसंपूजिनीः शृण्वन् ययौ रामो-महारथः ॥ १२ ॥
 न हि तस्मान्मनः कश्चिच्छुषी वा नरोत्तमात् ।
 नरः शशाक चाक्रष्टुमतिक्रान्तेऽपि राघवे ॥ १४ ॥
 न पश्यति च यो रामं न वा दृश्येत तेन यः ।
 स निन्दितमिवात्मानमवमेने जनस्तदा ॥ १५ ॥
 सर्वेष्वेव च धर्मात्मा वर्णेष्वोसीदयापरः ।
 आत्मनो विषयस्थेषु तेन ते तमनुव्रताः ॥ १६ ॥
 स राजकुलमासाद्य वृतं मेघोपमैः शुभैः ।
 प्रासादशृंगैर्विविधैः कैलासशिखरप्रभैः ॥ १७ ॥
 आचारयद्भिर्गगनं विमानैरिव पाण्डुरैः ।
 वर्धमानगृहैश्चैव हेमलाजपरिष्कृतैः ॥ १८ ॥
 तत्पृथिव्यां गृहं श्रेष्ठं महेन्द्रसदनोपमम् ।
 राजपुत्रः पितुः शुभ्रं प्रविवेश गृहोत्तमम् ॥ १९ ॥

5 कै-हेमलाज० इति पूर्वं लिखितं पश्चाद् विभिन्नमस्यां "हेमलौज"
 (= "हेमजाल") इत्याङ्कितम् ।

स कक्ष्यां घन्विभिर्गुप्तां प्रविवेश तुरंगमैः ।

पदातिरपरे कक्ष्ये द्वे जगाम नृपात्मजः ॥ २० ॥

स सर्वाः समातिक्रम्य कक्ष्या दशरथात्मजः ।^०

सन्निवार्यं जनं सर्वं शुद्धान्तःपुरमभ्यंगात् ॥ २१ ॥

ततः प्रविष्टे पितुरन्तिकं तदा जनः स सर्वो-मुमुदे नृपात्मजे ।

प्रतीक्षमाणः पुनरस्य निर्गमं यथोदयं चन्द्रमसः सरित्पतिः ॥ २२ ॥

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे रामोपयानं

नामाष्टादशः सर्गः ॥ १८ ॥



[एकोनविंशः सर्गः]

स ददर्शासने रामो निपण्णं पितरं तु तम् ।
 कैकेयीसहितं दीनं मुखेन^१ परिशुष्यता ॥ १ ॥
 स पितुश्चरणौ पूर्वमभिवाद्य विनीतवत्^२ ।
 ततो ववन्दे चरणौ कैकेय्याः सुसमाहितः^३ ॥ २ ॥
 सौमित्रिरपरिश्रान्तः पितुः पादावनन्तरम् ।
 ववन्दे परमप्रीतः कैकेय्याश्च तदा पुनः ॥ ३ ॥
 अभ्यागतं प्राञ्जलिं तं रामं दृष्ट्वा नराधिपः ।
 न शशाकाप्रियं वक्तुं समीपस्थमरिन्दमम् ॥ ४ ॥
 रामेत्युक्त्वा च वचनं वाष्पपर्याकुलेक्षणः ।
 न शक्तो नृपतिर्दीनः प्रेक्षितुं नाभिभापितुम् ॥ ५ ॥
 तदपूर्वं नरपते दृष्ट्वा रूपं भयावहम् ।
 रामो ऽपि भयमापेदे यथा सृष्ट्वेव^४ पन्नगम् ॥ ६ ॥
 इन्द्रियैरप्रहृष्टैस्तं शोकसन्तापकर्षितम् ।
 निःश्वसन्तं महाराजं व्यथिताकुलचेतसम् ॥ ७ ॥
 ऊर्मिमालापरिक्षिप्तं क्षुभ्यमाणमिगार्णवम् ।
 उपप्लुतमिवादित्यमुक्तानृतमृषिं यथा ॥ ८ ॥
 अचिन्त्यकल्पं हि पितुस्तं शोकमवधारयन् ।
 बभूव संरब्धतरः समुद्र इव पर्वणि ॥ ९ ॥
 चिन्तयामास च तदा रामः पितृहिते^५ रतः ।

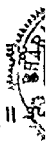
१ म, ल—मुखेन । २ कै, म—०वान् । ३ ल—सममाहित । * (सृष्ट्वेव)

५ ल—प्रियहिते ।

किंस्विदद्यैव नृपतिर्न मां प्रेक्ष्याभिनन्दति ॥ १० ॥
 तस्य मामद्य संप्रेक्ष्य किमायासः प्रवर्तते ।
 ततस्तु पितुरप्रीत्या व्यथितः पितृवत्सलः ॥ ११ ॥
 चिन्तयामास धर्मात्मा रामस्तद्ब्रुधा पितुः ।
 स दीन इव शोकार्तो विवर्णवदनद्युतिः ॥ १२ ॥
 कैकेयीमभिवाद्यैवं रामो वचनमब्रवीत् ।
 देवि किं नु मयाऽज्ञानादपराद्धं महीपतेः ॥ १३ ॥
 विवर्णवदनो दीनो न हि मामभिभाषते ।
 शरीरो मानसो वाऽपि काश्चिद्देवि न बाधते ॥ १४ ॥
 सन्तापो वाऽनुतापो वा दुर्लभं हि सदा सुखम् ।
 कश्चिन्नु^५ किञ्चिद्भरते^६ कुमारे प्रियदर्शने ॥ १५ ॥
 शशुभे वाप्यकुशलं देवि मातृषु वा पुनः ।
 कश्चिन्मया नापकृतमज्ञानादेव मे पिता ॥ १६ ॥
 कुपितस्तत्प्रमाचक्ष्व त्वं चैवैनं प्रसादय ।
 अतोपयित्वा राजानमकृत्वा च पितुर्वचः ॥ १७ ॥
 छूर्तमपि नेच्छेयं जीवितुं कुपिते नृपे ।
 यतोमूलं नरः पश्येत् प्रादुर्भावमिहात्मनः ॥ १८ ॥
 कथं तस्मिन् न वर्तेत प्रत्यक्षमिव दैवते ।
 कश्चिन्न परुषं^७ किञ्चिदभिमानात् पिता मम ॥ १९ ॥
 उक्तो भवत्या कोपेन येनास्य लुलितं मनः ।
 एतदाचक्ष्व मे देवि तत्रेन परिपृच्छतः ॥ २० ॥

किञ्चिन्मितमपूर्वो ऽयं विकारो मनुजाधिपे ।
 एवमुक्त्वा तु कैकेयी राघवेण महात्मना ॥ २१ ॥
 अकृतार्थमना देवी भागं रामस्य वीक्ष्य तम् ।
 वीतचिन्ता प्रहृष्टा च रामं वचनमब्रवीत् ॥ २२ ॥
 राजा न कुपितो राम व्यसनं न च किञ्चन ।
 किञ्चिन्मनोगतं तस्य तद्भयान्न च भाषते ॥ २३ ॥
 प्रियत्वादप्रियं वक्तुं नास्य वाणी प्रवर्तते ।
 यच्चावश्यं त्वया कार्यं यच्चानेन प्रतिश्रुतम् ॥ २४ ॥
 एष मह्यं वरं दद्यात्तदर्थमभिमृश्य च ।
 पश्चात्सन्तप्यते राजा यथाऽन्यः प्राकृतस्तथा ॥ २५ ॥
 अतिसृज्य^१ ददानीति वरं मह्यं विशोपतिः ।
 स निरर्थं गतजले सेतुबंधनमिच्छति ॥ २६ ॥
 त्वत्कृते न त्यजेद्राजा यथा सत्यं तथा कुरु ।
 यदयं वक्ष्यति नृपः शुभं वा यदि वाऽशुभम् ॥ २७ ॥
 तत्कारिष्यसि चेत्सर्जमाख्यास्यामि ततस्त्वहम् ।
 यदा त्वभिहितं राजा राम सम्पादयिष्यसि ॥ २८ ॥
 ततो ऽहमभिधास्यामि न ह्येष त्वां प्रवक्ष्यति ।
 एतत्तु वचनं श्रुत्वा कैकेय्या समुदाहृतम् ॥ २९ ॥
 उवाच व्यथितो रामस्तां देवी नृपसन्निधौ ।
 अहो धिङ् नर्हसीदं मां वक्तुं देवीदृशं वचः ॥ ३० ॥

अहं हि वचनाद्राज्ञः पतेयमपि पात्रकम् ।
 भक्षयेयं विषं वापि मज्जेयमपि वा जले ॥ ३१ ॥
 नियुक्तो गुरुणा पित्रा नृपेण च हितेन च ।
 तद् ग्रही वचनं दंभि यद्राज्ञः^९ प्रसमीहितम्^{१०} ॥ ३२ ॥
 प्रतिज्ञातं करिष्ये च रामो ऽसत्यं न भाषते ।
 तमार्जुनसमायुक्तमनार्या सत्यवादिनम् ॥ ३३ ॥
 उवाच रामं कैकेयी मन्थरावाक्यमोहिता ।
 पुरा देवास्तुरे युद्धे पित्रा ते मम राघव ॥
 रक्षितेन वरौ दत्तौ सशल्येन महारणे ।
 द्वौ वरौ याचितो राजा भरतस्याभिषेचनम् ॥
 दण्डकारण्यगमनं भवतो ऽद्यैव राघव ।
 यदि सत्यमिच्छं त्वं पितरं कर्तुमिच्छसि ॥ ३६ ॥
 आत्मानं च नरश्रेष्ठ मम वाक्यमिदं शृणु ।
 सन्निदेशः पितुस्ते ऽयं प्रतिज्ञातं ह्यनेन^{११} मे ॥ ३७ ॥
 त्वया त्वरण्ये वस्तव्यं नव वर्षाणि पञ्च च ।
 भरतश्चाभिषेच्येत यदेतदभिषेचनम् ॥ ३८ ॥
 त्वदर्धं विहितं राज्ञा तेन सर्वेण राघव ।
 सप्त सप्त च वर्षाणि दण्डकारण्यमाश्रितः ॥ ३९ ॥
 अभिषेकमिमं^{१२} त्यक्त्वा जटाचीरघरो भव ।
 भरतः कोशलपुरे^{१३} प्रशस्तु वसुधामिमाम् ॥ ४० ॥



९ म-राज्ञा । १० कै-प्रसमीक्षिताम् । म-प्रसमीक्षितं । ११ कै-हतेन ।

१२ ल-०मिदं । १३ कै, ल, म-कोशल० ।

नानारत्नसमाकीर्णा सवाजिरथकुञ्जराम् ।
 एवं ते पितुरादेशः कृतो राम भविष्यति ॥ ४१ ॥
 स तु तद्वचनं श्रुत्वा कैकेय्या समुदाहृतम् ।
 प्रहस्यानन्तरं वाक्यमुवाच रघुनन्दनः ॥ ४२ ॥
 देव्यैवमस्तु वत्स्यामि नव वर्षाणि पञ्च च ।
 जटाचीरधरो ऽरण्ये प्रतिज्ञां पालयन् पितुः ॥ ४३ ॥
 इदं तु ज्ञातुमिच्छामि किमर्थं नाभिभाषते ।
 महीपति मां दुर्धरो यथापूर्वमरिन्दमः ॥ ४४ ॥
 मन्युर्नात्र त्वया कार्यो ब्रवीम्येष तवाग्रतः ।
 यास्यामि भव सुप्रीता वनं चीरजटाधरः ॥ ४५ ॥
 हितेन गुरुणा पित्रा कृतज्ञेन नृपेण च ।
 नियुज्यमानो विस्रब्धं किं न कुर्यामह प्रियम् ॥ ४६ ॥
 व्यलीकं मानसं त्रेकं हृदयं दहतीव मे ।
 स्वयं मा नाह यद्राजा भरतस्याभिषेचनम् ॥ ४७ ॥
 यद् व्रते न महाराजा मम चैत्र प्रसासनम् ।
 अहं हि सीतां राज्यं च प्राणानिष्टान् धनानि च ॥ ४८ ॥
 हृष्टो भ्रात्रे स्वयं दद्या भरताय* प्रणोदतः ।
 किं पुनर्मनुजेन्द्रेण स्वयं पित्रा प्रणोदितः ॥ ४९ ॥
 देव्याश्च प्रियमाकाक्षन् प्रतिज्ञामनुपालयन् ।
 तदाश्वासय मा देवि किं न्विदं" यन्महीपतिः ॥ ५० ॥

* भरतायाप्रणोदित इति साधु 14 कै—०तिवद् ।

वसुधाऽऽप्यक्तनयनो^{१५} भृशमश्राणि^{१६} मुञ्चति ।
 गच्छन्तु चैवानयितुं दूताः शीघ्रजर्जरहयैः ॥ ५१ ॥
 भरतं मातुलगृहादघ्न नृपशामनात् ।
 आनीयतां^{१७} महामाते^{१८} राज्ये चैवाभिपिच्यताम्^{१९} ॥ ५२ ॥
 दण्डकारण्यमेषो ऽहमितो गन्जामि सत्वरः ।
 अविचार्य पितुर्नाक्यं ममा वन्तु चतुर्दश ॥ ५३ ॥
 संदृष्टा तस्य तद्वाक्यं कैकेयो सन्निशम्य ह ।
 प्रस्थापनं श्रद्धयती त्वरयामास राघवम् ॥ ५४ ॥
 एवं भवतु यास्यन्ति दूताः शीघ्रजर्जरहयैः ।
 भरतं मातुलगृहादुपार्जतयितुं घृताः^{२०} ॥ ५५ ॥
 नैव त्वहं क्षमं मन्ये आत्सुक्याद्धि विलंघनम्^{२१} ।
 राम तस्मादितः क्षिप्रं वनं त्वं गन्तुमर्हसि ॥ ५६ ॥
 ग्रीडान्वितः स्वयं वच^{२२} नृपस्त्वां नाभिमापते ।
 मा च^{२३} ते संशयो ऽस्त्वन्यो मा मन्युं कुरु राघव ॥ ५७ ॥
 यावत्त्वं न वनं यातः पुरादस्मादपि त्वरन् ।
 तावन् न ते पिता राम स्वास्थ्यं^{२४} प्राप्नोति^{२५} दुःखितः ॥ ५८ ॥
 निर्मीलितेक्षणो राजा श्रुत्वंतदारुणं वचः ।
 कैकेय्यां शङ्कमानायां लुब्धायां रामनिश्रयम् ॥ ५९ ॥

15 म—वसुधासंप० । 16 कै, ल, म—मश्राणि । 17 कै, म—आनीय
 तं । 18 म—आगादे । 19 म—०तम् । 20 म—गृताम् । 21 म—
 विद्वान्ना । 22 कै, ल, म—वच । 23 कै—ते । 24 म—म्यस्थ्यं ।
 ल—म्यास्थ्यं (!) । 25 म—मपति ।

सुदीर्घं हा हतो ऽस्मीति वाक्यमुक्त्वा सुदुःखितः ।
 मूर्च्छामुपागमद् भूयः शोकवाष्पपरिभ्रुतः ॥ ६० ॥
 मूर्च्छितश्चापतत्तास्मिन् पर्यङ्के हेमभूषिते ।
 अथ रामो ऽपि दुर्धर्यः कैकेय्याऽभिप्रणोदितः ॥ ६१ ॥
 कश्येवाहतो वाजी वनं गन्तुं कृतत्वरः ।
 तदाप्रियमाविभ्रान्तो वचनं मरणोपमम् ॥ ६२ ॥
 श्रुत्वाऽप्यव्यथितो रामः कैकेयीं मिदमब्रवीत् ।
 नाहमर्थपरो देवि लोकानावस्तुमुत्सहे ॥ ६३ ॥
 विद्धि मामृषिभिस्तुल्यं केवलं धर्ममास्थितम् ।
 यदत्र भवतां किञ्चिच्छक्यं कर्तुं प्रियं मया ॥ ६४ ॥
 प्राणानपि परित्यज्य सर्वथा कृतमेव तत् ।
 न हतो धर्मचरणादन्यदस्त्यधिकं भुवि ॥ ६५ ॥
 यथा पितरि शुश्रूषा तस्य वा वचनाक्रिया ।
 अनुक्तो ऽप्यत्र गुरुणा भवत्या वचनादहम् ॥ ६६ ॥
 वने वत्स्यामि विजने नव वर्षाणि पञ्च च ।
 नूनं त्वमपि कल्याणि संभावयसि किञ्चन ॥ ६७ ॥
 यत्त्वया भरतस्यार्थे राजा विज्ञापितः स्वयम् ।
 इष्टान् भोगान् प्रियान् दारानपि वा जीवितं प्रियम् ॥ ६८ ॥
 तवैव वचनाद्दद्यां भरताय महात्मने ।
 राजानं दुःखितं कृत्वा पुत्रार्थं राज्यलुब्धया ॥ ६९ ॥
 अग्न किं नाम संप्राप्तं त्वया फलमभीप्सितम् ।
 अहं मातरमापृच्छ्य वंदेहीं प्रविहाय च ॥ ७० ॥

अद्यैव वनवासाय गच्छामि सुखिनी भव ।
 भरतः पालयन् राज्यं शुश्रूषेत यथा नृपम् ॥ ७१ ॥
 तथा भगवत्या कर्तव्यमेव धर्मः सनातनः ।
 इति रामप्रचः श्रुत्वा शोकनाप्पपरिच्छुतः ॥ ७२ ॥
 ईषत्ससंज्ञो नृपतिर्भूयो मोहमुपागमत् ।
 श्रुत्वा चैनाप्रियाख्यानं राममातुस्तदप्रियम् ॥ ७३ ॥
 अन्तःपुरचरा नार्यः प्रद्वेषभयशङ्किताः ।
 अतो नाम्यागमंस्तत्र कौशल्यायै निवेदिनुम् ॥ ७४ ॥
 निपीड्य चरणौ रामो विसंज्ञस्य महीपतेः ।
 कैकेयाश्चापि धर्मात्मा निर्जगाम महाद्युतिः ॥ ७५ ॥
 त वाप्पपरिरुद्धाक्षो लक्ष्मणो पृष्ठतोऽन्वगात् ।
 लक्ष्मणः परमक्रुद्धः सुमित्राकुलनन्दनः ॥ ७६ ॥
 गमने च मतिं चक्रे वनवासाय चैव हि ।
 आभिषेचनिकं भाण्डं कृत्वा रामः प्रदक्षिणम् ॥ ७७ ॥
 शनैर्जगाम साक्षेपो^{१०} दृष्टिं तत्राविधारयन् ।
 स रामः पितरं कृत्वा कैकेयीं च प्रदक्षिणम् ॥ ७८ ॥
 निष्क्रम्यान्तःपुरात्तस्मात्तं ददर्श सुहृज्जनम् ।
 दृष्ट्वा च सस्मितमुखः प्रतिपूज्य यथाऽर्हतः ॥ ७९ ॥
 जगाम त्वरित द्रष्टुं मातरं स्वं निवेशनम् ।
 दुःसमन्तर्गत तस्य न कश्चिद्बुधे जनः ॥ ८० ॥

लक्ष्मणं वर्जयित्वैकं धृतिसंयतचेतसम् ।

न ह्यस्य राजलक्ष्मीं तां राज्यनाशो ऽपकर्षति ॥ ८१ ॥

लोकंकान्तस्य कान्तत्वाच्छीतरश्मेरिव क्षयः ।

न चापि धनसंपूर्णं त्यजतो ऽस्य वसुन्धराम् ॥ ८२ ॥

यतेरिव विमुक्तस्य लक्ष्यते चित्तविक्रिया ।

धारयन् मनसा दुःखमिन्द्रियाणि नियम्य च ॥ ८३ ॥

जगाम चात्मवान् वेश्म मातुरप्रियशंसकः ।

तथैव रामः स्वजनं समागमे प्रहर्षयन् हृष्टमना रघूद्रहः ।

जगाम तामर्थविपत्तिमात्मनो विचिन्तयन्मातुरथो निवेशनम् । ८४ ।

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे वनवासप्रतिज्ञानाम

एकोनविंशः सर्गः ॥ १९ ॥

[विंशः सर्गः]

रामो ऽथ दुःससन्तप्तः श्वसन्निव भुजङ्गमः ।
 जगाम सहितो भ्रात्रा कौशल्याया निवेशनम् ॥ १ ॥
 सो ऽपश्यत् पुरुषांस्तत्र वृद्धान् धन्धुवरांस्तथा ।
 स्वस्थान् विनयसम्पन्नान् विष्टितान् पितुराज्ञया ॥ २ ॥
 तैः कृताञ्जलिभिस्तत्र विवेश्याप्रतिवारितः ।
 प्रथमां राघवः कक्ष्यां मातरं द्रष्टुमातुरः^१ ॥ ३ ॥
 प्रविश्य प्रथमां कक्ष्यां द्वितीयायां ददर्श सः ।
 ब्राह्मणान् वेदविदुषो वृद्धान् राजपुरस्कृतान् ॥ ४ ॥
 निवेश मातुर्भवनं रामस्त्वरितमानसः ।
 कौशल्याऽपि तदा देवी परं नियममास्थिता^२ ॥ ५ ॥
 अकरोत् प्रयत्ना पूजां देवानां नियतव्रता ।
 आशंसन्ती च पुत्रस्य यौवराज्याभिषेचनम् ॥ ६ ॥
 सा शुक्लाम्बरसंवीता तत्पराऽनन्यमानसा ।
 प्रविश्य चैव त्वरितो रामो मातुर्निवेशनम् ॥ ७ ॥
 ददर्श मातरं तत्र देवागारे यतव्रताम् ।
 कृताञ्जलिपुटां चैव स्थितां मङ्गलवादिनीम् ॥ ८ ॥
 अर्चयन्तीं पितृंश्चैव देवांश्चानन्यमानसाम् ।
 तामवेक्ष्य ततो रामो वचन्दे विनयात् ततः ॥ ९ ॥
 उवाच चैनामभ्येत्य रामोऽहमिति नन्दयन् ।

१ म-वृद्धवधायस्तथा । २ म, ल-विष्टितान् । ३ कै, ल-द्रष्टुमातुरः ।

साऽथ दृष्ट्वैव तनयं मातृनन्दनमागतम् ॥ १० ॥

अभ्यनन्दत वात्सल्याद् वत्सं गौरिरिवत्सला ।

'स मात्रा समभिप्रेत्य परिष्वज्यामिनन्दितः' ॥ ११ ॥

पूजयामास तां देवीमदितिं मघवानिच ।

तमुवाच ततो हृष्टा कौशल्या श्रियमात्मजम् ॥ १२ ॥

प्रपूजयन्ती पुत्रस्य शिववृद्धार्थमाशिषः ।

वृद्धानां पुत्र सर्वेषां राजर्षीणां महात्मनाम् ॥ १३ ॥

प्राप्नुह्यायुश्च कीर्तिं धर्मं च स्वकुलोचितम् ।

पित्रा निसृष्टामतुलामव्ययां श्रियमाप्नुहि ॥ १४ ॥

हतामित्रः श्रियायुक्तः पितृन् नन्दय पुत्रके ।

सत्यप्रतिज्ञं पितरं पश्य राघव मा चिरम् ॥ १५ ॥

अद्य हि त्वां पिता राम यौवराज्येऽभिषेक्ष्यति ।

एवं ब्रुवाणां कौशल्यां रामो वचनमब्रवीत् ॥ १६ ॥

कैकेयीवान्मयसन्तप्त ईषद्व्याकुलचेतनः ।

अम्य न त्वं प्रजानासि महद्भयमुपागतम् ॥ १७ ॥

तव दुःखाय महते वैदेह्या लक्ष्मणस्य च ।

कैकेय्या भरतस्वार्थे राज्यं राजाऽभियाचितः ॥ १८ ॥

सत्येन परिगृह्यादौ तेन चास्यै प्रतिश्रुतम् ।

भरताय महाराजो यौवराज्यं प्रदास्यति ॥ १९ ॥

मां पुनर्नवासाय नियोजयति साम्प्रतम् ।

सोऽहं वत्स्यामि वर्षाणि वने देवि चतुर्दश ॥ २० ॥

स्वादीनि हित्वा भोज्यानि फलमूलकृताशनः ।

इति रामवचः श्रुत्वा सा पपात सपस्विनी ॥ २१ ॥

कौशल्या दुःससन्तप्ता निकृत्ता कदली यथा ।

स तां निपातितां दृष्ट्वा भूमौ मातरमातुराम् ॥ २२ ॥

राम उत्थापयामास दुःखितां गतचेतनाम् ।

उपावृत्योत्थितां दीनां बडवामिव विह्वलाम् ॥ २३ ॥

संमार्ज्यं पाणिना रामः पांसुना परिगुण्ठिताम् ।

अथ किञ्चित्समाशनस्य कौशल्या दुःसमोहिता ॥ २४ ॥

उदीक्ष्य रामं प्रोवाच वाष्पगद्गदया गिरा ।

नैव राम यदि त्वं मे जायेथाः शोकवर्द्धनः ॥ २५ ॥

न चैनाहभिदं दुःखं प्राप्नुयां त्वाद्वियोगजम् ।

एकमेव हि बन्ध्याया दुःखं भवति पुत्रक ॥ २६ ॥

अप्रजाऽस्मीति न त्वाद्दृगिष्टापत्यप्रियोगजम् ।

न प्राप्तपूर्वं कल्याणं मया पतिपरिग्रहात् ॥ २७ ॥

आशंसिताऽस्मि रुचिरं त्वत्तोऽपि प्राप्नुयामिति ।

तदद्य विफलं जातं मम राम विचिन्तितम् ॥ २८ ॥

दुःखानामेव पुत्राहं विहिताऽत्यन्तभागिनी ।

सा बहून्यमर्नाज्ञानि वाचश्च हृदयच्छिदः ॥ २९ ॥

सहिष्ये न सपत्नीनामवराणां घरा सती ।

इतोऽपि वै दुःखतर मम राम मविष्यति ॥ ३० ॥

त्वयि सन्निहिते तावादेय मे राम विक्रिया ।

प्रोपिते त्वयि मुच्यक्त नैव शक्यामि जीवितुम् ॥ ३१ ॥

यदि मां प्रीयते काचित् सम्यङ् न (च ?) परिवर्तते ।
सर्वा एव तु ता द्वेष्टि कैकेयी वीक्ष्य मत्कृते ॥ ३२ ॥

साऽहं बहून्धनिष्ठानि वाचश्च हृदयच्छिदः ।

सहिष्ये सल्लु कैकेय्यास्त्वयि राम वनं गते ॥ ३३ ॥

तदसह्यमहं दुःखं सोढुं पुत्रक नोत्सहे ।

अद्यैव मरणं मेऽस्तु को वाऽर्थो जीवितेन मे ॥ ३४ ॥

अद्य जातस्य वर्षाणि दश चाष्टौ च तेऽनघ ।

क्षपितानीह कांक्षन्त्या त्वत्तो दुःखपरिक्षयम् ॥ ३५ ॥

नियमैरुपनासैश्च कर्षयन्त्या^० कलेऽरम^० ।

दुःखं संगर्द्धितो राम मया दुःखितया ह्यसि ॥ ०३६ ॥

नियमाश्चोपनासाश्च^० ये मया त्वत्कृते कृताः ।

त एते विफला जाता वनं संप्रस्थिते त्वयि ॥ ३७ ॥

दुःखौघेन परिक्लिष्टं हृदयं सीदतीव मे ।

दुर्बल विपरिक्लिष्टं नदीकूलमिवाभसा ॥ ३८ ॥

ममैव नूनं मरणं न विद्यते न चानकाशोऽस्ति ममक्षये* काचित् ।

यदन्तकोऽद्यैव न मां प्रधर्षते गृहीतशोकाऽस्मि निगृह्य जीवितम् ३९।

यदि ह्यकाले मरणं स्त्रयेच्छया लभेयं कश्चिद्बहुदुःखदुःखिता ।

भयेयमद्यैव सजीविता ध्रुवं^१ सुदुःखिता राम पिनाकृता त्वया । ४०।

दृढ च नून हृदय सुमहत ममायस यच्छतधा न दीर्यते ।

त्वयेऽमुक्ते च तदा मृता ह्यहं ध्रुव हि मृत्युर्मम नैव विद्यते ॥४१॥

इदं तु ते दुःखमतीव यन्मया सुदुष्करं दुःखमनर्थकं तु* चः* ।
 प्रसादिता ये च कृताशया मया निरर्थकं पुत्र हृदि प्रहर्षती ॥४२॥
 भृशमसुखमवाप्य तत्तु सा नृपमहिषी विललाप दुःखिता ।
 व्यसनिनमिव वीक्ष्य राघवं सुतामिव वद्वमवेक्ष्य केसरी' ॥ ४३ ॥
 इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे कौशल्याविलापो
 नाम विंशः सर्गः ॥ २० ॥

[एकविंशः सर्गः]

पुनरेव सुदुःखार्ता कौशल्या राममब्रवीत् ।

न श्रोतव्यं त्वया राम पितुः कामततो वचः ॥ १ ॥

इहैव वस किं तेऽसौ राजा वृद्धः करिष्यति ।

न गन्तव्यं त्वया वत्स जीवन्तीं मां यदीच्छसि ॥ २ ॥

तथा तामातुरां दृष्ट्वा कौशल्यां राममातरम् ।

उवाच लक्ष्मणः श्रीमांस्तत्कालसदृशं वचः ॥ ३ ॥

न रोचते ममाप्येतद् यदार्ये राघवो वनम् ।

त्यक्त्वा राज्यश्रियं गच्छेद् वृद्धवाक्यमशं गतः ॥ ४ ॥

विपरीतश्च वृद्धश्च त्रिषयैश्च प्रघर्षितः ।

नृपः किमिदं न ब्रूयाद् बोध्यमानः समन्मथः ॥ ५ ॥

देवसचं मृदुं शान्तं रिपूणामपि वत्सलम् ।

अनेक्षमाणः को धर्मं त्यजेत्पुत्रमकारणम् ॥ ६ ॥

पुनर्बालस्य वृद्धस्य स्त्रीजितस्य निशेषतः ।

कः कुर्याद्वचनं तस्य राजधर्मार्थविद्बुधः ॥ ७ ॥

यावदेव न जानाति कश्चिदर्थमिमं नरः ।

तावदेव मया सार्द्धमात्मस्थं कुरु शासनम् ॥ ८ ॥

भृत्ये ते मयि पार्श्वस्थे राज्यकार्यार्थमुद्यते ।

यौनराज्याभिवेकस्य त्रिधातं कः करिष्यति ॥ ९ ॥

निर्मनुष्यामयोध्यां हि कुर्या राम शितैः शरैः ।

1 म—दान्यं । 2 के, ल, म—साधे० । 3 के—०मुच्यते । ल, म—०मद्यते ।

यौवराज्ये विघातं ते कः कुर्वीत नृपाज्ञया ॥ १० ॥
 भरतस्यापि वा पक्षं यो गृह्णीयादचेतनः ।
 तं पापमहमद्यैव प्रेषयामि यमक्षयम् ॥ ११ ॥
 नायमव्यक्तिकालस्ते तेजो दर्शय राघव ।
 क्षमो ह्येकरसो राम लोकेन परिभूयते ॥ १२ ॥
 कैकेय्या नियतं राजा भेदितो ऽद्य भविष्यति ।
 त्वया तस्य निभिन्नस्य श्रोतव्यं न कथञ्चन ॥ १३ ॥
 कं च धर्मं समाश्रित्य त्नामसौ त्यक्तुमिच्छति ।
 निग्रहो ऽयं कृतो ऽनेन त्वया सह मयैव च ॥ १४ ॥
 कस्य शक्तिः श्रियं दातुं भरताय चलादिव ।
 प्रनिनिक्षति रामोऽयं यदि दीप्तं हुताशनम् ॥ १५ ॥
 पूर्वमेव ततो देवि प्रणिष्टं मोपधारय ।
 सर्वमानानुरक्तोऽस्मि रामं भ्रातरमग्रजम् ॥ १६ ॥
 न्यायवृत्तेन सत्येन पादौ चैवालभे तव ।
 अद्य पश्यन्तु मे वीर्यं सर्वशो युधि मानसाः ॥ १७ ॥
 रामाज्ञया दुःखशल्यमहमद्योद्धरामि ते ।
 इत्येतद्वचनं श्रुत्वा लक्ष्मणस्य महात्मनः ॥ १८ ॥
 उवाच रामं कौशल्या दुःखशोकपरिप्लुता ।
 भ्रातुस्ते वचनं राम श्रुतं भक्तियुतं हितम् ॥ १९ ॥
 एतदेव निमृश्याशु क्रियतां यदि रोचते ।

न मे सपत्न्या वचनाद् वनं गन्तुमितोऽर्हसि ॥ २० ॥

शोकपावकसन्तप्तां मां विमुच्यारिधर्वग ।

धर्मं च यदि धर्मात्मन् पुराणमनुवर्तसे ॥ २१ ॥

शुश्रुषुर्मांमिहस्थश्च चर धर्ममनुत्तमम् ।

पुरा मातुर्नियोगाद्धि शक्रः^५ परपुरञ्जय ॥ २२ ॥

भ्रातृन् जघान सापत्न्याद्राज्यं चापि^६ दिवौकसाम् ।

शुश्रुषुर्जननीं तत्र स्वगृहे नियतो वसन् ॥ २३ ॥

परेण तपसा युक्तः काश्यपस्त्रिदिवं गतः ।

यथैव राजा पूज्यस्ते तथाऽहमपि पुत्रक ॥ २४ ॥

त्वया ममापि वचनान्न गन्तव्यमितो वनम् ।

न चैव त्वद्विहीनाऽहं जीवेयमिति मे मतिः ॥ २५ ॥

माभ्युपेक्ष्य च राम त्वं न वनं गन्तुमर्हसि ।

गन्तव्यं यदि चावश्यं मयैव सहितो ब्रज ॥ २६ ॥

त्वया सह मम श्रेयस्तृणानामपि भक्षणम् ।

यदि मां सम्परित्यज्य वनं यास्यसि राघव ॥ २७ ॥

ततोऽहं प्रायमासिष्ये न हि शक्यामि जीवितुम् ।

मातृहा निरयं^७ घोरं तेनावाप्स्यसि^८ कल्मषम् ॥ २८ ॥

विलपन्तीं तथा दीनां कौशल्यां शोकमूर्च्छिताम् ।

उवाच रामो धर्मात्मा वचनं धर्मसंहितम् ॥ २९ ॥

५ ल—चक्र । म—शुक्रा । ६ कै, ल, म—चाप । कै कोपे “ चापि ”

इत्येवं पश्चात् संशोधितम् । ७ ल—निमयं । ८ ल—त्वमवाप्स्यसि ।

क्रिमेतदेवि धर्मज्ञे स्नेहविक्लवया त्वया ।
 भाषितं स्मर धर्मं त्वमात्मानं स्वकुलं तथा ॥ ३० ॥
 भर्तारं परमोदारं ततो मातः प्रशाधि माम् ।
 जानतोऽपि हि मातृणां दुःखं पुत्रप्रवासजम् ॥ ३१ ॥
 नास्ति शक्तिः पितुर्वाक्यं प्रतिक्लृपितुं मम ।
 प्रसादये त्वा शिरसा गन्तुमिच्छाम्यहं वनम् ॥ ३२ ॥
 न खल्वेतन्मर्यैतेन क्रियते पितृशासनम् ।
 अरण्यवासः साधूनां विशेषेण प्रशस्यते ॥ ३३ ॥
 इदं च मे कथयतां ब्राह्मणानां परिश्रुतम् ।
 पुरा कृतं पितृवचो यदन्यैरपि साधुभिः ॥ ३४ ॥
 जामदग्न्येन रामेण जनन्याः किल धीमता ।
 शिरश्छिन्नं परशुना क्रुद्धस्य पितुराज्ञया ॥ ३५ ॥
 कण्डुना^{१०} चाऽपि सिद्धेन वनाश्रमनिवासिना ।
 महर्षिणा गौर्विशस्ता तथैव पितुराज्ञया ॥ ३६ ॥
 अस्माकं पूर्वकैश्चापि खनद्भिः पितुराज्ञया ।^०
 भूतलं सगरापत्यैर्महासच्चवधः कृतः ॥ ३७ ॥
 तदेतन्न मर्यैकेन क्रियते पितृशासनम् ।
 प्रायशः पितृभिः सद्भिर्गतो मार्गोऽनुगम्यते ॥ ३८ ॥
 करिष्ये वचनं तस्मात्पितुरद्य प्रसीद मे ।
 पितुर्हि वचनं कुर्वन्न कश्चिन्न^{११} प्रशस्यते ॥ ३९ ॥
 इत्युक्त्वा चैव कौशल्यां रामो लक्ष्मणमब्रवीत् ।

जानामि लक्ष्मणाहं ते भक्तिभाजमनुत्तमम् ॥ ४० ॥
 मदर्थमपि ते प्राणा अपि जानामि राघव ।
 दुःखशल्यमिवाज्ञानात्संघट्टयसि मे पुनः ॥ ४१ ॥
 तदेव ताप्रदुःखं मे यदसौ मत्कृते नृपः ।
 दुःखेन महताऽऽविष्टः शेते मोहमुपागतः ॥ ४२ ॥
 कैकेय्या स्त्रीस्वभावेन पातितो धर्मसङ्कटे ।
 अहो कृच्छ्रमहो दुःखं तत्पापं कर्तुमिच्छसि ॥ ४३ ॥
 धर्मज्ञस्य पितुः कोऽत्र मादृशो राज्यलिप्सया ।
 उत्क्रम्य शासनं जीवेत्सर्वलोकविगर्हितः ॥ ४४ ॥
 मा भूत्स कालः सौमित्रे यदहं शासनं पितुः ।
 इच्छेयं समातिक्रम्य मुहूर्त्तमपि जीवितुम् ॥ ४५ ॥
 अभिप्रायमविज्ञाय नैवं मां वक्तुमर्हसि ।
 साधु लक्ष्मण संशाम्य मम चेदिच्छसि प्रियम् ॥ ४६ ॥
 धर्मस्थितिः परो लाभो धर्मो धारयते धृतः ।
 न च धर्मो धृतो मेऽन्यः पितुराज्ञामृतेऽनघ ॥ ४७ ॥
 करिष्यामीति संश्रुत्य यदहं पितृशासनम् ।
 न कुर्यां यदि सौमित्रे सर्वथैव धिगस्तु माम् ॥ ४८ ॥
 सोऽहं न शक्यामि पितुर्नियोगमतिवर्तितुम् ।
 पितुर्बलनुमतं तन्मे कैकेय्या समुदाहृतम् ॥ ४९ ॥
 तदेतामुत्सृजानार्या क्षत्रविद्याऽऽकुलां मतिम् ।
 धर्ममाश्रित्य मद् बुद्धिमनुवर्तितुमर्हसि ॥ ५० ॥

इत्युक्त्वा वचनं रामो लक्ष्मणं लक्ष्मीवर्द्धनम् ।

उवाच भूयः कौशल्यां प्राञ्जलिः शिरसा नतः ॥ ५१ ॥

अनुजानीहि मां देवि करिष्ये शासनं पितुः ।

शापिताऽसि मया प्राणैः पुनरागमनेन च ॥ ५२ ॥

तीर्णप्रतिज्ञः कुशली पादौ द्रक्ष्यामि ते पुनः ।

गच्छेयं त्वदनुज्ञातो निर्व्यलीकेन चेतसा ॥ ५३ ॥

यशो ह्यहं देवि न राज्यकारणात् परित्यजेयं सुकृतेन ते शये ।

अदीर्घकाले नरलोकजीविते वृणोमि धर्मं न महीमधर्मतः ॥५४॥

प्रसादये त्वां शिरसा यतव्रते प्रसीद मे कर्तुमविन्नमर्हसि ।

धनं गमिष्यामि नृपाज्ञया ह्यहम् प्रदेह्यनुज्ञां शिरसा नतस्य मे ॥५५॥

प्रमादयन्नरवृषभः स मातरं बहूक्तवान् जिगामिपुरेव दण्डकम्^{१३} ।

अथात्मज भृशमति^{१४} -देविनं तदा चकार सा हृदि जननी पुनः पुनः ॥५६॥

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे कौशल्याऽनुनयो

नाम एकविंशः सर्गः ॥ २१ ॥

[द्वाविंशः सर्गः]

द्रव्युक्त्वा मातरं रामो भूयो लक्ष्मणमब्रवीत् ।
 दृष्ट्वा तथैव सामर्षं निःश्वसन्तमिषोरगम् ॥ १ ॥
 यो ऽयं मदभिषेकार्थं तत्र लक्ष्मण संभ्रमः ।
 तमेवार्हसि कर्तुं त्वं मत्प्रस्थाने ससंभ्रमम् ॥ २ ॥
 यस्या मदभिषेकार्थं मनो विपरितप्यते ।
 माता मे सा यथा भूयः शङ्कते न तथा कुरु ॥ ३ ॥
 न बुद्धिपूर्वं नाज्ञानान्मातृणां मातृनन्दन ।
 कृतपूर्वमहं वारः* स्मरामि क्वचिदाग्रियम् ॥ ४ ॥
 तस्माच्छङ्काकृतं दुःखं मुहूर्त्तमपि लक्ष्मण ।
 गच्छेन्न वेति मा चाभूच्छङ्का मयि महीपतेः ॥ ०५ ॥
 अभिषेकाभिलाषं च मुञ्चेमं मम लक्ष्मण ।^०
 संप्रत्येवाहमिच्छामि वनं गन्तुमितः पुरात् ॥ ६ ॥
 मयि चीराजिनधरे जटामण्डलधारिणि ।
 गतेऽरण्यं च कैकेय्या भविष्यति मनःसुखम् ॥ ७ ॥
 मयि प्रव्रजिते देवो कृतकृत्यं सुनिर्गृतम् ।
 आत्मानमपि जानातु पितुश्चानृष्यमस्तु मे' ॥ ८ ॥
 एनं मे निश्चिता बुद्धिर्मनश्चैव समाहितम् ।
 न विलंपितुमिच्छामि मुहूर्त्तमपि कर्हिचित् ॥ ९ ॥
 कारणं तु कृतान्तोऽत्र सौमित्रे मद्भिनिग्रहे ।
 यौनराज्याभिषेकस्य तथैवास्य विनिग्रहे ॥ १० ॥

कैकेयी च प्रकृत्यैव सदा मां प्रति वत्सला ।

सत्यं मत्परिपीडार्थं बलादेव विमोहिता ॥ ११ ॥

तदुक्तं परुषं^३ यच्च तत्कृतान्तकृतं स्मर ।

नित्यं मातृषु मे प्रीतिरविशेषेण लक्ष्मण ॥ १२ ॥

सर्वासामविशेषेण तासामपि तथा मयि ।

अनुक्तपूर्वं कैकेय्या यदुक्तं परुषं रुपा ॥ १३ ॥

कथं प्रकृतिकल्याणी राजर्षिकुलजा सती ।

ब्रूयाद्विप्राकृतस्त्रीव मां तथा पितृसन्निधौ ॥ १४ ॥

दैवस्वभावसंसिद्धिरचित्येति च मे मतिः ।

तन्नूनं पतितं भूमिं मम भाग्यविपर्ययात् ॥ १५ ॥

कथं दैवेन सौमित्रे योद्धुमुत्सहते सह ।

यस्येह निग्रहोपायः कथंचन^४ न^४ विद्यते ॥ १६ ॥

सुखदुःखभयोद्वेगलाभालाभमवाभवाः ।

नृणां भवन्ति दैवेन न भवन्ति च लक्ष्मण ॥ १७ ॥

अवश्यभावि व्यसनं ममैतदिति पश्यतः ।

व्याहते ऽप्यभिषेके मे परित्तापो न विद्यते ॥ १८ ॥

तस्माच्चमपि मे बुद्धिमनुवर्तितुमर्हसि ।

प्रतिसंचितयात्मानं मा च शोके मनः कृथाः ॥ १९ ॥

न लक्ष्मणास्मिन्मम राज्यविघ्ने माता यवीयस्याभिश्ङ्कनीया ।

न चैव राजाऽत्र विशङ्कनीयो दैवं हि कोऽतिक्रामितुं समर्थः ॥२०॥

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे लक्ष्मणानुनयो

नाम द्वाविंशः सर्गः ॥ २२ ॥

[त्रयोविंशः सर्गः]

इति त्रुणति रामे तु लक्ष्मणो ऽघोमुखः स्थितः :
 दुःखामर्षपरीतात्मा दर्घ्यां विपुतचेतनः ॥ १ ॥
 स वद्वा अकुटिं रोषाद् भ्रुवोर्मध्ये नरर्यभः ।
 निशश्वास महासर्पो विलस्य इव रोषितः ॥ २ ॥
 रूपेतस्य तथा साक्षाद् अकुटीकुटिलं मुखम् ।
 क्रुद्धस्येव मृगेन्द्रस्य विवभौ भूरितेजसः ॥ ३ ॥
 विनिर्भूयाग्रहस्तं च प्रभिन्न इव कुञ्जरः ।
 तिर्यगूर्ध्वं च संप्रेक्ष्य शिरः संकम्प्य चासकृत् ॥ ४ ॥
 खड्गं परिमृपन् रोषाच्छत्रुपक्षविदारणम् ।
 संरंभामर्षताम्राक्षस्ततो आतरमब्रवीत् ॥ ५ ॥
 अस्थाने संभ्रमो यस्ते जातो ऽयं गमनं प्रति ।
 धर्मलोपभयादेव^१ लोकनादभयेन वा ॥ ६ ॥
 कथमोद्दगसंभ्रान्तस्त्वद्विधो वक्तुमर्हति ।
 क्लीपं वाक्यमशौटीर्यं शौटीरः^२ क्षत्रियान्नयः ॥ ७ ॥
 तेजःक्षान्नं समालंब्य^३ अमाद्वक्तुं न चार्हसि ।
 क्लीपसि हि दैनमेवैकं प्रशसन्ति न पौरुषम् ॥ ८ ॥
 प्रतीपमपि शक्रोपि व्यसनायाभ्युपागतम् ।
 दैवं पुरुषकारेण प्रतिषेद्धुमरिन्दम ॥ ९ ॥
 कैकेयीं च नरेन्द्रं च कस्मात्कार्येण शंससि ।

तयानं प्रतिपत्तव्यं तस्मात्पापानुबन्धयोः ॥ १० ॥
 धर्माभ्युपायाः सन्त्यन्ये कुशलैः परिचिन्विताः ।
 तैरुपायैरर्थसिद्धिर्माऽनर्थं नेतुमर्हसि ॥ ११ ॥
 यदि वाऽऽर्यं स्वयं कर्तुं तत्रमेवं न व्यवस्यसि ।
 मां नियुंक्ष्य करिष्ये ऽहं वचनं यदनन्तरम् ॥ १२ ॥
 लोकविद्विष्टमुत्सृज्य तस्माच्छोकप्रियं कुरु ।
 यदर्थं बुद्धिमोहो ऽयमीदृशस्त्वामुपागतः ॥ १३ ॥
 सो ऽपि धर्मो मम द्वेष्यो यत्प्रसंगाद्विमुह्यसि ।
 लोकस्याप्रियमारब्धं कैकेय्याः केवलं प्रियम् ॥ १४ ॥
 एतत् कार्यं नरेन्द्रेण कामतो न तु धर्मतः ।
 अतिसृष्ट्वाऽभिषेकं^४ ते पुनः प्रत्यवगृह्यतः ॥ १५ ॥
 तत्प्रतीपे कृते क्षत्रं कल्पुषं^५ नोपपद्यते ।
 क्षुद्रायाः पापभात्रायाः प्रद्विपन्त्या विशेषतः ॥ १६ ॥
 कैकेय्या वचनं क्षुद्रं नैव त्वं कर्तुमर्हसि ।
 यौवराज्याभिषेके च त्वामुपामन्य धर्मतः ॥ १७ ॥
 कथं नाम स्थितो धर्मे कुर्यात्तदनृतं भृषः ।
 पापबुद्धिरियं राज्ञो दैवेनापकृता यदि ॥ १८ ॥
 तदाऽप्युपेक्षणीयो ऽथो नैव बुद्धिमतां भवेत् ।
 निहृणो हीनवीर्यो यः स दैवमनुवर्तते ॥ १९ ॥
 अपिहृणस्तु तेजस्वी न दैवमनुवर्तते ।
 दैवं पुरुषकारेण यतते यो ऽतिवर्तितुम् ॥ २० ॥

न स दैवविपन्नार्थः कदाचिदपि सीदति ।
 लोकः पश्यतु कृत्स्नो ऽद्य दैवपौरुषयोरिदं ॥ २१ ॥
 अन्तरं कार्यसंसिद्धौ यद्युत्थातुं त्वमिच्छसि ।
 अद्य तत्पौरुषहतं दैवं पश्यन्तु मानवाः ॥ २२ ॥
 तत्र राज्यविधाताय प्रतीपं समुपागतम् ।
 निरङ्कुशमित्रोदामं गजं मदबलोद्धतम् ॥ २३ ॥
 प्रतीपमागतं दैवं पौरुषेण निर्नर्तये ।
 लोकपालाः सहेन्द्रेण यौवराज्याभिषेचनम् ॥ २४ ॥
 प्रतिहन्तुं न शक्तास्ते किमुतैको नराधिपः ।
 यैर्निवासस्तवारण्ये मिथ्या राम समर्थितः ॥ २५ ॥
 अहं विनासयिष्यामि तानेवाद्य बलान्वितः ।
 प्रतीपमागतं दैवं पौरुषेण निर्नर्तये ।^० २६ ॥
 प्रतीपमपि दुःखाय तव दैवमुपागतम् ।
 प्रममिष्याते राम त्वां मत्पौरुषपराहतम् ॥ २७ ॥
 बहुवर्षसहस्रान्तं प्रजापान्यमनुत्तमम् ।
 आर्यपुत्राः करिष्यन्ति वनवासं गते त्वयि ॥ २८ ॥
 पूर्वराजार्पेभृत्तेन वनवासो विधीयते ।
 पुत्रेभ्यन्ते विनिक्षिप्य राज्यं वयसि पश्चिमे ॥ २९ ॥
 स त्वं समर्थो धर्मज्ञ धर्मलोपनिशङ्कया ।
 कैकेय्या वचनाद् धर्म्यं स्वं राज्यं त्यक्तुमिच्छसि ॥ ३० ॥
 प्रातिजानामि ते सत्यं मा भूयं वीरशब्दमारु ।

यदि प्रतीपं दैवं ते न हरिष्याम्युपागतम् ॥ ३१ ॥

फलमेवास्य दैवस्य प्रतीपस्य निवर्तये ।

तवैव तेजसेच्छामि दैवं लोकान्निवर्त्तितुम् ॥ ३२ ॥

अविपह्यतमं लोके विपह्यं केन किञ्चन ।

त्वदर्थमुत्सहे ह्येकः परिवर्त्तयितुं जगत् ॥ ३३ ॥

मङ्गलैरभिपिच्यस्व तत्र त्वं निर्वृतो भव ।

अलमेको महीपाल महीं पालयितुं बलात् ॥ ३४ ॥

न शोभार्थमिमौ बाहू न धनुर्भूषणाय मे ।

नासिरा बन्धनार्थं मे न शराः^७ स्थाणहेतवः^८ ॥ ३५ ॥

अमित्रदमनार्थं मे सर्वभेतच्चतुष्टयम् ।

न चार्थमभिकांक्षेयं यशः शत्रुवधो मम ॥ ३६ ॥

अस्तिना तीक्ष्णधारेण विद्युच्चलितवर्चसा ।

प्रगृहीतेन कः शक्तो बज्री वा मत्समो न च ॥ ३७ ॥

सङ्गधाराहता मेऽद्य पतन्तु नरराशयः ।

प्राष्ट्रकाले समागम्य विद्युतेव समाहताः । ३८ ॥

सङ्गनिष्पेपनिष्पिष्टैर्गहनास्तदुरास्तथा ।

पत्त्यधरथमातंगी मही भवतु सर्वशः ॥ ३९ ॥

पद्मगोधांगुलित्राणे प्रगृहीतशरासने ।

कथं पुरुषकारस्स्यात् पुरुषाणां मयि स्थिते ॥ ४० ॥

अम्यस्तान् विविधे काले निशितान् रुधिराशनान् ।

७ ल—हनिष्य० । म—वि[ह]न्यमुपा० ।

८ कै, लृ—अहमेवो महीपालं । ४ म—शरास्तुण० ।

विप्रमोक्ष्याम्यहं वाणान् नृवाजिगजमर्मसु ॥ ४१ ॥

अद्य मे सुप्रभावस्य प्रभावः प्रभविष्यति ।

राज्ञश्चाप्रभुतां कर्तुं प्रभुत्वं च तव प्रभो ॥ ४२ ॥

अद्य चन्दनसाराणां केयूराणां धनस्य च ।

वसूनां च विमोक्षस्य सुहृदां पूजनस्य च ॥ ४३ ॥

अभिरूपमिमौ वाहू राजन् कर्म करिष्यतः ।

अभिपेके तु विघ्नस्य शत्रूणां ते निवर्हणम् ॥ ४४ ॥

तद्ब्रूहि कोऽद्यैव नियोज्यतां मया तनासुहृत्प्राणयशः सुहृज्जनैः ।

यथा तवेयं वसुधा वशे भवेत् तथाऽद्य मां शाधि तवास्मि किंकरः ॥ ४५ ॥

प्रगृह्य मन्युं परिगृह्य पौरुषं स लक्ष्मणो राममभिप्रसादयन् ।

उवाच भूयोऽपि पितुर्विनिग्रहे यतस्व रामैष विनिश्चयो मम ॥ ४६ ॥

इति वचनमुदारसत्त्वयुक्तं तदभिसमीक्ष्य तु लक्ष्मणस्य रामः ।

मधुरतरमुवाच सोऽर्थयुक्तं परिकुपितं पितरं प्रति प्रतीतः ॥ ४७ ॥

इत्यार्षे रामायणे ऽध्याकाण्डे लक्ष्मणसंरंभो

नाम त्रयोविंशः सर्गः ॥ २३ ॥

[चतुर्विंशः सर्गः]

मत्स्या रामस्य संरब्धं लक्ष्मणं पितरं प्रति ।

श्लश्रुणैःसानुनयैर्वाक्यैः शमयामास राघवः ॥ १ ॥ २७

सौमित्रे नैतदाश्चर्यं मद्मत्स्या त्वं यदिच्छसि ।

व्यसनार्णवसंमग्नमुद्बुर्त्तु मां बलादिव ॥ २ ॥

पुण्यशीलस्तु धर्मात्मा सत्यव्रतपरायणः ।

पार्ष्णिणो नानृतः कर्तुं न्याय्यो लोके गुरुर्मया ॥ ३ ॥

सत्यप्रतिज्ञं कृत्वा हि पितरं धर्मवत्सलम् ।

पुण्यां कीर्तिमयाप्स्यामि प्रेत्य चेह च शाश्वतीम् ॥ ४ ॥

यदि त्वस्ति मयि स्नेहो भक्तिर्वा यदि लक्ष्मण ।

ततो निरर्तयैनं त्वं पापां बुद्धिं समुत्थिताम् ॥ ५ ॥

धर्मात्मनः श्रुतवतः कृतज्ञस्य महात्मनः ।

पितुरस्याप्रियं कर्तुं नेच्छामि मनमाज्ज्यहम् ॥ ६ ॥

यदीच्छसि प्रियं कर्तुं मम त्वं यदभीप्सितम् ।

इतो मयि गते भक्त्या शुश्रूष्यो नृपतिस्त्वया ॥ ७ ॥

निर्व्वलीकेन मनसा प्रत्यक्षं दैवतं यथा ।

एतन्मे परमं चाक्यं भक्तितः कर्तुमर्हसि ॥ ८ ॥

अथवा मां प्रति नोत्कण्ठां करोति यमुपाधिपः ।

तथा शुश्रूषयितव्योऽस्मौ त्वया मयि निर्निर्गते ॥ ९ ॥

मातरश्च विशेषेण शुश्रूष्याः सर्वथा त्वया ।
 तथा यथा न तप्येयुर्वनवासं गते मयि ॥ १० ॥
 भरतश्चापि धर्मात्मा द्रष्टव्यो ऽहमिव त्वया ।
 परिपाल्यश्च यत्नेन मम प्रियचिकीर्षुणा ॥ ११ ॥
 इमां धर्मधुरं गुरोमहं वक्ष्यामि लक्ष्मण ।
 भरतेन सहेमां त्वं गुरो राराज्यधुरं वह ॥ १२ ॥
 इत्युक्तप्रचनं रामं वभाषे लक्ष्मणस्तदा ।
 अप्रकथ्यं स्थितं धर्मे पुरन्दरमिमानुजः ॥ १३ ॥
 लोकनाथ गतिर्या ते सा ममापि भविष्यति ।
 वने वत्स्याम्यहमपि शुश्रूषानिरतमन्त्र ॥ १४ ॥
 त्वया त्यक्तामहमपि परित्यक्ष्ये पुरोमिमाम् ।
 त्वद्वत् न हि वस्तु मे स्वर्गे ऽपि रमते मनः ॥ १५ ॥
 यद्यस्ति मयि ते स्नेहो भक्तोज्यं वीर मामिति ।
 ततो मामनुगच्छन्तं न निवर्तयितुमर्हसि ॥ १६ ॥
 वने निरसतस्तेऽहं नानाजनविचारिणः ।
 आहरिष्यामि स्वादूनि मूलानि च फलानि च ॥ १७ ॥
 सहायस्ते भरिष्यामि दुर्गेषु विपमेषु च ।
 आज्ञाकरस्ते भृत्यो ऽहं भरिष्यामि महानने ॥ १८ ॥
 सर्वभावानुरक्तं मा न परित्यक्तुमर्हसि ।
 पश्य मामार्यपुत्र त्वं पूज्यश्चासि गुत्थ मे ॥ १९ ॥

शनीयमाहरिष्यामि पुष्पमूलफलानि च ।
 साधयिष्यामि चाहारं वनेषु वसतः प्रभो ॥ २० ॥
 अनुजानीहि मामार्यं निश्चितं धर्मवत्सलम् ।
 अनुगन्तुं कृतमतिं कृतज्ञं शरणागतम् ॥ २१ ॥
 न निवर्तयितव्योऽहं सर्वथा रघुनन्दन ।
 न हि राम त्वया त्यक्तो जीवेयमिति मे गतिः ॥ २२ ॥
 न निवर्तयेतुं शक्या बुद्धिरेषा मम स्थिरा ।
 स भवाननुजानातु ममाप्यागमनं वने ॥ २३ ॥
 सोऽनुनीतो बहुविधं लक्ष्मणेन यशरिचना ।
 चाढामित्यब्रवीद्रामो लक्ष्मणं भ्रातृवत्सलम् ॥ २४ ॥
 सह यास्यामि सौमित्रे त्वया दुर्गं महद्वनम् ।
 भवान् हि मे परो बन्धुः सखा भक्तः प्रियश्च मे ॥ २५ ॥
 तथा तु रामं गमने धृतव्रतं समीक्ष्य देवी वचनं भृशतुरा ।
 उवाच भूयो हृदयेन^१ तप्यता सुरलोचिता दुःखपरिप्लुता भृशम् । २६
 इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे लक्ष्मणानुनय-
 श्चतुर्विंशः सर्गः ॥ २४ ॥

[पञ्चविंशः सर्गः]

तं समीक्ष्य व्ययसितं पितुर्वचनपालने ।
 कौशल्या^१ वाष्पसन्दिग्धं वचो धर्मिष्ठमब्रवीत् ॥ १ ॥
 यदि धर्मं पुरस्कृत्य पुत्रं वर्तितुमिच्छसि ।
 ततो मद्बचनं धर्म्यं शृणु धर्मभृता^२ वर ॥ २ ॥
 त्वं हि लब्धो मया कृच्छ्रैस्तपोभिर्नियमैस्तथा ।
 वचनं मे त्वया कार्यमतः पुत्रं विशेषतः ॥ ३ ॥
 आशया परया रामं शिशुश्च परिपालितः ।
 तत्समर्थोऽद्य मां दीनां परिरक्षितुमर्हसि ॥ ४ ॥
 पश्याद्यं पुत्रं मां चाधजावितेन^३ नियोजिताम् ।
 न सकामां सपत्नीं मे कैकेयीं कर्तुमर्हसि ॥ ५ ॥
 न चापि परिशक्ताऽहं^४ विप्रकारान् पृथग्बिधान् ।
 सोढुं सकाशात् कैकेय्याः^५ परिभृता विशेषतः ॥ ६ ॥
 नित्यकालं सपत्नीभिर्भृशं विप्रकृता सती ।
 पुत्रच्छायां समाश्रित्य भवाम्यद्य समाहिता^६ ॥ ७ ॥
 साऽहमद्य न शक्यामि जीवितुं शर्वरीमिमाम् ।
 फलिनी^७ पादपेनेन फलकाले वियोजिता ॥ ८ ॥
 न पुत्रकं वचः कार्यं स्त्रीविधेयस्य भूतेः ।
 कामचारप्रवृत्तस्य दुष्कृतेषु^८ शुचेरिव ॥ ९ ॥

१ कै, ल, म—कोसल्या । २ म—धर्मवृतं । ३ म, ल०—चाद्य०— ।

४ म—रामं शक्ताहं । ५ कै, म—कैकेय्या । ६ के—समाहिता । ७ ल—

फलता । ८ म, ल—दुष्कृतेषु शुचेरिव ।

यो ऽतीत्य धर्मं पौराणमिक्ष्वाकूणां कुलोचितम् ।

त्वात्मातिक्रम्य भरतमभिपेक्षामिहेच्छति ॥ १० ॥

अपि चेयं पुरा गीता गाथा सर्वत्र विश्रुता ।

मनुना मानवेन्द्रेण तां श्रुत्वा मे वचः कुरु ॥ ११ ॥

गुरोरप्यवलिप्तस्य कार्याकार्यमजानतः ।

कामचारप्रवृत्तस्य न कार्यं श्रुतो वचः ॥ १२ ॥

दश विप्रानुपाध्यायो गौरवेणातिरिच्यते ।

उपाध्यायादश^९पिता गौरवेणातिरिच्यते ॥ १३ ॥

पितृन् दश च मातृका सर्वा च पृथिवीमपि ।

गौरवेणाभिभवति को ऽस्ति मातृममो गुरुः ॥ १४ ॥

पतिता गुरुवस्त्याज्या न तु माता कदाचन ।

गर्भधारणपोषाभ्यां तेन माता गरीयसी ॥ १५ ॥

साऽहं ते^{१०} पितृतो राम धर्मतो गौरवाधिका ।

माननीया विशेषेण यथा धर्मविदो विदुः ॥ १६ ॥

अतो ममापि ते कार्यं शासनं गुरुवत्सल ।

अभिपिच्यस्व धर्मेण राज्ये राजीवलोचन ॥ १७ ॥

यदि त्वमेतन्मम भाषितं हितं कुलोचितं सत्पुरुषं निषेवितम् ।

यथावदुक्तं न करिष्यसे ततश्चिराय यास्यामि यमक्षयं ततः ॥ १८ ॥

इत्यार्षे रामायणे ऽग्रोध्याकाण्डे कौशल्यावाक्यं

नाम पञ्चविंशः सर्गः ॥ २५ ॥

[पञ्चविंशः सर्गः]

अथानुनेतुं चक्रे ऽसौ मातरं यत्नमास्थितः ।
 प्रश्रितैर्मधुरैर्वाक्यै हेतुमद्भिश्च राघवः ॥ १ ॥
 मम चैव भवत्याश्च राजा प्रभवति प्रभुः ।
 न प्रभुत्वमतस्ते ऽस्ति मम देवि निवर्तने ॥ २ ॥
 दातुमर्हसि मे ऽनुज्ञां देवि धर्मभृतां वरे ।
 वनवासाय वर्षाणि नवपञ्च च सुव्रते ॥ ३ ॥
 भर्ता हि दैवतं स्त्रीणां भर्ता चेश्वर उच्यते ।
 अतस्ते शासनं भर्तु न व्याहन्तव्यमेव हि ॥ ४ ॥
 पुनरागमनं मे ऽद्य त्वमाशंसितुमर्हसि ।
 यतव्रता नित्यमेव भर्तुराराधने रता ॥ ५ ॥
 तीर्णप्रतिज्ञ एष्यामि त्वत्प्रसादादहं पुनः ।
 अरिष्टं कुशली चैव तस्मात्संशाम्य मा शुचः ॥ ६ ॥
 कुले जाताऽसि विस्तीर्णं राज्ञाममिततेजसाम् ।
 सद्गुणाख्यातयशसां कोशलानां महात्मनाम् ॥ ७ ॥
 कुलशीलसमाचारै र्धर्मिष्ठा नियतव्रता ।
 सा कथं शासनं भर्तुरतिवर्तितुमर्हसि ॥ ८ ॥
 दैवतं ते गुरुश्चैव भर्ता देवि प्रसीद मे ।
 मत्स्नेहान्नाहंसे तस्य मतमुत्क्रम्य वर्तितुम् ॥ ९ ॥
 निर्विचारं मया कार्या गुरोराज्ञा महात्मनः ।
 श्रेयो ह्येवं भवत्याश्च मम चैव विशेषतः ॥ १० ॥
 कार्पण्याद्बालभावाद्वा न कुर्या चेत्पितुर्वचः ।

ततो ऽहं प्रेषितव्यः स्यां भवत्या विनयज्ञया ॥ ११ ॥
 किं पुनर्यस्य मे देवि स्वभावनियता मतिः ।
 भूयो विवर्धनीयैव भवत्या विनयज्ञया ॥ १२ ॥^०
 न ते राजा किञ्चिदपि वक्तव्यो मदपेक्षया ।
 प्रतीपमप्रियं वापि न वक्तव्यः प्रसीद मे ॥ १३ ॥
 कैकेयी वा महाभागा भरतो वा महायशाः ।
 स्वल्पमप्यप्रियं वाक्यं न वक्तव्यौ प्रसीद मे ॥ १४ ॥^०
 यथाऽहमेवं द्रष्टव्यो भरतः सर्वदा त्वया ।
 कैकेयी भगिनीवच' द्रष्टव्या सर्वदा त्वया ॥ १५ ॥
 विरुध्यन्ते न बलिभिर्बुद्धिमन्तः कथञ्चन ।
 बलहीनैरपि तथा विरुध्यन्ते न संहतैः ॥ १६ ॥
 तत्कथं सह पित्राऽहं विरुध्येयं महात्मना ।
 भ्रात्रा वा भरतेनाद्य भक्तेनानपकारिणा ॥ १७ ॥
 धर्मात्मना विनीतिन प्राणेभ्योऽपि प्रियेण च ।
 कथं नाम विरुध्येयं सह तेन महात्मना ॥ १८ ॥
 पित्रा दत्तं यौवराज्यं भरतो यद्यवाप्स्यति ।
 तत्र दोषो ऽस्ति कस्तस्य भरतस्य महात्मनः ॥ १९ ॥
 अतिसृष्टं पुरा राज्ञा कैकेयी भर्तुतो वरम् ।
 यदि गृह्णाति कस्तस्या दोषस्तत्र ब्रवीहि मे ॥ २० ॥
 राज्ञा च प्रारूप्रतिश्रुत्य ददावस्यै यदा वरम् ।
 भीतो ऽनृतात्ततो राज्ञः को दोषः सत्यवादिनः ॥ २१ ॥

व्यक्तमेव परं धर्मं भर्ता ते देवि मन्यते ।

चलेद्धि राजा धर्माच्चेन्न सकामो भविष्यति ॥ २२ ॥

सा त्वं सद्वृत्तकुशला छिन्नधर्मार्थसंशया ।

न धर्मज्ञं नरपतिं दोषतो गन्तुमर्हसि ॥ २३ ॥

प्रसीदानुनयामि त्वां नानुशास्मि कथञ्चन ।

अनुजानोहि मां देवि वनवासाय दीक्षितम् ॥ २४ ॥

एवं स रामो गतबुद्धिभावो वनं प्रवेष्टुं सह लक्ष्मणेन ।

भूयो वचः सानुनयं वभाषे स्वां मातरं धर्मभृतां वरिष्ठः ॥ २५ ॥

यशो ह्यहं केवलराज्यकारणात्न पृष्ठतः कर्तुमलं महोदयम् ।

अदोर्षकाले नरलोकजाविते वृणे बलान्नाद्य महोमघर्मतः ॥ २६ ॥

प्रसादये त्वां शिरसा यतव्रते प्रसीद मे कर्तुमविघ्नमस्तु ते ।

वनं गमिष्याम्यहमाज्ञया पितुः प्रदेह्यनुज्ञां शिरसा नतस्य मे ॥ २७ ॥

प्रसादयन्नरवृषभः स मातरं बहूक्तगान्जिगामिपुरेव दण्डकाम् ।

अथात्मजं भृशपरिदेवितं तदा चकार सा हृदि जननी पुनः पुनः २८

इत्यार्षे रामायणे ऽषोऽध्याकाण्डे कौशल्याऽनुनयो-

नाम षड्विंशः सर्गः ॥ २६ ॥

[सप्तविंशः सर्गः]

इत्युक्त्वा जननी रामो धर्मात्माऽनुनयं वचः ।
 स्थितां धर्मपरां दीनां पुनर्वचनमब्रवीत् ॥ १ ॥
 त्वया देवि मया चैव स्थेयं नृपतिशासने ।
 राजा भर्ता गुरुश्चैव सर्वेषामीश्वरेश्वरः ॥ २ ॥
 इमानि तु विहृत्यैव नयवर्षाणि पञ्च च ।
 वने पुनरुपावृत्तः स्थास्यामि वचने तव ॥ ३ ॥
 इत्युक्त्वा सा प्रियं पुत्रं वाष्पपर्याकुलं वचः ।
 उवाचेदं सपत्नीनां वस्तु मध्ये न मे क्षमम् ॥ ४ ॥
 नय मामपि पुत्र त्वं वनं वन्यमृगाकुलम् ।
 यदि ते गमने बुद्धिः कृता पितुस्वेक्षया ॥ ५ ॥
 तां तथा ब्रुवतीं रामः पुनर्वचनमब्रवीत् ।
 जीवत्पत्न्याः स्त्रिया भर्ता देवतं परमं स्मृतः ॥ ६ ॥
 भवत्या मम चैवाद्य राजा प्रभवति प्रभुः ।
 अतो नार्हाम्यहं नेतुं त्नाभितो नगराद्रनम् ॥ ७ ॥
 न चानुगन्तुं न्याय्यो ऽहं जीवत्पत्न्या त्वयापि वा ।
 महात्मा वाऽमहात्मा वा पतिरेव गतिः स्त्रियाः' ॥ ८ ॥
 किं पुनर्नृपति देवि महात्मा दयित्तश्च ते ।
 भरतश्चापि धर्मात्मा विनीतो गुरुत्सलः ॥ ९ ॥
 असंशयं यथैवाहं पुत्रस्ते धर्मतस्तथा ।
 मत्तो ऽधिकतरां पूजां भरतात्प्रमवाप्स्यासि ॥ १० ॥

न हि किञ्चिदकल्याणं तस्मादाशंसयाम्यहम् ।
 यथा तु माये निष्क्रान्ते पुत्रशोकेन मे पिता ॥ ११ ॥
 अतिमात्रं न सन्तप्येतथा त्वं कर्तुमर्हसि ।
 कार्यः प्रत्यग्रजयासि न तथा वाऽप्यपह्वरः ॥ १२ ॥^०
 पत्यां धृद्धे यथा कार्यस्त्वया मच्छोककपिते ।
 या धर्मचारिणी नारी पतिं पतिपरायणा ॥ १३ ॥
 नानुवर्तेत यत्नेन न सा सद्भिः प्रशस्यते ।
 भर्तृप्रता भर्तृपरा नारी भर्तृपरायणा ॥ १४ ॥
 इह कीर्तिं परां प्राप्य प्रेत्य स्वर्गं महीयते ।
 तस्मात्सदैव भर्तुस्त्वं शुश्रूषानिरता गृहे ॥ १५ ॥
 स्थातुमर्हसि धर्मो हि सत्स्त्रीणामेष शाश्वतः ।
 गार्हस्थ्यधर्मरतया देवाराधनशीलया ॥ १६ ॥
 भर्तृचित्तानुवर्तिन्या भर्ता सेव्य इह त्वया ।
 ब्राह्मणान् वेदप्रिदुपः पूजयन्ती यतप्रता ॥ १७ ॥
 वसेह भर्तृसहिता ममागमनकाक्षिणी ।
 द्रक्ष्यसे भर्तृसहिता ममाभ्यागमन पुनः ॥^० १८ ॥
 यदि राजा मद्विहीनो धारयिष्यति जीवितम् ।
 इति सानुनयं वाक्यं श्रुत्वा धर्मार्थसहितम् ॥ १९ ॥^०
 रामेणोक्ता चमापेऽथ कोशल्या साश्रुलोचना^० ।
 गच्छ पुत्रं शिवं तेऽस्तु कुरुष्व पितृशासनम् ॥ २० ॥^०

स्वस्तिमन्तमारिष्टं त्वां द्रक्ष्यामि पुनरागतम् ।

शुश्रूषा निरता भर्तुं भविष्यामि यथाऽऽथ माम् ॥ २१ ॥

यच्चान्यदपि कर्तव्यं करिष्ये तत्सुखी व्रज ।

तथा तु रामं वनवासनिश्चितं समीक्ष्य देवी गतसच्चचेतना ।

यभूव भूयः सहमैव दुःखिता सगद्गदं वाष्पकलप्रलापिनी ॥ २२ ॥

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे कौशल्याऽऽश्वासनं

नाम सप्तविंशः सर्गः ॥ २७ ॥

[अष्टविंशः सर्गः]

ममाश्वस्य ततो भूयः कौशल्या राममब्रवीत् ।
 मास्त्राक्षरपदं^१ वाक्यमिदं वाष्पाकुलेक्षणा ॥ १ ॥
 अदृष्टदुःखो धर्मात्मा सर्वभूतहिते रतः ।
 मया दशरथाज्जातः^२ कथं दुःखमवाप्स्यमि ॥ २ ॥
 यस्य प्रेप्याश्च दासाश्च स्वादृन्यन्नानि^३ भुञ्जते ।
 तस्य पुत्रः प्रियो वन्यं भोक्ष्यसे मुनिभोजनम् ॥ ३ ॥
 कः श्रद्दध्यादिदं श्रुत्वा कस्य वा न भयं भवेत् ।
 राज्ञा निर्मासितः पुत्रः प्रियो ऽतिगुणवानिति ॥ ४ ॥
 अयं धक्ष्यति मा पुत्र लोकवाक्यद्भुताशनः ।
 प्रियोगार्तिसमुद्भूतस्त्रुणौघमयेन्धन^४ ॥ ५ ॥
 चिन्ताऽऽयासमहाधूमस्त्वद्वियोगानिलेरितः ।
 मा प्रधक्ष्यत्यय नून निःश्वासायासपात्रकः ॥ ६ ॥
 त्वया विहीनामत्रशा शोकाग्निरनिश ज्वलन् ।
 प्रधक्ष्यति यथा कक्ष्य चित्रभानुहिमात्यये ॥ ७ ॥
 वत्सलत्वाद्यथा धेनुः स्व पुत्रमभिधावति ।
 तथा त्वामनुयास्यामि वात्सल्यादभिधानती^० ॥ ८ ॥
 इति मातुर्निर्गादित मातुः सकरुणाक्षरम् ।^०
 श्रुत्वा^०रामा^०ऽत्रवीद्वान्मयं^०कौशल्या शोककपिताम् ॥ ९ ॥
 कैकेय्या वञ्चितो राजा मयि चारण्यमाश्रिते ।

१ क—साप्त्राक्षर० । ल—मास्त्राक्षर० । म—सस्त्राक्षर । २ ल—दश
 रथाज्जात । म—दशरथो जात । ३ म—स्वादृन्यन्नानि । ४ के—स्त्रुणौघ० ।

भवत्या च परित्यक्तो न मन्ये वर्तयिष्यति ॥ १० ॥
 भर्तुश्चैव परित्यागः शस्यते न कथञ्चन ।
 स भवत्या न कर्तव्यो मनसाऽपि विगर्हितः ॥ ११ ॥
 यावज्जीवति ते भर्ता भर्ता हि तव दैवतम् ।
 सर्वात्मना सयत्नात्तमाराधयितुमर्हसि ॥ १२ ॥
 राजा हि ते प्रभाविता प्राणानां जीवितस्य च ।
 अनुगन्तु मतो देवि न मामर्हसि सर्वथा ॥ १३ ॥
 इत्येवमुक्ता रामेण कौशल्या धर्मदाशिनी ।
 तथेत्युवाच दुःखार्ता रामं संप्रस्थितं वनम् ॥ १४ ॥
 विनिश्चितं तथा रामं विज्ञाय गमनोन्मुखम् ।
 प्रास्थानिकं राममाता कर्तुं समुपचक्रमे ॥ १५ ॥
 सा निगृह्य ततो वाष्पमुपस्पृश्य जलं शुचि ।
 चकार देवी रामस्य ततः स्वस्त्ययनक्रियाम् ॥ १६ ॥
 सुमनोभिश्च गन्धैश्च मनोजैर्बलिभिस्तथा ।
 देवानभ्यर्च्य निधिवत्प्रणम्य च शुभव्रता ॥ १७ ॥
 गन्धमाल्यहविःशेषं रामाय प्रतिपाद्य च ।
 मूर्ध्नि चैनमुपाधाय परिष्वज्य च पीडितम् ॥ १८ ॥
 रक्षोघ्नीमोषधीं पाणौ दक्षिणे च बबन्ध सा ।
 रामस्वस्त्ययनार्थं हि मन्त्रमेनं जजाप च ॥ १९ ॥
 स्वास्ति ते कुरुतां ब्रह्मा शिवो विष्णुः प्रजापतिः ।

स्वस्ति कुर्वन्तु ते साध्या' मरुतश्च महर्षिभिः' ॥ २० ॥
 स्वास्ति धाता विधाता च स्वस्ति पूषा भगोऽर्यमा ।
 वरुणः स्वस्ति राजा च करोतु मनुभिः सह ॥ २१ ॥
 स्वास्ति मित्रः सहादित्यैः स्वस्ति रुद्रा दिशन्तु ते ।
 दिशश्च विदिशश्चैव मासाः संवत्सराः क्षपाः ॥ २२ ॥
 दिनानि च मुहूर्त्ताश्च स्वस्ति पुत्र दिशन्तु ते ।
 यन्मंगलं महेन्द्रस्य सर्वैः देवैः कृतं पुरा ॥ २३ ॥
 धृतं हन्तुं प्रयातस्य वत्स तत्ते ऽस्तु मंगलम् ।
 यन्मंगलं सुपर्णस्य विनताऽकल्पयत्पुरा ॥ २४ ॥^०
 अमृतार्थं प्रयातस्य तत्ते भवतु मंगलम् ।
 वेदाः^१ सांगास्तथा ऽऽदित्या मन्त्रा आथर्वणाश्च ये ।^{२५}
 धृतिः^२ स्मृतिश्च^३ मेधा च पान्तु त्वां पुत्र सर्वशः ।
 सिद्धा देवर्षयः सर्वे तथा ब्रह्मर्षयोऽमलाः ॥ २६ ॥
 नागाः सुपर्णाः पितरो रक्षन्तु त्वां समन्ततः ।
 स्कन्दश्च सुरसेनानीस्तथैव च महेश्वरः ॥ २७ ॥
 सप्तर्षयो नारदश्च सोमः शुक्रो बृहस्पतिः ।
 नक्षत्राणि ग्रहाश्चान्ये तथा नक्षत्रदेवताः ॥ २८ ॥
 ज्योतीषि चैव दिव्यानि पान्तु त्वां पुत्र सर्वतः ।
 महावने विचरतो मुनिवेशधरस्य ते ॥ २९ ॥
 उग्ररूपविषा नागाः सौम्यरूपा भवन्तु ते ।
 राक्षसाश्च पिशाचाश्च यक्षाश्च पिशिताशनाः ॥ ३० ॥

शिवा भवन्तु ते पुत्र व्यालाश्वारण्यवासिनः^{१०} ।
 पतंगा वृश्चिकाः कीटा दंशाश्च मपकैः सह ॥ ३१ ॥
 सरीसृपाश्चोग्रविषाः शिवाय विचरन्तु ते ।
 महागजा वराहाश्च खड्गयः^{११} सिंहास्तथैव च ॥ ३२ ॥
 ऋक्षाश्च महिषाश्चैव शिवास्ते सन्तु पुत्रक ।
 ये चामिषाशिनो रौद्रा नानारूपा मृगद्विजाः ॥ ३३ ॥
 मयाऽभियाचितास्त्वेते शिवाः सन्तु वने चराः ।
 स्वस्ति तेऽस्त्वान्तरिक्षेभ्यः पार्थिवेभ्यश्च पुत्रक ॥ ३४ ॥
 दिव्येभ्यश्चैव भूतेभ्यो वनचारिभ्य एव च ।
 सर्वलोकप्रभुर्ब्रह्मा वृषभांकस्तथैव च ॥ ३५ ॥
 त्रिलोकनायथ वने रक्षन्तु त्वां जनार्दनः ।
 आगमास्ते शिवाः सन्तु सिध्यन्तु च मनोरथाः ॥ ३६ ॥
 सुखेन यातु कालस्ते स्पस्ति प्राप्नुहि राघव ।
 संसिद्धार्थमरोगं त्वामयोध्यां पुनरागतम् ॥ ३७ ॥
 द्रक्ष्यामि त्वां कदा पुत्र जुष्टं राजश्रिया पुनः ।
 इत्युक्त्वा मूर्ध्न्युपाघ्राय परिष्रज्याभिनन्द्य च ॥ ३८ ॥
 पुनरागमनायेह गच्छ पुत्रेत्युवाच तम् ।
 शीघ्रं त्वां पुनरायातं पश्येयं सह लक्ष्मणम् ॥ ३९ ॥
 वनवाससमुत्तीर्णं नवं चन्द्रमिवोदितम् ॥ ४० ॥
 मयाऽर्चिता देवगणाः शिवाद्यो महर्षयश्चैव पितामहो महान् ।
 इतः प्रयातस्य वनं चिराय ते हितैपिणः सन्तु मयाऽभियाचिताः ॥ ४१ ॥

इत्येवमश्रुप्रतिपूर्णलोचना समाप्य च स्वस्त्ययनं कृताञ्जलिः ।
 प्रदक्षिणं चैत्र चकार राघवं पुनः पुनः सा परिर्पाड्य सस्वजे ॥४२॥
 तथा तु देव्या स कृतप्रदक्षिणश्चकार मूर्धा चरणाभिवन्दनम् ।
 स चापि सौमित्रिरमित्रकर्पणो जगाम चामन्य च ता स्वमालयम् ॥४३॥
 इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे कौशल्यास्वस्त्ययनं
 नाम अष्टविंशः सर्गः ॥ २८ ॥

[एकोनत्रिंशः सर्गः]

कौशल्यामभिप्राधैवमनुमान्य च राघवः ।

कृतस्वस्त्ययनो मात्रा प्रतस्थे सहलक्ष्मणः ॥ १ ॥

पिराजयन् राजमार्गं^१ राजपुत्रो^१ जनैर्दृतम् ।

हरन्निज जनार्घस्य हृदयानि जगाम सः ॥ २ ॥

वेदेह्यपि च तत्कालं तत्पराऽनन्यमानसा ।

आशंसन्तो च सा भर्तुर्यौवराज्याभिषेचनम् ॥०३ ॥

देवान् पितृंश्च सत्कृत्य तथा नियतमानसा ।^०

अभिज्ञा राजधर्माणां राजपुत्री धृतव्रता ॥ ४ ॥

प्रद्वारासक्तनयना भर्तृदर्शनलालसा ।

तस्थौ स्ववेश्ममध्ये सा रामागमनकांक्षिणी ॥ ५ ॥

प्रविवेशाथ सहसा रामो वेश्मात्मनस्तदा ।

भक्तिमद्भिर्जनैः कीर्णं हिया किञ्चिदधोमुखः ॥ ६ ॥

ईपदीनमुखः क्षामो मनोदुःखसमन्वितः ।

नातिहृष्टमनाः सीतां प्रविश्याथ ददर्श सः ॥ ७ ॥

तत्परां वेश्ममध्यस्थां विनयावनतां स्थिताम् ।

विनयाचारसंपन्नां प्राणेभ्यो ऽपि प्रियां प्रियाम् ॥ ८ ॥

सा च दृष्ट्वा भर्तारं प्रत्युद्गम्य प्रणम्य च ।

वामपार्श्वे स्थिता देवी रामं दीनमुखं तदा ॥ ९ ॥

अभिर्वीक्ष्य वरारोहा घेपमानेदमब्रवीत् ।

दृष्ट्वान्तर्गतदुःखार्त्तं किमेतदिति विह्वला ॥ १० ॥

किं न चार्हस्पतो योगो युक्तः पुष्येण राघव ।
 प्रोच्यते ब्राह्मणैस्तर्जुर्जयेन त्वमतिदुर्मनाः ॥ ११ ॥
 कस्माच्छतशलाकेन पूर्णेन्दुप्रतिमेन ते ।
 आवृतं वदनं चारु छत्रेण न विराजते ॥ १२ ॥
 चामरव्यजनाभ्यां च चारुपद्मदलेक्षणम् ।
 न वीज्यते ते ऽद्य मुखं कस्मात् पूर्णेन्दुसुप्रभम् ॥ १३ ॥
 यौवराज्याभिषिक्तं च सूतमागधरन्दिनः ।
 वागिमनो न स्तुवन्ति त्वां कस्माद्राघव शंस मे ॥ १४ ॥
 न ते क्षौद्रं च दाधि च ब्राह्मणा वेदपारगाः ।
 मूर्ध्नि राज्याभिषेकार्थं दध्युश्च विधिन्न किम् ॥ १५ ॥
 कस्मात्प्रकृतिमुख्यास्ते श्रेणिमुख्याश्च राघव ।
 किंकरा नाद्य तिष्ठन्ति यौवराज्याभिषेचने ॥ १६ ॥
 त्रिप्रसूता गजवृषाः शुभलक्षणलक्षिताः ।
 पृष्ठतो नानुयान्ति त्वां कस्मादद्याभिषेचने ॥ १७ ॥
 शुभलक्षणसंपन्नः श्वेतश्च तुरगोत्तमः ।
 न ते ऽद्य याति पुरतः कस्माच्छ्रीविजयाग्रहः ॥ १८ ॥
 एवं व्रुणाणां तां रामो जातशंकां च मैथिलीम् ।
 उवाचेदं वचो वीरः सत्त्वगांभीर्यमास्थितः ॥ १९ ॥
 राजर्षिकुलसंभूते धर्मज्ञे सत्यवादिनि ।
 शृणु मैथिलि धीरा त्वं भूत्वा वाक्यमिदं मम ॥ २० ॥
 राज्ञा सत्यप्रतिज्ञेन पित्रा दशरथेन मे ।

कैकेय्यै प्रीतमनसा दत्तौ फिल वरौ पुनः ॥ २१ ॥
 ममोपकृत्य चैवाद्य यावराज्याभिषेचनम् ।
 प्रचोदितेन समये धर्मज्ञेनापवर्जितौ । २२ ॥
 मया वर्षाणि वस्तव्यं चतुर्दश वने प्रिये ।
 भरतेनाप्ययोध्यायां राज्ञा भाव्यमनिन्दिते ॥ २३ ॥
 सो ऽहं त्वामागतो द्रष्टुं प्रस्थितो विजनं वनम् ।
 आपृच्छे धैर्यमालंब्य^४ मामनुज्ञातुमर्हसि ॥ २४ ॥
 श्वश्रू^५ च^६ श्वशुरं चैव वस त्वं समुपाश्रिता ।
 शुश्रूषा परमा भूत्वा यावदागमनं मम ॥ २५ ॥
 मद्दयपाश्रयजं^७ मानमाश्रित्य वरवर्णिनि ।
 भरतस्य समीपे ऽहं न ते स्तुत्यः कथञ्चन ॥ २६ ॥
 ऐश्वर्यमदमत्ता हि न सहन्ते परस्तवम् ।
 तस्मात्त्वया गुणाः स्तुत्या भरतस्याग्रतो न मे ॥ २७ ॥
 अहं हि^८ पितरं सत्यं चिकीर्षुस्तन्नियोगतः ।
 वनमद्यैव यास्यामि कुरु त्वं हृदयं स्थिरम् ॥ २८ ॥
 मयि याते च कल्याणि वनं मुनिजनप्रियम् ।
 व्रतोपवासरतया भवितव्यं त्वया प्रिये ॥ २९ ॥
 कलय उत्थाय देवानां कृत्वा पृजाभिवादनम् ।
 नन्दितव्यो दशरथः पिता मे दैवतं यथा ॥ ३० ॥
 मातरश्चैव मे सर्वा यथाक्रममशेषतः ।

४ कै, ल—०मालंभ्य । म—०मालमय । ५ कै, ल—श्वश्रू । ६ ल—
 ०श्रयणं । ७ ल—च ।

त्वयाऽर्चनीयाः सततं समा हि मम मातरः ॥ ३१ ॥

भ्रातरौ चापि मे सीते प्राणेभ्यो ऽपि प्रियाद्युभौ ।

त्वया भरतशुभ्रौ द्रष्टव्यौ भ्रातृपुत्रवत् ॥ ३२ ॥

न वक्तव्यो ऽप्रियं सीते मत्प्रीत्या भरतस्त्वया ।

स हि राजा गुरुश्चैन देशस्यास्य प्रियश्च मे ॥ ३३ ॥

आराधिता हि राजानो देवताश्चोपसेविताः ।

अनुग्रहैर्योजयन्ते भक्तान् भ्रान्ति विपर्यये ॥ ३४ ॥

औरसानपि पुत्राश्च विहिंसन्त्यपकारिणः ।

अनुगृह्णन्ति च प्रीत्या परानप्युपकारिणः ॥^०३५ ॥

त्वं च तेनेह वर्तव्या वनं हि प्रोपिते मयि ।

तस्मात् साम्नेन लिप्सेथाश्चैलपिण्डभृतिं ततः ॥ ३६ ॥

मम माता च कौशल्या वृद्धा मच्छेककर्षिता ।

मत्प्रियार्थं प्रिये सीते शुश्रूष्याऽनन्यचिन्तया ॥ ३७ ॥

सोऽहं गमिष्यामि महावनं प्रिये त्वयाऽपि^१ वस्तव्यमिहाज्ञया मम ।

यथा व्यलीकं न करोमि कस्यचित् तथा त्वया कार्यमितो गते मयि ।^२

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे सीतानुशासनं

नाम एकोनत्रिंशः सर्गः ॥ २९ ॥

[त्रिंशः सर्गः]

इत्यप्रियमिदं वाक्यं श्रुत्वा मा प्रियभाषिणी ।
 साम्प्रथमिव भर्तारं मीता वचनमब्रवीत् ॥ १ ॥
 'आर्यपुत्र पिता माता भ्रातरो बान्धवाः सुताः ।
 प्रेत्य चैवैह चाश्रन्ति स्वं स्वं कर्मफलं पृथक् ॥ २ ॥
 न पितुः कर्मणा पुत्रः पिता वा पुत्रकर्मणा ।
 सुखमाप्नोति दुःखं वा स्वं स्वं कर्माभिजायते ॥ ३ ॥
 भार्यका पतिभोज्यानि भुंक्ते पतिपरायणा ।
 माऽहं त्वामनुयास्यामि यत्र यत्र गमिष्यामि ॥ ४ ॥
 शपेऽहं ते प्रसादेन जीवितेन च राघव ।
 यथा नेच्छाम्यहं वस्तुं स्वर्गेऽपि रहिता त्वया ॥ ५ ॥
 त्वं मे नाथो गुरुश्चैव गतिर्देवतमेव च ।
 गमिष्यामि त्वया मार्गमेष मे निश्चयः परः ॥ ६ ॥
 यदि त्वमुद्यतो गन्तुं दुर्गं कण्टकितं वनम् ।
 अहं तवाग्रे यास्यामि मृदन्ती' कुशकण्टकम् ॥ ७ ॥
 न पिता नात्मजो नात्मा न माता न सुहृज्जनः ।
 गतिर्भ्रमति सत्स्त्रीणां पतिस्त्वेकः परा गतिः ॥ ८ ॥
 ईर्ष्यादोषं ममुत्सृज्य पीतशपामिवोटकम् ।
 नय मां वीर विस्त्रब्धां पापं मयि न विद्यते ॥ ९ ॥
 हर्म्यप्रामादभवनरिमानेभ्योऽपि मे प्रभो ।
 न्वन्पादाश्रयणं' श्रयः स्वर्गादपि च दुर्लभम् ॥ १० ॥

कुरु प्रसादं गच्छेयं त्वयाऽद्य सहिता वनम् ।
 सिंहकुञ्जरशार्दूलवराहर्क्षनिषेधितम् ॥ ११ ॥
 सुखं वने ऽपि वत्स्यामि तव^०पादव्यपाश्रयात्^० ।
 विहरन्ती त्वया सार्धं यथेन्द्रभवने तथा ॥^०१२ ॥
 शुश्रूषमाणा^०वत्स्यामि^०पादौ ते नियतव्रता ।
 रममाणा त्वया सार्धं काननेषु सुगन्धिषु ॥ १३ ॥
 न ममाभिभवे शक्तो महेन्द्रो ऽपि त्वदाश्रयात् ।
 अतो नार्हासि मां भक्तां निवर्त्तयितुमातुराम् ॥ १४ ॥
 शतक्रतुसमः शौर्ये विष्णुतुल्यपराक्रमः ।
 त्वं हि लोकत्रयस्यास्य समर्थः प्रतिपालने ॥ १५ ॥
 त्वया सह भविष्यामि फलमूलकृताशना ।
 दुर्भरा न भविष्यामि वने ते ऽहं कथञ्चन ॥ १६ ॥
 इच्छामि सरितः शैलान् सरांसि च वनानि च ।
 द्रष्टुं बल्कलसंवीता त्वया नाथेन रक्षिता ॥ १७ ॥
 हंसकारण्डवाकीर्णाः पद्मिन्यो विमलोदकाः ।
 अवगाह्याभिरस्ये ऽहं त्वयैव सह राघव ॥ १८ ॥
 वनोद्देशेषु रम्येषु नानादुसुमगन्धिषु^१ ।
 रन्तुमिच्छामि^१ मुदिता त्वयाऽहं सह राघव ॥ १९ ॥^०
 सहस्राण्यपि वर्षाणि बहूनि सहिता त्वया ।
 समतीतानि मन्ये ऽहं यथैकदिवसं तथा ॥ २० ॥
 स्वर्गे ऽपि वामं रहिता त्वया वीर न कामये ।

नरकश्चापि मे स्वर्गाद्विशिष्टः स्यात्त्रया सह ॥ २१ ॥

पित्रा चाप्यनुशिष्टाऽस्मि मात्रा च स्वजनेन 'च १' ६

विना भर्त्रा न वस्तव्यं त्वयेति रघुनन्दन ॥ २२ ॥

अतः प्रणम्य याचे त्वां गमने कृतनिश्चया । ७

न मामर्हसि सन्देष्टुमिति कर्तव्यतां प्रति ॥ २३ ॥ ८

वनं गमिष्यामि मह त्वयाऽहं न मां नृवीर प्रतिपेद्मर्हसि । ९

वने निवत्स्यामि यथा पितुर्गृहे तथैव पद्भ्यामभिरक्षिता त्वया' ॥ २४ ॥

अनन्यभाजामनुरक्तचेतसां त्वया वियुक्तां मरणाय निश्चिताम् ।

नयस्व मां साधु कुरु प्रियं च मे मया न भारो गुरुतामुपैष्यति ॥ २५ ॥

इति ब्रुवाणामपि धर्मवादिनीं नेतुं न रामो दयितां व्यवस्यति ।

निवर्त्तयिष्यन् हि स तां तदा प्रियामुवाच दोषान् वनवासिनामथ २६ ।

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे सीतावाक्यं

नाम त्रिंशः सर्गः ॥ ३० ॥

[एकात्रिंशः सर्गः]

तां तथा ब्रुवतीं रामः प्रियां भार्यामनुव्रताम् ।
 उवाचेदं बहून् दोषान् वनवासमुदाहरन् ॥ १ ॥
 सीते महाकुलीनाऽसि धर्मज्ञाऽसि यशस्विनि ।
 सत्यं मद्रचनं कार्यं श्रोतुमर्हस्यनिन्दिते ॥ २ ॥
 मनो हि त्वयि निक्षिप्य शरीरेणैव केवलम् ।
 गमिष्याम्यवशः सीते काननं पितुराज्ञया ॥ ३ ॥
 तस्माद् यथा वदामि त्वां तथा त्वं कर्तुमर्हसि ।
 वनवासे हि बहव इमे दोषा महात्यया ॥ ४ ॥
 तच्छ्रुत्वा त्यज्यतां भीरु वनवामकृता मतिः ।
 तवानुकम्पयैवाहं वनदोषान् सुदारुणान् ॥ ५ ॥
 संजानानो ह्यहं न त्वां वनं नेतुं समुत्सहे ।
 वनेषु सन्ति शार्दूला आसन्नजनघातिनः ॥ ६ ॥
 भेतव्यं हि सदा तेभ्यस्तेन दुःखं प्रिये वनम् ।
 तथैव हरयो नागा बहवः सन्ति कानने ॥० ७ ॥
 अतिमात्रं विनिघ्नन्ति तेन दुःखं वनं प्रिये ।
 अत्यम्यु चातिशीतं च तृद्द्युभुक्षे तथैव च ॥ ८ ॥०
 भयानि च बहून्यत्र तेन दुःखं प्रिये वनम् ॥०
 सर्पाः सरीसृपाश्चान्ये वृश्चिकाश्च महाविषाः ॥०९ ॥
 चरन्ति गहने ऽरण्ये तेन दुःखं प्रिये वनम् ॥०
 गिरिकन्टरजातानां नानाऽरण्यनिवासिनाम् ॥ १० ॥

उद्वेजनानां सिंहानां श्रयन्ते निनदा वने ।
 सिंहर्क्षमृगशार्दूलवराहेरगवारणाः ॥ ११ ॥
 प्राणाभिधातिनो घोरास्तथाऽन्या मृगजातयः ।
 पङ्क्त्य[ः] सन्ति वने दुर्गे न गन्तव्यं ततो वनम् ॥ १२ ॥
 तथा कुटिलगा नागा महाविवरशायिनः ।
 दृश्यन्ते चात्र मार्गेषु वृथिकाश्च महाविषाः ॥ १३ ॥
 पतंगा मक्षिकाः कीटा दंशाश्च मशकैः सह ।
 सन्त्यरण्येषु वैदेहि तेन दुःखं महावनम् ॥ १४ ॥
 अगाधाः पङ्क्त्यश्च महानक्रकुलाकुलाः ।
 सरितः सन्त्यरण्यानि नदीकंदरवन्ति च ॥ १५ ॥
 कक्ष्यवृक्षक्षपलता गहनानि शुचिस्मिते ।
 सन्त्यटव्यश्च वैदेहि तस्माद्दुःखतरं वनम् ॥ १६ ॥
 सुप्यते तृणशय्यासु पर्णशय्यासु चात्रले ।
 स्वयंकृतासु दुःखासु भूतले निर्जने वने ॥ १७ ॥
 आहाराश्चैव कर्तव्या वदरामलकेंगुदैः ।
 तथा श्यामाकनीवारपियालकडुतिन्दुकैः ॥ १८ ॥
 वन्येष्वलम्बमानेषु वने मूलफलेषु वै ।
 बहून्यहानि वस्तव्यं निराहारैर्वनप्रियैः ॥ १९ ॥
 बल्कलाजिनपर्णानि वसितव्यानि कानने ।
 वनेषु भवितव्यं च दीर्घश्मश्रुजटाधरैः ॥ २० ॥
 दीर्घरोमधरैश्चैव मलपङ्क्तसमाचितैः ।

वातातपविशुष्काङ्गैः प्रिये दुःखमतो वनम् ॥ २१ ॥

स्थाने वीरासनं सेव्यमृपचाराश्च मैथिलि ।

कर्तव्या दृश्वराश्चैव नियता वनवासिभिः ॥ २२ ॥

ग्रीष्मे पञ्चतपोभिश्च वर्षास्त्रभ्रावकाशकैः* ।

जलवासैश्च शिशिरे भाव्यं वनचरैः, प्रिये ॥ २३ ॥

त्वगस्थिमात्रशेषेण तपसा कर्षितेन च ।

मया ते तत्र का प्रीतिः का, रतिर्वा भविष्यति ॥ २४ ॥

*मां वा समनुगच्छन्त्वा नियमव्रतशीलया ।

*त्वयापि हि वने तत्र, का रतिर्मे भविष्यति ॥ २५ ॥

वातातपविशीर्णाङ्गी, तपोनियमकर्षिताम् ।

कथं द्रक्ष्याम्यरण्ये त्वां भृशं हि दायिताऽमि मे ॥ २६ ॥

तदलं ते वनं गन्तुं वनचर्या न ते क्षमा ।

विमृपन् वनदोषं हि पश्यामि दयिते वनम् ॥ २७ ॥

तत्र स्थास्यापि मे नित्यं हृदये त्वं निवत्स्यसि ।

इहस्थाऽपि न दूरे त्वं प्रिया हि भवती* मम ॥ २८ ॥

एवं वने नेतुमनिश्चितो ऽमाबुक्त्वा प्रियां तां पिरराम रामः ।

अथोत्तरं सा सुदती सुदीना सीता पुनर्वाक्यमिदं जगाद ॥ २९ ॥

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे सीतावनटोपदशनं

नाम एकत्रिंशः सर्गः ॥ ३१ ॥

२ कै—वर्षेण्य० । ल—वर्षेण्य० । * कै, ल—नास्ति । ३ कै—भवतो ।

पश्चात् "भवती" इति एतम् । ल—भवतो ।

[द्वात्रिंशः सर्गः]

अथ तद्वचनं श्रुत्वा सीता रामस्य दुःखिता ।
 प्रसक्ताश्रुमुखी वाक्यं भर्तारमिदमब्रवीत् ॥ १ ॥
 वनवासे त्वया दोषा य एते परिकीर्तिताः ।
 तानार्यपुत्र मन्ये ऽहं त्वद्भक्त्या सर्वशो गुणान् ॥ २ ॥
 त्वद्बाहुगुप्तां न च मामपि देवः शतक्रतुः ।
 शक्तो ऽभिभवितुं लोके कुतो ऽन्ये वनचारिणः ॥ ३ ॥
 सिंहव्याघ्रवराहादीनुक्तवानसि यान्वने ।
 दुरासदान्न मे तेभ्यो भयं किञ्चन^१ विद्यते ॥ ४ ॥
 त्वद्बाहुवलगुप्तायाः कुतो मे ऽनुचलं^२ भवेत् ।
 विपत्तिरपि वा तत्र श्रेयो मे नेह जीवितम् ॥ ५ ॥
 त्वया वा सह गन्तव्यं त्वदनुज्ञातया वनम् ।
 त्वत्परित्यक्ता वापि त्यक्तव्यं जीवितं मया ॥ ६ ॥
 नारी भर्तृपरित्यक्ता जीवन्त्यपि सुदुःखिता ।
 मृता भवत्यार्यपुत्र तस्माच्छ्रेयो ऽद्य मे मृतम् ॥ ७ ॥
 अपि चैवाहमादिष्टा लक्षणैर्द्विजातिभिः ।
 वने ते विजने सीते वस्तव्यमिति राघव ॥ ८ ॥
 तेषां लक्षणिनां श्रुत्वा वचस्तत्सत्यवादिनाम् ।
 वनवासस्पृहा नित्यं हृदि मे परिवर्त्तते ॥ ९ ॥
 स चेदवश्यं प्राप्तव्यः सिद्धादेशस्तथा मया ।
 सह त्वया भवतु मे न हीच्छामि तमन्यथा ॥ १० ॥

प्राप्तादेशा भविष्यामि गत्वाऽहं सहिता त्वया ।
 कालश्चायं समुत्पन्नः सत्यास्तं सन्तु वै द्विजाः ॥ ११ ॥
 वनवासे च जानामि दुःखानि विविधान्यहम् ।
 प्राप्यन्ते यानि मुनिभिर्वनवासे यतात्मभिः ॥ १२ ॥
 कन्ययैव मया सर्वे वनदोषाः श्रुताः पुरा ।
 भिक्षुक्याः साधुवृत्तायाः कथयन्त्याः पितुर्गृहे ॥ १३ ॥
 प्रसादये त्वां शिरसा नय मामपि राघव ।
 वनवासो हि सुभृशं कांक्षितो मे त्वया सह ॥ १४ ॥
 कृतकृत्यो ऽसि भद्रं ते गमनं प्रति राघव ।
 पुण्या हि वनचर्ययं त्वया मे सह कांक्षिता ॥ १५ ॥
 पूताऽनया भविष्यामि पुण्यया वनचर्यया ।
 विहरन्ती त्वया सार्धं हृदयोत्सवभूतया ॥ १६ ॥
 स्पृहणीया भविष्यामि लोके ऽमुष्मिन्निहव च ।
 भर्तारमनुगच्छन्ती भर्ता स्त्रीणां हि दैवतम् ॥ १७ ॥
 त्वयैव सह संयोगः प्रेत्यभावे ऽपि मे भवेत् ।
 इति चानुगमिष्यामि त्वामहं कृतनिश्चया ॥ १८ ॥
 मया कथयतां पूर्वं श्रुतं प्रत्यक्षदर्शिनाम् ।
 ब्राह्मणानां निमर्गेण धर्मनिश्चयवादिनाम् ॥ १९ ॥
 भर्तारं किल या नारी छायेवानुगता सदा ।
 अनुगच्छति गच्छन्तं तिष्ठन्तमनुतिष्ठति ॥ २० ॥
 तद्भावनिरता नित्यं तत्संयोगपरायणा ।
 तमेव भूयो भर्तारं सा प्रेत्याप्यनुगच्छति ॥ २१ ॥

अनुरक्तां प्रियां भार्यां सुव्रतां पतिदेवताम् ।

न त्वं रोचयसे नेतुं मामितः केन हेतुना ॥ २२ ॥

तुल्यशीलव्रताचारां छायामनुगतामिव ।

नेतुमर्हसि मां वीर वनं गुनिजनप्रियम् । २३ ॥

यदि मां निश्चितां गच्छन्न नेतुं त्वमिहेच्छसि ।

सत्येनालभ्य ते पादां न भविष्याम्यसंशयम् ॥ २४ ॥

इत्युक्त्वा प्ररुरोदाथ मैथिली शोककर्षिता ।

शोकोष्णरभिवर्षन्ती दुःखजैरश्रुविन्दुभिः ॥ २५ ॥

पीनोन्नतावपतितौ स्नपयन्ती^१ पयोधरां ।

दुःखामर्षपरीताङ्गी सुस्वरं कलभापिणी ॥ २६ ॥

एवमार्त्तामपि तु तां विलपन्तीं मुदुःखिताम् ।

रामः प्रियामनुगतां नेतुं नैव व्यवस्यति ॥ २७ ॥

दध्यौ चाधोमुखः किञ्चिद्विप्लुतामभिवीक्ष्य ताम् ।

वनवासगतान् दोषान् बहुधाऽपि विचारयन् ॥ २८ ॥

विमनसमभिवीक्ष्य चिन्तयन्तं जनकसुता पतिमग्रतीतरूपम् ।

भृशतरमभिरोपताम्रनेत्रा वचनमुवाच पुनर्निगृह्य वाप्यम् ॥ २९ ॥

इत्याप्यं रामायणे ऽयोध्याकाण्डे सीतानुनयो

नाम द्वाविंशः सर्गः ॥ ३२ ॥

[त्रयस्त्रिंशः सर्गः]

रामस्य तां मतिं बुद्ध्वा मैथिली कृतनिश्चया ।

रोपात्प्रस्फुरमाणौष्ठौ पुनर्वचनमब्रवीत् ॥ १ ॥

उन्मत्तेवातिपश्यन्ती भर्त्सारं विपुलेक्षणा ।

रोपानेशात् क्षिपन्तीव प्रणयादभिमानिनी ॥ २ ॥

कृतार्थं मन्यते मूढः स आत्मानं पिता मम ।

रामं जामातरं लब्ध्वा क्लीपं पुरुषमानिनम् ॥ ३ ॥

अनृतं वत लोको ऽयमज्ञानादनुपश्यति ।

तेजस्वी राम एवैकः सूर्यो वा द्युतिमानिति ॥ ४ ॥

किं वा पश्यन् विपण्णस्त्वं कुतो वा भयमस्ति ते ।

त्यक्तुमिच्छसि मां येन प्रियां नान्यपरायणाम् ॥ ५ ॥

द्युमत्सेनसुतं धीरं सत्यवन्तमनुव्रताम् ।

सावित्रीमिव मां निद्धि भर्त्सुर्गतिपरायणाम् ॥ ६ ॥

त्वत्तो ऽन्यां हि गतिं गन्तुं मनसा ऽपि न कामये ।

त्वया नाथ परित्यक्ता नेच्छामि भरताद् भृतिम् ॥ ७ ॥

कौमारीं दयितां भार्यां स्वयमाहृत्य मां कथम् ।

शैलपीमित्र योपार्थमन्यस्मै दातुमिच्छसि ॥ ८ ॥

न ते ऽहमपराध्यामि कर्मणा मनसा ऽपि वा ।

वाचा वा स कथं मां त्वं त्यक्तुमिच्छस्यकारणात् ॥ ९ ॥

यदि वाप्यपराधस्ते मया कश्चित्पुरा कृतः ।

अज्ञानाद्यदि वा ज्ञानात् क्षामये त्वां प्रसीद मे ॥ १० ॥

आर्यपुत्र परित्यज्य न मां त्वं गन्तुमर्हसि' ।
 वासः स मे स्वर्गभूतस्त्वया सह भविष्यति ॥ ११ ॥
 पृष्ठतस्तव गच्छन्त्या विहारे शयने ऽपि वा ।
 न भविष्यति मे नाथ मार्गे ऽप्यध्वपरिश्रमः ॥ १२ ॥
 कुशकाशशरेपीकास्तथैव द्रुमकण्टकाः ।
 मार्गे मम भविष्यन्ति स्पर्शे' कौशेयसन्निभाः ॥ १३ ॥
 शय्याश्च वनवासे मे वन्यपर्णतृणास्तृताः ।
 रांक्वाजिनसंस्पर्शा भविष्यन्ति मह त्वया ॥ १४ ॥
 महाघातममुद्धृतं यन्मामवकारिष्यति ।
 रजो रमण तन्मे ऽङ्गे परार्ध्यमिव चन्दनम् ॥ १५ ॥
 शाद्वलेषु यदा शेष्ये विविक्तेषु च राघव ।
 कुशास्तरणतल्पेषु किं मे सुखतरं ततः ॥ १६ ॥
 यन्मे मूलफलं वन्यं वने दास्यसि राघव ।
 स्वादु वा यदि वाऽस्वादु तद्भवत्यमृतोपमम् ॥ १७ ॥
 न बन्धूनां स्मरिष्यामि न मातुर्न पितुर्वने ।
 वसन्ती भवता सार्धं स्वादुमूलफलाशना ॥ १८ ॥
 न' मत्कृतं व्यलीकं ते तत्र किञ्चिद् भविष्यति ।
 भविष्यामि न चैवाहं तत्र भारस्तवानथ ॥ १९ ॥
 यस्त्वया सह स स्वर्गो नरकश्च त्वया विना ।
 कुरु मे दयितं कामं गच्छेयं सहिता त्वया ॥ २० ॥
 त्वया त्यक्ता हि नेच्छामि जीवितुं रघुनन्दन ।

त्वद्वियोगभयोद्विग्नां त्रायस्व शरणागताम् ॥ २१ ॥
 अथ नेच्छसि चेत्नेतुं मामेवं समनुव्रताम् ।
 विपमद्यैव भोक्ष्ये ऽहं पश्यतस्ते नृपात्मज ॥ २२ ॥
 इदं हि दुःखं संसोढुं मुहूर्त्तमपि नोत्सहे ।
 किं पुनर्दशवर्षाणि त्रीणि चैकं च राघव ॥ २३ ॥
 इति शोकाग्निसन्तप्ता विलप्य जनकात्मजा ।
 पादयो निपपाताथ भर्त्तुर्गमनलालमा ॥ २४ ॥
 उक्त्वा वाक्यं सकरुणं त्रायस्व नृप मामिति ।
 रुरोद पतिता तत्र मुखरं मृदुभाषिणी ॥ २५ ॥
 स तस्याः करुणैर्वाक्यैर्हृदि क्षत इवातुरः ।
 मुमोच वाप्यं शोकोष्णं वाप्यसंरुद्धलोचनः ॥ २६ ॥
 तस्य शोकाश्रुपूर्णाभ्यां प्रियाकारुण्यजं तदा ।
 सुस्राव वारि नेत्राभ्यां पङ्कजाभ्यामिवोदकम् ॥ २७ ॥
 स तामुत्थाप्य शनकैः पादयोः पतितां प्रियाम् ।
 उवाच वचनं रामो मधुरं परिसान्त्वयन् ॥ २८ ॥
 न कामये स्वर्गमपि त्वदृते ऽहमपि प्रिये ।
 न च मे ऽस्ति भयं किञ्चिदपि साक्षात् स्वयंभुवः ॥ २९ ॥
 धर्मं तु वर्त्तितं भीरु सद्भिराचरितं जनैः ।
 नातिवर्तितुमिच्छामि वेलामिव महोदधिः ॥ ३० ॥
 तथा गुरुनियोगं च परं धर्मं विदुर्वुधाः ।
 तं चातिक्रामितुं नालमहं शक्तः कदाचन ॥ ३१ ॥
 म यथैवानुशिष्टो ऽस्मि पित्राऽऽहूय महात्मना ।

तथा वर्तितुमिच्छामि स हि धर्मः सनातनः ॥ ३२ ॥

तथा तव च जिज्ञासु निश्चयं शुभनिश्चये ।

उक्तवान्न नयिष्ये ऽहमिति शक्तो ऽपि रक्षितुम् ॥ ३३ ॥

यदर्थं चैव सीते त्वां नेच्छामि शुभदर्शने ।

वनवासभवेर्दुःखैर्योक्तुं त्वां सुखभागिनीम् ॥ ३४ ॥

कृतनिश्चया महाभागा वनाय मदपेक्षया ।

न त्यक्तुं त्वं मया शक्या कीर्तिरात्मवता यथा ॥ ३५ ॥

एहि गच्छ मया मार्धं यथा ते रुचितं प्रिये ।

इच्छामि हि प्रियं कर्तुं नित्यं ते ऽहमनिन्दिते ॥ ३६ ॥

ब्राह्मणेभ्यस्तु साधुभ्यो वामांस्याभरणानि च ।

मांश्रितेभ्यस्तथाऽन्येभ्यो देहि दानानि जानकि ॥ ३७ ॥

गुरुं चामन्वय शुभे ततो व्रज मया सह ।

इति भर्त्राऽभ्यनुज्ञाता मत्वा गमनमान्मनः ॥ ३८ ॥

क्षिप्रमेव च सा देवी दातुमेवोपचक्रमे ।

ततः प्रहृष्टा परिपूर्णमानसा यशस्विनी भर्तुरवेक्ष्य मानसम् ।

प्रचक्रमे दातुमथो मनीषिणां धनानि वासांसि च भूषणानि च ॥ ३९ ॥

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे सीताऽभिप्राय-

जिज्ञासा नाम त्रयस्त्रिंशः सर्गः ॥ ३३ ॥

[चतुस्त्रिंशः सर्गः]

इत्युक्त्वा राघवः सीतां समाह्वय च लक्ष्मणम् ।
 उवाचेदं वचः श्रीमानवेक्ष्य प्रश्रयानतम् ॥ १ ॥
 प्रियः प्राणसमो भ्राता सहायश्च सखा च मे ।
 तस्मात्प्रणयतो ऽहं त्वां यद्ब्रवीमि कुरुष्व तत् ॥ २ ॥
 वनं त्वया न गन्तव्यं मया सह कथञ्चन ।
 इहैव हि महाभारो^१ वोढव्यो भवताऽनघ ॥ ३ ॥
 इति रामवचः श्रुत्वा लक्ष्मणो दीनमानसः ।
 वाष्पपर्याकुलमुखः शोकं सोढुमशक्नुवत् ॥ ४ ॥
 प्रणम्य चरणौ भ्रातुः परिरम्य च पीडितम् ।
 सीतायाश्च महाप्राज्ञस्ततो राघवमब्रवीत् ॥ ५ ॥
 अनुज्ञातो ऽस्मि भवता पूर्वमेव वनं प्रति ।
 वनं गन्तुमितः कस्मान्निवर्तयासि मां पुनः ॥ ६ ॥
 न निवर्तयितव्यो ऽहं जीवन्तं मां यदीच्छसि ।
 शरणं त्वां प्रपन्नो ऽस्मि प्रसीदार्य क्षमस्व माम् ॥ ७ ॥
 इति ब्रुवन्तं तं रामस्ततो लक्ष्मणमब्रवीत् ।
 प्रह्वं नतेन शिरसा वेपमानं कृताञ्जलिम् ॥ ८ ॥
 गते त्वयि मया सार्धं यथा ते ऽत्युचितं^२ प्रियम् ।
 को मरिष्यति कौशल्यां सुमित्रां च यशस्विनीम् ॥ ९ ॥
 अभिवर्षति कामैर्यो मातरौ नौ नराधिपः ।
 स कामवशगो व्यक्तं न द्रक्ष्यति यथा पुरा ॥ १० ॥
 म कामवशमापन्नो महाराजः पिताऽऽवयोः ।

भरते राज्यमासज्य कैकेय्या वशमागतः ॥ ११ ॥
 राज्यैश्वर्यमदान्धा हि कदाचिदपि कैकयी ।
 असाधु प्रतिपद्येत सपत्नीनामचेतना ॥ १२ ॥
 ते मातराविहस्थेन समाश्वास्य विशेषतः ।
 परिपाल्ये च सौमित्रे यावदागमनं मम ॥ १३ ॥
 यथैवाहं तथैव त्वं तयोरिह भविष्यसि ।
 बंधुरर्त्तायनं चैव दुःखेभ्यश्चैव रक्षिता ॥ १४ ॥
 इति रामप्रचः श्रुत्वा लक्ष्मणः श्रीमतां वरः ।
 कृताञ्जलिरिदं भूयो रामं वचनमत्ररीत् ॥ १५ ॥
 मद्विधानां सहस्राणि कांशल्यया त्रिभृयाद्विमो ।
 यस्याः सहस्रं ग्रामाणां निसृष्टमुपजीवनम् ॥ १६ ॥
 त्वदपेक्षश्च भरतः पूजयिष्यत्यसंशयम् ।
 कांशल्ययां च सुमित्रां च परमं यत्नमास्थितः ॥ १७ ॥
 नय मामनपेक्षस्त्वं वनवासकृतोद्यमम् ।
 शिष्यः श्रेष्ठः सहायश्च भविष्यामि वने तत्र ॥ १८ ॥
 सानित्रपिटके गृह्य सङ्गपाणिधनुर्धरः ।
 अग्रतस्ते गमिष्यामि पन्थानं परिशोधयन् ॥ १९ ॥
 वन्यानि चाहरिष्यामि पुष्पमूलफलानि च ।
 शय्योपकरणार्थं च द्रुमपणतृणानि च ॥ २० ॥
 त्वमार्य सह वैदेह्या वनवासे ऽभिरंस्थसे ।
 रक्षतस्त्रां गमिष्यन्ति जाग्रतो मम रात्रयः ॥ २१ ॥
 आर्य शिष्यो ऽस्मि दासो ऽस्मि भक्तो ऽस्म्यनुगतस्तथा ।
 तत्राहं सर्वदा साधो प्रसीद नय मामपि ॥ २२ ॥

वाक्येनानेन तु प्रीतो रामो लक्ष्मणमब्रवीत् ।
 आगच्छ व्रज सौमित्रे आपृच्छस्व सुहृज्जनम् ॥ २३ ॥
 ये च राज्ञे ददौ दिव्ये महात्मा वरुणः स्वयम् ।
 धनुषी ते गृहाण त्वमक्षय्यानिपुर्वींश्च तान् ॥ २४ ॥
 अभेद्ये च तनुत्राणे गृहाण लघुनी शुभे ।
 खड्गौ च विमलाकाशसदृशौ विमलच्छदौ ॥ २५ ॥
 यच्चाचार्यगृहे नित्यं धनुस्तिष्ठति मे ऽर्चितम् ।
 तदानयाथ गत्वा त्वं त्वरावानिह लक्ष्मण ॥ २५ ॥
 इत्युक्तो लक्ष्मणः शीघ्रं स्वमापृच्छथ सुहृज्जनम् ।
 आचार्यकुलमागम्य ते जग्राहायुधोत्तमे ॥ २७ ॥
 स ते आदाय धनुषी स खड्गे शुचिनन्धने ।
 दर्शयामास रामाय निर्वबन्ध च यत्नवान् ॥ २८ ॥
 तमुवाचागत रामो लक्ष्मणं प्रियदर्शनम् ।
 काले त्वमागतः शीघ्रं काक्षिते मम लक्ष्मण ॥ २९ ॥
 दातुमिच्छामि विप्रेभ्यो धनरत्नार्थसञ्चयम् ।
 बहुभृत्यानल्पधनास्तस्मादानय मे द्विजान् ॥ ३१ ॥
 ये चास्मत्सुहृदो भक्ता निवसन्तीह लक्ष्मण ।
 तेषां चापि प्रदास्यामि सर्वेषामुपजीवनम् ॥ ३१ ॥
 वसिष्ठपुत्रं च सुयज्ञमार्यं तमानयाशु प्रवरं द्विजानाम् ।
 प्रियं सखायं मम धीर्यवन्तं तं तर्पयिष्ये प्रथमं प्रदानैः ॥ ३२ ॥
 इत्यापि रामायणे ऽयोध्याकाण्डे लक्ष्मणसन्देशो
 नाम चतुस्त्रिंशः सर्गः ॥ ३४ ॥

[पञ्चत्रिंशः सर्गः]

भ्रातुः शासनमाज्ञाय लक्ष्मणस्त्वरितः स्वयम् ।
 सुयज्ञगृहमागम्य प्रविश्य च विनीतवत् ॥ १ ॥
 भग्न्यागारमभ्येत्य सुयज्ञं लक्ष्मणो ऽब्रवीत् ।
 हे सुयज्ञ द्विजश्रेष्ठ सखा ते द्रष्टुमिच्छति ॥ २ ॥
 श्रुत्वा तल्लक्ष्मणवचः सुयज्ञो ऽतित्वरान्वितः ।
 प्रविवेशाम्बुपागम्य रामवेश्म सलक्ष्मणः ॥ ३ ॥
 तमागतं वेदविदं सीतया सह राघवः ।
 अभ्युत्थायार्चयामास प्रदानैरभिकांक्षितैः ॥ ४ ॥
 कुण्डलांगदकेयूरमुक्ताहारविभूषणैः ।
 सुमहाहैश्च वासोभिर्धनधान्यैश्च पुष्कलैः ॥ ५ ॥
 तमुवाच ततो रामः सीतयाभिप्रचोदितः ।
 सरायं दायितं काले सुयज्ञं वेदपारगम् ॥ ६ ॥
 हारं च ते हेमसूत्रं शुभान्याभरणानि च ।
 वासांमि चैव दिव्यानि ब्राह्मणैतान् प्रयच्छति ॥ ७ ॥
 रांकयास्तरणं चैव पर्यकं सर्वकाञ्चनम् ।
 सपादपीठं भार्यायै सखे सीता ददाति च ॥ ८ ॥
 नागं शत्रुंजयं नाम यं मह्य मातुलो ददौ ।
 तं ते ददाम्यलंकृत्य सहस्रेण गवां सह ॥ ९ ॥
 प्रतिगृह्य च तत्सर्वं सुयज्ञो मन्त्राविद्धनम् ।
 रामाय सह वैदेह्या संप्रायुंक्ताशिपः शुभाः ॥ १० ॥
 सुयज्ञं संविभज्यैवमन्यांश्चैव हितान् द्विजान् ।

अन्येभ्यो ऽपि ददौ रामः सुहृद्भ्यःकामतो धनम् ॥ ११ ॥
 भृत्यग्रेष्यजनेभ्यश्च विभवस्यानुरूपतः ।
 शिल्पिभ्यश्चोपकारिभ्यो ददौ रामो महायशाः ॥ १२ ॥
 ततो भ्रातरमाभाष्य लक्ष्मणं राघवो ऽब्रवीत् ।
 ददस्व त्वमपि क्षिप्रं द्विजाग्रेभ्यो ऽर्हतो धनम् ॥ १३ ॥
 सुहृद्भ्यश्चात्मना कामानीप्सितानपवर्जय ।
 गोभिर्धनैश्च धान्यैश्च भोजनाच्छादनेन च ॥ १४ ॥
 इष्टांस्तर्पय सौमित्रे ब्राह्मणान् वेदपारगान् ।
 सुहृदथार्हतः सर्वान् कामैः संविभजेप्सितैः ॥ १५ ॥
 अगस्त्यं कौशिकं चैव गार्ग्यं शाण्डिल्यमेव च ।
 समाहूयाभिवर्ष त्वं धनरत्नौघवृष्टिभिः ॥ १६ ॥
 *सुहृन्मां परया भक्त्या य उपास्ते सदैव सः ।
 *आचार्यस्नैत्तिरोयाणां तमानय यतव्रतम् ॥ १७ ॥
 *तस्मै दानानि दास्यामि रत्नानि विविधानि च ।
 *रुचिराणि च वासांसि यावन्मत्तो ऽभिकांक्षति ॥ १८ ॥
 घृतं चित्ररथं नाम सखायं मे त्वमानय ।
 तस्मै दास्यामि विभवान् यथार्हानभिकांक्षितान् ॥ १९ ॥
 ये च मे वन्दिनः सन्ति ये चान्ये परिचारिकाः ।
 सर्वास्तर्पय कामैस्तान् समाहूयाशु लक्ष्मण ॥ २० ॥
 चैलप्रक्षालका ये च ये च नः श्मश्रुयोजकाः ।
 अनुलेपकाः सेवकाश्च हासकाः स्नापकाश्च ये ॥ २१ ॥

संवाहकाः सलिलदाः पुरतोवाचकाश्च ये ।^०
 तेषां निष्कसहस्रं त्वं घृत्यर्थमुपकल्पय ॥ २२ ॥
 भोजनार्थं दशशतं शालीनां पृथगुत्सृज ।
 व्यञ्जनार्थं च सौमित्रे गोसहस्रमुपाकुरु ॥ २३ ॥
 मल्लानां योधकानां च रथोद्धर्त्तनशालिनाम् ।
 क्रीडकानां च निष्कानां सहस्रमपवर्जय ॥ २४ ॥
 कौशल्यां प्रेष्यवर्गश्च यः शुश्रूषति लक्ष्मण ।
 सुमित्रां चैव तस्मै त्वं सहस्रे द्वे समुत्सृज ॥ २५ ॥
 भिक्षाभुजो द्विजा ये च कौशल्यां मातरं मम ।
 पर्युपासन्ति ये तेभ्यो द्वे सहस्रे समुत्सृज ॥ २६ ॥
 तथैव च सुमित्रां ये भिक्षवः समुपासते ।
 तेभ्यश्चैव द्विजातिभ्यः सहस्रमपवर्जय ॥ २७ ॥
 न सीदति यथा कश्चिन्मयि विप्रोपिते वनम् ।
 अनुजीविजनः सौम्य तथा त्वं कर्तुमर्हसि ॥ २८ ॥
 न मे ऽस्त्यदेयं माधुभ्यो मन्त्रविद्भयो हि लक्ष्मण ।
 यो मे ऽस्ति विभवः कश्चित्तं विश्राणय सर्वशः ॥ २९ ॥
 यथोद्दिष्टं ददौ तेभ्यः ऋषित्कर्मजीवितम् ।
 संविभज्य ततो रामः सर्वानाहूय सो ऽब्रवीत् ॥ ३० ॥
 कार्या भवद्भिर्नोत्कण्ठा रक्ष्यं चेदं गृहं मम ।
 लक्ष्मणस्य च यत्नेन यावदागमनं मम ॥३१ ॥
 अनुजीविजनं राम इत्युक्त्वा शोककर्षितम् ।

धनाभ्यक्षानुवाचेदं समाहूय पुनर्वचः ॥ ३२ ॥

यदस्ति वित्तशेषं मे सर्वमेवावशेषतः ।

आनयध्वं प्रदास्यामि तदप्यहमशेषतः ॥ ०३३ ॥

इत्युक्ताः समुपाजहूर्धनशेषमशेषतः ।

रामाज्ञया धनाध्यक्षाः समुपाटाय सर्वतः ॥ ३४ ॥

तद्धनं विकलानाथकृपणेभ्यश्च राघवः ।

दरिद्रेभ्यश्च साधुभ्यो ददौ सर्वमशेषतः । ३५ ॥

अथ वृद्धो दरिद्रश्च बहुभृत्यजनो द्विजः ।

उपायाद्भिक्षितुं रामं त्रिजटो नाम विश्रुतः ॥ ३६ ॥

स रामभजनं प्राप्य प्रविश्याथानिवारितः ।

उवाच राममासाद्य वेपमान इदं वचः ॥ ३७ ॥

दरिद्रो ऽस्म्यसमर्थश्च बालपुत्रश्च राघव ।

मामाप्यर्हसि वित्तेन संविभक्तुं यथार्हतः ॥ ३८ ॥

तमुवाच ततो रामो वृद्धं परिहसन्निव ।

विप्रमाङ्गिरसं दीनं वित्तार्थिनमुपागतम् ॥ ३९ ॥

गवां सहस्रमस्त्येव यदविश्राणितं मया ।

ततो गृहाण यावत्त्वं स्वयं शक्नोषि रक्षितुम् ॥ ४० ॥

इति रामवचः श्रुत्वा त्रिजटो रामसन्निधौ ।

स ह्यात्मनो दृढां कक्ष्यां बद्ध्वा संभ्रान्तमानसः ॥ ४१ ॥

दण्डमुद्यम्य सहसा प्रतस्थे गोधनं प्रति ।

वृद्धभावाद्द्वेषमानो गाः स कालयितुं स्वयम् ॥ ४२ ॥

तमुवाच ततो रामस्त्रिजटं द्विजसत्तमम् ।

परिहासः कृतो ब्रह्मन् निवर्त्तस्व किमिच्छसि ।

एतच्चैव सहस्रं ते गवां गोपैरहं सह ॥ ४४ ॥

धनं दास्यामि भूयश्च यावदिच्छसि शाधि माम् ।

इत्युक्तस्त्रिजटो वने यजेयमिति राघव ॥ ४५ ॥

तसौ रामो ददौ द्रव्यं प्रभूतं यज्ञसिद्धये ।

स तं सभार्यस्त्रिजटो यथेप्सितं प्रतिग्रहं प्राप्य समृद्धमानसः ।

प्रशस्य रामं मुदितो जगाम ह प्रजासु रामस्य यशः प्रकाशयन् ॥४६॥

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे वित्तविश्राणनं

नाम पंचत्रिंशः सर्गः ।। ३५ ॥

[पदत्रिंशः सर्गः]

दद्यात्तु सह वैदेह्या ब्राह्मणेभ्यो धनानि सः ।
 जगाम पितरं द्रष्टुं सीतया सह राघवः ॥ १ ॥
 आयुधानि गृहीत्वाऽसौ सर्वोपकरणानि च ।
 लक्षणेन सह भ्रात्रा तस्मान्निष्क्रम्य वैश्वानरः ॥ २ ॥
 तौ गृहीताऽऽयुधौ वीरौ भ्रातरौ रामलक्ष्मणौ ।
 राजमार्गं समेयातां सीतयाऽनुगतां तदा ॥ ३ ॥
 ततश्च वैश्वानराणां हर्म्याणि च समन्ततः ।
 ददृशुस्तौ तदारुह्य पौरजानपदास्त्रियः ॥ ४ ॥
 अन्तरं राजमार्गं च नासोज्जनपटावृते ।
 तदातुरास्ते प्रस्थाने रामस्यामिततेजसः ॥ ५ ॥
 पदार्तिं त समयात्त सभार्यं सहलक्ष्मणम् ।
 ऊचुर्दृष्ट्वा बहुविधा वाचो दुःखसमन्विताः ॥ ६ ॥
 अनुप्रयाति यं यान्त चतुरङ्गं महद्बलम् ।
 तमिमं सीतया सार्धमनुगच्छति लक्ष्मणः ॥ ७ ॥
 सुरैश्चर्यरसज्ञोऽपि भक्तिमानतिवीर्यवान् ।
 अनृतं पितरं कर्तुं धर्मात्मा नायामिच्छति ॥ ८ ॥
 या न शक्या पुरा द्रष्टुं देवैराकाशगैरपि ।
 सीतां तामद्य पश्यन्ति राजमार्गे पृथग्जनाः ॥ ९ ॥
 सहजेनांगरागेण भूपितां वरवर्णिनीम् ।
 विवर्णतां नापिष्यन्ति सीतां शीतोष्णवायवः ॥ १० ॥

नूनं दशरथो ऽन्येन भूतेनाविष्टचेतनः ।
 यथा विवासेयेदद्य प्रियं पुत्रमकारणम् ॥० ११ ॥
 यदि हि स्यादनाविष्टः सत्त्वेनान्येन केनचित् ।^०
 कथं विवामयेदेनमकस्माद्गुणसागरम् ॥० १२ ॥
 को तार्यो निर्गुणमपि त्यजेत्पुत्रमचेतनः ।^०
 किमु यस्य गुणः कृत्स्नलोकोऽयमनुरञ्जितः ॥ १३ ॥
 आनृशंस्यं क्षमा शीलं श्रुतं सत्यं पराक्रमः ।
 शोभयन्ति गुणा राममेते सुप्रस्थिता भुवि ॥ १४ ॥
 विवासेनाद्य' तेनास्य' दुःखितोऽद्य महाजनः ।
 औदकानीव सत्त्वानि सलिलस्य परिक्षयात् ॥ १५ ॥
 लोकनाथस्य रामस्य पीडया पीडितं जगत् ।
 अपर्वणीव भोमस्य राष्ट्रग्रहनिपीडया ॥ १६ ॥
 परिभोगप्रसादानां परित्राणमुखस्य च ।
 तथाऽभयप्रदानस्य दाता गच्छति नो वनम् । १७ ॥
 माधुलक्ष्मणवत्सर्वे त्यक्तभोगपरिग्रहाः ।
 राममेवानुगच्छामः किं नो दारिर्धनेन वा ॥ १८ ॥
 मपुत्रधनदाराश्च मपशुद्रव्यमचंयाः ।
 गच्छामस्तत्र यत्रायं माधु गच्छति राघवः ॥ १९ ॥
 विहारोद्यानशयनं गजराग्नमाधनम् ।
 परित्यज्यानुगच्छामस्तुल्यदुःखा नृपात्मजम् ॥ २० ॥
 ममुद्भूतनिधानानि शीणिष्वस्तोच्छ्रयाणि च ।
 प्रक्षीणधान्यकोपाणि हीनमंमार्जनानि च ॥ २१ ॥

पिशाचप्रेतरक्षोभिर्जुष्टान्युच्छ्रितभोजनैः ।

अलक्ष्मीन्यमनोज्ञानि परित्यक्तानि देवतैः ॥ २२ ॥

अस्मन्त्यक्तानि वेश्मानि कैकेयी प्रतिपद्यताम् ।

वनं नगरमेवास्तु यत्र गच्छति राघवः ॥ २३ ॥

अस्माभिस्तु परित्यक्तं पुरं संपद्यतां वनम् ।

यत्र वत्स्यति रामोऽयं पुरं तत्र भविष्यति ॥ २४ ॥

मिलानि दंष्ट्रिणः सर्पा वनानि मृगपक्षिणः ।

अस्मन्त्यक्तं प्रपद्यन्तां सेव्यमानं त्यजन्तु च ॥ २५ ॥

एताश्चान्याश्च विविधा वाचः पौरजनेरिताः ।

शृण्वन् रामो ययौ मार्गं वनवासकृतोद्यमः ॥ २६ ॥

अप्रेक्षमाणोऽपि जन तदाऽऽर्चमनार्त्तरूपः प्रहसन्निराथ ।

जगाम रामः पितर दिदृक्षुः सत्यप्रतिज्ञं पितरं चिकीर्षुः ॥२७॥

आसाद्य चेक्ष्वाकुकुलप्रदीपो रामः पितुर्वेश्म तथाऽऽर्यवृत्तः ।

व्यतिष्ठत् प्रेक्ष्य ततो नियोगे स्थितं सुमन्त्रं प्रतिहारमिष्टम् ॥२८॥

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे पौरवाक्यं नाम

पद्त्रिंशः सर्गः ॥ ३६ ॥

[सप्तत्रिंशः सर्गः]

प्रागेवानागते रामे सभार्ये सहलक्ष्मणे ।

अनन्तरमतीवार्तो विललापाकुलो नृपः ॥ १ ॥

हन्तानार्ये ममामित्रे सकामा भव कैकयि ।

मृते मयि गते रामे वनं मनुजकुञ्जरे ॥ २ ॥

त्यजामि भरतं त्वां च जीवितं चेदमात्मनः ।

प्रशाधि विधना राज्यं निर्घृणे रहिता मया ॥०३ ॥

अहं हिनोमि रामेण त्यक्तो जीवितमात्मानः ।

न भत्रिप्यामि ते पापे भूयो ऽप्येवं वशानुगः ॥ ४ ॥०

केन मन्त्रयसे मूढे किं समर्थयसे शुभम् ।

मम जीवितनाशाय कस्येदं मतमीदृशम् ॥ ५ ॥०

अरण्यं व्रजतां रामो भरतश्चाभिपिच्यताम् ।

इति कस्य मतं पापं मन्त्राशाय दुरात्मनः ॥ ६ ॥०

वालो ऽप्यर्मा कथं राज्य भरतः कारयिष्यति ।

ज्येष्ठे तिष्ठति राज्याहं रामे राजीवलोचने ॥ ७ ॥

अज्ञाता कालरात्रीर भार्यारूपेण कैकयि ।

कथं त्वं क्षीणपुण्येन मयोढा मन्दबुद्धिना ॥ ८ ॥

व्याली घोरविषेव त्वं मयाऽनुद्धरा निषेविता ।

त्वया दष्टो त्रिषुज्येऽहं प्राणैरिष्टैः सुतेन' च' ॥ ९ ॥

स्त्रीणां धिगस्त्वनार्याणां कृतमानां विशेषतः ।

त्यजन्ति वशगान् भर्तृन् या लुब्धा राज्यकाम्यया ॥ १० ॥

निर्घृणे निरनुक्रोशे कीदृशं हृदयं तव ।
 शरणागतं याचमानं यस्मान्मा त्यक्तुमिच्छामि ॥ ११ ॥
 माऽयं नृशंसे ते लोकः परो नाऽस्तु सुखाग्रहः ।
 यन्मां प्रियेण पुत्रेण नियोजयसि दुःखितम् ॥ १२ ॥
 उचितः शिरिका-यानं रथयानं च मे सुतः ।
 कान्तारवनदुर्गाणि कथं पद्भ्यां गमिष्यति ॥ १३ ॥
 स्राद्दनामन्नपानानामुचितो ऽयं ममात्मजः ।
 सुकुमारो विलासी च मृष्टाभरणभूषितः ॥ १४ ॥
 ऋपायाणि च वन्यानि मूलानि च फलानि च ।
 वल्कलाजिनसंवीतः स कथं भक्षयिष्यति ॥ १५ ॥
 अपि नाम स धर्मात्मा पिनीतो गुरुपत्निलः ।
 मयाऽसि पितृमान् पुत्र स्त्रीनशेनाकृतात्मना ॥ १६ ॥
 शीलवृत्तगुणज्येष्ठ प्राणेभ्यो ऽपि प्रियं सुतम् ।
 कथं त्यक्तुं गुणाराम राम ध्यायेत मे मनः ॥ १७ ॥
 नृशंसो ऽहमनायो ऽहं सर्वथैव धिगस्तु माम् ।
 शुश्रूषुं स्त्रीजितः पुत्र दयित यस्त्यजाम्यहम् ॥ १८ ॥
 किं मां वक्ष्यति लोको ऽयं नृशंसं पापकारिणम् ।
 वसिष्ठो वामदेवश्च जाबालिः कश्यपस्तथा ॥ १९ ॥
 किं मां वक्ष्यन्ति श्रुत्वेद तथा ऽन्ये ब्रह्मवादिनः ।
 विश्वामित्रादयः सिद्धास्तपोवननिवासिनः ॥ २० ॥
 पृथिव्या पृथिवीपालाः किं मा वक्ष्यन्ति साधवः ।

युक्तो ऽस्म्ययशसा लोके पतितश्चास्मि सर्वथा ॥ २१ ॥

कैकेय्यै राज्यलुब्धायै अतिसृज्य वरद्वयम् ।

हा हतोऽस्मि विनष्टोऽस्मि दग्धोऽस्मि चपलेन्द्रियैः ॥ २२ ॥

कैकेय्या वशमापन्नः पापायाः पापमोहितः ।

गुरुभिर्ब्रह्मचर्यैश्च कृच्छ्रैर्बालो ऽपि कर्षितः ॥ २३ ॥

सुखकाले ऽद्य पुत्रो मे दुःखमेवोपभोक्ष्यते ।

अनियोज्यैव दुःखेषु रामं राजीवलोचनम् ॥ २४ ॥

तदैव मरणं^३ मे स्याद्यदि पापं च^४ नाप्नुयाम्^५ ।

इति राजा दशरथः पुत्रशोकाकुलेन्द्रियः ॥ २५ ॥

अनिन्ददात्मनाऽऽत्मानं सुरां पीत्वेव वेदवित् ।

एवं विलपतस्तस्य दुःखार्तस्य महीपतेः ॥ २६ ॥

उपेत्यावेदयामास सुमन्त्रो राममागतम् ।

ततः स राजा समुपागतं सुतं सुमन्त्रतो वैत्य भृशार्तमानसः ।

प्रवेशयतामाश्रिति तं तदा वचः सुमन्त्रमुद्गीक्ष्य तदाऽभ्यधात्प्रभुः ॥२७

इत्थार्यं रामायणे ऽयोध्याकाण्डे दशरथविलापो

नाम सप्तत्रिंशः सर्गः ॥ ३७ ॥

[अष्टात्रिंशः सर्गः]

प्रवेश्यतां राम इति वाक्यमुक्त्वा नराधिपः ।
 तीव्रशोकसमाविष्टो भूयो मोहमुपागमत्^१ ॥ १ ॥
 मुहूर्त्तमिव निश्चेष्टो भूत्वा मोहपरायणः ।
 प्रतिलेभे ततः संज्ञां सिंहासनगतो नृपः ॥ २ ॥
 लब्धसंज्ञं च तं भूयः सुमन्त्रः पृथिवीपतिम् ।
 उपेत्य प्राञ्जलिर्वाक्यमुवाचेदं सुदुःखितः ॥ ३ ॥
 दत्त्वा धनानि विप्रेभ्यो भृत्येभ्यश्चोपजीवनम् ।
 स्वरश्मिभिरिवादित्यः ख्यातो लोके गुणांशुभिः ॥ ४ ॥
 आज्ञां ते शिरसाऽऽदाय वनं गन्तुं कृतक्षणः ।
 लक्ष्मणेन सह भ्रात्रा सीतया च नराधिप ॥ ५ ॥
 द्रष्टुं ते ऽभ्यागतः पादौ तं पश्य यदि मन्यसे ।
 इति राजा सुमन्त्रस्य श्रुत्वा वचनमब्रवीत् ॥ ६ ॥
 आकाश इव शुद्धात्मा निश्चयो ऽयं सुदुःखितः ।
 सुमन्त्रानय मे क्षिप्रं यावन्तो हि परिग्रहाः ॥ ७ ॥
 दारैः परिवृतस्तं हि द्रष्टुमिच्छामि राघवम् ।
 इत्युक्तो ऽन्तःपुरं गत्वा सुमन्त्रो वाक्यमब्रवीत् ॥ ८ ॥
 आर्याः^२ क्रन्दति राजा नश्चिरं^३ तत्र हि गम्यताम् ।
 एवमुक्ताः स्त्रियः सर्वाः सुमन्त्रेण त्वराऽन्विताः ॥ ९ ॥
 तलाजग्मुर्नृपं द्रष्टुं भर्तुराज्ञाय शासनम् ।

१ कै, म, ल, ब—०मुपागतम् । ०मुपागमत् इति कै कोपे विभिन्न-
 मस्यां संशोधितम् । २ ब, म—आर्या । ३ ल—न चिरं ।

अर्द्धसप्तशता नार्यो रूपवत्यः स्वलंकृताः ॥ १० ॥

उपेयुस्ताः पतिं द्रष्टुं कैकेय्या सहितं तदा ।

समवेक्ष्यागतान् दारानशेषेण ततो नृपः ॥ ११ ॥

सुमन्त्रानय मे क्षिप्रं पुत्रमित्यभ्यभाषत ।

ततः सुमन्त्रस्त्वरितो रामं लक्ष्मणमेव च ॥ १२ ॥

प्रवेशयामास गृहं राजस्तां चैव मैथिलीम् ।

दृष्ट्वैव च तमायान्तं दूराद्रामं कृताञ्जलिम् ॥ १३ ॥

उत्पपातामनादार्यो राजा स्त्रीमंशृतस्तदा ।

आगच्छ पुत्र रामेति परिष्वक्तुमुपागतम् ॥ १४ ॥

अप्राप्यैव च संभ्रान्तः पपात नृपतिः सुतम् ।

सीदन्तं तं समस्येत्य रामः संभ्रान्तमानमः ॥ १५ ॥

अप्राप्तमेव धरणीं परिगृह्णाङ्गमास्थितम् ।

शनैरुत्थाप्य संमूढं तस्मिन्नेवासने पुनः ॥ १६ ॥

लक्ष्मणेन सह भ्रात्रा सीतया च न्यवेशयत् ।

वीजनेनोपवेश्येनं वीजयामास मूर्च्छितम् ॥ १७ ॥

ततः स्त्रीणां महान्नादः* संजज्ञे राजवेशमनि ।

मुहूर्तादिव तं रामो लब्धसंज्ञं महीपतिम् ॥ १८ ॥

उवाच प्राञ्जलिर्भूत्वा शोकार्णवपरिष्वृतम् ।

आपृच्छे त्वां महाराज सर्वेषामीश्वरो ऽसि नः ॥ १९ ॥

प्रस्थितं वनवामाय संपश्य कुशलेन माम् ।

लक्ष्मणं चानुजानीहि वैदेहीं च महीपते ॥ २० ॥

निवर्त्यमानावपि हि न निवर्त्याविमौ मया ।
 अतो नो वनवासाय गमने कृतनिश्चयान् ॥ २१ ॥
 लक्ष्मणं मां च सीतां च समनुज्ञातुमर्हसि ।
 अनुज्ञाकांक्षिणं राममिति मत्वा महीपतिः ॥ २२ ॥
 उवाच प्रेक्ष्य दीनात्मा वाष्पपर्याकुलेक्षणः ।
 वरप्रदानात्कैकेय्या पुराऽहं राम वंचितः ॥ २३ ॥
 तस्मान्निगृह्य मां मूढं राजा भवितुमर्हसि ।
 एवमुक्तो नृपतिना रामो धर्मभृतां वरः ॥ २४ ॥
 पितरं प्रणिपत्येदं प्रत्युवाच कृताञ्जलिः ।
 भवान्पिता गुरुश्चैव राजा भर्ता प्रभुश्च मे ॥ २५ ॥
 दैवतं पूजनीयश्च गरीयान् धर्मएव च ।
 भवन्नियोगे स्थातव्यं मया राजन् प्रसीद मे ॥ २६ ॥
 न निवर्तयितव्योऽहं भव सत्यप्रतिश्रवः ।
 राजा वर्षसहस्राय भवानेवास्तु नः प्रभो ॥ २७ ॥
 यथा त्वया प्रतिज्ञातं कैकेय्यास्तत्तथा कुरु ।
 त्वां चेत्कृत्वाऽहमनृतं राज्यमिच्छेयमित्युत ॥ २८ ॥
 त्रैलोक्यस्यापि कृत्स्नस्य न तत्काले भविष्यति ।
 श्रुत्वा तु वचनं रामात्सत्यपाशगतो नृपः ॥ २९ ॥
 उवाच करुणं वाक्यं वाष्पाद्गदया गिरा ।
 निश्चितं यदि ते राम मत्प्रियार्थमितो वनम् ॥ ३० ॥
 गन्तुं पुरादितः पुत्र ततो गच्छ मया सह ।
 न हि त्वया विरहितो राम जीपितुमुत्सहे ॥ ३१ ॥

मया त्वया च रहिते राजाऽस्तु भरतः पुरे ।
 इति ब्रुवाणं नृपतिं रामो वचनमब्रवीत् ॥ ३२ ॥
 नार्हमि त्वमितो गन्तुं मया सह वनं प्रभो ।
 नानुवृत्तिस्त्वया कार्या मम राजन् कथंचन ॥ ३३ ॥
 प्रसीद तात धर्मेण योक्तुमर्हसि नो भवान् ।
 सत्यप्रतिज्ञमात्मानं कर्तुमर्हसि मानद ॥ ३४ ॥
 स्वधर्मं स्मारयामि त्वां राजन्नोपदिशामि ते ।
 स्वधर्मतो ऽत्र मत्स्नेहाच्च्यवितुं न त्वमर्हसि ॥ ३५ ॥
 एवमुक्तो दशरथो रामं वचनमब्रवीत् ।
 कीर्तिमायुर्गलं शौर्यं धर्मं चाप्नुहि शाश्वतम् ॥ ३६ ॥
 यशसो वृद्धये भूयः पुनरागमनाय च ।
 अरिष्टं गच्छ पन्थानं मत्सत्यं परिपालयन् ॥ ३७ ॥
 इमां तु रजनीमेकामिह त्वं वस्तुमर्हसि ।
 अद्य भुक्त्वा मया मार्धं भोगानिष्टान्धनानि च ॥ ३८ ॥
 समाश्वास्य सुदुःखातां मातरं वै गमिष्यमि ।
 इति रामो वचः श्रुत्वा पितुरार्तस्य धीमतः ॥ ३९ ॥
 उवाच प्राञ्जलिर्भूत्वा राजानं शोकविह्वलम् ।
 समुत्सृज्य सुगं भूयो न निवर्त्तितुमुत्तमे ॥ ४० ॥
 यानद्य भोगान् प्राप्स्यामि को मे श्वस्तान् प्रदास्यति ।
 तस्माद्गमनमेवाहं वृणोमि न निवर्त्तितुम् ॥ ४१ ॥
 धन-रत्न चिता भूमिरियं मद्रव्यमञ्जया ।

सहस्त्यश्वरथग्रामा भरताय प्रदीयताम् ॥ ४२ ॥
 त्यजेयं दयितान् प्राणानिष्टान् भोगान् धनानि च ।
 भवन्तमनृतं कर्तुं न त्विच्छेयं कदाचन ॥ ४३ ॥
 अपगच्छतु ते दुःखं नृपते मद्द्वियोगजम् ।
 क्षुभ्यन्ति त्वद्विधा नैवं साधवः सागरोपमाः ॥ ४४ ॥
 न राज्यप्राप्तिमिच्छामि न सुखानि महीपते ।
 त्वत्प्रतिज्ञातमिच्छामि सत्यं कर्तुं प्रश्लाधि माम् ॥ ४५ ॥
 अनुजानीहि मां शीघ्रं वनवासकृतोद्यमम् ।
 अनुग्रहं परं मन्ये त्वत्सत्यपरिपालनम् ॥ ४६ ॥

इयं सराष्ट्रा सपुरा च मेदिनी मया विसृष्टा भरताय दीयताम् ।
 अहं च सत्यं भवतोऽनुपालयन् वनं गमिष्यामि तपो निषेधितुम् ४७
 मयाविसृष्टां भरतो महीमिमां सहाडृशैलां सपुरां सकाननाम् ।
 शिवां सुमीमामनुशास्तु वीर्यवांस्त्वया यदुक्तं नृपते तथास्तु तत् ४८
 तथा न मे पार्थिव धीयते मनो महत्स्वपि प्रीतिसुखेषु वर्तितुम् ।
 तथा निदेशे तव शिष्टसम्मते व्यपेतु दुःखं तव मद्द्वियोगजम् ॥४९॥
 दं हि नैवानघ राज्यमव्ययं न चापि भोगानि सुखानि कामये ।
 जीवितं त्वामनृतेन योजयन् वृणोमि राजन् सुकृतेन ते शपे ॥५०॥
 फलानि मूलानि च भक्षयन् वने गिरींश्च पश्यन् मरितः सरांसि च ।
 वने निवस्यामि सुखी गतज्वरो व्यपेतु दुःखं तव मद्द्वियोगजम् ५१
 इत्यापे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे दशरथममाश्वामनं

नामाष्टाविंशः सर्गः ॥ ३८ ॥

[एकानचत्वारिंशः सर्गः]

ततः सुमन्त्रं नृपतिः पीडितः म्यप्रतिब्रया ।
 दीर्घमुष्णं च निःश्वस्य शशासाहूय मन्त्रिणम् ॥ १ ॥
 चतुरङ्गं बलं भूरि शस्त्राभरणभूषितम् ।
 राघवस्थानुयात्रार्थं क्षिप्रमेवोपकल्प्यताम् ॥ २ ॥
 रूपयौवनशालिन्यो विलासिन्यो महाधनाः ।
 अनुयान्तु कुमारस्य रत्यर्थं रुचिराननाः ॥ ३ ॥
 सुहृदो ये ऽनुरक्ताश्च रामं राजीवलोचनम् ।
 ते चैनमनुगच्छन्तु मंत्रिभक्ता महाधनैः ॥ ४ ॥
 कोशाध्यक्षाश्च ते सर्वे कोशमादाय सर्वशः ।
 गच्छन्तमनुगच्छन्तु रामं राजीवलोचनम् ॥ ५ ॥
 मृगयां विहरन् भोगान् भुञ्जंश्चायमर्भीप्सितान् ।
 वनेऽपि वसन् रामो मुक्त्वा राज्यं सुखानि च ॥ ६ ॥
 यावान्मद्विभवः कश्चिद् यावदस्तृप्यजीवनम् ।
 अशेषैर्णव तत्मव राममेवानुगच्छतु ॥ ७ ॥
 दददानानि तीर्थेषु विसृजंश्च धनानि मे ।
 रामो ऽयं वनवासे ऽपि राज्यधर्मं समश्नुताम् ॥ ८ ॥
 भरतो ऽप्युद्धृतधनामयोध्यां पालयिष्यति ।
 सर्वकर्मैः पुनः श्रीमान् रामः संपद्यतां वनम् ॥ ९ ॥
 ब्रुवत्येवं दशरथे कैकेय्या भयमस्पृशत् ।
 आस्यं शुश्रोष चैवास्याः स्वर्ग्येव व्यभिद्यत ॥ १० ॥
 सा विवर्णमुक्त्वा दीना राजानमिदमब्रवीत् ।

संरंभामर्षताम्राक्षी क्रोधपर्याकुलेक्षणा ॥ ११ ॥
 हृतसारमिदं राष्ट्रं पीतमण्डां सुरां यथा ।
 दत्त्वाऽप्यश्रद्धया मे त्वं भविष्यस्यनृती नृप ॥ १२ ॥
 एवं नृशंसया भूयो वारुशरैरभिपीडितः ।
 कैकेया दुःखितो राजा तामिदं वाक्यमब्रवीत् ॥ १३ ॥
 बहैतां वै धुरं गुर्वीमसह्यां साधुगर्हिताम् ।
 नृशंसे किं तुदसि मां वारुप्रतोदैः पुनः पुनः ॥ १४ ॥
 एवं ब्रुवन्तं राजानं कैकेयी पुनरब्रवीत् ।
 पापस्वभावा वचनं परुषं घोरनिश्चया ॥ १५ ॥
 तवैव पूर्वः सगरो ज्येष्ठं पुत्रं किलात्यजत् ।
 असमञ्जसमत्युग्रं तथा त्वं राघवं त्यज ॥ १६ ॥
 एवमुक्तो धिगित्युक्त्वा राजा दशरथस्तदा ।
 दध्यौ व्रीडाऽन्वितः किञ्चिच्छिरः संकंपयन्निन ॥ १७ ॥
 ततो वृद्धो महामात्यः सिद्धार्थो नाम विश्रुतः ।
 भृशं बहुमतो राज्ञः कैकेयीमिदमब्रवीत् ॥ १८ ॥
 पुरा ऽसमंजसं देवि सगरः पृथिवीपतिः ।
 हेतुना त्यक्तवान् येन ब्रुवतस्तन्निबोध मे ॥ १९ ॥
 असमञ्जाः समादाय पौराणां दारकान् गले ।
 स्सर्ध्वाभाशु चिक्षेप दैःशील्यादिति मे श्रुतम् ॥ २० ॥
 तेन विप्रकृताः क्रुद्धाः पौराः सगरमब्रुवन् ।
 असमञ्जसमेकं वा त्यजास्मान्वा महीपते ॥ २१ ॥

तानुवाच ततो राजा किं कारणमिति प्रभुः ।

तं तथा रुषिताः सर्वे पौरा राजानमब्रुवन् ॥ २२ ॥

पुत्रस्तवैव दौःशील्यादेवं किल स दारकान् ।

गले क्रोशत आदाय सरय्यां क्षिपति प्रभो ॥ २३ ॥

इति तेषां वचः श्रुत्वा पौराणां सगरो नृपः ।

तत्याज दयितं पुत्रं तेषां स प्रियकाम्यया ॥ २४ ॥

अविनीतमेवं नृपतिः सगरस्त्यक्तवान् सुतम् ।

गुणवन्तं सुतं राजा रामं त्यक्ष्यत्ययं कथम् ॥ २५ ॥

इति सिद्धार्थवचनं श्रुत्वा दशरथो नृपः ।

शोकव्याकुलया वाचा कैकेर्यामिदमब्रवीत् ॥ २६ ॥

अनुव्रजामि स्वयमेव रामं राज्यं परित्यज्य सुप्तानि चैव ।

त्वमप्यनार्ये भरतेन सार्धं यथा सुप्तं भुंक्ष्व चिराय राज्यम् ॥२७॥

इत्यार्ये रामायणे ऽयोध्याकाण्डे सिद्धार्थवाक्यं

नामैकोनचत्वारिंशः सर्गः ॥ ३६ ॥

[चत्वारिंशः सर्गः]

कैकेया प्रचनं श्रुत्वा पितुर्दशरथस्य च ।

अन्वभाषत धर्मात्मा रामस्तत्र महामनाः ॥ १ ॥

त्यक्तसर्वस्वभोगस्य^१ वन्याहारनिषेविणः^२ ।अनुयात्रेण मे कार्यं^३ किं राजन्^४ विजने वने ॥ २ ॥

यो हि हित्वा द्विपश्रेष्ठ गजकक्ष्यां बहेक्ष्णप ।

किं कार्यमृढया तस्य त्यजतः कुञ्जरोत्तमम् ॥ ३ ॥

तथा मम नियुक्तस्य घ्राजिन्या किं प्रयोजनम् ।

सर्वमेवानुजानामि चीराण्येव तु केवलम् ॥ ४ ॥

खनित्रपिटके चोभे सशिके वरये नृप ।

चतुर्दश हि वर्षाणि वने वत्स्थामि निर्जने ॥ ५ ॥

अथ चीराणि कैकेयी स्वयमादाय राघवम् ।

उत्राच परिधत्स्वेति निर्लज्जं^५ जनसंसदि^६ ॥ ६ ॥

परिगृह्य तु ते चीरे कैकेया हस्ततस्ततः ।

विहाय वाससी सूक्ष्मे रामः परिदधे स्वयम् ॥ ७ ॥

अन्वेव लक्ष्मणश्चापि विहाय वसने शुभे ।

चीरे परिदधे वीरस्तथैव पितुरग्रतः ॥ ८ ॥

अथात्मपरिधानाय पीते^७ काशेयत्रासमी ।

दृष्ट्वा समुद्यते चीरे कैकेया जनकात्मजा ॥ ९ ॥

लज्जमाना स्थिता पार्श्वे रामस्य शुभदर्शना ।

१ म—० सर्वस्य० । २ के, घ—०निवासिन । ३ म—राजन् किं कार्यं । ४ म—निर्लज्जाजनसंसदि । ५ म—च । ६ म—पीत— ।

जग्राह भृशमुद्विग्ना मृगी दृष्ट्वैव वागुराम् ॥ १० ॥

परिगृह्य च ते चीरे मीता वाप्पाविलेक्षणा ।

गन्धर्वराजप्रतिमं भर्तारमिदमब्रवीत् ॥ ११ ॥

आर्यपुत्र कथं चीरमहं बध्नामि शंस मे ।

इत्युक्त्वा चीरमेकं मा स्वस्मिन् स्कन्धे समामजत् ॥ १२ ॥

द्वितीयं वै परिदधे चीरमादाय मैथिली ।

तां चीरवमनां दृष्ट्वा भर्तृनाथामनाथवत् ॥ १३ ॥

प्रचुक्रुशुः स्त्रियः सर्वा धिग्धिगित्येव चाब्रुवन् ।

तं विक्रन्दं नृपः श्रुत्वा स्वस्त्रीभिः समुदीरितम् ॥ १४ ॥

चिच्छेद जीवितश्रद्धां सुसश्रद्धां च दुःसितः ।

म निःश्वस्योष्णमिक्ष्वाकुर्भार्यां तामिदमब्रवीत् ॥ १५ ॥

रामस्यैकस्य गमने वरं याचितवत्यामि ।

न सौमित्रेर्न जानक्या नृशंसे दुष्टचागिणि ॥ १६ ॥

किमर्थमनयोर्धरे ददाम्यशुभदर्शने ।

पापे पापसमाचारे नृशंसे कुलपांथनि ॥ १७ ॥

कैकेयि न च सौमित्रिर्न सीता गन्तुमर्हति ।

ननु पर्याप्तमेतावत् पापे रामप्रिवामनम् ॥ १८ ॥

किं ते भूय इदं कर्तुं मतिं निरयगामिनि ।

इति त्रुयाणं पितरं रामः मंप्रस्थितो वनम् ॥ १९ ॥

अवाशशिरसमार्मीनमिदं वचनमब्रवीत् ।

इयं धर्मज्ञ कौशल्या माता मम तपस्विनी ॥ २० ॥

वृद्धा चाक्षुद्रशीला च सुभृशं त्वामनुप्रता ।

मद्वियोगाद् भृशं राजन्निमग्रा शोकमागरे ॥ २१ ॥

मदनुग्रहार्थं कृपणा त्वत्तो रक्षणमर्हति ।

यथा न दुःखितेयं स्याच्चया नाथेन नाथिनी ॥ २२ ॥

मदपेक्षया तथा राजन् सदेमां द्रष्टुमर्हसि ।

इमां महेन्द्रोपम तात दुःखितामवेक्षितुं त्वं जननीं मर्मर्हसि ।

यथा वनस्थे मायि शोकऋषिता न जीवहीना यममादनं व्रजेत् ॥२३॥

इत्यार्षे रामायणे ऽषोध्याकाण्डे रामस्य^{१०} चीरपरिग्रहो

नाम चत्वारिंशः सर्गः ॥ ४० ॥

[एकचत्वारिंशः सर्गः]

मुनिवेशधरं रामं दृष्ट्वैवादिनं नृपः ।

भार्याभिः सह सर्वाभिः शुशोच च स्रोद च ॥ १ ॥

न चैनं शोकदुःसार्तः शशाकामिनिरीक्षितुम् ।

न चाभिभाषितुं राजा शशाकैनं सुदुःखितः ॥ २ ॥

स मुहूर्तमिव ध्यात्वा दुःसमीलितलोचनः ।

विललापातुरो दीनो राममेवानुचिन्तयन् ॥ ३ ॥

नूनं मया कृताः पूर्वं त्रिपुत्राः पुत्रवत्सलाः ।

यथा पुत्र वियुज्ये ऽहं त्वयाऽतिकृपणो ऽवशः ॥ ४ ॥

अकाले देहिनां मृत्युर्नूनं तावन्न विद्यते ।

त्रियुज्यमानो यन्मृत्युं नाधिगच्छाम्यहं त्वया ॥ ५ ॥

लोककान्तं प्रियं पुत्रं कुशचीरधरं वनम् ।

प्रस्थितं पश्यतो मे ऽद्य हृदयं किं न दीर्यते ॥ ६ ॥

यत्र पुत्र मया काले लालनीयो ऽसि सर्वदा ।

दुःखे महति तत्र त्वां योजयामि धिगस्तु माम् ॥ ७ ॥

एकस्याः सलु कैकेय्याः कृते ऽयं दुःखितो जनः ।

इत्युक्त्वा निषपातोऽन्यां राजा मृच्छां जगाम च ॥ ८ ॥

संज्ञां च प्रतिलभ्याथ मुहूर्तात् स महीपतिः ।

अश्रुपूर्णेक्षणो वाक्यं सुमन्त्रमिदमब्रवीत् ॥ ९ ॥

युक्त्रा रथं मदीयं त्वं शीघ्रमानय वाजिभिः ।

तेन प्रापय मे पुत्रं वनं मुनिजनप्रियम् ॥ १० ॥

एतन्मन्ये गुणवतां गुणानां फलमुन्यते ।

पित्रा मात्रा च यः साधुरेण निर्वास्यते सुतः ॥ ११ ॥

इति राज्ञा समादिष्टः सुमन्त्रस्त्वरयन्निव ।

आजगाम रथे राज्ञो युक्त्रा परमराजिभिः ॥ १२ ॥

उपनीय च मयुक्तं रथं रत्नविभूषितम् ।

राज्ञो निवेदयामास युक्त इत्यभितोषितः ॥ १३ ॥

कोशाध्यक्षमथाहूय स्वममात्यं नराधिपः ।

उवाचेद् वचो धर्म्यं शोकव्याकुलिताक्षरम् ॥ १४ ॥

वामांसि त्व महार्हाणि भूषणानि वराणि च ।

वर्षाण्येतानि संख्याय वैदेह्यै प्रतिपादय ॥ १५ ॥

इति राज्ञा समादिष्टो गत्वा कोशगृहं तु सः ।

प्रायच्छच्छीघ्रमानीय वैदेह्यै सर्वमेव तत् ॥ १६ ॥

ततो निवासयामास तानि वासांसि मैथिली ।

भूषयामास चात्मान भूषणैस्त्वेरानना ॥ १७ ॥

ततो विराजयामास तद्वेश्म सुविभूषिता ।

विमलेव प्रभा सौरी व्यथ्रं वित्तिमिर नमः ॥ १८ ॥

तथा तु सा मैथिलपार्थिवात्मजा विभूषिता प्रीतिकरैर्विभूषणैः ।

विदिधुते घौरिर तोयदागमे शतहृदा पत्रशतैरलकृता ॥ १९ ॥

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे सीतालकारिको

नामैकचत्वारिंशः सर्गः ॥ ४१ ॥

[द्विचत्वारिंशः सर्गः]

अलंकृतां तु वैदेहीं द्योतमानामिव श्रियम् ।
 विभूषितां परिप्यज्य श्वश्रुर्वचनमब्रवीत् ॥ १ ॥
 स्नेहान्मूर्धन्युपाघ्राय माता दुहितरं यथा ।
 गच्छन्तं वनवासाय त्वं राममनुगच्छसि ॥ २ ॥
 त्वामतोऽनुसमाधास्ये कार्यं ते हृदि मद्बचः ।
 सत्कृता लालिताश्चापि वैदेहि प्राकृताः स्त्रियः ॥ ३ ॥
 न स्मरन्त्युपकारं हि न प्रीतिं न च सौहृदम् ।
 रूपयौवनससर्गात् सुभावेन च दर्पिताः ॥ ४ ॥
 तच्चया नाप्रमन्तव्यः पुत्रो मम धनन्युतः ।
 दैवतं हि पतिः स्त्रीणां सधनो निर्धनोऽपि वा ॥ ५ ॥
 मद्द्वियोगकृत दुःख वनवासकृतं तथा ।
 न संस्मरेद्यथा रामस्तथा कार्यं हि मैथिलि ॥ ६ ॥
 इति श्वश्रुना समादिष्टा सीता भर्तृपरायणा ।
 कृताञ्जलिः स्थिता प्रह्ला कौशल्यामिदमब्रवीत् ॥ ७ ॥
 आर्ये करिष्येऽभ्यधिकं शासनं ते यथाऽऽत्थ माम् ।
 अभिजा ह्यस्मि^१ सत्स्त्रीणां धर्माचारस्य सर्वशः ॥ ८ ॥
 न मां पृथग्जनसमामार्ये त्वं मन्तुमर्हामि ।
 रामाद्विचलिता नालमहं स्वर्यादिव प्रभा ॥ ९ ॥
 नातन्त्री वाद्यते धीणा नाचक्रो वर्तते रथः ।
 नापतिः सुरमामोति^२ नारी यद्यपि सुप्रजा ॥ १० ॥

मितं ददाति हि पिता मितं माता मितं सुतः ।
 अमितस्य तु दातारं भर्त्तारं का न पूजयेत् ॥ ११ ॥
 साऽहं सुखानां सर्वेषां दातारं देवतं पतिम् ।
 कथमार्ये ऽवमन्येयं यथाऽन्याः प्राकृताः स्त्रियः ॥ १२ ॥
 किं च मन्ये देवतानामनुग्राह्याऽस्मिं साम्प्रतम् ।
 यन्मे प्रकृतिकल्याणीं श्रद्धां वर्धयमे पुनः ॥ १३ ॥
 भर्त्तुः प्रियनिमित्तं हि त्यजेयमपि जीवितम् ।
 पाणिप्रदानसमयात्प्रभृत्येवं व्रतं मम ॥ १४ ॥
 विप्रयुक्ता हि रामेण कन्दर्पेणैव रूपिणा ।
 पतेयं पर्वताग्राद्वा विशेषं वा हुताशनम् ॥ १५ ॥
 प्रमाणं तन्मया कार्यं यदग्निगुरुसन्निधौ ।
 सलाजकुसुमः पाणिः पीडितो राघवेण मे ॥ १६ ॥
 इतरा लघुसत्त्वा हि स्त्रियो यौवनविभ्रमात् ।
 भर्त्तारमवमन्यन्ते संक्षिष्टाश्च कुवांधवैः ॥ १७ ॥
 स्वयं कामान्न वक्तव्यमार्ये ऽहं पतिदेवता ।
 यथा भर्त्तरि वर्त्तिष्ये तथा श्रोष्यसि सज्जनात् ॥ १८ ॥
 राज्यनाशं वने वासं त्वद्वियोगं च राघवः ।
 प्रयतिष्ये तथा कर्त्तुं यथा नातिस्मरिष्यति ॥ १९ ॥
 सीतायास्तद्वचः श्रुत्वा कौशल्या हृदयंगमम् ।
 शुद्धसत्त्वा मुमोचाश्रु सहसा दुःखहर्षजम् ॥ २० ॥
 परिष्वज्य च कौशल्या मैथिलीं जनकात्मजाम् ।

उवाच परमप्रीता गद्गदम्प्रालिताक्षरम् ॥ २१ ॥
 अनाश्र्वर्यमिदं पुत्रि वचनं तत्र मैथिलि ।
 या त्वं विदार्य वसुधां मीते मस्यमिवोदिता ॥ २२ ॥
 जनकस्य नरेन्द्रस्य मैथिलस्य महात्मनः ।
 यशमश्च गुणानां च सीते त्वममि भूषणम् ॥ २३ ॥
 अहं यशस्या धन्या च यस्यास्त्वं समुपस्थिता ।
 गुणज्ञा च कृतज्ञा च धर्मज्ञा च यशस्विनी ॥ २४ ॥
 निर्वृत्ताऽहं भविष्यामि त्वया सह वनं गते ।
 रामे राजीरपवाशे ह्ययोध्यां पुनरागते ॥ २५ ॥
 वनेषु खलु ते पुत्रि भाव्यमस्याग्रमत्तया ।
 लक्ष्मणस्य च वीरस्य देवरस्य विशेषतः ॥ २६ ॥
 एवं सन्दिश्य सीतां तु प्रशस्य च यशस्विनीम् ।
 मूर्ध्निपात्राय सस्नेहं कौशल्या राममब्रवीत् ॥ २७ ॥
 नित्यं राघव मीताया भवितव्यं समीपतः ।
 लक्ष्मणस्य च भक्तस्य त्रया वीरस्य मानद ॥ २८ ॥
 कर्तव्यश्चाप्रमादस्ते वने प्रचुरपादपे ।
 तां प्राञ्जलिरभिक्रम्य मातृमध्ये व्यरस्थिताम् ॥ २९ ॥
 रामो ऽपि धर्म्यं धर्मज्ञो मातरं वाक्यमब्रवीत् ।
 अम्ब सीतां समाश्रित्य यत्नं मामनुशाससि ॥ ३० ॥
 लक्ष्मणो दक्षिणो बाहुच्छायेऽपि मम मैथिली ।
 नेयं त्यक्तुं मया शक्या कीर्त्तिरात्मवता यथा ॥ ३१ ॥
 गृहीतशरचापस्य कुतो ऽस्ति हि भयं मम ।

अपि त्रयाणां लोकानामोश्वराद्वा शनक्रतोः ॥ ३२ ॥
 अम्ब मा दुःखिनी भूस्त्वं पश्यातं पितरं मम ।
 क्षयो ऽस्य वनवासस्य भविष्यत्यचिरेण मे ॥ ३३ ॥
 अस्य राज्ञः प्रसादेन वर्षाण्येतानि मे शुभे ।
 शिषेनैव गमिष्यन्ति यथैकदिवसं तथा ॥ ३४ ॥
 स्वस्तिमन्तमरोगं मां पुनरभ्यागतं वनात् ।
 स्वैरेव सुकृतैः पुण्यैर्भुवं द्रक्ष्यामि मा शुचः ॥ ३५ ॥
 एतावदभिनीताथमुक्त्वा स जननी वचः ।
 अर्धसप्तशानास्तत्र ददर्शान्या पिमातरः ॥ ३६ ॥
 समुपेत्य च मातृस्ताः कृताञ्जलिरिदं वचः ।
 उवाच रामो धर्मात्मा प्रश्रयावनतस्तदा ॥ ३७ ॥
 मंवासात्पुरुषः कश्चिद्विश्वासाद्वा ऽपराध्यति ।
 क्षन्तव्यमपराद्धं मे सर्वाश्चामन्त्रयामि वः ॥ ३८ ॥
 अज्ञानाद्वा प्रमादाद्वा यदन्यदपि किञ्चन ।
 अपराद्धं तदद्याहं सर्वशः क्षमयामि वः ॥ ३९ ॥
 अथ जज्ञे महान्तत्र तामां नृपतियोपिताम् ।
 कौञ्चीनामिन संक्रन्द एवं ब्रुवति राघवे ॥ ४० ॥

मुरज पणन-वेणु-नादितं दशरथवेश्म बभूव यत्पुरा ।

विलपितपरिदेपितस्वनैर्व्यसनभवैस्तद्भूद्विनादितम् ॥ ४१ ॥

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे दशरथस्त्रीविलापो

नाम द्विचत्वारिंशः सर्गः ॥ ४२ ॥

[त्रिचत्वारिंश सर्गः]

कृताञ्जलिस्ततो रामो लक्ष्मणश्च महायशाः ।
 वैदेही चैव राजानं प्रतिजग्मुः प्रदक्षिणम् ॥ १ ॥
 कृत्वा प्रदक्षिणं चैनं प्रणिपत्यानुमान्य च ।
 रामः शोकपग्मिलानां जननीमभ्यवादयत् ॥ २ ॥
 अन्येव लक्ष्मणश्चैनां रुदतीमभ्यवादयत् ।
 ततो मातुः सुमित्रायाः पार्दा जग्राह लक्ष्मणः ॥ ३ ॥
 तं वन्दमानं रुदती परिप्वज्य च पीडितम् ।
 स्नेहान्मृधन्युपाघ्राय सुमित्रा पुत्रमब्रवीत् ॥ ४ ॥
 अरिष्टं गच्छ पन्थानं सह रामेण लक्ष्मण ।
 शुश्रूष आतरं ज्येष्ठं रामं लोकहिते रतम् ॥ ५ ॥
 मत्पुत्रेण त्वया पुत्र तारिताऽहं मवांधवा ।
 यस्त्वं त्यक्त्वा प्रियान् दारान् मां च राममनुव्रतः ॥ ६ ॥
 ममस्थो विषमस्थो वा रामस्ते परमा गतिः ।
 प्रार्णरपि प्रियतरो ज्येष्ठो भ्राता गुरुश्च ते ॥ ७ ॥
 तस्मादस्याग्रमत्तस्त्वं शरीरं परिपालय ।
 विजने वमतो ऽरण्ये मीतया रमतः सह ॥ ८ ॥
 एष पुत्र सतां धर्मो यं त्वमिच्छामि सेवितुम् ।
 उचितं वः कुले पुत्र भ्रातृज्येष्ठानुपालनम् ॥ ९ ॥
 भ्राता ज्येष्ठो ऽग्रमत्तं रामो राजीत्यस्तोत्थनः ।
 त्वया पुत्र वने मेव्यः परिपाल्यश्च सर्वथा ॥ १० ॥
 दानं दीक्षा तपश्चैव तनुत्यागो मृधे ऽपि वा ।

रामं दशरथं विद्धि मां विद्धि जनकात्मजाम् ॥ ११ ॥
 अयोध्यामटवों विद्धि गच्छ तत यथासुरम् ।
 इत्युक्त्वा लक्ष्मणं पुत्रं सुमित्रा राममब्रवीत् ॥ १२ ॥
 त्वया ऽपि पुत्र रक्ष्यो ऽयं लक्ष्मणः शत्रुकर्षण ।
 भक्तो ऽनुरक्तो ऽनुगतो भ्राता भृत्यः सुहृच्च ते ॥ १३ ॥
 त्वया ऽयं सर्वथा रक्ष्यस्त्वं चैवानेन राघव ॥
 एवमस्तिप्रति रामस्तां सुमित्रां प्रत्यभाषत ॥ १४ ॥
 चक्रे कृताञ्जलिश्चैनामभिवाद्य प्रदक्षिणम् ।
 ततः सुमन्त्रः काकुत्स्थं प्राञ्जलिर्वाक्यमब्रवीत् ॥ १५ ॥
 विनीतवदुपागम्य मानलि चासन्नं यथा ।
 राजपुत्र नमस्ते ऽस्तु युक्तो ऽयं ते महारथः ॥ १६ ॥
 अनेन त्वां हि नेष्यामि यत्र मां राम वक्ष्यामि ।
 चतुर्दश हि वर्षाणि वस्तव्यानि त्वया वने ॥ १७ ॥
 राज्यार्थिन्या पिता ते ऽयं कैकेया यानि याचितः ।
 तं वरार्हं रथं युक्तं सीता हृष्टेन चेतसा ॥ १८ ॥
 आरुरोह वरारोहा कृत्वाञ्जलंकारमात्मनः ।
 वनवासं हि संस्थाय वासांस्याभरणानि च ॥ १९ ॥
 भर्तारमनुगच्छन्त्यै सीतायै श्वशुरौ ददौ ।
 तथैवायुधजातानि तूणांश्च कञ्चानि च ॥ २० ॥
 रथोपस्थमभिन्यस्य सनित्रपिटकं च तत् ।
 अथ ज्वलनमंकाश चामोकरनिभृषितम् ॥ २१ ॥
 तमारुरुद्धतुः क्षिप्रं भ्रातरौ रामलक्ष्मणौ ।

सीतातृतीयावारूढौ दृष्ट्वा तूर्णमनोदयन् ॥ २२ ॥

सुमन्त्रः संहितानश्वान् वायुवेगसमाञ्जवे ।

प्रयाते तु महारण्यं चिररात्राय राघवे ॥ २३ ॥

बभूव नगरं सर्वं क्रोधपूर्णं बलं च तत् ।

तत्तममाकुलमंभ्रान्तं मत्तमंकुपितद्विपम् ॥ २४ ॥

हयशिञ्जितनिर्घोषं पुरमासीन्महास्वनम् ।

ततः सप्तद्ववाला हि पुरी परमपीडिता ॥ २५ ॥

राममेवाभिदुद्राव धर्मात्तः सलिलं यथा ।

पाँश्वतः पृष्ठतश्चव जनाः पुरानिवासिनः ॥ २६ ॥

अश्रुपूर्णमुखाः सर्वे तमृचुर्भृशदुःखिताः ।

संयच्छ वाजिनः मृत शनैर्याह्वयवा पुनः ॥ २७ ॥

रामस्य द्रष्टुमिच्छामो मुखचन्द्रं महात्मनः ।

हृदयाणि हरत्येप सर्वेषां नरचन्द्रमाः ॥ २८ ॥

पश्यामस्तावदेवैनं कदा द्रक्ष्यामहे पुनः ।

प्रस्थितो दुर्गमध्वानं नाथो नो भक्तवत्सलः ॥ २९ ॥

कद्देनं वनकान्ताराद्द्रक्ष्यामः पुनरागतम् ।

आयसं हृदयं नूनं राममातुः सुमंहतम् ॥ ३० ॥

यन्न दीर्णं प्रिये पुत्रे वनवासाय निर्गते ।

एकैव कृतपुण्येयं वैदेही तनुमध्यमा ॥ ३१ ॥

या ऽनुगच्छति गच्छन्तं छायेवानुपमं पतिम् ।

त्वं च लक्ष्मण सिद्धार्थः कृतपुण्यश्च यः प्रियम् ॥ ३२ ॥

भक्त्याऽनुगच्छसि ज्येष्ठं भ्रातरं धर्मवत्सलम् ।

एषा ते महती सिद्धिरेष ते ऽभ्युदयो महान् ॥ ३३ ॥

एष स्वर्गस्य ते पन्था यद्राममनुगच्छसि ।

एवं ब्रुवंतस्ते पौरा चाप्प्रेगमुपागतम् ॥ ३४ ॥

यदा न शेकुः संरोद्धुं दुःसार्त्ता रुरुदुस्ततः ।

फ नु गन्तामि दुःसार्त्तानस्मानुऽसृज्य राघव ।; ३५ ॥

नयास्मानपि यत्र त्वं गन्तुं राम समुद्यतः ।

अथ राजा वृतः स्त्रीभिर्दीनाभिर्दीनमानमः ॥ ३६ ॥

निर्जगाम प्रियं पुत्रं द्रष्टुमिच्छन् स्वयं गृहात् ।

ऋदन्तीनां ततः स्त्रीणां शुश्रुणे तत्र निस्वनः ॥ ३७ ॥

करेणूनामिवाक्रन्दो वृद्धे गतशिशौ वने ।

स च राजा दशरथो गतश्रीर्न बभौ तदा ॥ ३८ ॥

यथा पूर्णः शशी काले ग्रहेणोपहतद्युतिः ।

ततो हा हेति करुणः शब्दः समभनन्महान् ॥ ३९ ॥

दुःखितं प्रेक्ष्य राजानं सदारं निर्गतं गृहात्

हा रामेति जना केचिद्धा राजन्निति चापरे ॥ ४० ॥

क्रोशमाना नृपं तत्र परिवव्रुः समन्ततः ।

तमवेक्ष्य ततो रामः पितरं शोकविह्वलम् । ४१ ॥

पदातिमनुगच्छन्तं दारैः स्वैः परिवारितम् ।

देव्या कौशल्यया सार्धं विह्वलं तं पदे पदे ॥ ४२ ॥

धर्मपाशस्थितो दीनो नाशक्रोदमिभापितुम् ।

पदाती तौ तु दुःसार्त्तो वृष्टा शोकसमन्वितौ ॥ ४३ ॥

पितरौ नोदयान्नास शीघ्रं याहीति मारथिम् ।
 न हि सन्दर्शनं रामस्तयोर्दुःखपरीतयोः ॥ ४४ ॥
 शशाक सोढु दुःखार्तः स्तोत्रादित इव द्विपः ।
 हा पुत्र राम हा सीते हा हा लक्ष्मण पश्य माम् ॥ ४५ ॥
 इति राजा च^१ देवी च क्रोशन्तावभ्यधावताम् ।
 रामलक्ष्मणसीताश्च मृजन्तो वारि नेत्रजम् ॥ ४६ ॥
 असकृत्तामवैक्षन्त नृत्यन्तीमिव मातरम् ।
 तिष्ठ तिष्ठेति राजा हि याहि याहीति राघवः ॥ ४७ ॥
 सुमंत्रस्य बभूवात्मा गोचक्रान्तरितो यथा ।
 नाश्रौपमिति राजानं सूत^२ वक्ष्यसि सङ्गमे^३ ॥ ४८ ॥
 चिरं दुःखस्य जातोऽयमिति रामस्तमव्रवीत् ।
 स रामस्य मतं बुद्ध्वा सुमन्त्रो दीनमानसः ॥ ४९ ॥
 अञ्जलिं नृपतेर्वद्ध्वा नोदयामाम तान् हयान् ।
 शीघ्रं प्रजवितरथ्यः प्रयान्तमथ राघवम् ॥ ५० ॥
 यदा न शेकुरन्वेतुं पौराणां ताः स्त्रियस्तदा ।
 न्यवर्तन्त सुदुःखार्ता निराशा रामदर्शने ॥ ५१ ॥
 मनोभिराशुवेर्गश्च न न्यवर्तन्त मर्षशः ।
 यमिच्छेच्च पुनर्द्रेष्टुं न तं दूरमनुव्रजेत् ॥ ५२ ॥
 वमिष्ठप्रमुखा विप्रा इत्युचुस्तं नृपं तदा ।
 तेषां तदा तद्वचनं स राजा श्रुत्वा गुरूणां परिमृद्य वाप्यम् ।
 तस्थौ प्रयान्तं सुतमीक्षमाणो विपादमोहव्यथितान्तरात्मा ॥ ५३ ॥
 इत्यापे^४ रामायणे ऽयोध्याकाण्डे रामनिर्याणं
 नाम त्विचत्वारिंशः सर्गः ॥ ४३ ॥

[चतुश्चत्वारिंशः सर्गः]

तस्मिन्प्रयाते त्वरितं पुराद्रामे कृताञ्जलौ ।

आर्त्तशब्दो हि संजज्ञे स्त्रीणामन्तःपुरे तदा ॥ १ ॥

अनाथस्य जनस्यास्य दुर्बलस्य तपस्विनः ।

यो गतिः शरणं चासीत्स नाथः क्व नु गच्छति ॥ २ ॥

न क्रुध्यत्यभिशस्तो ऽपि क्रोधनीयानि वर्जयन् ।

क्रुद्धान् प्रसादयन् सर्वान् स नाथः क्व नु गच्छति ॥ ३ ॥

कौशल्यायां महातेजा यथा मातरि वर्तते ।

तथा सर्वासु वर्त्तत महात्मा क्व नु गच्छति ॥ ४ ॥

कैकेय्या क्लिश्यमानानां राज्ञा च कुपितेन यः ।

परित्राता च गोप्ता च रक्षिता क्व नु गच्छति ॥ ५ ॥

अयुद्धिर्वत किं राजा विपरीतमतिर्नु किम् ।

यो नाथं सर्वभूतानां परित्यजति राघवम् ॥ ६ ॥

इति राजमहिष्यस्ता विवत्सा इव धेनवः ।

अन्योन्यं संपरिष्वज्य बाहुभ्यां संप्रचुक्रुशुः ॥ ७ ॥

स तमन्तःपुरे घोरमार्त्तशब्दं महीपतिः ।

श्रुत्वा पुत्रवियुक्तात्मा विषसाद् सुदुःखितः ॥ ८ ॥

नान्निहोत्राण्यहूयन्त्स सूर्यश्चान्तरधीयत् ।

व्यसृजन्कवलाभगा गावो वत्सान् च ददुः ॥ ९ ॥

बृहस्पतिबुधार्केन्दुशुक्रांगारकराहवः ।

दारुणाः सोममासाद्य ग्रहाः सर्वेष्वतस्थिरे ॥ १० ॥

विशिखाश्च सधूमाश्च नाग्रयश्च प्रकाशिरे ॥ ११ ॥

अकालानिलवेगेन महोदधिरिवोद्धतः ।

रामे वनं प्रव्रजिते नगरं प्रचचाल च ॥ १२ ॥

दिशः पर्याकुलीभूतास्तिमिरेण समावृताः ।

नागरश्च जनः सर्वो दुःखशोकपरायणः ॥ १३ ॥

आहारे व्यवहारे च न कश्चित्कुरुते मनः ।

वाष्पपर्याकुलमुखो राजमार्गगतो जनः ॥ १४ ॥

न हृष्टो लच्यते कश्चित्सर्वः शोकपरायणः ।^०

न चर्वा पवनः शीतो न तताप दिवाकरः ॥ १५ ॥

न रराज शशी चापि सर्वमासीत्समाकुलम् ।

सर्वे सर्वं परित्यज्य राममेवान्वाचिन्तयन् ॥ १६ ॥

ये तु रामस्य सुहृदस्ते सर्वे मूढचेतसः ।

शोकभारसमाक्रान्ताः शयनं न जहुस्तदा ॥ १७ ॥

गर्हयन्तश्च कैकेयीं निन्दन्तश्च महीपतिम् ।

आत्मभाग्यान्यम्रयन्तः परं दैन्यमुपागताः ॥ १८ ॥

ततस्त्वयोध्या रहिता महात्मना पुरन्दरेणेव यथा स्मरावती ।

चचाल सर्वा भयभारपीडिता सनागयोधाश्चरथाकुला तदा ॥१९॥

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे ऽन्तःपुर विलापो

नाम चतुश्चत्वारिंशः सर्गः ॥ ४४ ॥

[पञ्चचत्वारिंशः सर्गः]

यावत्तु गच्छतस्तस्य राजा रूपं व्यलोकयत् ।
 नैरेक्ष्वाकुवरस्तावच्चक्षुषी समुपाहरत् ॥ १ ॥
 यावद्राजा प्रियं पुत्रं ददर्शात्यन्तधार्मिकम् ।
 ताम्प्रवर्धते चास्य चक्षुः पुत्रदिदृक्षया ॥ २ ॥
 नापश्यत्तु रजो ऽप्यस्य यदा रामस्य भूमिपः ।
 तदाऽऽर्त्तश्च विवर्णश्च पपात धरणीतले ॥ ३ ॥
 तरय दक्षिणमङ्गं तु कौशल्याऽग्रहदङ्गना ।
 रामं च साभ्यगात्पापा कैकेयी भरतप्रिया ॥ ४ ॥
 तां नयेन च संपन्नो धर्मेण विनयेन च ।
 उवाच राजा कैकेयीं समीक्ष्य व्यथितेन्द्रियः ॥ ५ ॥
 कैकेयि मा ममाङ्गानि स्प्राक्षीस्त्वं दुष्टचारिणि ।
 न हि न्वां स्पृष्टुमिच्छामि न भार्या त्वं न मे प्रिया ॥ ६ ॥
 ये च त्वामनुजीवन्ति नाहं तेषां न ते मम ।
 केवलार्थपरा हि त्वा त्यक्तधर्मा त्यजाम्यहम् ॥ ७ ॥
 अगृह्णा यच्च ते पाणिमग्निपर्ययणं' च यत् ।
 अनुजानामि तत्सर्वमिह लोके पत्र च ॥ ८ ॥
 भरतश्चेत्प्रतीतः स्याद्राज्य प्राप्येदमुत्तमम् ।
 यन्मे म दद्यात्प्रीत्यर्थं मम तत्समुपागतम् ॥ ९ ॥
 अथ रेणुपरिष्वक्तं ममुत्थाप्य महीपतिम् ।
 न्यवर्तत तदा देवी कौशल्या शोकरूपिता ॥ १० ॥

हत्वेव ब्राह्मणं राजा पदा स्पृष्ट्वेव पन्नगम् ।
 अन्वतप्यत धर्मात्मा पुत्रं संत्यज्य राघवम् ॥ ११ ॥
 निवर्तित्वा निवर्तित्वा सीदतो रथवर्त्मसु ।
 राज्ञस्तस्य बर्भा रूपं ग्रस्तस्यांशुमतो यथा ॥ १२ ॥
 विललाप च दुःखार्तः प्रियं पुत्रमनुस्मरन् ।
 नगरीं तामनुग्राप्तस्त्यक्त्वा पुत्रमनाथवत् ॥ १३ ॥
 इमानि ह्यमुख्यानां बहतां तं ममात्मजम् ।
 पदानि भुवि दृश्यन्ते स महात्मा न दृश्यते ॥ १४ ॥
 स नूनं किञ्चदेवाद्य वृक्षमूलमुपाश्रितः ।
 काष्ठं वा यदि वा ऽश्मानमुपधाय स्वपिप्यति ॥ १५ ॥
 उत्थास्यति च मेदिन्याः कृपणः पांसुगुण्ठितः ।
 विनिश्चसन्प्रस्रवणे करेणूनामिव द्विपः ॥ १६ ॥
 द्रक्ष्यन्ति पुरुषाश्चेमं दीर्घबाहुं वनेचराः ।
 राममुत्थाय गच्छन्तं लोकनाथमनाथवत् ॥ १७ ॥
 श्यामावदातं रक्ताक्षं चन्द्राननमनिन्दितम् ।
 पृथूरस्कं महाबाहुं शार्दूलममगामिनम् ॥ १८ ॥
 सिंहोरस्कं वृषस्कंधं चीरकृष्णाजिनाम्बरम् ।
 यदृच्छया देवलोकात्संप्राप्तमिव चासवम् ॥ १९ ॥
 सकामा भव कैकेयि विधवा राज्यमाप्स्यसि ।
 न ह्यहं तं नरव्याघमृते जीवितुमुत्सहे ॥ २० ॥
 इत्येवं विलपन् राजा जनार्धेनाभिमंशृतः ।
 अपस्मारंरिवाविष्टः स विवेश पुरीं तदा ॥ २१ ॥

शून्यचत्वरवेश्मान्तां संवृतापणदेवताम् ।

जनैर्दुःसागमक्लान् नैर्नात्याकीर्णमहापथाम् ॥ २२ ॥

तां स पश्यन्^१ पुरी राजा राममेवानुचिन्तयन् ।

विलपन् प्राविशद्राजा गृहं सूर्य इवांबुदम् ॥ २३ ॥

कौशल्याया गृहं शीघ्रं राममातुर्नयन्तु माम् ।

इति ब्रुवन्तं राजानमन्वयु^२ मर्गिदार्शिनः ॥ २४ ॥

तत्र चास्य प्रविष्टस्य कौशल्याया निवेशने ।

अधिरुह्यापि शयनं बभूव लुलितं मनः ॥ २५ ॥

स तच्छुष्कं हृदमिव सुपर्णेन हतोरगम् ।

रामेण रहितं वेश्म वैदेह्या लक्ष्मणेन च ॥ २६ ॥

तच्च दृष्ट्वा महाराजो भुजाबुधम्य दुःखितः ।

उच्चैः स्मरेण चुक्रोश हा राघव जहासि माम् ॥ २७ ॥

सुखितः किल तत् काले जीविष्यन्ति नरोत्तमाः ।

प्रतिश्रवन्ते ये रामं द्रक्ष्यन्ति पुनरागतम् ॥ २८ ॥

अथ रात्र्यां प्रपन्नायां कालरात्र्यां विशेषतः ।

अर्धरात्रे दशरथः कौशल्यामिदमब्रवीत् ॥ २९ ॥

न त्वां पश्यामि कौशल्ये साधु मां पाणिना स्पृश ।

रामे मे ऽनुमता दृष्टिरद्यापि न निवर्तते ॥ ३० ॥

तं राममेवानुविचिन्तयानं समीक्ष्य देवी शयने नरेन्द्रम् ।

उपोषविश्याधिकमार्त्तरूपा विनिःश्वसन्ती विललाप कृच्छ्रात् ॥ ३१ ॥

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे दशरथविलापो

नाम पञ्चचत्वारिंश सर्ग ॥ ४५ ॥

[पद्मचत्वारिंशः सर्गः]

ततः समीक्ष्य शयने सन्नं शोकेन कर्षितम् ।
 कौशल्या पुत्रशोकार्त्ता तमुवाच महीपतिम् ॥ १ ॥
 राघवे नृपशार्दूल विषं मुक्त्वा द्विजिह्ववत् ।
 विहरिष्यति कैकेयी सुरसं प्राप्तमनोरथा ॥ २ ॥
 विवास्य रामं सुभगा लब्धकामा मनस्विनी ।
 त्रामयिष्यति मां भूयः कृष्णाहिरिव वेदमनि ॥ ३ ॥
 अस्मिंस्तु नगरे रामश्चरन् भैक्ष्यं गृहे वसन् ।
 कामकारो वरं दातुमपि रामं ममात्मजम् ॥ ४ ॥
 पातितः स तु कैकेय्या स्थानादिष्टाद्यधेष्टतः ।
 प्रदिष्टो रक्षसां भागः पर्वणीवाहिताग्निना ॥ ५ ॥
 गजराजगति वीरो महाबाहुर्महाघनुः ।
 विशत्यरण्यं नूनं स सभार्यो लक्ष्मणान्वितः ॥ ६ ॥
 वनेष्वदृष्टदुःखानां कैकेय्या वचनात्प्रया ।
 त्यक्तानां वनवासाय का न्यत्रस्था भविष्यति ॥ ७ ॥
 ते भोगहीनामस्तरुणाः फलकाले विवामिताः ।
 वने वत्स्यन्ति कृपणा मम वत्साः मुदुःखिताः ॥ ८ ॥
 अर्षीदानीं म कालः स्यान्मम शोकापहारकः ।
 समार्यं सहितं भ्रात्रा पश्येयमिह यत्सुतम् ॥ ९ ॥
 कद्राज्योष्यां महाबाहुः पुरीं रामः प्ररक्ष्यति ।
 पुरस्कृत्य रथे सीतां पौलोमीचिच वृत्रहा ॥ १० ॥
 श्रुत्वैवोपस्थितं रामं कद्राज्योष्या भविष्यति ।
 यशस्विनी हृष्टजना पताकाप्यजमालिनी ॥ ११ ॥

कटा प्रेक्ष्य नरव्याघ्रमरण्यात्पुनरागतम् ।
 नन्दिष्यति पुरी रम्या समुद्र इव पर्वणि ॥ १२ ॥
 कदा प्राणिसहस्राणि राघवौ पुनरागतौ ।
 लाजंरकरिष्यन्ति प्रविशन्तापरिन्दमौ ॥ १३ ॥
 कदा परिणतो बुद्ध्या वयसा चामरप्रभः ।
 मामुपेक्ष्यति धर्मज्ञः सत्समिव मातरम् ॥ १४ ॥
 कदा सुमनसः कन्या द्विजा गाश्च फलानि च ।
 प्रविशन्तौ पुरी हृष्टौ करिष्येते प्रदाक्षिणम् ॥ १५ ॥
 प्रविशन्तौ कदाऽयोध्या द्रक्ष्यामि शुभलक्षणौ ।
 उदग्राभरणौ वीरौ निस्त्रिंशत्परधारिणौ ॥ १६ ॥
 आशासितानि देवेभ्यः कटा तं प्रतिमानदम् ।
 राम दृष्ट्वा प्रदास्यामि देवताभ्यः प्रहर्षिता ॥ १७ ॥
 निःशयमह मन्ये मया पूर्वं कदर्यया ।
 पातुक्कामेषु बल्मेषु मातृणा वारिताः स्तनाः ॥ १८ ॥
 माऽह गारिष्ये त्स्मेन पित्रसा पिह्वली कृता ।
 कैकेय्या पुरुषव्याघ्र बालत्मेन गर्भलात् ॥ १९ ॥
 तमह मद्गुणैर्युक्तं सर्वशास्त्रनिशारदम् ।
 एकपुत्रा पिना पुत्र जीवितु नोत्सहे चिरम् ॥ २० ॥
 न हि मे जीवितु किञ्चित्सामर्थ्यमिह विद्यते ।

अपश्यत्याः श्रियं पुत्रं महाशक्तु महाशक्तम् ॥ २१ ॥

अयं हि मा तापयते सुदारुण स्तनूजशोकप्रभरो हुताशनः ।
 महीमिमा रश्मिभिरुत्तमप्रभो यथा निदाघे भगवान् दिवाकरः ॥

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे कोशलयात्रिलापे नाम

पद्मचत्वारिंश मग ॥ ४६ ॥

[वं-४३]=[सप्तचत्वारिंशः सर्गः]=[दा-४५]

अनुरक्ता^१ महात्मानं रामं सत्यपराक्रमम् ।

अनुजग्मुः प्रयान्तं तं वनवासाय मानवाः ॥ १ ॥

निवर्त्यमानाः सुभृशं सुहृद्वर्गेण राघवात् ।

न स्म ते विनिवर्तन्ते रामस्यानुगता रथम् ॥ २ ॥

अयोध्यानिलयानां हि पुरुपाणां महायशाः ।

बभूव गुणसंपन्नः पूर्णचंद्र इव प्रियः ॥ ३ ॥

स याच्यमानः काकुत्स्थः स्वाभिः प्रकृतिभिर्वशी^२ ।

कुर्वाणः पितरं सत्यं वनमेवान्यपद्यत ॥ ४ ॥

अवेक्षमाणः मस्त्रेहं चक्षुषा प्रपिवन्निव ।

उवाच रामो धर्मात्मा ताः प्रजाः सन्निवर्तयन् ॥ ५ ॥

या प्रीतिर्वहुमानश्च मय्ययोध्यानिवामिनः ।

मत्प्रियार्थमशेषेण भरते मा निवेदयताम् ॥ ६ ॥

म हि कल्याणचारित्रैः कैकेय्यानन्दवर्धनः ।

करिष्यति यथावद्वः^३ प्रियगणि च हितानि च ॥ ७ ॥

ज्ञानविज्ञानविनयै र्वृद्धः शीलगुणान्वितः ।

अनुरूपः स वो भर्ता भविष्यति सुखावहः ॥ ८ ॥

स हि राजगुणैर्युक्तो युवराजः समाहितः ।

विनीतश्च सदा यत्तैः कर्तव्यं तस्य शासनम् ॥ ९ ॥

ज्ञानवृद्धो वयोवृद्धो मृदुर्वीरो गुणान्वितः ।

प्रगल्भः प्रियवादी च नित्यं बंधुजनप्रियः ॥ १० ॥

१ य-अनुरक्तं । २ य-वली । ३ कै-यथावर्षः ।

संतप्यते यथाऽसौ न वनवामं गते मयि ।
 महाराजस्तथा कार्यं मम प्रियचिकीर्षुभिः ॥ ११ ॥
 यथा यथा दाशरथिर्धर्ममेवान्वर्कोतयत् ।
 तथा तथा प्रकृतयो राममेवानुवचिरे ॥ १२ ॥^{०१}
 वाप्सेण पिहितो वीरो रामः सौमित्रिणा सह ।
 आचर्षु गुणै र्बद्ध्वा पौरजानपदं जनम् ॥ १३ ॥
 अथ द्विजातयः शीलवृत्तश्रुतगुणान्विताः ।
 तपसा भावितात्मानो वचसा च महौजसः ॥ १४ ॥
 वयःप्रकंपशिरसो दूरादूचुरिदं वचः ।
 वहन्ते जवना रामं भो भो जात्यास्तुरंगमाः ॥ १५ ॥
 न गंतव्यं निवर्तध्वं हिता भवत भर्त्सरि ।
 कर्णवन्ति हि भूतानि विशेषेण तुरंगमाः ॥ १६ ॥^{०१}
 उपवाह्यो हि वो भर्त्ता नापवाह्यः पुराढनम् ।
 एवमार्त्तप्रलापानां ब्राह्मणानां निशम्य सः ॥ १७ ॥
 अवेक्ष्य सहसा रामो रथादवततार ह ।
 पद्भ्यामेव जगामाशु समीतः सहलक्ष्मणः ॥ १८ ॥
 सन्निकृष्टपदन्यासो रामो वनपरायणः ।
 द्विजाती[न्]हि पदं(दा)ती(तीं)स्तान् रामश्चारिवभूषणः ॥^{०२}
 न शशाकाग्रणीश्चक्षुः परिर्माक्तुमवस्थितः ॥ १९ ॥
 गच्छन्तमेव तं दृष्ट्वा वनं संध्रान्तमानसाः ।
 ऊचुः परमसंतप्ता रामं वाक्यमिदं द्विजाः ॥ २० ॥

अयं ब्राह्मणमंघ्र्यं भवंतमनुगच्छति ।

द्विजाः * स्कंधाधिरुद्धाम्बामग्रतो * ऽप्यनुयान्ति हि ॥२१॥

याजिनं—समुच्छानिं' छत्राण्येतानि यास्यतः ।

शृष्टतोऽनुप्रयांति न्वां हंमानामिव पंक्तयः ॥ २२ ॥

अनवाहातपत्रस्य रश्मिमन्तापितस्य ते ।

पाथि छायां करिष्यामः स्वन्दुर्वाजपेयिकं ॥ २३ ॥

या हि नः सततं बुद्धि र्वेदमंत्रानुसारिणी ।

त्वत्कृते मा स्मृताऽम्माभिर्वनवामानुसाग्निं ॥ २४ ॥

हृदयेष्ववतिष्ठन्ति वेदा ये नः परं धनम् ।

ते मास्यन्ति वनं त्वद्य त्वद्वाहुवलमाश्रिताः ॥ २५ ॥

न पुनर्निश्चयः कार्यस्त्वत्कृते निश्चिता वयम् ।

वामिष्यन्ति गृहेष्वेव दाराश्चारिवरक्षिताः ॥ २६ ॥

त्वयि धर्मव्यपेधे तु न्याय्यं धर्ममवक्षितुम् ।

यदि धर्मं न जानामि प्रजानां रक्षणोद्भवम् ॥ २७ ॥

ब्राह्मणा माननीयास्ते प्रजानां हितकाम्यया ।

याचितो ऽमि निवर्त्तस्व हंसशुक्लशिरोरुहः ॥ २८ ॥

शिरोभि र्विनयाचारमदीपतनपांसुर्लः ।

बहूनां वितता यज्ञा द्विजानां य इहागताः ॥ २९ ॥

तेषां समाप्तिरापन्ना तव वत्स निवर्त्तने ।

भक्तिमन्ति हि भूतानि जंगमाजंगमानि च ॥ ३० ॥

५ ल—हि ब्राह्मणमंघ्र्यं । * (द्विज-?) * (०मग्रयो ?) ६ ल—याजिनां ।

म—याजि । (याजपेय ?) । ७ ल—समुच्छानि । (समुत्थानि) ।

याचन्ते त्वां भृशार्त्तानि कुरु तेषां प्रभो हितम् ।

याचमानेषु तेषु त्वं भक्तिं भक्तेषु दर्शय ॥ ३१ ॥

भक्तानां हि परित्यागस्तवैव विदितो यथा ।

अमुगन्तुं न शक्ता हि मूलैरुर्वीनिबन्धनैः ॥ ३२ ॥

ऊर्ध्वशाखाः सकरुणं विक्रोशन्तीव पादपाः ।

निश्चेष्टाहारसंचारा वृक्षसकन्धेष्वधिष्ठिताः ॥ ३३ ॥

त्वां पक्षिणोऽपि याचन्ते सर्वभूतानुकम्पितम् ।

एवं विक्रोशतामेव द्विजानां न न्यवर्त्तत ॥ ३४ ॥

तूष्णीमेव ययौ रामो वाग्मी सौमित्रिणा सह ।

गच्छन्नेवाथ सहमा राघवो धर्मवत्सलः ।

ददर्श तमसां तत्र वारयन्तीमिवाग्रतः ॥ ३५ ॥

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे ब्राह्मणवाक्यं नाम

सप्तचत्वारिंशः सर्गः ॥ ४७ ॥



[वं-४४]=[अष्टचत्वारिंशः सर्गः]=[दा-४६]

ततः स तमसातीरे वाममाश्रित्य राघवः ।

सीतामुद्दिश्य सौमित्रिमिदं वचनमब्रवीत् ॥ १ ॥

प्रथमेयं निशा सौम्य सौमित्रे समुपस्थिता ।

वनवासस्य भद्रं ते नोत्कण्ठितुमिहार्हसि ॥ २ ॥

पश्य शून्यान्यरण्यानि रुदन्तीव समन्ततः ।

यथा निलयसंलीनैर्हीनानि भृगपक्षिभिः ॥ ३ ॥

अयोध्या नगरी शून्या राजधानी पितुर्मम ।

सञ्चालवृद्धा निर्घातानस्मान् शोचति लक्ष्मण' ॥ ४ ॥

भरतः खलु धर्मात्मा पितरं मातरं च मे ।

धर्मकामार्थसहितैर्वाक्यैराश्वसयिष्यति ॥ ५ ॥

स भरतस्यानुशंखात्वं संचिन्त्याहं पुनः पुनः ।

नानुशोचामि पितरं मातरं चापि लक्ष्मण ॥ ६ ॥

त्वया युक्तं नरव्याघ्र माननुव्रजता कृतम् ।

ईप्सितव्या हि वैदेह्या रक्षणार्थं सहायता ॥ ७ ॥

अद्भिरेव हि सौमित्रे वसामोऽद्य निशामिमाम् ।

एतद्भि रोचते मद्यं वन्येऽपि विविधे सति ॥ ८ ॥

एवमुक्त्वा तु सौमित्रिं सुमन्त्रमपि राघवः ।

अग्रमत्तस्त्वमश्वेषु भव स्रतेत्युवाच ह ॥ ९ ॥

सोऽध्वान् सुमन्त्रः संयम्य भूयस्तं प्रत्युपस्थितः ।

प्रभूतं यवसं दत्त्वा बभूव प्रत्यनन्तरः ॥ १० ॥

उपास्य तु शिवां सन्ध्यां दृष्ट्वा रात्रिमुपस्थिताम् ।
 रामस्य शय्यां संचक्रे स्रुतः सौमित्रिणा सह ॥ ११ ॥
 तां शय्यां तमसातीरे वृक्षपर्णेः कृतां तदा ।
 रामः सौमित्रिमामन्थ्य सभार्यः संप्रिवेश ह ॥ १२ ॥
 प्रक्षालयामास तदा पादौ रामस्य लक्ष्मणः ।
 स्वयं सलिलमादाय सीतायाश्चप्यनन्तरम् ॥ १३ ॥
 सभार्यं संप्रसुप्तं तं भ्रातरं वीक्ष्य लक्ष्मणः ।
 कथयामास स्रुताय रामस्य विविधान् गुणान् ॥ १४ ॥
 गोकुलाकुलतां नीतं तमसातीरमास्थितः ।
 अवसत्तत्र तां रात्रिं रामः प्रकृतिभिः सह ॥ १५ ॥
 जाग्रतोरेव सा रात्रिः सारथेर्लक्ष्मणस्य च ।
 जगाम तमसातीरे रामस्य ब्रुवतो गुणान् ॥ १६ ॥
 उत्थाय चिररात्रे स प्रजाः सुप्ता निशम्य च ।
 अब्रवीद्भ्रातरं रामो लक्ष्मणं शुभलक्षणम् ॥ १७ ॥
 अस्मद्व्यपेक्षया तात निर्व्यपेक्षास्तुरसेष्विमान् ।
 वृक्षमूलेषु संसुप्तान् पश्य पौरान् गृहेष्विव ॥ १८ ॥
 यथैते निश्चिताः सर्वे यतन्ते ऽस्मन्निवर्त्तने ।
 अपि देहांस्त्यजिप्यन्ति न त्यजिप्यन्ति निश्चयम् ॥ १९ ॥
 यावदेव तु संसुप्तास्तावदेव चयं लघु ।
 रथमारुह्य गच्छामः पथाऽनेन तपोवनम् ॥ २० ॥
 एवमेते निमोक्षयन्ति मतिमस्मद्व्यपेक्षणे ।

अतोऽन्यथाकृते ऽस्माभिर्न तु मोक्षयन्ति निश्चयम् ॥ २१ ॥

तात भूयोऽपि नेदानीमिक्ष्वाकुरुपुरवामिनः ।

स्वपेयुरनुरक्ता मे वृक्षमूलान्युपाश्रिताः ॥ २२ ॥

पौरा ह्यनुगता दुःसाद्विप्रमोच्या नराधिपैः ।

न तु सत्त्वात्मनो योज्या दुःसेषु पुरवासिनः ॥ २३ ॥

अथाह लक्ष्मणो रामं साक्षाद्दर्शयित्वा स्थितम् ।

रोचते मे महाप्राज्ञ क्षिप्रमारुह्यतामिति ॥ २४ ॥

ततस्तु घृतस्त्वरितः स्यन्दनेन हयोत्तमान् ।

योजयित्वा तु रामाय प्राञ्जलिः प्रत्यवेदयत् ॥ २५ ॥

मोहनार्थं तु पौराणां घृतं रामो ऽब्रवीद्वचः ।

उदध्नुसः प्रयाहि त्वं रथमाढाय मारये ॥ २६ ॥

मुद् मुहुर्त्तं त्वरितं गत्वा निवर्तय रथं पुनः ।

यथा च न विदुः पौरास्तथा कुरु समाहितः ॥ २७ ॥

रामस्य वचनं श्रुत्वा तथा चक्रे म मारयिः ।

प्रत्यागम्य तु रामाय स्यन्दनं प्रत्यवेदयन् ॥ २८ ॥

म स्यन्दनमाधिष्ठाय राघवः मपरिच्छदः ।

शीघ्रगामाकुलावार्तां तममामतरन्नदीम् ॥ २९ ॥

संतीर्थं च महाप्राहुः श्रीमच्छिप्रमकण्टकम् ।

प्रपेदे तममामार्गमभयं शुभदर्शनम् ॥ ३० ॥

प्रतुष्य पौरास्तु ततो निशाक्षये रथस्य तत्तमंददृशुर्निवर्तनम् ।

नृपात्मजः मोऽनुगतः पुरीमिति व्यपेक्षया ते नगरं पुनर्ययुः ॥३१॥

इत्यापेण रामायणे ऽयोध्याकाण्डे तममानीरनियामो

नाम अष्टचत्वारिंशः सर्गः ॥ ४८ ॥

[वं-४५]=[एकोनपञ्चाशः सर्गः]=[दा-४८।२]
 अनुगम्य निवृत्तानां रामं नगरवासिनाम् ।
 तद्गतानीव सत्त्वानि बभूवुर्गतचेतसाम् ॥ १ ॥
 स्वं स्वं ते गृहमासाद्य पुत्रदारैः समागताः ।
 अश्रुणि मुमुक्षुः सर्वे सुस्वरं वाष्पविह्वलाः ॥ २ ॥
 न स्म सद्योमृतान् कश्चित् सुप्रियानपि बान्धवान् ।
 तथा शोचत्ययोध्यायां यथा रामविवासने ॥ ३ ॥
 न च श्रीराविशत्कश्चिन्न चैव जुहुवुर्द्विजाः ।
 ब्रह्म न ग्राभवत्किञ्चिन्न च धर्मोऽभ्यवर्त्तत ॥ ४ ॥
 व्यनदन्वाष्पमुत्सृज्य केचित्तत्र सुदुःखिताः ।
 शयनेऽप्यपतंश्चान्ये निकृत्ता इव पाटपाः ॥ ५ ॥
 इष्टं दृष्ट्वा च नाहृष्यन् विपुलं वा धनागमम् ।
 पुत्रं प्रथमजं दृष्ट्वा जननी नाभ्यनन्दत ॥ ६ ॥
 कुले कुले रुदन्त्यथ भर्त्तारं गृहमागतम् ।
 पितुदन्ति सुदुःखार्त्ता वाग्भिस्तोत्रेरिव द्विपम् ॥ ७ ॥
 किं नु तेषां गृहैः कार्यं किं दारैः किं धनेन वा ।
 प्राणं वा किं सुरैर्वापि ये न पश्यन्ति राघवम् ॥ ८ ॥
 स एकः पुरुषो लोके लक्ष्मणः सह सीतया ।
 यो ऽनुगच्छति काकुत्स्थं रामं परिचरन्वने ॥ ९ ॥
 आपगाः कृतपुण्याश्च पवित्र्यश्च वने शुभाः ।
 यासु पास्यति काकुत्स्थो विगाह्य सलिलं शुचि ॥ १० ॥
 निचित्रकुसुमापीडा मञ्जरीमधुधारिणः ।

पादपाः पर्वताग्रस्था रमयिष्यन्ति राघवम् ॥ ११ ॥
 अकाले ह्यपि मुख्यानि मूलानि च फलानि च ।
 दर्शयिष्यन्ति वृक्षेषु गिरीणां राममागतम् ॥ १२ ॥
 काननं चापि शैलं वा यं रामो ऽधिगमिष्यति ।
 प्रियातिथिमिव प्राप्तं नैनं शक्यति नार्चितुम् ॥ १३ ॥
 विचित्रकुसुमैर्वृक्षैर्लम्बमञ्जरीधारिभिः ।
 विदर्शयन्तो विविधान् धातूश्चित्रांश्च निर्झरान् ॥ १४ ॥
 रमयिष्यन्ति काकुत्स्थ मटव्यश्चित्रकाननाः ।
 आपगाश्च तथारूपाः सानुमन्तश्च पर्वताः ॥ १५ ॥
 स हि भर्ता सशैलाया वसुमत्या महायशाः ।
 धर्मपालश्च लोकस्य वीरो दशरथात्मजः ॥ १६ ॥
 यत्र रामो भवेद्भर्ता नास्ति तत्र पराभवः ।
 स हि नाथोऽस्य जगतः स गतिः स परायणम् ॥ १७ ॥
 युष्माकं राघवो ऽत्यर्थं योगक्षेमं करिष्यति ।
 तूर्णं तमनुगच्छामो यावद्दूरं न गच्छति ॥ १८ ॥
 पादच्छायासुखं तस्य संश्रयामाकुतोभयाः ।
 वयं परिचरिष्यामः सीतां यूयं च राघवम् ॥ १९ ॥
 इति पौरस्त्रियो भर्तृन् दुःखार्तास्तांस्तदाऽब्रुवन् ।
 युष्माकं राघवो रक्षन् योगक्षेमं करिष्यति ॥ २० ॥
 सीता नारीजनस्यास्य योगक्षेमं करिष्यति ।^०
 स हि शूरो महाबाहुः पुत्रो दशरथस्य वै ॥ २१ ॥
 को न तेन प्रतीयेत वामं नोद्विगमानसः ।

संप्रीयेतामनोज्ञेन सोत्कण्ठितजनेन च ॥ २२ ॥

कैकेय्या यदिदं राज्यं स्यादधर्म्यमनाथवत् ।

नात्र नो जीवितेनार्थः कुतः पुत्रैः कुतो धनैः ॥ २३ ॥

या पुत्रं पार्थिवेन्द्रस्य प्रव्राजयति निर्घृणा ।

इच्छेद्यदि महाराजस्तं राज्येनाभिषेचितुम् ॥ २४ ॥

न हि जातु चिरं जीवेद्राजा परमदुःखितः ।

गते दशरथे स्वर्गमधर्मं प्रतिपत्स्यते ॥ २५ ॥

यया^१ पुत्रश्च भर्ता च त्यक्तावैश्वर्यकारणात् ।

न सा संरक्षितुं शक्ता कैकेयी कुलपांसनी ॥ २६ ॥

कैकेय्या न वयं राज्ये भृतका निवसेम हि ।

जीवन्त्यां साधु जीवामः पुत्रैरपि शयामहे ॥ २७ ॥

न हि प्रव्रजिते^२ रामे जीविष्यति महीपतिः ।

मृते दशरथे व्यक्तं विलापस्तदनन्तरम् ॥ २८ ॥

मिथ्या प्रव्रजितो रामः सीता लक्ष्मण एव च ।

भरताय तिसृष्टाः^३ स्म^४ क्षुद्राय (रुद्राय) पशवो यथा ॥ २९ ॥

ते त्रिषं पिवतालोड्य क्षीणपुण्याः सुदुर्गताः^५ ।

राघवं चानुगच्छध्वं प्रणाशं माऽनुगच्छत^६ ॥ ३० ॥

विलेपुरेऽमार्त्तास्ता नगरे नगरस्त्रियः ।

इति स्म ता रामनिमित्तमातुरा यथा पितुर्भातरि वा विवामिते ।

विलप्य दीना रुरुदुः सुदुःखिताः सुतेर्हि तासामधिकः स राघवः ३१

इत्यापे^७ रामायणे ऽयोध्याकाण्डे नगरस्त्रीविलापो

नाम एकोनपञ्चाशः सर्गः ॥ ४९ ॥

२ घ, म-नु । ३ व, ल, म यथा । ४ घ, म-प्रव्राजिते । ५ ल-विदिष्टा ।

६ कै-स । म-सो । ७ घ-सुदुर्गता । ८ म-ता (मा?) धिगच्छत ।

[वं-४६]=[पञ्चाशः मर्गः]=[दा-४९]

रामोऽपि रात्रिशेषेण तेनैव महदन्तरम् ।
जगाम पुरुषव्याघ्रः पितुराज्ञामनुस्मरन् ॥ १ ॥
तथैव गच्छतस्तस्य प्रभाता रजनी शुभा ।
उपस्थाय ततः सन्ध्यां तथैवाम्युदिते रवाँ ॥ २ ॥
तं स्यन्दनमधिष्ठाय प्रतस्थे राघवस्तदा ।
गोमती माकुलावतीमत्तरद्वे महानदीम् ॥ ३ ॥
तामुत्तीर्य महाबाहुः श्रीमच्छिवमर्कटमम् ।
प्रतिपेदे तमसामार्गमनुरूपं शिवं शुभम् ॥ ४ ॥
ग्रामान्सुकृष्टसीमन्श्च पुष्पितानि वनानि च ।
पश्यन्नेव ययौ शीघ्रैः श्वर्तरेव हयोत्तमः ॥ ५ ॥
शृण्वन्वाचो मनुष्याणां ग्राममवासवासिनाम् ।
राजानं धिग् दशरथं कामस्य वशवर्त्तिनम् ॥ ६ ॥
नृशंसा वतर्कक्रेयी पापा पापानुबन्धिनी ।
तीक्ष्णा सा भिन्नमर्यादा क्रूरे कर्मणि वर्तते ॥ ७ ॥
या पुत्रमीदृशं राज्ञः प्रवासयति धार्मिकम् ।
अरण्याय महात्मानं सानुक्रोशं जितेन्द्रियम् ॥ ८ ॥
एता' वाचो मनुष्याणां पथि ग्रामेषु राघवः ।
शृण्वन्नपि ययौ वीरः कौशल्यानन्दवर्धनः ॥ ९ ॥
गोमतीं चाप्यतिक्रम्य राघवः शीघ्रगर्हयैः ।
मयूरहंसाभिरुतां सस्मार स्वरयूं नदीम् ॥ १० ॥

स महीं मनुना राज्ञा दत्तां चेक्ष्वाकवे पुरा ।
 स्फीतराष्ट्रवतीं रामो वैदेह्यै समदर्शयत् ॥ ११ ॥
 सूत इत्येवमाभाष्य सारथिं तमभीक्ष्णशः ।
 मत्तहंसस्वनः श्रीमानुवाच पुरुपर्षभः ॥ १२ ॥
 कदाऽहं पुनरागत्य सरग्नाः सलिले शुभे ।
 मृगयां पर्यटिष्यामि पित्रा मात्रा च सङ्गतः ॥ १३ ॥
 इत्येवमभिकांक्षामि मृगयां सरयू तटे ।
 गतिर्ह्येषा परा लोके राजर्षिगणसेविता ॥ १४ ॥
 स तमध्वान मिक्ष्णाकुः सर्वं मधुरजल्पकः ।
 त तमर्थमभिप्रेत्य ययौ चाक्यमुदीरयन् ॥ १५ ॥
 गत्वा च देवसङ्काशः शीघ्रं शीघ्रपराक्रमः ।
 अथाससाद् सायाह्ने शृङ्गवीरपुरं महत् ॥ १६ ॥
 त्रिगाह्य सरयूं रम्यां वीरो लक्ष्मणपूर्वजः ।
 अयोध्याभिमुखो रामः प्राञ्जलिर्वाक्यमब्रवीत् ॥ १७ ॥
 सोच्छ्वासहृदयः पश्यन्मीतां लक्ष्मणमेव च ।
 आपृच्छामि पुरीं श्रेष्ठे काकुत्स्थपरिपालिते ॥ १८ ॥
 देवता भवनानि त्वं पालयानां सन्तिनः* ।
 निवृत्तवननामस्त्वा कृतज्ञो जगतीपतिः ॥ १९ ॥
 पुनर्द्रक्ष्यामि पित्रा च मात्रा च सह संगतः ।
 ततो रुधिरताम्राक्षो भुजमुधम्य दक्षिणम् ॥ २० ॥

२ म—संसृता । ३ घ, म—पुरे । ल—पुरि । । कै, य—“पालय ”
 म—“पाल ” ।

उवाचासुमुखो दीनो रामो जानपदान् वचः ।

अनुक्रोशो दया चैव युष्माभिर्दर्शितो मयि ॥ २१ ॥

चिराद्दुःखेन पापी-गम्यतामर्थसिद्धये ।

ते प्रणम्य महात्मानं कृत्वा चाभिप्रदक्षिणम् ॥ २२ ॥^७

विनदन्तो जना घोरं न्यवर्तन्त क्वचित् क्वचित् ।

तथा विलपतां तेषामतृप्तानां च राघवः ॥ २३ ॥

अचक्षुर्विषयं प्रागाद्यथार्कः क्षणदागमे ।

ततो धान्यधनोपेतां दानशीलजनावृताम् ॥ २४ ॥

अकुतश्चिद्भयां क्षेमां चैत्ययूपशतांकिताम् ।

उद्यानोपवनोपेतां संपन्नतरगोरसाम् ॥ २५ ॥

तुष्टपुष्टजनाकीर्णां गोकुलाकुलशोभिताम् ।

प्रेक्षणीयां नरेन्द्राणां ब्रह्मवोपविनादिताम् ॥ २६ ॥

रथेन मनुजव्याघ्रः कोमलामत्यवर्तत् ।

संबद्धनिर्विशमुदारसत्त्वं चीरोचरासङ्गधरं युवानम् ।

दृष्ट्वा ऽभिजग्मुर्मुदिता निपादा गुहं पुरस्कृत्य सुकृष्णवर्णाः^{१०} ॥२७॥

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे शृङ्गवेरपुरोपगमनं

नाम पञ्चाशः सर्गः ॥ ५० ॥



5 घ, ल—जनपदान् । 6 ल—पापेन । 7 म । 8 य—विदुः । 9 कै—

०ईताम् । 9 कै, ल—कोमल्यां० । म—कोमल्यां० । 10 ब—सकृष्णं० ।

[वं-४७]=[एकपञ्चाशः सर्गः]=[दा-५० । १२]

ततस्त्रिपथगा गङ्गां शीततोयामशेषलाम् ।

ददर्श राघवः पुण्या दिव्यामृषिनिषेविताम् ॥ १ ॥

पत्रिसलिलस्पर्शा हिमवच्छैलसंभ्राम् ।^०

स्वर्गारोहणानिःश्रेणिं महर्षिगणसेविताम् ॥ २ ॥

समुद्रमहिषीं मिष्टां सारसक्रौञ्चनादिताम् ।

मृगयुथैः पिवद्भिश्च वारणैश्चाभिनादिताम् ॥^० ३ ॥

तामूर्मिकलिलावर्तामन्ववेक्ष्य स राघवः ।

सुमन्त्रमब्रवीत्सुतमिहैवाद्य वसामहे ॥ ४ ॥

अविदूरे ह्ययं नद्या बहुपुष्पप्रवालवान् ।

सुमहानिङ्गुदीवृक्षो वसामात्रैव सारथे ॥ ५ ॥

लक्ष्मणश्च सुमन्त्रश्च वाढमित्येव राघवम् ।

उक्त्वा तमिङ्गुदीवृक्षं सुमन्त्रोऽभियया हयैः ॥ ६ ॥

रामोऽपि यात्वा तं वृक्षं रम्यं मिक्ष्वाकुनन्दनः ।

रथादवातरत् तस्मात्ससीतः सहलक्ष्मणः ॥ ७ ॥

सुमन्त्रोऽप्यवतीयव स्नापयित्वा हयोत्तमान् ।

वृक्षमूलगतं राममुपतस्थे कृताञ्जलिः ॥ ८ ॥

तत्र राजा निपादानां रामस्य दयितः सखा ।

धार्मिकः सत्यसन्धश्च गुहो नाम महानलः ॥ ९ ॥

स श्रुत्वा पुरुषव्याघ्रं रामं त्रिपथमागतम् ।

वृद्धैः परिवृतोऽमाल्यैर्जातिभिश्चाम्युपागतम् ॥^० १० ॥

ततो निपादाधिपतिं दृष्ट्वा दूरादवस्थितम् ।^{०१}
 सह सौमित्रिणा रामः समागच्छद्गुहं प्रति ॥ ११ ॥
 तमार्तं संपरिष्वज्य गुहो वचनमब्रवीत् ।
 यथा ऽयोध्या तथेदं ते राम किं करवामहे ॥ १२ ॥
 स शुचीन्यन्नपानानि गुणवन्ति च राघवे ।
 अर्घ्यं चोपानयत्क्षिप्रं वाक्यं चेदमुवाच ह ॥ १३ ॥
 भक्ष्यं भोज्यं च पेयं च लेह्यं च समुपस्थितम् ।
 शयनानि च मुख्यानि वाजिनां यवसं तथा ॥ १४ ॥
 स्वागतं ते महाबाहो तवेयं^० निखिला^० मही^० ।
 वयं प्रेष्या भवान् भर्ता साधु राज्यं प्रशाधि नः ॥^०१५ ॥
 आज्ञापय^० महाबाहो^० यथेष्टं रघुनन्दन ।
 यथा स्वकं तथैवेदं पुरं किं करवाणि ते ॥ १६ ॥
 गुहमेवं ब्रुवाणं तु राघवः प्रत्युवाच ह ।
 अर्चिता मानिताश्चैव सर्वथा भवता वयम् ॥ १७ ॥
 पद्मश्यामभिगतं^० चैव स्नेहादाघ्राय मूर्धनि ।
 भुजाभ्यां साधुपीनाभ्यां पीडयन् वाक्यमब्रवीत् ॥ १८ ॥
 दिष्टयेह गुह पश्यामि त्वामरोगं सवान्धवम् ।
 अपि ते कुशलं राष्ट्रे मित्रेषु च धनेषु च ॥ १९ ॥
 यदिदं भवता किञ्चित्प्रीत्यर्थमुपकल्पितम् ।
 सर्वं तदनुजानामि न कालो मे प्रतिग्रहे ॥ २० ॥
 चतुर्दशसमाः सौम्य वत्स्यन्तं पितुराज्ञया ।

कुशचीराम्बरधरं फलमूलाशनं च माम् ॥ २१ ॥

विद्धि प्राणिहितं धर्मे तापसं वनगोचरम् ।

अश्वाना यवसेनार्थी नाहमन्येन केनचित् ॥ २२ ॥

एतावताऽहं भवता भविष्यामि सुपूजितः ।

एते हि दयिता राज्ञः पितुर्दशरथस्य मे ॥ २३ ॥

एतैः सुपूजितैरश्वैर्भविष्याम्यहमर्चितः ।

स एवमुक्तो रामेण गुहो गहनगोचरः ॥ २४ ॥

अश्वानां प्रतिपानं च यवसं चैव सोऽन्वशात् ।

गुहस्तत्रैव पुरुषान् दीयता मिति सत्वरम् ॥ २५ ॥

ततश्चीरोत्तरासङ्गः सन्ध्यामन्वास्य पश्चिमाम् ।

जलमेवाददे रामो लक्ष्मणेनाहूत स्वयम् ॥ २६ ॥

तस्य भूमौ शयानस्य पादो प्रक्षाल्य लक्ष्मणः ।

सभार्यस्य ततः पश्चात्तस्थौ वृक्षमुपाश्रितः^५ ॥ २७ ॥

गुहोऽपि सह ह्यतेन सौमित्रिमनुभाष्य च^६ ।

अन्यजाग्रत्ततो राममप्रमत्तो धनुर्धरः ॥ २८ ॥

तथा शयानस्य च तस्य धीमतो यशस्विनो दाशरथेर्महात्मनः ।

अदृष्टदुःसस्य सुरैरधितस्य^७ तदा व्यतीयाय सुरेन शर्वरी ॥२९॥

इत्यार्षे रामायणे ऽथोऽध्याकाण्डे गुहाश्रमनिवासो

नाम एकपञ्चाशः सर्गः ॥ ५१ ॥

५ षै-प्रतिमाना । य, ल-प्रतिमानं । म-प्रतिमानश्च । ० म-०मुपागतं ।

६ म-ह । ७ म-तथाधितस्य ।

[वं-४८]=[द्विषञ्चाञ्जः सर्गः]=[दा-५१]

तं जाग्रतममंभ्रान्तं भ्रातुरर्थे महात्मनः ।

गुहः परमसन्तप्तो लक्ष्मणं वाक्यमब्रवीत् ॥ १ ॥

इयं तात सुखा शय्या त्वदर्थमुपकल्पिता ।

प्रत्याश्रसिहि साध्वस्यां राजपुत्र निशामिमाम् ॥ २ ॥

न हि रामात्प्रियतरो ममास्ति भुवि कश्चन ।

ब्रवीम्येतदहं सत्यं वीर सत्येन ते शपे ॥ ३ ॥

अस्य प्रसादादाशंसे लोके ऽस्मिन्सुमहद्यशः ।

धर्मावाप्तिं च विपुलामर्थसिद्धिं च केवलाम् ॥ ४ ॥

सोऽहं प्रियतमं रामं शयानं मह सीतया ।

रक्षिष्यामि धनुष्पाणिः सर्वतो ज्ञातिभिर्द्वृतः ॥ ५ ॥

न मे ह्यविदितं किञ्चिद्धने ऽस्मिंश्चरतः सदा ।

चतुरङ्गं ह्यपि बलं सुमहत्प्रसहाम्यहम् ॥ ६ ॥

लक्ष्मणस्तमुवाचेदं रक्ष्यमाणास्त्वयाऽनघ ।

अनुनीता वर्यं सर्वे धर्ममेवानुपश्यता ॥ ७ ॥

कथं हि राघवं* भूमौ शयानं* मह सीतया ।

शक्या निद्रा मया लब्धुं जीवितं वा सुखानि वा ॥ ८ ॥

यो न देवासुरैः सर्वैः शक्यः प्रमहितुं युधि ।

तं पश्य गुह संविष्टं तृणेषु सह भार्यया ॥ ९ ॥

यो मात्रा तपसा लब्धो विविधश्चापि याचितः ।

१ म—०तरं । २ म—०तरस्तदा । ३ म—०पश्यत । * (राघवे ?) ।

* (शयाने ?) ।

एको दशरथस्यैप पुत्रः सदृशलक्षणः^४ ॥ १० ॥
 अस्मिन् प्रव्रजिते राजा न चिरं वर्तयिष्यति ।
 विधवा मेदिनी नूनं क्षिप्रमेव भविष्यति ॥ ११ ॥
 विनद्य च महानादं श्रमेण च युताः स्त्रियः ।
 मूका इव स्थिता नूनमद्य राजनिवेशने ॥ १२ ॥
 कौशल्या चैव राजा च तथैव जननी मम ।
 नाशासे^५ यदि जीवन्ति सर्वे ते शर्वरीमिमाम् ॥ १३ ॥
 जीवेदपि हि मे माता शत्रुघ्नस्यान्ववेक्षया ।
 एतद्दुःखं तु कौशल्या विवत्सा न सहिष्यति ॥ १४ ॥
 अनुरक्तजनाकीर्णा शोकदुःखममन्विता ।
 रामव्यसनमन्तप्ता सा पुरी विनाशिष्यति ॥ १५ ॥
 चिरसंकल्पितं नूनमनवाप्य मनोरथम् ।
 रामे राज्यमनिक्षिप्य पिता मे विनाशिष्यति ॥ १६ ॥
 सिद्धार्थः पितरं वृद्धं तस्मिन्काले ह्युपस्थिते ।
 प्रेतकार्येषु सर्वेषु संस्मरिष्यति राघवः ॥ १७ ॥
 रम्यचत्वरसंस्थानां सुविभक्तचतुष्पथाम् ।
 हर्म्यप्रामादसंचद्धां गणिकागणशोभिताम् ॥ १८ ॥
 रथाश्वगजसंवाधां तूर्यनादनिनादिताम्^६ ।
 सर्वकल्याणसंपन्नां हृष्टपुष्टजनाकुलाम् ॥ २९ ॥
 आरामोद्यानसंपन्नां समाजोत्सवशालिनीम् ।
 सुखिनो विचारिष्यन्ति राजधानीं पितुर्मम ॥ २० ॥

अपि सत्यप्रतिज्ञेन सार्द्धं कुशलिनो वयम् ।

निवृत्ते वनवासेऽस्मिन्नयोध्यां प्रविशेम हि ॥ २१ ॥

परिदेवयमानस्य दुःसार्तस्य महात्मनः ।

तिष्ठतो राजपुत्रस्य शर्वरी माऽत्यवर्तत^७ ॥ २२ ॥

चिन्ता^८—प्राप्तस्तु सौमित्रि निद्रया परिवर्जितः ।

सपत्न्या वेदम^९ कान्तः संकेतप्रतिलब्धया ॥ २३ ॥

रामोपि मह वैदेह्या भार्यया ह्यनुरूपया ।

एकस्मिन्संस्तरे सुप्तः परिणामयितुं निशाम् ॥ २४ ॥

उपधाय बृहन्मूलं पादपस्य यदृच्छया ।

न त्वेवास्य प्रसुप्तस्य निद्रा नेत्रे ह्युपारुधत् ॥ २५ ॥

विप्रलंघ्यश्च राज्यस्य गृहत्यागो वनाश्रयः ।

सममेव त्रयं तद्वि निद्रां तस्य जहार ह ॥ २६ ॥

तथा तु तस्मिन्ब्रुवति प्रजाहितं नरेन्द्रपुत्रे गुरुसौहृदाद्गुहः ।

मुमोच वाप्यं व्यथयाऽभिपीडितो जरातुरो नाग इव श्वसन्वली । २७ ।

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे लक्ष्मणाविलापो

नाम द्विपञ्चाशः सर्गः ॥ ५२ ॥

[वं-४९]=[त्रिपञ्चाशः सर्गः]=[दा-५२]

प्रभातायां तु शर्वर्या पृथुवक्षा महाभुजः ।

उवाच रामः सौमित्रिं लक्ष्मणं शुभलक्षणम् ॥ १ ॥

भास्करोदयकालोऽयं गता भगवती निशा ।

असौ सुहृष्टो विहगः कोकिलस्तात कूजति ॥ २ ॥

वर्हिणां चैव निर्वोषः श्रयते नदतां वने ।

तरामो जाह्नवीं सौम्य शीघ्रगां सागरङ्गमाम् ॥ ३ ॥

विज्ञाय रामस्य मतं सौमित्रिर्मित्रनन्दनः ।

गुहमामन्त्र्य सूतं च सोऽतिष्ठद्भ्रातुरग्रतः ॥ ४ ॥

वस्तस्नायुममायुक्तां कर्णधारवती दृढाम् ।

सुप्रतारां समे तीर्थे क्षिप्रं नावमुपोहत ॥ ५ ॥

तं निशम्य समादेशं सन्निवृत्य गणो महान् ।

उपोह्य नावं रुचिरां गुहाय प्रत्यवेदयत् ॥ ६ ॥

ततः स प्राञ्जलिर्भूत्वा गुहो वचनमब्रवीत् :

उपस्थितेयं नार्देव भूयः किं करवाणि ते ॥ ७ ॥

ततः कलापां सन्नद्य खड्गौ बध्वा च धन्विनौ ।

जग्मतुर्येन वै गङ्गां सीतया सह राघवौ ॥ ८ ॥

राममेव तु धर्मज्ञमभिगम्य विनीतवत् ।

किमहं कत्वाणीति सूतः प्राञ्जलिस्त्रयीत् ॥ ९ ॥

अथाब्रवीदाशरथिः सुमंत्रं मंत्रिमत्तमम् ।

१ ल-यथाज्ञा० । घ-घ . स्ना० । म-यथाज्ञा० । २ ल-कपालौ ।

३ कै, व-०शम्य ।

स्पृशन्करेण धर्मज्ञो दक्षिणं दक्षिणेन तम् ॥ १० ॥
 गच्छ सौम्य निर्वर्तस्व कृतमेतावता मम ।
 पद्भ्यामेव गमिष्यामि सीतया सहितो वनम् ॥ ११ ॥
 आत्मानं त्वभ्यनुज्ञातमथाज्ञाय स सारथिः ।
 सुमन्त्रः पुरुषव्याघ्रमिदं वचनमब्रवीत् ॥ १२ ॥
 अतर्कितोऽयं लोकेषु पुरुषेणेह केनचित् ।
 तव मभ्रातृभार्यस्य वासः प्राकृतवद्वने ॥ १३ ॥
 न मन्ये ब्रह्मचर्येऽस्ति स्वर्घाते वा फलं भुवि ।
 मर्दवर्जिवयोर्वापि त्वां चेद्द्व्यमनमागतम् ॥ १४ ॥
 मह राघववदेह्या भ्रात्रा च त्वं वने वसन् ।
 रतिं संप्राप्स्यसे वीर त्रीँल्लोकान्विजयन्निव ॥ १५ ॥
 वर्यं खलु हता वीर ये त्वया नित्यसान्त्विताः ।
 कैकेय्या वशमेष्याम पापाया दुःखभागिनः ॥ १६ ॥
 इति ब्रुवन्नात्मसमः सुमन्त्रः सारथिस्तदा ।
 दृष्ट्वा वनगतं रामं रुरोद भृशदुःखितः ॥ १७ ॥
 ततस्तं विगते वाप्ये स्रुतं स्पृष्टोदकं शुचिम् ।
 रामः सुमधुरं वाक्यं पुनः पुनरुवाच ह ॥ १८ ॥
 इक्ष्वाकूणां त्वया तुल्यः सुहृदन्यो न विद्यते ।
 यथा दशरथो राजा नानुशोचेत्तथा कुरु ॥ १९ ॥
 कामोपहतचेता हि शृद्धश्च जगतीपतिः ।
 मद्वियोगाच्च सन्तप्तस्तस्मादेतद्ब्रवीमि ते ॥ २० ॥

यद्यदाज्ञापयेत् किञ्चित् स महात्मा महाद्युतिः ।

कैकेय्याः प्रियकामार्थं तत्कार्यमविशङ्कया ॥ २१ ॥

एतदर्थं हि राज्यानि प्रशंसन्ति नराधिपाः ।

यदेपां सर्वकालेषु^० वचो न प्रतिहन्यते ॥ २२ ॥

तद्यथा स महाराजो नालोकमधिगच्छति ।

न^० चानुचिन्तयति मां^० सुमन्त्र कुरु तत्तथा ॥ २३ ॥

सूत मद्बचनात्तातं वसिष्ठं च तपस्विनम् ।

उपाध्यायांश्च संप्राप्य ब्रूयास्त्वमभिवादनम् ॥ २४ ॥

कैकेयीं च सुमित्रां च याश्चान्या मातरो मम ।

तां चाल्पभाग्यां कौशल्यां यदि जीवति मां विना ॥ २५ ॥

अदृष्टदुःखं राजानं वृद्धमार्यं जितेन्द्रियम् ।

ब्रूयास्त्वमभिवादनं मम हेतोरिदं वचः ॥ २६ ॥

न विपादो न सन्तापः कर्तव्यो रामकारणात् ।

लक्ष्मणे वा नरव्याघ्रे सीतायां वा नराधिप ॥ २७ ॥

अपि वर्षसहस्राणि तातस्य वचनाद्बने ।

निहरेम स्थिता धर्मे स्वर्गलोक इवामराः ॥ २८ ॥

व्यसनं हि पितुः पुत्रात् कोऽन्यो व्यपनयिष्यति ।

अणु वा यदि वा स्थूलं धान्यन्तरिरिव व्रणम् ॥ २९ ॥

यस्तु पुत्रो न वचनं पितुः कुर्यादतन्द्रितः ।

आत्मानं पातयेचासौ द्रव्यवानिव निष्क्रियः ॥ ३० ॥

नरके वा पतेद्रामो ज्वलन्तं वा हुताशनम् ।

न तु कुर्वति तत्कर्म येन वाच्यः पिता भवेत् ॥ ३१ ॥ ✓

नैवाहं शोचितव्यस्ते न सीता न च लक्ष्मणः ।

अयोध्यायाश्च्युताः स्मेति निवत्स्यामोऽपि वा वने ॥३२॥

चतुर्दशसु वर्षेषु व्यतीतेषु पुनः पुनः ।

लक्ष्मणं मां च सीतां च द्रक्ष्यमे क्षिप्रमागतान् ॥ ३३ ॥

एवमुक्त्वा महाराजं कौशल्यां मातरं मम ।

अन्याश्च देवीः महिताः कैकेयी च पुनः पुनः ॥ ३४ ॥

ब्रूयाः सर्वं त्वमारोग्यमथ पादाभिवन्दनम् ।

मृत मद्बचनादेव मीताया लक्ष्मणस्य च ॥ ३५ ॥

विज्ञाप्यश्च महाराजो भरतं शीघ्रमानय ।

राज्ये चैनाभिपेक्तव्यः क्षिप्रमेव नरर्षभः ॥ ३६ ॥

अभिपिक्ते च भरते यौवराज्याय धार्मिके ।

स्वात्मसन्तापजं दुःखं न त्वामभिभविष्यति ॥ ३७ ॥

भरतश्चापि वक्तव्यो यथा राजनि वर्तमे ।

तथा मातृषु वर्त्तेथाः सर्वास्वेवाविशेषतः ॥ ३८ ॥

यथैव तव कैकेयी सुमित्रापि तथैव ते ।

तथैव तत्र कौशल्या मम माता विशेषतः ॥ ३९ ॥ ०

प्रशास्तिवमां गां भरतस्य माता प्रीता सपुत्रा^१ नृपतेः प्रतीता ।

संश्रीयते केकयराजपुत्री महावने नो विनियोज्य वासम् ॥ ४० ॥

इत्थार्पं रामायणे ऽयोध्याकाण्डे सूतसमादेशो

नाम त्रिपञ्चाशः सर्गः । ५३ ।

[वं-५०]=[चतुःपञ्चाशः सर्गः]

एवं सन्दिशतस्तस्य राघवस्य महात्मनः ।

लक्ष्मणोऽन्तरमामाद्य स्रुतं वचनमब्रवीत् ॥ १ ॥

कैकेयीं प्रतिमंरब्धो निःश्वसन् भ्रुकुटीमुखः ।

अमर्षा रक्तया दृष्ट्या वसुधामवलोकयन् ॥ २ ॥

ममापि वचनात् स्रुत वक्तव्यो भवता^१ नृपः ।

प्रणामं शिरसा कृत्वा बहुमानात्पुनः पुनः ॥ ३ ॥

केनायमपराधेन राघवो धर्मवत्मलः ।

गुणज्येष्ठो^२ मम ज्येष्ठो मम भ्राता विवासितः ॥ ४ ॥

सर्वथा भवता राजन् कैकेयीं^३ परिरक्षता^३ ।

नृशंसं च यशोमं च सुमहदुत्कृतं कृतम् ॥ ५ ॥

कैकेय्या वचनं श्रुत्वा नृशंसायाः सुदारुणम् ।

पक्षिणघदयं क्षिप्तः पुत्रः किं नाम तत्कृतम् ॥ ६ ॥^०

प्रशान्तश्चार्यशीलश्च सर्वभूतप्रियंवदः ।

रामः किमकरोत्पापं त्यक्तोऽयं यत्रया वने ॥ ७ ॥

पितृपैतामहं राज्यं प्रतिज्ञां परिरक्षता^३ ।

भयाद् वा यदि वा^४ दत्तमत्र म्वार्ये भयान् प्रभुः ॥ ८ ॥

न तु प्रभवमे त्यक्तमपराधं विना सुतम् ।

स्त्रीविधेयतया राजन् गुणवन्तं विशेषतः ॥ ९ ॥

यदपत्येन कर्तव्यं यशो धर्मं च रक्षता ।

१ कै, घ, ल—भवतो । २ म—गुणज्येष्ठो । ३ कै, घ, ०रक्षिता ।

४ घ, ल—कैकेयी । ५ कै, म—०रक्षिता । ६ म—ने । ०य ।

तदकर्त्तव्यमप्येतद्राघवेनोपपादितम् ॥ १० ॥

पित्रा यदपि कर्त्तव्यं यशो धर्मं च रक्षता । ०

अनुरूपं च युक्तं च न त्वया तदनुष्ठितम् ॥ ११ ॥

तदस्मान् स्वयमुत्सृज्य स्नेहेन सह पार्थिव ।

शोचितुं नार्हसि पुनः स्वयं पीत्थेव चारुणीम् ॥ १२ ॥

त्वद्विधा हि महात्मानो महाभागा नरर्षभाः ।

परितापैर्न युज्यन्ते चिन्त्य कार्यमनुष्ठितम् ॥ १३ ॥

लक्ष्मणं त्वभिसंकुद्रं ब्रुवाणं परुषं वचः ।

विनिवार्यान्नवीद्रामः हृतं दीनमधोमुखम् ॥ १४ ॥

लक्ष्मणोऽयमभिकुद्रः सुमन्त्र यदभाषत ।

परुषं तन्न संश्राव्यो भवता वसुधाधिपः ॥ १५ ॥

बृद्धः करुणवेदो च मत्प्रवासाच्च शोकवान् ।

सहसा परुषं श्रुत्वा सन्त्यजेदपि जीवितम् ॥ १६ ॥

सुमन्त्र परुषं तस्मान्न वक्तव्यो जनाधिपः ।

विप्रियाण्यनुजीव्याणि न पश्यन्ति भवद्विधाः ॥ १७ ॥

न चास्मासु गतं स्नेहं त्यक्तवान् पृथिवीपतिः ।

सत्यपाशेन संवद्धः स्नेहस्त्वस्य न लुप्यते ॥ १८ ॥

कैकेय्या वरदानेन पिता मे ननु मोहितः ।

मां वने त्यक्तवान् पुत्रमवशः सत्ययन्त्रितः ॥ १९ ॥

मुनिवेशधरः क्रुद्धो लक्ष्मणोऽयममपितः ।

क्रूरं किमिव न ब्रूयात्परिहार्यं त्वया तु त्वत् ॥ २० ॥

सर्वदैव प्रियं वाच्यः प्रियार्हो नृपतिस्त्वया ।

अभिवादनपूर्वं च कुशलं कुशलो ह्यसि ॥ २१ ॥

नैतत्संभाव्यते सूत पिता पुत्रं यदौरसम् ।

त्यजेन्निरपराधं हि भाविनो ऽर्थवशाद्दते ॥ २२ ॥

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे लक्ष्मणसन्देशो भाः

चतुष्पञ्चाशः सर्गः ॥ ५४ ॥

[वं-५१]=[पंचपंचाशः सर्गः]=[दा-५२।३७]

निवर्त्यमानो^१ रामेण सुमन्त्रः शोककर्षितः ।

तत्सर्वं वचनं श्रुत्वा स्नेहात्काकुत्स्थमब्रवीत् ॥ १ ॥

उपचारेण यद्द्वीर ब्रूयां स्नेहेन विह्वलः ।

भक्तिमानिति मद्वाक्यं तन्मे त्वं क्षन्तुमर्हसि ॥ २ ॥

कथं तु^२ त्वद्विहीनो^२ ऽहं प्रतियास्यामि तां पुरीम् ।

तत्र तान वियोगेन पुत्रशोकातुरामिव^३ ॥ ३ ॥

सराममिति तावद्धि रथं दृष्ट्वा पुरं तु तत् ।

त्वया विहीनं दृष्ट्वा तु विदीर्यत्येव सा पुरी ॥ ४ ॥

दैन्यं हि नगरी गच्छेद्दृष्ट्वा शून्यमिमं रथम् ।

हतावशेषं स्वं सैन्यं हतवीरमिवाहवे ॥ ५ ॥

दूरेऽपि निवसन्तं त्वां विन्यस्येवाग्रतः स्थितम् ।

चिन्तयन्त्येव तावत्त्वां निराहाराः कृशाः प्रजाः ॥ ६ ॥

आर्तनादो हि यः पौरैर्मुक्तः पूर्वं विवासने ।

रथस्थं मां निशम्यैकं कुर्युः शतगुणं ततः ॥ ७ ॥

अहं किं वाऽपि वक्ष्यामि देवीं तव सुतो मया ।

नीतोऽसौ मातुलकुलं सन्तापस्त्यज्यतामिति ॥ ८ ॥

सत्यं चैव प्रियं चैव ब्रूयां हि वचनं गुरुम् ।

कथमप्रियमेवाहं ब्रूयां गुरुमिदं वचः ॥ ९ ॥

मम शिष्यत्वमापन्ना इक्ष्वाकुकुलवाहिनः ।

१ ल—०माणो । २ कै—तद्विहीनो । ३ ल—
०मिमाम् ।

कथं चापि त्वया हीनं रथं वक्ष्यन्ति वाजिनः ॥ १० ॥
 यदि मे याचमानस्य त्यागमेवं करिष्यसि ।
 सरथो ऽग्निं प्रवेक्ष्यामि त्यक्तमात्रो ह्यहं त्वया ॥ ११ ॥
 भविष्यन्ति च ते यानि तपोविघ्नकराणि च ।
 रथेन प्रतिग्राधिष्ये तानि सर्वाणि राघव ॥ १२ ॥
 तत्कृते न मया प्राप्तं रथचर्याकृतं सुखम् ।
 आशसे त्वत्कृतेनाहं वनवासकृतं सुखम् ॥ १३ ॥
 प्रसीदेच्छामि चारण्ये भवितुं प्रत्यनन्तरः ।
 वने ऽपि यद्यहं वीर निवसेय त्वदाश्रितः ॥ १४ ॥
 परिचर्यां हि ते कृत्वा प्राप्नुयां परमां गतिम् ।
 तव शुश्रूषणं सर्वं गमिष्यामि^४ वने वसन् ॥ १५ ॥
 अयोध्यां शकलोकं वा सर्वमेव त्यजाम्यहम् ।
 न हि शक्या प्रवेष्टुं सा मयाऽयोध्या त्वया विना ॥ १६ ॥
 राजधानी महेन्द्रस्य यथा दुष्कृतकर्मणा^५ ।
 इमे ते ऽपि हया वीर यदि ते वनवासिनः ॥ १७ ॥^०
 परिचर्यां करिष्यन्ति प्राप्स्यन्ति परमां गतिम् ।
 वनवासे क्षयं प्राप्ते ममैष हि मनोरथः ॥ १८ ॥
 यदनेन रथेन त्वा प्रापयेयं पुरीमितः ।
 चतुर्दश हि वर्षाणि सहितस्य वने त्वया ॥ १९ ॥
 क्षणभूतानि यास्यन्ति युगवच्च^६ विपर्यये ।
 भक्तवत्सल तिष्ठन्तं भर्तृभक्तगते पथि ॥ २० ॥

भृत्यं भक्तं स्थितं सत्ये न मां त्यक्तुं त्वमर्हसि ।
 एवं बहुविधं दीनं याचमानं पुनः पुनः ॥ २१ ॥
 भृत्यानुकंपी काकुत्स्थ इदं वचनमब्रवीत् ।
 जानामि परमां भक्तिं मयि ते भक्तवत्सल ॥ २२ ॥
 शृणु चापि यदर्थं त्वां प्रेषयामि पुरीमितः ।
 नगरीं त्वां गतं दृष्ट्वा जननी मे यवीयसी ॥ २३ ॥
 कैकेयी प्रत्ययं गच्छेदिति रामो वनं गतः ।^०
 परितुष्टा हि सा देवी वनवासं गते मयि ।
 राजानं नातिशङ्केत मिथ्यावादीति धार्मिकम् ॥ २४ ॥^०
 एष मे परमः कामो यदियं मे यवीयसी ।^०
 भरते रक्षितं स्फीतं पुत्रे राज्यमवाप्नुयात् ॥ २५ ॥
 मम प्रियार्थं राज्ञश्च निवर्तस्व पुरीं व्रज ।
 सन्दिष्ट्वापि यानर्थास्तांस्तान् व्रयास्तथा तथा ॥ २६ ॥
 इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे सुमन्त्राविसर्जनं
 नाम पंचपंचाशः सर्गः ॥ ५५ ॥

[वं-५२]=[पदपंचाशः सर्गः]=[दा-५२।६५]

इत्युक्त्वा वचनं सूतं सान्त्वयित्वा पुनः पुनः ।

गुहं वचनमक्लीवं रामो हेतुमदब्रवीत् ॥ १ ॥

जटाः कृत्वा गमिष्यामि न्यग्रोधात् क्षीरमानय ।

स क्षिप्रं राजपुत्राय गुहः क्षीरमुपानयत् ॥ २ ॥

लक्ष्मणस्यात्मनश्चैव रामश्चक्रे जटास्ततः ।

वृत्तवाहू नरश्रेष्ठौ जटामण्डलधारिणौ ॥ ३ ॥

अशोभेनामृषिसमौ भ्रातरौ रामलक्ष्मणौ ।^१

ततो गङ्गामभिमुखः पुण्यां सरितमुत्तमाम् ॥ ४ ॥

राघवः प्रययौ मार्गमास्थितः सहलक्ष्मणः ।

तापसव्रतमाश्रित्य ततो गुहमुवाच ह ॥ ५ ॥

अप्रमादो बले' कोशे दुर्गे जनपदे तथा ।

कार्यस्ते गुहं राज्यं स्यात् सदा रक्षितुमङ्ग तत् ॥ ६ ॥

ततस्तं समनुज्ञाय गुहमिक्ष्वाकुनन्दनः ।

जगाम वनमव्यग्रः सभार्यः सहलक्ष्मणः ॥ ७ ॥

स तु दृष्ट्वा नदीतीरे नाबमिक्ष्वाकुनन्दनः ।

शीघ्रं तितीर्षुर्गंगायां लक्ष्मणं वाम्यमब्रवीत् ॥ ८ ॥

आरोह त्वं नरव्याघ्र स्थितां नाबमिमां शनैः ।

सीतां चारोपय क्षिप्रं परिरम्य मनस्विनीम् ॥ ९ ॥

स भ्रातुः शासनं कुर्वन् सर्वमप्रतिकूलवत् ।

आरोप्य मैथिलीं पूर्वमारोह स्वयं ततः ॥ १० ॥

अथारुरोह तेजस्वी स्वयं लक्ष्मणपूर्वजः ।
 ततो निपादाधिपतिर्गुहो ज्ञातीनचोदयत् ॥ ११ ॥
 आज्ञाय स सुमन्त्रं च सामात्यं चैव तं गुहम् ।
 आस्थाय यानं काकुत्स्थश्चोदयामास नाविकान् ॥ १२ ॥
 ततस्तैश्चोदिता सा नौः कर्णधारैः समाहता ।
 बाहुवेगप्रतिहता गङ्गासालिलमध्यगा ॥ १३ ॥
 मध्यं तु समनुप्राप्ता भागीरथ्याः सुमध्यमा ।
 वेदेही प्राञ्जलिर्भूत्वा तां नदीमिदमब्रवीत् ॥ १४ ॥
 पुत्रो दशरथस्यायं महाराजस्य धीमतः ।
 निदेशं पालयेद्राज्ञस्त्वया गङ्गे ऽभिरक्षितः ॥ १५ ॥
 चतुर्दश हि वर्षाणि प्रत्युष्य विजने वने ।
 भ्रात्रा सह मया चैव प्रत्यागच्छेत् पुनः पुरीम् ॥ १६ ॥
 अतस्त्वां देवि सुभगे क्षेमेण पुनरागता ।
 द्रक्ष्ये प्रमुदिता गङ्गे सर्वकामसमृद्धये ॥ १७ ॥
 त्वं हि त्रिपथगा देवि ब्रह्मलोकात्प्रवर्त्तसे ।
 भार्या जलधिराजस्य लोकेऽस्मिन्संप्रदृश्यसे ॥ १८ ॥
 सा त्वां देवि नमस्यामि प्रशंसामि च शोभने ।
 प्राप्तराज्ये नरव्याघ्रे शिवेनैत्य पुनस्त्वया ॥ १९ ॥
 गवां शतसहस्राणि वस्त्राण्यन्यच्च पेशलम् ।
 ब्राह्मणेभ्यः प्रदास्यामि तव प्रियचिकीर्षया ॥ २० ॥
 तथा संभाषमाणा तु सीता गङ्गामनिन्दिता ।
 दक्षिणा दक्षिणं तीरं क्षिप्रमेवाभ्युपागमत् ॥ २१ ॥

प्रेषितायां ततो नापि भ्रातरौ रामलक्ष्मणौ ।
 तटस्थौ गुहसूतौ तावीक्षन्तौ वाष्पनिह्वयौ ॥ २२ ॥
 सा वायुनेगाभिहता ब्राह्मणीर्यप्रनोदिता ।
 निगृह्या राजपुत्रौ तौ परं पारमुपागमत् ॥ २३ ॥
 तीरं तु समनुप्राप्य नात्रं हित्वा नरर्षभौ ।
 प्रणामं चक्रतुर्वरौ गङ्गायै सुसमाहितौ ॥ २४ ॥
 प्रातिष्ठत् ततो रामः सभार्यः सहलक्ष्मणः ।^{A1}
 स राघवस्ततो धीमान् वनमासाय निश्चितः ॥ २५ ॥
 अथात्रवीन्महानाहुः सुमित्रानन्दवर्द्धनम् ।
 अग्रतो गच्छ सौमित्रे सीता त्नामनुगच्छतु ॥ २६ ॥
 पृष्ठतोऽनुगामिष्यामि त्वां च मीतां च पालयन् ।
 अद्यैव दुःखं वैदेही वनमासस्य वेत्स्यति ॥ २७ ॥
 सिंहव्याघ्ररहाणां निनादं प्रसहिष्यति ।
 अनालोकयमानौ* तां सुमन्त्रो यत्र वै दिशि ॥ २८ ॥
 जग्मतुस्तां घनुष्पाणीं सीतया सह तद्वनम् ।
 अदर्शनगतौ जातौ (जात्या ?) भ्रातरौ पार्थिवात्मजौ[†] ॥ २९ ॥
 गुहः सुमन्त्रः सखेहं न्यरत्तेतां ततः पुनः ।
 नानानिहगसंप्लुष्टं वनं तद्व्यवगाहताम् ॥ ३० ॥
 सुपुष्पिताग्रैस्तरुभिर्नानानिटपमङ्गुलम् ।
 अदूरमथ[‡] गत्वा तौ भ्रातरौ रामलक्ष्मणौ ।[‡] ३१ ॥

A1 ल वानप्रस्थयपु वीरो गंगाया सुसमाहित । 3 ल रामलक्ष्मणौ ।

† वै-सुदूरमेव । ० ल ।

अवरोहशताकीर्णं वटमासाद्य तस्थतुः ।

तौ तत्र सुखमासीनौ नातिदूरे ऽभ्यपश्यताम्^५ ॥ ३२ ॥

सुदर्शनामितिख्यातां पद्मिनी पद्मसङ्कुलाम् ।

हंसकारण्डवाकीर्णां चक्रवाकोपशोभिताम् ॥ ३३ ॥

दर्शयामास काकुत्स्थो वैदेह्या लक्ष्मणस्य च ।

पश्य लक्ष्मण पद्मिन्या यथेदं शोभितं वनम् ॥ ३४ ॥

दिव्यतोयाभिवाहिन्या मन्दाकिन्या यथा दिवम् ।

इहैवाद्य निवत्स्यामः परिश्रान्ता हि मैथिली ॥ ३५ ॥

रम्ये पुष्करिणीतीरे पद्मनासितमारुते ।

अथ पुष्करिणीं शीघ्रमवतीर्य तु लक्ष्मणः ॥ ३६ ॥

पद्मानि समृणालानि^६ सुगन्धीनि वहूनि च ।

उत्पाद्य नीत्वा सीतायै प्रीत्यर्थं समुपानयत् ।

आदाय तानि वैदेही सपद्मा श्रीरिवाभवत् ॥ ३७ ॥

त्रयस्ते हि त्रिरात्राय मृणालैः प्राणधारणम् ।

कृत्वा न्यग्रोधमाश्रित्य रात्रौ वासमकल्पयन्^७ ॥ ३८ ॥

गुहेन सार्द्धं तु ततः सुमन्त्रो रामं व्रजन्तं प्रततं समीक्ष्य ।

अथ(ध्व?) प्रकर्षाद्विनिवृत्तदृष्टिं मुमोच वाष्पं व्यथितान्तरात्मा ३९

इत्याप्ये रामायणे ऽयोध्याकाण्डे भद्रावतरणं

नाम पद्पंचाशः सर्गः ॥ ५६ ॥

[वं-५३]=[सप्तपंचाशः सर्गः]=[दा-५३]

त न्यग्रोधमुपागम्य सन्ध्यामन्वास्य पश्चिमाम् ।

रामो रमयता श्रेष्ठः सौमित्रिमिदमत्रगीत् ॥ १ ॥

अद्य नः प्रथमा रात्रिर्निर्गतानामिय पुरात् ।

यतीनामित्र मुक्ताना स्वजनेन भाषिष्यति ॥^१ २ ॥

मा ते भीर्मा सुखोत्कण्ठा मा व्यथा स्वजनं विना ।

अद्यप्रभृति कर्तव्यं मीताया रक्षणं त्वया ॥ ३ ॥

मया च मतत कार्यमप्रमत्तेन लक्ष्मण ।

ठणान्याहृत्य सौमित्रे मम त्वं शयनं कुरु ॥ ४ ॥

मत्त एवाग्निदूरे च शयनं रचयात्मनः ।

इत्युक्तो लक्ष्मणश्चक्रे भ्रातुः शय्यामथात्मनः ॥ ५ ॥

वृक्षपणस्तृणैश्चैव तस्याधस्ताद्भनस्पतेः ।

तत्र सप्रियं काकुत्स्थो महार्हशयनोचितः ॥ ६ ॥

चक्रे मह कथा रात्रौ सीतया लक्ष्मणेन च ।

पुनमद्य महाराज' सुखं स्वपिति लक्ष्मण ॥ ७ ॥

सकामया सेव्यमानः कैकेय्या परितुष्टया ।

राज्यलुब्धा नृशंसा च कैकेयी त नराधिपम् ॥ ८ ॥

आगते भरते प्राणे, कथं न च्यापयेदपि' ।

वृद्धोऽनाथश्च नृपति र्मया चैव विनाकृतः ॥ ९ ॥

नापेक्षते स कामात्मा प्राणास्तस्या वशे स्थितः ।

१ ल अस्मिन् हि विजने रण्ये ना रासत्वनिषेचिते । २ कै, म, ल-
त्याव० ।

इदं व्यसनमालोक्य राज्ञः स्वमतिविभ्रमम् ॥ १० ॥

काम एवार्थधर्माभ्यां गरीयानिति मे मतिः ।

को हि विद्वानपि पुमान् प्रमदायाः कृते त्यजेत् ॥ ११ ॥

छन्दानुवर्तिनं पुत्रमिष्टं मामिव लक्ष्मण ।

सुखी च स सुभागश्च कैकेय्या भरतः सुतः ॥ १२ ॥

मुदितः कौशलानेतान् यो भोक्ष्यत्यधिराजवत् ।

म हि सर्वस्य राज्यस्य सुखमद्य कारिष्यति ॥ १३ ॥

ताते च तममा ग्रस्ते मयि चारण्यमाश्रिते ।

यः परित्यज्य धर्मार्थां कामभेवानुवर्त्तते ॥ १४ ॥

स कृच्छ्रं महदामोति राजा दशरथो यथा ।

मन्ये दशरथान्ताय मम प्रव्रजनाय च ॥ १५ ॥

उत्पन्ना सौम्य कैकेयी राज्यार्थे भरतस्य च ।

अपि नामाद्य कैकेयी सौभाग्यमदगर्विता ॥ १६ ॥

न प्रवाधेत मद्द्रेपात् कौशल्यां मद्दिनाकृताम् ।

मन्पक्षग्राहिणीं नूनं मुमित्रां च तपस्विनीम् ॥ १७ ॥

इदानीमपि तस्मात्त्वमयोध्यां गच्छ लक्ष्मण ।

अहमेको गमिष्यामि सीतया सहितो वनम् ॥ १८ ॥

अनाथायास्तु मे मातुर्गत्वा नाथो भवानथ ।

क्षुद्रा चापि नृशंसा च कैकेयी पापनिश्रया ॥ १९ ॥

अमंशर्य मम द्वेपात् कौशल्यां पीडयिष्यति ।

शातिषु ध्रुवमन्यास्तु स्त्रियः पुत्रैर्वियोजिताः ॥ २० ॥

जनन्या मम सौमित्रे ततस्तदिदमागतम् ।
 मया हि चिरलब्धेन दुःखसंवर्द्धितेन च ॥ २१ ॥
 विप्रायुज्यत कौशल्या फलकाले धिगस्तु माम् ।
 मा स्म सीमन्तिनी काचिज्जनयेत्पुत्रमीदृशम् ॥ २२ ॥
 सौमित्रे योऽहमम्नाया जातः० शोकाय० दुःखदः० ।
 शोचन्त्याश्चाल्पभाग्याया न किञ्चिदुपकुर्वता ॥ ०२३ ॥
 पुत्रेण० किमपुत्राया० मया कार्यमरिन्दम ।
 अल्पभाग्या हि मे माता दुःखानामेव केवलम् ॥ २४ ॥
 भागिनी न तु सौमित्रे सुखानामिति मे मतिः ।
 एको योऽहमयोध्या च पृथिनीं चापि लक्ष्मण ॥ २५ ॥
 दहेयमिषुभिः क्रुद्धो नात्र वीर्यमकारणम् ।
 अधर्मप्राप्तिभीतोऽहं लोकवादभयेन च ॥ २६ ॥
 तेन लक्ष्मण नाद्याहमात्मानमभिपेक्षये ।
 एतच्चान्यच्च विप्रिधं विलप्य बहुदुःखितः । २७ ॥
 अश्रुपूर्णमुखो रामो निशि तूष्णीमुपाविशत् ।
 पिलप्योपरत चैन शान्तार्चिपमिमानलम् ॥ २८ ॥
 समुद्रमिव निर्वेगमिति होवाच लक्ष्मणः ।
 महासत्त्व न शोकस्य वशमागन्तुमर्हसि ॥ २९ ॥
 त्वद्विधा हि न शोचन्ति कृच्छ्रेऽपि व्यसनागमे ।
 इदं हि ते न व्यसनमगच्छामि ते प्रभो ॥ ३० ॥
 अनुरागं तु पौराणा मन्ये तेऽभ्युदयागमम् ।

अयोध्या सा पुरी कृत्स्ना मंत्रत्यद्यापि दुःखिता ॥ ३१ ॥

न राजते त्वया हीना विचन्द्रा रजनी यथा ।

नैतद्युक्तं च ते राजन् यदिदं परिदेयमे ॥ ३२ ॥

विषादयसि सीतां च मां चैव पुरुषर्षभ ।

न हि सीता त्वया हीना न चाहमपि राघव ॥ ३३ ॥

मुहूर्तमपि जीवावो जलान् मत्स्य इवोद्धृतः^५ ।

न हि तातं न शत्रुघ्नं न सुमित्रां परन्तप ।

अद्याहं द्रष्टुमिच्छामि स्वर्गं चापि विना त्वया ॥ ३४ ॥

स लक्ष्मणस्यार्थवद्भिर्जितं वचो निशम्य रामो हितमेव चात्मनः ।

पशुघ्नं शोकं परिरम्य लक्ष्मणं स्थितोऽस्मि शोकादिति^६ राघवोऽब्रवीत्

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे रामविलापो

नाम सप्तपञ्चाशः सर्गः ॥ ५७ ॥

५ य—मत्स्या इवोद्धृताः । ६ कै—लोकादिति ।

[वं-५४]=[अष्टपंचाशः सर्गः]=[दा-५४]
 तां तु रात्रिमुपित्वा ते तस्मिन् न्यग्रोधपादपे ।
 विमले ऽभ्युदिते सूर्ये तस्माद्वासात्प्रतस्थिरे ॥ १ ॥
 यत्र भागीरथी पुण्या यमुनामभिपद्यते ।
 ततस्तां दिशमुद्दिश्य विगाह्य सुमहद्वनम् ॥ २ ॥
 ते भूमिभागान् विविधान् देशंश्चापि मनोरमान् ।
 अदृष्टपूर्वान् पश्यन्तो विचित्रकुसुमाश्रयान् ॥ ३ ॥
 पन्थानं क्षेममासाद्य प्रययुः सुमनस्विनः ।
 ततो निवृत्ते दिवसे रामः सौमित्रिमव्रवीत् ॥ ४ ॥
 प्रयागमभितः पश्य सौमित्रे धूममुद्गतम् ।
 अग्नेर्भगवतः केतुं मन्ये सन्निहितं मुनिम् ॥ ५ ॥
 नूनं प्राप्ताः स्म संयोगं गङ्गायमुनयोः शिवम् ।
 तथा हि श्रयते शब्दो वारिसंघर्षजो महान् ॥ ६ ॥
 दारुणोव विशेषानि वनस्थैस्तरुजोग्रिभिः ।
 भरद्वाजाश्रमे चैते दृश्यन्ते विविधा द्रुमाः ॥ ७ ॥
 त एव क्रमशो गत्वा लम्बमाने दिवाकरे ।
 भरद्वाजाश्रमं पुण्यमासेदुः श्रमकपिताः ॥ ८ ॥
 तदाश्रमपदं प्राप्य रामः सौमित्रिणा सह ।
 ग्रामयन् सायुधः सुप्तान् त्रिवेश मृगपक्षिणः ॥ ९ ॥
 आगत्य चाश्रमद्वारं मुनेर्दर्शनकांक्षया ।
 तस्थौ रामः सह श्रीमान् सीतया लक्ष्मणेन च ॥ १० ॥
 तौ विदित्वाऽऽगतौ चापि भ्रातरौ रामलक्ष्मणौ ।

प्रवेशयामास मुनिः स्वमाश्रयपदं तदा ॥ ११ ॥

दृताग्निहोत्रमासीनं महाभागं कृताञ्जलिः ।

रामः सौमित्रिणा सार्धं सीतया चाभ्यवाढयत ॥ १२ ॥

मृगपक्षिभिरासीनं वृतो मुनिभिरेव च ।

राममागतमभ्यर्च्य सोऽभ्यभाषत वै मुनिः ॥ १३ ॥

न्यवेदयत चात्मानं तस्मै लक्ष्मणपूर्वजः ।

पुत्रौ दशरथस्याग्रं भ्रातरौ रामलक्ष्मणौ ॥ १४ ॥

भार्या ममेयं कल्याणी वैदेही जनकात्मजा ।

मामनुव्रजमानेयं तपोवनमुपागता ॥ १५ ॥

पित्रा प्रवाज्यमानं मां सौमित्रिश्वानुजः प्रियः ।

स्वयमन्वगमद् भ्राता वनमेष दृढव्रतः ॥ १६ ॥

पित्रा नियुक्तो भगवन् प्रनेक्ष्यामि महद्वनम् ।

धर्ममेव चरिष्यामि पत्रमूलफलाशनः ॥ १७ ॥

तस्य तद्वचनं श्रुत्वा राजपुत्रस्य धीमतः ।

उपानयत धर्मात्मा रामायार्घ्यमृषिस्ततः ॥ १८ ॥

प्रतिगृह्य च काकुत्स्थमासनेनोदकेन च ।

न्यमन्त्रयत मूलैश्च फलैश्च फलभोजनम् ॥ १९ ॥

प्रतिगृह्य तु तां पूजामुपविष्टं स राघवम् ।

भरद्वाजोऽब्रवीद्वाक्यं धर्मयुक्तामिदं हितम् ॥ २० ॥

चिरस्य खलु काकुत्स्थ पश्यामि त्वामिहागतं ।

श्रुतं तव मया चेदं विवासनमकारणात् ॥ २१ ॥ ०

अवकाशो त्रिविक्रोऽयं रमणीयश्च राघव ।^०

गङ्गायमुनयोः पुण्यः सङ्गमो लोकविश्रुतः ॥ २२ ॥

इह राम मया सार्धं वस त्वं यदि रोचते ।

वनं साधारणं हीदं तपोवननिवासिनाम् ॥ २३ ॥

इहैव रंस्यसे सार्धं सीतया लक्ष्मणेन च ।

तमेवं वादिनं रामः कृताञ्जलिरभाषत ।

वसतोऽनुग्रहो मे स्यादिह ब्रह्मंस्तवया सह ॥ २४ ॥

इतस्तु विषयोऽस्माकमभ्याशे तपतां वर ।

सुदर्शमिव पश्यामि पौराणामिह चागमम् ॥ २५ ॥

अभ्याशे वर्तमानं मां श्रुत्वा दूरादिदृक्ष्वः ।

आगमिष्यन्ति वैदेही मामपि प्रेक्षका जनाः ।

अनेन कारणेनाहमिह वासं न रोचये ॥ २६ ॥

एकान्ते पश्य भगवन्नाश्रमस्थानमुत्तमम् ।

रमते यत्र वैदेही सुखेन जनकात्मजा ।

वसेयं यत्र वैदेह्या सहितो लक्ष्मणेन च ॥ २७ ॥

स्वजनेनापरिज्ञातो निरुद्वेगः सुखी मुने ।

इति रामवचः श्रुत्वा भरद्वाजो महामुनिः ॥ २८ ॥

ध्यात्वा मुहूर्तमेकाग्रो राम वचनमब्रवीत् ।

प्रियोजनमितस्तात गिरिर्यत्र निवत्स्यसि ॥ २९ ॥

महापिंजनसंजुष्टः^१ सर्वर्तुसुखदः शिवः ।

गोलाङ्गुलाभिनदितो^२ वानरर्क्षनिषेपितः ॥ ३० ॥

चित्रकूट इति ख्यातो गन्धमादनसन्निभः ।

यावाद्भि चित्रकूटस्य नरः श्रृंगाण्युदोक्षते ॥ ३१ ॥

तावत्कल्याणमाप्नोति धर्मे च कुरुते मनः ।

श्रुण्वस्तत्र बहवो विहृत्य शरदां शतम् ॥ ३२ ॥

तपसा दिवमारूढाः सुकृतैकनिपेवणात् ।

तं विविक्तमहं मन्ये वामं ते रघुनन्दन ॥ ३३ ॥

इह वा पुरुषव्याघ्र वस राम मया सह ।

मर्षथा रंस्यसे राम तस्मिन्नाश्रममण्डले ॥ ३४ ॥

लक्ष्मणेन सह भ्रात्रा वैदेह्या चापि भार्यया ।

एवमुक्त्वा ततः कामैर्भरद्वाजो ऽथ राघवम् ॥ ३५ ॥

महभार्यं सह भ्रात्रा महर्षिः प्रत्यपूजयत् ।

तस्य भुक्तवतस्तत्र तं मुनिं समुपामतः^४ ॥ ३६ ॥

जगाम रजनी पुण्या विचित्राः शृण्वतः कथाः ।

तस्यां रात्रौ व्यतीतायां मन्ध्यामन्वास्य सानुजः ॥ ३७ ॥

उपतस्थे महर्षिं तं तमुवाच ततो मुनिः ।

चित्रकूटमितो गत्वा रमस्व^५ सह सीतया ॥ ३८ ॥

लक्ष्मणेन च विस्रब्धं तत्र त्वं विहरिष्यसि ।

शुचिशीताम्बुवाहिन्या मन्द्राकिन्योऽशोभिते ॥ ३९ ॥

मन्येऽहं तत्र ते वासं रम्ये स्वादुफलोदके ।

तत्र कुञ्जरयूथानि मृगयूथानि चाभितः ॥ ४० ॥

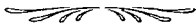
४ घ—सीतया । ५ कै, घ—समुपगतः । ६ कै, घ—रामास्व ।

म—रामास्व । ७ घ—संरब्धं ।

विचरन्ति वनान्तेषु तत्र द्रक्ष्यामि राघव ।

दात्यूह-कोयष्टिक-कोकिलस्वनैर्विनादितं तं वसुधाधरं शिवम् ।
मृगैश्च मत्तैर्वह्निभिश्च कुञ्जरैः सुरम्यमासाद्य तमावसाश्रमम् ॥४१॥

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे भरद्वाजाभिगमनं
नाम अष्टपञ्चाशः सर्गः ॥ ५८ ॥



[वं-५५]=[एकोनपाष्टिनमः सर्गः]=[दा-५५]

तां तत्र रजनीमुप्य सुखामिच्चाकुनन्दनां ।

अभिवाद्य महर्षिं तं दधतुर्गमने मनः ॥ १ ॥

प्रयातां रजनी वीक्ष्य भरद्वाजो महामुनिः ।

चित्रकूटस्य पन्थानमुपदेष्टु प्रचक्रमे ॥ २ ॥

राघव त्वमितो देशान् पश्यन्नावसथान्वृहन् ।

नातिदूरे समामाद्य तरेथा यमुनां नदीम् ॥ ३ ॥

कृत्वोद्दुपं ग्राहवती सा हि नित्य महानदी ।^A

तस्या नद्याः परे परे नातिदूरं महाद्रुमः ॥ ४ ॥

मत्यापि* पावितः^१ श्रीमान् न्यग्रोधो हरितच्छदः ।

नानामच्यगणावामः^२ इयाम इत्यभिविश्रुतः ॥ ५ ॥

मौताऽपि तं नमस्कृत्य ममभ्यन्यं च पादपम् ।

अभियाचेत कल्याणं वर यदमिकांक्षितम् ॥ ६ ॥

क्रोधमात्रं ततो गत्वा नीलं द्रक्ष्यथ काननम् ।

पलाशवदरीमिश्रं मधृकाम्रवनायुतम्^३ ॥ ७ ॥

स पन्थाश्चित्रकूटस्य गतः सुबहुशो मया ।

रम्यश्चाश्रमयुक्तश्च धनदोषैश्च वञ्जितः ॥ ८ ॥

पन्थानमुपादिश्यं वं भरद्वाजो न्यवर्तत ।

रामेण लक्ष्मणेनापि मौतया चाभिवन्दितः ॥ ९ ॥

उपावृते मुनां तस्मिन् रामो मुक्ष्मणमवतीत् ।

५

१ म-प्रेक्ष्य । २ म-तुर्गता । A।म । श्रीमते रामानुजाय नमः ।

शुभं । ३ ल-स चापि पावितः । (मत्यामियाचितः ?) । ४ घ, म-० गुणा-

याम । ५ कै, म, ल म'तु'फा० ।

कृतपुण्योऽस्मि सौमित्रे मुनिर्यन्माऽनुकम्पते ॥ १० ॥

इति तौ पुरुषव्याघ्रौ कथयन्तौ यशस्विनौ ।

सीतामवाग्रतः कृत्वा कालिन्दीं जग्मतुस्तदा ॥ ११ ॥

तत्र बद्धोद्दुषं काष्ठं वैष्णुभिश्चापि तीरजैः ।

सीतामारोपयाञ्चक्रे रामस्तत्र स्वयं तदा ॥ १२ ॥^०

परिगृह्य हृदा वालां कम्पमानां लतामिव ।

सीतामारोप्य रामोऽपि लक्ष्मणं चाप्यरोहयत् ॥ १३ ॥

तेन पुत्रेणाश्मवतो शीघ्रगामर्मिमालिनीम् ।

तीरजर्गहनां वृक्षैस्ते ततो यमुनां नदीम् ॥ १४ ॥

मन्तीर्य प्लुप्तमुत्सृज्य प्रणम्य यमुनां नदीम् ।

शीतच्छायं समामेदुः उद्यामं न्यग्रोधपादपम् ॥ १५ ॥

अर्चयित्वा च तं सीताऽयाचतेदं कृताञ्जलिः ।

चिरं जीवतु मे वृक्ष श्वशुरः कोमलेश्वरः ॥ १६ ॥

भर्ता मे देवराश्वैव जीवन्तु भरतादयः ।

कांशल्यां चैव जीवन्तीं पश्येयमिति मैथिली ॥ १७ ॥

ययाचे तं ततोऽभ्येत्य न्यग्रोधं मत्प्रयाचनम् ।

प्रदक्षिणमुपावृत्य ततस्ते प्रययुस्तदा ॥ १८ ॥

क्रोशमात्रं ततो गत्वा नीलमासाद्य तद्वनम् ।

हत्वा तत्र मृगं मेघ्यं श्रुत्वा तमुपयोज्यं च ॥ १९ ॥

विहृत्य तस्मिन् बहुपक्षिनादिते वने यथेष्टं मृगयूथसेविते ।

ततो नित्रामार्थमुपाययुः शिव शुभं नदीतीरसमुत्थितं द्रुमम् ॥२०॥

इत्याप्यं रामायणे ऽयोध्याकाण्डे यमुनातीरनिवासो

नाम एकोनपष्टितमः सर्गः ॥ ५९ ॥

[वं-५६]=[पष्टिनमः सर्गः]=[दा-५६]

अथ रात्रौ व्यतीतायां सुखसुप्तं श्रमालसम् ।

राम स्तूत्थापयामास लक्ष्मणं शनकस्तदा ॥ १ ॥

गगानां शृणु मांमित्रे बल्गु व्यवहारतां^१ वने ।

संप्रतिष्टामहे भूयो यदि लक्ष्मण मन्यसे ॥ २ ॥

स सुप्तः मसुगं भ्रात्रा लक्ष्मणः प्रतिबोधितः ।

जहौ निद्रां क्लमं चैव तं चैराध्वपरिश्रमम् ॥ ३ ॥

तत उत्थाय महमा स्पृष्ट्वा च मलिल शुचि ।

उपास्य च शुभां मन्ध्यां तत्रैवाभिप्रतम्यिरे ॥ ४ ॥

चित्रकूटस्य पन्थानमामाद्य कृतानिश्चयाः ।

तत्र वामं ममृदिश्य ययुः शीघ्रपराक्रमाः ॥ ५ ॥

अचिरेण समामाद्य ततस्तच्चित्रपादपम् ।

चित्रकूटवनं गमः सीतां वचनमब्रवीन् ॥ ६ ॥

पश्यैतान् पुष्पितान् मीते मालिनीं मरितं प्रति ।

शिशिरात्ययदग्धान् हि प्रदीप्तानिव किंशुकान् ॥ ७ ॥

कार्णिकारवनं चापि पश्य मन्दाकिनीमनु ।

दीपितं रुचिरं पुष्पं प्रदीप्तं काञ्चनरिव ॥ ८ ॥

पश्य भङ्गातकान् त्रिल्वान् पनमांस्तिन्दुकांस्तथा ।

फ पुलभारनतांश्चैव तथाऽन्यान् शुभपादपान् ॥ ९ ॥

शक्यमत्र फलैरेव जीवितुं तनुमध्यमे ।

अहो स्वर्गोपमं प्राप्ताधिप्रकृतमिमं वयम् ॥ १० ॥

१ व-श्याहरणं । २ म-प्रदीर्घमिषि वाचनं ।

पश्य द्रोणप्रमा^णनि लम्बमानानि लक्ष्मण ।
 चितानि चित्ररूटेऽस्मिन् मधुनि मधुपैः खगैः ॥ ११ ॥
 अमौ कूजति दात्यूहस्तं शिखी प्रतिकूजति ।
 त चोपहसतीप्रायं कूजश्च जलकुम्कुटः ॥ १२ ॥
 परपुष्टरुतं श्रुत्वा गायन्त इव कानने ।
 भ्रमरा विचरन्त्येते पुष्पपानकलखनाः ॥ १३ ॥
 पश्य मन्दाकिनीतीरे कुसुमप्रकरैः प्रिये ।
 वितानानीव शुभ्राणि शयनानि द्रुमे द्रुमे ॥ १४ ॥
 शिलातलानि नीलानि त्रिमलानि शुचिस्मिते ।
 लतावृक्षाश्रितानीह पश्य रम्याणि भामिनि ॥ १५ ॥
 मातङ्गयूथविचिते नानाविहगनादिते ।
 नानामृगगणाकीर्णे शैलेऽस्मिन् रम्यकानने ॥ १६ ॥
 वैदेहि विचरिष्यामः सुखमत्र वयं प्रिये ।
 इह प्राप्स्यसि वैदेहि मया सह परां रतिं ॥ १७ ॥
 अपेक्षमाणा एषं ते रम्यां मन्दाकिनीं नदीम् ।
 चित्ररूटं समाजग्मु र्नानावुसुमितद्रुमम् ॥ १८ ॥
 तस्य शैलस्य पादे तु विविक्ते मलिलावृते ।
 आश्रमं चक्रुत्क्षरु भ्रातरौ रामलक्ष्मणौ ॥ १९ ॥
 गजभग्नान्युपाहृत्य दारुण्युपवनान्तरात् ।
 लतावितानमद्वे द्वे चक्रुतः सदने पृथक् ॥ २० ॥

वृक्षपर्णेश्च बहुभिर्गु छादयामामस्तुस्ततः ।

ते पर्णशाले कृत्वाऽथ शोधयामास लक्ष्मणः ॥ २१ ॥

मृदोपलेपनं चक्रे वैदेही तनुमध्यमा ।

कृत्वाऽऽश्रमपदं रामस्ततो लक्ष्मणमब्रवीत् ॥ २२ ॥

मृगमाहृत्य सौमित्रे चरुं श्रपय मा चिरम् ।

तेन यष्टुमिहेच्छामि चरुणा^१ऽऽश्रमदेवताः^४ ॥ २३ ॥

इत्युक्तो लक्ष्मणो आत्रा हत्वा कृष्णमृगं वने ।

आहृत्य चानयित्वाऽग्निं श्रपयामाम तं चरुम् ॥ २४ ॥

तं मृगं संस्कृतं कृत्वा सुष्टुपर्कं च लक्ष्मणः ।

उवाच राममभ्येत्य कृताञ्जलिरिदं वचः ॥ २५ ॥

आज्ञया ते मयाऽऽहृत्य श्रुतः कृष्णो^५ मृगो^५ वनात् ।

यष्टुमर्हामि तेन त्वं देवता अमिकांक्षिताः ॥ २६ ॥

इत्युक्तो राघवः स्नात्वा जप्त्वा च विधिवत्तदा । ^६स्त्वा

इन्द्र्याग्निं^६ मन्त्रवत्तत्र ततस्तु जुहुये हविः ॥ २७ ॥

हविर्हुत्वा च देवेभ्यः पितृभ्यस्तदनन्तरम् ।

निर्वाप पवित्रेषु निर्वापं^७ मज्जलाञ्जलिम् ॥ २८ ॥

न्युप्य चैव निर्वापं तं^८ भूतेभ्योऽपि विधानतः ।

चकार बलिनिर्वापं राघवस्तदनन्तरम् ॥ २९ ॥

लक्ष्मणेन सह आधा हुतशेषं ततः स्वयम् ।

उपविश्योपयुज्ये कृते पर्णपुटे शुभे ॥ ३० ॥

१ के, य, ल, म-यष्टुणाश्रम० । २ म-मृष्णमृगो । ३ ल इष्ट्याऽग्निं ।

य-संदीप्य । ७ ल-निर्वापं । ८ ल-च ।

परिवेष्य च सीताऽपि तावुभौ भर्तृदेवरौ ।

एकान्तं समुपागम्य ततः शेषमुपाददे ॥ ३१ ॥

अनेकनानाविधपक्षिनादिते विचित्रपुष्पस्तवकोपशोभिते ।

नगोत्तमे तत्र निवासमेयिवां स्तुतोप रामः सहलक्ष्मणस्तदा ॥३२॥

तं रम्यमासाद्य हि चित्रकूटं तां चैव पुण्यां सरितं सुतीर्थाम् ।

मन्दाकिनीं पुष्पफलाढ्यतीरां दुःखं जहुस्ते वनवासम्रलम् ॥३३॥

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे चित्रकूटनिवासो

नाम षष्ठिनमः सर्गः ॥ ६० ॥

[वं-५७]=[एकपष्टिनमः सर्गः]=[दा-५७]

स शोचित्वा तु सुचिरं सुमन्त्रेण गुहः सह ।
 गङ्गापारगतं रामं जगाम स्वपुरं ततः ॥ १ ॥
 अनुज्ञाप्य सुमन्त्रोऽपि योजयित्वा हयान् रथे ।
 अयोध्यामेव नगरो प्रययौ भृशदुर्मनाः ॥ २ ॥
 सोऽतीत्य सुग्रहन् देशान् सरितश्च मरांसि च ।
 कालेन नातिमहता ग्रामांश्च नगराणि च ॥ ३ ॥
 अयोध्यामाजगामार्तो निवृत्तेऽहनि सारथिः ।
 आर्तनारोनरगणां दीनस्वरवती तदा ॥ ४ ॥
 शून्यामिव च निःशब्दां निरानन्दजनावृताम् ।
 प्रम्लानपङ्कजवतीं विजलां पद्मिनीमिव ॥ ५ ॥
 निशाकरपरिभ्रष्टां नाराहीनां निशामिव ।
 तां दृष्ट्वा चिन्तयन्नेव सुमन्त्रो मन्त्रिसत्तमः ॥ ६ ॥
 प्राविशत् तां पुरी दीनो निर्जनां विगतत्विषम् ।
 कश्चित् सरत्ननिचया मनरा सनराधिपा ॥ ७ ॥
 रामशोकाग्निना कृत्वा न दग्धेयं पुरी भवेत् ।
 इति सञ्चिन्तयन् स्रुतः प्रविवेश च तां पुरीम् ॥ ८ ॥
 सुमन्त्रो व्यथयोपेतः स्यन्दनेन हतत्विषा ।
 सुमन्त्रमभियान्तं तु दृष्ट्वा शतसहस्रशः ॥ ९ ॥
 क्व राम इति पृच्छन्तो रथमभ्यद्रवन्नराः ।
 तेषां शशंस गङ्गायामहमामन्-य राषवम् ॥ १० ॥
 अनुज्ञातो निवृत्तोऽसि तेनैव सुमहात्मना ।

ते तीर्णमभिमंश्रुत्य वाष्पपर्याकुलेक्षणाः ॥ ११ ॥

अहो धिगिति निःश्वस्य हताः स्मेति विचुक्रुशुः ।

वृन्दशो जल्पतां तेषां शुश्राव स तदा गिरः ॥ १२ ॥

निर्लज्जोऽयं वने त्यक्त्वा रामं पुनरिहागतः ।

महोत्सवमनाजेषु कथं नाम सुनिर्घृणाः^१ ॥ १३ ॥

विहरेम पुनर्दृष्ट्वा विना तं नरकुञ्जरम् ।

किं स्यात् प्रियं जनस्यास्य कांक्षितं किं सुग्रावहम् ॥ १४ ॥

इदं रामेण नगरं पित्रेव परिपालितम् ।

तं कथं पुण्डरीकाक्षं श्यामं पद्मदलेक्षणम् ॥ १५ ॥

निर्लज्जोऽयं गृहं रामं विसृज्य पुनरागतः ।

एताश्चान्याश्च त्रिभिधाः शृण्वन्वाचः स सारथिः ॥ १६ ॥

यत्र राजा दशरथस्तदेव प्रययौ गृहम् ।

अप्रतीर्य रथाच्चार्मो राजप्रेक्ष्य त्रिपेश तत् ॥ १७ ॥

शोकदीर्णजनाकीर्णं^२ मत्तकक्ष्यं हतत्वपम् ।

ततो दशरथस्त्रीणां शुश्राव परिदेवितम् ॥ १८ ॥

प्रामादशिसरस्थानां दुःखितानामितस्ततः ।

मह रामेण निर्यातो विना राममिहागतः ॥ १९ ॥

घ्नतः किं नाम कौशल्यां पृष्टः संप्रति पश्यति ।

यथा तु मन्ये दृर्जातं तथा न^३ मरणं व्रुणम् ॥ २० ॥

प्रिये निर्यामिते पुत्रे कौशल्या यत्र जीवति ।

१ य, म—म० । २ य—शोकादीर्ण० । ३ य ल, म, क—कौशल्या ।
४ य—तु । म नास्ति । ५ म निर्यामिने । ६ घे, थ, ल, म—कौशल्या ।

तथाभूतं तु तद्वाक्यं राजस्त्रीणां निशामयन् ॥ २१ ॥

शोकाग्निना दह्यमानो राजवेद्म विवेश मः ।

प्रविश्य च गृहं दीनो राजानं दीनचेतसम् ॥ २२ ॥

अपश्यत् पुत्रशोकार्तं हतसर्त्वीजमं तथा ।

अभिगम्य तदामीनं^७ नरेन्द्रमभिवाद्य च ॥ २३ ॥

सुमन्त्रो रामवचनं यथोक्तं प्रत्यवेदयत् ।

तच्छ्रुत्वा वचनं राजा विसंज्ञो भ्रान्तचेतनः ॥ २४ ॥

निपपातासनाद् भूर्मा दुःखशोकममन्वितः ।

दृष्ट्वा तमासनाद् भूमौ पतितं जगतीपतिम् ॥ ०२५ ॥

अन्तःपुरस्त्रियोऽभ्येत्य बाहूनुच्छिद्यत्य चुक्रुशुः ।

सुमित्रया तु तं सार्धं कौशल्या^१ पतितं पतिम् ॥ ०२६ ॥

दीनमुत्थापयामास वचन चेदमब्रवीत् ।

इमं तस्य महाभाग सूतं दुष्कृतकारिणम् ॥ २७ ॥

वनवासादुपाधृतं कस्माच्चं न नुपृच्छसि ।

यदीदं निर्घृणं कृत्वा लज्जयैवं विमुह्यसि ॥ २८ ॥

उत्तिष्ठ नाद्य कालस्ते लज्जितुं मा व्यपत्रपः ।

कस्मादद्य महीपाल न त्वं पृच्छसि मे सुतम् ॥ २९ ॥

नास्तीह काचित् कैफेय्याविसब्धं प्रण्टुमर्हसि ।

एवमुक्त्वा महाराजं कौशल्या^१ शोककथिता ॥ ०३० ॥

धरण्यां निपपातात्ता वाप्यविह्वलमादिणी ।

विलप्य पतितां भूमौ कौशल्यां शोककर्षिताम् ॥ ३१ ॥०

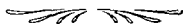
पतितं च पतिं दृष्ट्वा सुखरं रुरुदुःस्त्रियः ।

ततस्तमन्तः पुरनादमुत्थितं स्वनं निशम्य वृद्धास्तरुणाश्च मानवाः ।

स्त्रियश्च सर्वा रुरुदुःसमन्ततो निरीक्ष्य रामस्य रथं महात्मनः ॥३२॥

इत्यार्षे रामायणे ऽयोभ्याकाण्डे सुमन्त्रोपावर्तनं^१

नामैकषष्टिनमः^२ सर्गः ॥ ६१ ॥



[वं-५८] = [द्विपष्टिनमः मर्गः] = [दा-५८]

अथ राजा पुनः संज्ञां प्रतिलभ्य ममुत्थितः ।

उपाविश्यामने घृतं प्रष्टुं समुपचक्रमे ॥ १ ॥

अश्रुपूर्णेक्षणो^१ दीनो नवचद्र इव द्विपः ।

दीर्घमुष्णं च निःश्यामं स विमुञ्चन् मुहुर्मुहुः ॥ २ ॥

अथ रेणुपरिध्वस्तं कृताञ्जलिमुपस्थितम् ।

पप्रच्छैनमभिप्रेत्य^२ सुमन्त्रं चाप्पविह्वलः ॥ ३ ॥

क सुमन्त्र गतो रामः क च वत्स्यति शंभ मे ।

क म्याने तेन चैव त्वं राघवेण विमर्जितः ॥ ४ ॥

मोऽत्यन्तसुरसंसृष्टः कथमामिष्यते सुतः ।

भूमिपालात्मजो भूर्मा कथं स्वप्स्यति वा वने ॥ ५ ॥

कथं च विजनेऽण्ये याति पद्भ्यामनाधवत् ।

मिंहच्याघ्रममाकीर्णो मरीच्युपममाकूले ॥ ६ ॥

यं यान्तमनुयान्ति म्म नराशरथकृञ्जराः ।

म कथं सुकृमाराङ्गो वने चरति मे सुतः ॥ ७ ॥

सुकृमार्या तपम्विन्या वैदेह्याऽनुगतः कथम् ।

यनं कण्टकितं दुर्गं रामः पद्भ्यां विगाहते ॥ ८ ॥

म चाप्रतिमतेजस्यो सुकृमार्गो ममात्मजः ।

अनुगच्छति तं भक्त्या भ्रातरं लक्ष्मणः कथम् ॥ ९ ॥

मिद्वार्धस्त्वं कृतार्धश्च येन चैता ममात्मजा ।

तपोदीक्षान्त्रितो दृष्टो नरनारायणाविव ॥ १० ॥

किमाह रामस्तेजस्यो किं च मां लक्ष्मणोऽब्रवीत् ।

किमुवाच च मां माध्वी सोता भर्तृपरायणा ॥ ११ ॥

किं ताभ्यामशितं भुक्तमितः^३ प्रभृति शंभ मे ।

अशेषतो यथावृत्तं वनं रामस्य गच्छतः ॥ १२ ॥

इति श्रुतो नरेन्द्रेण नोदितः सज्जमानया ।

उवाच वाचा राजानं व्यथागद्गदया^४ ततः ॥ १३ ॥^०

पुरात्प्रभृति वृत्तान्तमशेषेणानिवर्तनात्^५ ।

उक्त्वा ततः परमिमं रामसन्देशमब्रवीत्^६ ॥ १४ ॥

कृत्वा तेऽनुदिशं रामः प्रणामं प्राञ्जलिः सुतः ।

इदं मां संपरिष्पज्य सन्दिदेश कृताञ्जलिः ॥ १५ ॥

श्रुत मद्बचनाद्गत्वा समासाद्य महीपतिम् ।

शिरसा प्रणिपत्यादौ प्रष्टव्यः कुशलं ततः ॥ १६ ॥

मातरश्चापि ताः सर्वोः प्रष्टव्याः कुशलं त्वया ।

अशेषतः समामाद्य प्रणिपत्याभिवाद्य च । १७ ॥

पृष्ठा च कुशल श्रुत विज्ञाप्यो मे पिता त्वया ।

अनुग्रहार्थमस्माकं न शोच्योऽहं त्वयेत्युत ॥ १८ ॥

यतः सर्वो हि राजेन्द्र भवितव्यमुपाश्रुते ।

अतो न शोच्योऽस्मि त्रिभो मम चेदिच्छसि त्रियम् ॥ १९ ॥

कौशल्यापि^७ च मे माता विज्ञाप्या कुशलं त्वया ।

३ य—भुक्तं यत । म—त्यक्तमित । ४ कै, य—वृथा । ० म । ० म—
०मशेषेण निवर्तनात् । ५ म—रामे मकोशमब्रवीत् । ६ म—कौशल्या ।
य, कै, ल, कौशल्या ।

मच्छोककपित्तो राजा न वाच्यः परुषं त्वया ॥ २० ॥
शापिताऽमि मम प्राणैः पुनरागमनेन च ।
देववत् पूजनीयस्ते पिता न इति चाब्रवीत् ॥ २१ ॥
परिप्रज्य च वक्तव्यो भरतो वचनान्मम ।
यावराज्यमवाप्य त्वं पूजयेथा नराधिपम् ॥ २२ ॥
त्वया शुश्रूष्यमाणो हि न शोचति यथा नृपः ।
मत्स्नेहादर्हमि तथा कर्तुमित्यभिनिः श्रमन ॥ २३ ॥
ममो मातृपु मर्मासु र्त्तेथा इति चाब्रवीत् ।
भरतं पृथिवीपाल पुत्रं ते केकयीसुतम्^८ ॥ २४ ॥
एवमादि वचो धर्म्यं ब्रुवन्नेव नराधिप ।
वाप्स्येगोपकृद्वात्मा मुमोचाश्रणि^९ ते सुतः ॥ २५ ॥
ईषट्रोपपरीतस्तु मांमिप्रिरिदमब्रवीत् ।
केनायमपराधेन राजा पुत्रो त्रिवामितः ॥ २६ ॥
मया तावद्भवेत् किञ्चिन् कार्कश्याद्विप्रियं^{१०} कृतम् ।
आर्यस्य तु परित्यागे कारणं नोपलक्ष्यते ॥ २७ ॥
यदि प्रव्राजितो रामः केकेय्याः प्रियकारणात् ।
वग्दाननिमित्तं वा न कृतं साधु सर्वथा ॥ २८ ॥
विरुद्धं धर्मकीर्तिभ्या गज्जेदं बुद्धिलाघवात् ।
अयत्नस्यं कृतं मन्ये मत्पुत्रस्य त्रिवामनम् ॥ २९ ॥
मम तावच्च तस्तेऽथ पितृस्नेहोऽस्मि कथन ।

८ व, म—केकयी० । ९ म—ममोयामृणि । व, वं, ल—मुमोचाश्रणि ।

१० व—ककश्यादि० ।

पिता माता सुहृद् भ्राता रामो बन्धुर्गुरुश्च मे ॥ ३० ॥

लोकप्रियमिमं त्यक्त्वा लोकनार्थं च राघवम् ।

राज्ञा किमिव कल्याणं भरतादभिकांक्षितम् ॥ ३१ ॥

सुमन्त्र भरतश्चैव वाच्यस्ते राजसन्निर्घा ।

अमर्षयसि चेत् किञ्चित्त्वं राज्याद्विप्रतिक्रियाम्¹¹ ॥ ३२ ॥

ततो मातृपु सर्वासु ममतामभ्युपागतः ।

राज्याभिमानमुत्सृज्य वर्तस्वेत्यादिदेश ह ॥ ३३ ॥

जानकी तु विनिःश्वस्य वाप्पसन्नक्षरा नृप ।

भूतापहतचित्तेन निरीक्षन्ती मनस्विनी ॥ ३४ ॥

अदृष्टपूर्वच्यसना राजपुत्री यशस्विनी ।

पर्यश्रुनयना² दीना नैव मां किञ्चिदब्रवीत् ॥ ३५ ॥

उदीक्षमाणा भर्तारं मुखेन परिशुष्यता ।

मुमोच केवलं वाप्पं मां निवृत्तमवेक्ष्य सा ॥ ३६ ॥

स चापि रामोऽश्रुमुखः¹³ कृताञ्जलिर्ननाम पादौ तव शोकविह्वलः ।

तथैव मीता रुद्रतो तवावला नृदेव पादौ शिरसा नमस्यति ॥ ३७ ॥

इत्यापे रामायणेऽयोध्याकाण्डे रामसन्देशाख्यानं

नाम द्विपष्टिनमः सर्गः ॥ ६२ ॥

11 ल—क्रियम् । 12 म—पर्यस्य० । ष, ल, कै—पर्यस्य० । 13 द, कै,

ल, म—ऽश्रुमुखः ।

[बं-५९]=[त्रिपष्ठितमः सर्गः]=[दा-५९]

इति ब्रुवाणं सन्देशं सुमन्त्रं मन्त्रिसत्तमम् ।
 ब्रूहि शेषं पुनरिति राजा वचनमब्रवीत् ॥ १ ॥
 तस्य तद्वचनं श्रुत्वा सुमन्त्रो वाष्पविक्रयम् ।
 कथयामास भूयोऽपि रामवृत्तान्तविस्तरम् ॥ २ ॥
 जटाः कृत्वा महाराज चीरवल्कलधारिणौ ।
 गङ्गामुत्तीर्य तौ वीरौ प्रयागाभिमुखौ गतौ ॥ ३ ॥
 अग्रतो लक्ष्मणो याति ततो मध्येऽथ जानकी ।
 रामस्तुपृष्ठतो याति पालयन् रघुनन्दनः ॥ ४ ॥
 तांस्तथा गच्छतो दृष्ट्वा निवृत्तोऽस्म्यवशस्तदा ।
 ततो मम निवृत्तस्य तुरगा वाष्पविक्रवाः ॥ ५ ॥
 राममेवानुपश्यन्तो हेषमाणा^१ विचुक्रुशुः ।
 उभाभ्यां राजपुत्राभ्यां ततः कृत्वाऽहमञ्जलिम् ॥ ६ ॥
 त्वद्गौरवभयाद् राजस्त्वरावान् पुनरागतः ।
 गुह्येन सह कृत्स्नं च तत्रैकदिवसं स्थितः ॥ ७ ॥
 आशया यदि रामो मां पुनरेवाह्वयेदिति ।
 विषयेषु नरच्याघ्र रामव्यसनकर्षिताः ॥ ८ ॥
 अपि वृक्षाः परिम्लानाः मपुष्पस्तत्रकांकुराः ।
 मवाप्साः मरितश्यामन मुतप्तकलुषोदकाः ॥ ९ ॥
 प्रम्लानपुष्कराश्चागन् पद्मिन्यो विगतत्विषः ।

ध्यानैकचित्ताः स्तिमिता न विचेस्मृगद्विजाः ॥ १० ॥

आमीच्च रामशोकेन निष्कृजमिघ^२ काननम् ।

जलजानि च सत्त्वानि स्थलजानि च सर्वशः ॥ ११ ॥

स्थानेभ्यः स्तंभितानीम^३ सर्वतो नाचलन्नुप ।

पुरे राष्ट्रे च ते राजन् पौरजानपदे जने ॥ १२ ॥

तं न पश्याम्यहं कञ्चिद् यो न शोचति ते सुतम् ।

अयोध्यां प्रविशन्तं मां गर्हयन्ति समन्ततः ॥ १३ ॥

पौरा दुःखाभिमन्तसा विना राममुपागतम् ।

विमानहर्म्यप्रासादगवाक्षस्थाश्च योषितः ॥ १४ ॥

उत्सृज्याभ्यागतं रामं मां दृष्ट्वा चुक्रुशुभृशम् ।

अश्रुपूर्णेक्षणा^४ दीना निरीक्षन्त^५ उपागतम्^६ ॥ १५ ॥

हा नृशंस क्व ते रामः स नीत इति चाब्रुवन् ।

नामित्राणां न मित्राणां नोदासीनजनस्य च ॥ १६ ॥

अहमार्ततया कञ्चिद्विशेषमुपलक्षये ।

दीनातुरा^७ऽऽर्तपुरुषा^८ प्रम्लानोपवनद्रुमा ॥ १७ ॥

परिदेवितार्तकरुणा^९ रुदितस्वननादिता ।

निरुत्साहा निरानन्दा निर्वपट्कारमङ्गला^{१०} ॥ १८ ॥

२ कै, ल—निष्कृजमिघ । ३ य—स्तंभितान्येव । ४ कै, ब, ल—अस्रु० ।

म—आस्रु० । ५ ल—निरीक्षन्तमुपाग० । ६ कै—दीनार्तरात्तपुरुषा ।

म—दीनातुरात० । य—दीनातुरात्त० । ल—दीनात्तरातु० । ७ कै—

परिदेवित्तांतकरुणा । म—परिदेवितात० । य परिदेविताकरुणा । ८ के—

९ निर्विपंकारमंगला । म, ल—निर्विपंकार० ।

रामप्रव्रजनार्तेयं^९ पुरी ते न विराजते ।
 इत्येवमादि करुणं सुमन्त्रवचनं ततः ॥ १९ ॥
 श्रुत्वोवाच नृपो दीनो वाष्पगद्गदया गिरा ।
 मिथ्योपचारात् कैकेय्या वञ्चितेन कथं मया ॥ २० ॥
 न मन्त्रितं विमूढेन धर्मज्ञैर्गुरुभिः सह ।
 केनाहं मोहितः पापो यन्मया सह मन्त्रिभिः ॥ २१ ॥
 असंमन्त्र्य विमूढेन सहसा साहसं कृतम् ।
 भवितव्यं तथा तेन रामेणामिततेजसा ॥ २२ ॥
 मया तु तावदशिवं प्राप्तं तद्विप्रवासनात् ।
 इदानीमपि स्रुत त्वं गत्वा रामं निवर्तय ॥ २३ ॥
 नाहं शक्तो विना रामं जीवितुं देवमोहितः ।
 गतागतेन वा कालो दीर्घ एव भविष्यति ॥ २४ ॥
 मामेव रथमारोप्य क्षिप्रं रामं प्रदर्शय ।
 सिंहस्कन्धो महाबाहुः कासौ लक्ष्मणपूर्वजः ॥ २५ ॥
 यदि जीवामि साध्वेनं पश्येयं सह मीतया ।
 पूर्णेन्दुकान्तवदनं चारुपद्मदलेक्षणम् ॥ २६ ॥
 यदि रामं न पश्यामि यास्यामि यममादनम् ।
 सुमन्त्र यदि ते किञ्चिन्मया पूर्वं कृतं प्रियम् ॥ २७ ॥
 तदा प्रापय मां रामं प्राणा हि त्वरयन्ति माम् ।
 रामप्रवाससलिले वाष्पशोकोर्मिमालिनि ॥ २८ ॥
 अगाधच्यसने^{१०} मग्नो घेरेऽहं शोकगागरे ।

इष्टपुत्रभियोगातिदुःसितेन गतायुषा ॥ २९ ॥

मयाऽयं जीवता स्रुत दुस्तरः शोकसागरः ।

हा राम गमानुज हा हा वैदेहि पतिव्रते ॥ ३० ॥

न मां जानीत दुःखार्तं म्रियमाणमनाथवत् ।

कोन्वस्ति दुःसिततरो मया दुष्कृतकर्मणा ॥ ३१ ॥

योऽहमन्तर्गतप्राणो नैव द्रक्ष्यामि राघवम् ।

इति स्म^{११} गजा करुण महायशा विलास दुःखोपहतेन चेतसा ।

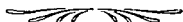
गतासुररूपः सहस्रैव मूर्च्छितः पपात भूयोऽपि नृपासनात् तदा ॥ ३२

इति विलपति पार्थिवे विमृष्टे भृशकरुण पतिते पुनर्धरण्याम् ।

अतिभृशमतिशोकदुःखसन्ना करुणतरं विललाप राममाता ॥ ३३ ॥

इत्यापे^{११} रामायणेऽयोध्याकाण्डे दशरथविलापो नाम

त्रिपष्टितमः सर्गः ॥ ६३ ॥



[व-६०]=[चतुष्पष्टितमः सर्गः]=[दा-६०]

सा तु भूतोपसृष्टेव गतसत्त्वेव चासुखा ।

विललापातुरा देवी कौशल्या पतिता क्षिर्ता ॥ १ ॥

नय मामपि तत्राशु यत्र रामः सलक्ष्मणः ।

सुमन्त्र नहि रामेण विना जीवितुमुत्सहे ॥ २ ॥

तद्योजय रथं साधु नय मामपि काननम् ।

अथ मां न नयस्याशु गमिष्यामि यमक्षयम् ॥ ३ ॥

वाष्पोपरुद्धया धाचा पुरस्तात् सज्जमानया ।

वाक्यमाश्रयासयन् देवीं स्रुतः प्राञ्जलिरब्रवीत् ॥ ४ ॥

त्यक्तुमर्हसि कल्याणि शोकं पुत्रवियोगजम् ।

तत्रापि स सुखी रामो रंस्यते देवि निर्धृतः ॥ ५ ॥

लक्ष्मणो ह्यस्य तेजस्वी पादौ परिचरन् वने ।

यससीतः परं लोकमर्जयन् धर्मनिर्जितम् ॥ ६ ॥

विजनेऽपि वने मीता भर्तुर्बाहुव्यपाश्रया ।

देवि स्वर्गोपमे स्थाने मह रामेण घत्स्यति ॥ ७ ॥

नास्या दैन्यं रिपादं वा सुग्रक्ष्ममपि लक्षये ।

चने यद्योचितौ वासो वैदेव्याः प्रतिभाति मे ॥ ८ ॥

नगरोपवने रम्ये यथाऽरमत मा पुरा ।

विजनेऽपि तथाऽरण्ये रंस्यते देवि मा शुचः ॥ ९ ॥

वैदेही मह गमेण पूर्णचन्द्रनिमानना ।

अतुलां विन्दते प्रीतिं तां न शोचितुमर्हसि ॥ १० ॥

तद्गतं हृदयं तस्यास्तदर्धानं च जीवितम् ।

अयोध्याऽपि भवेत्तस्या रामेण रहिताऽटवी ॥ ११ ॥

पथि पृच्छति वैदेही ग्रामांश्च नगराणि च ।

रामं कमलपत्राक्षं सरांसि सरितस्तथा ॥ १२ ॥

रामलक्ष्मणयोर्मध्ये सीता राजति ते स्तुषा ।

विष्णुनामवयोर्मध्ये यथा श्रीरिवरूपिणी ॥ १३ ॥

७ अध्वनि श्रममन्तापदुःखैरप्यातपेन च ।

अध्वनि श्रममन्तापदुःखैरप्यातपेन च ।

न विमुञ्चति^१ वैदेही चन्द्रांशुमदृशीं प्रभाम् ॥ १४ ॥

मदृशं शतपत्रस्य पूर्णचन्द्रसमद्युति ।

वदनं कृत्स्नमार्तायाः सीताया न विलुप्यते ॥ १५ ॥

प्रकृत्या ऽलक्तकप्रख्या लात्तारससमप्रभौ ।

तथैव रेजतुस्तस्याश्चरणौ पद्मवर्चसौ ॥ १६ ॥

इदानीमपि वैदेही तत्र सन्न्यस्तभूषणा ।

सुरूपशोभया हीना शोभते ऽप्यधिकं वने ॥ १७ ॥

इदानीमपि वैदेही बालैरनुगता मृगैः ।

नृपुरामुक्तचरणां खेलं गच्छति जानकी ॥ १८ ॥

गुप्ता पुरुषसिंहेन सिंहेनेव गिरेर्गुहा ।

दुष्प्रधर्षा दुष्प्रधर्ष सर्पिणां वनचारिणां ॥ १९ ॥

सिंहं वने गजं वाऽपि व्याघ्रं वा प्रेक्ष्य जानकी ।

न ग्राममेति गच्छन्ती वने भर्तृव्यपाश्रया ॥ २० ॥

तथैव रामः पुत्रस्ते लक्ष्मणश्चैव वीर्यवान् ।

उदारवपुषौ वीरौ न म्लानिमधिगच्छतः ॥ २१ ॥

परस्परप्रियहितं कुर्वाणौ प्रियवादिनौ ।

न पितुर्नैव मातुश्च नान्यस्य स्मरतो वने ॥ २२ ॥

न ते शोच्यास्त्वया देवि परस्परहिते रताः ।

इदं हि चरितं तेषां ख्यातिं लोकेषु यास्यति ॥ २३ ॥

य शोकं परिगृह्य मानसं महर्षिकल्पस्तपसि व्यवस्थितः ।

तो मूलफलाशनः स ते सुतो महात्मा कुरुते महत्तपः ॥२४॥

सुमन्त्रेण हितार्थवादिना निवार्यमाणाऽपि सती सुतप्रिया ।

प्रलापाद्विरराम दुःसिता नरेन्द्रपत्नी प्रियपुत्रलालसा ॥२५॥

पार्थे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे कौशल्याऽऽश्वासनं

नाम चतुष्पष्टितमः सर्गः ॥ ६४ ॥

[वं-६१]=[पञ्चपाष्टितमः सर्गः]=[दा-६१]

प्रत्याश्रस्तं तु राजानमुत्थाय भृशदुःखितम् ।

कौशल्या ऽऽश्रासयामास शयने शोकविक्रमम्^१ ॥ १ ॥

अश्रुणि मार्जयन्ती च विलपन्ती च दुःखिता ।

भूयः प्रत्यागतप्राणमिदं वचनमब्रवीत् ॥ २ ॥

यदिदं त्रिषु लोकेषु प्रथित ते महद्यशः ।

पुत्रप्रत्राजनात्तत्ते प्रणष्टमिन् लक्षये ॥ ३ ॥

को हि नाम प्रिय पुत्रं त्यजेदनपकारिणम् ।

प्रतिश्रुत्य सता मध्ये यौवराज्याभिषेचनम् ॥ ४ ॥

यदि चावश्यदातव्यः प्रियार्ये ते वरः प्रभो ।

किमर्थं ते प्रतिज्ञातं रामस्याऽप्यभिषेचनम् ॥ ५ ॥^०

अनृताद्यदि वा भीतः प्रत्राजयसि वा वनम् ।

प्रतिज्ञायाभिषेक्ता ऽस्मि श्रस्त्रामित्यभिमन्त्रितम् ॥ ६ ॥

स्त्रीहेतोः प्रथमं दत्त्वा विप्रलब्धस्त्वया सुतः ।

पश्योभयं विचायतत्तथाप्यनृतवागसि ७ ॥

इच्छाकूणामयं वशं सत्यनाक् प्रथितः क्षितौ ।

तत्र त्वया यौवराज्यं प्रतिज्ञायानृतं कृतम् ॥ ८ ॥

श्लोकश्चायं महाराज पौराणः प्रथितः क्षितौ ।

सत्यं पुरा तुल्यतां स्वयं गीतः स्वयंभुवा ॥ ९ ॥

अश्वमेधसहस्रं च सत्यं च तुल्या धृतम् । अथा

अश्वमेधसहस्राद्धिं सत्यमेवातिरिच्यते ॥ १० ॥

जीवितेनाप्यतः सत्यं भुवि रक्षन्ति साधवः ।
 न हि सत्यात्परो धर्मस्त्रिषु लोकेषु विद्यते ॥ ११ ॥
 सत्यात्समभवत्सोमः सोमाद् ब्रह्म ततोऽमृतम् ।
 अद्भ्योऽग्निरग्नेः पृथिवी भूमेर्भूतानि जज्ञिरे ॥ १२ ॥
 भूतेभ्यश्च विसर्गोऽयं पुनरावर्तकः स्मृतः ।
 एवमेष विसर्गश्च सत्ये देव प्रतिष्ठितः ॥ १३ ॥
 सत्येनार्कः प्रतपति सत्येनाप्यायते शशी ।
 सत्येनामृतमुद्भूतं सत्ये लोकाः प्रतिष्ठिताः ॥ १४ ॥
 वृषश्चतुष्पाद् भगवान् धर्मः सत्ये प्रतिष्ठितः ।
 घोरान्तरिक्षं पृथिवी सत्येनैव श्रियन्त्युत ॥ १५ ॥
 सत्येनैकेन यांष्टोकान् यान्ति मत्स्यव्रता नराः ।
 न यान्ति ताननृतिका इष्ट्वा क्रतुशतैरपि ॥ १६ ॥
 मत्स्यप्रतिज्ञा नृपते राजानः सत्यवादिनः ।^(१)
 पथिभिस्तेऽत्र गन्तव्यं गता येस्ते पितामहाः ॥ १७ ॥
 डावेव कथिता सद्भिः पन्थानां वदतां वर ।
 अहिंसा चैव मत्स्यं च यत्र धर्मः प्रतिष्ठितः ॥ १८ ॥
 तदिदं रक्षितं मद्भिः मत्स्यमुत्मादितं त्वया ।
 धर्मं चैनं समास्थाय त्वयैवोन्मथितं यशः ॥ १९ ॥
 चाति गन्धः सुमनसां प्रतिपातं कथञ्चन ।
 धर्मयुक्तमनुप्याणां चाति गन्धः ममन्ततः ॥ २० ॥
 चन्दनानां महाऽर्हाणामगुम्फां तथा प्रभो ।

नावस्थार्या' चिरं गन्धो यथा कीर्तिमयो नृणाम् ॥२१॥
 स तवायं गुणहरो गन्धो लोके चरिष्यति ।
 अशुभस्यास्य महतः कर्मणः शाश्वतीः समाः ॥ २० ॥
 इह मन्ये सुमहती ध्रुणहत्या त्वया कृता ।
 प्रियार्यं वसुधा दत्ता रामः प्रप्राजितो वनम् ॥ २३ ॥
 दिष्ट्या न याचितं त्वेतद्रामोऽयं वध्यतामिति ।
 नत्वेतदपि कैकेय्या दुर्लभं त्वयि राजनि ॥ २४ ॥
 न ह्यद्भुतमिदं लोके यद्बद्ध्वा नलवचरैः ।
 ईश्वरैर्दुर्बलः कृष्यः क्रतो पशुरिवानलः ॥ २५ ॥
 धृष्यन्ते^३ हि नरा लोके दुर्बला चलनचरैः ।
 आक्रम्यमाणा विजने सिंहैरिव महाद्विषाः ॥ २६ ॥
 स मे सुतः सुशक्तो ऽपि धर्मं प्रति तु दुर्बलः ।
 अतः सकामानुत्सृज्य मा च त्यक्त्वा वनं गतः ॥ २७ ॥
 किं नु मे त्वामुपालभ्य राजन् परुषया गिरा ।
 परस्य कृत्वा किं मन्युमात्मभाग्येष्वसाधुषु ॥ २८ ॥
 अनुनीता ऽस्मि रामेण गच्छता बहुविस्तरम् ।
 न मे वाच्यः पिता किञ्चिद्भवत्येति पुनः पुनः ॥ २९ ॥
 न मदर्थं त्वया वाच्यो रूक्ष मातः पिता मम ।
 वाग्भिरुद्वेजनीयाभिरिति मां राघवोऽन्वशात् ॥ ३० ॥
 माऽहं तेनानुशिष्टा ऽपि पुत्रस्नेहबलात्कृता ।
 अवशा त्वा व्रजीभ्येतन्मया शोकमहाऽर्णवे ॥ ३१ ॥

का हि नामाप्रियं व्रयाद् भर्तारमिह मद्विधा ।

स्मरन्ती सत्कुले जन्म विनयं चापि जानती ॥ ३२ ॥

*लोके हि पुरुषः स्त्री वा तथा तत् कुरुते स्वयम् ।

*यथा मधुरमुग्रं वा शृणोति लभतेऽपि वा ॥ ३३ ॥

नूनं हि मम भाग्यानां वैमुख्याद् राघवस्य च ।

अचिन्त्यत्वाच्च दैवस्य त्वमेतत् कृतवानृप ॥ ३४ ॥

न सख्यहं त्वा नृप दोषतो ब्रवीम्यनीश्वरं ह्रीश्वरदैशिकं जगत् ।

दशा कृतानोपहतेयमाविला किमत्र शक्यं पुरुषेण चेष्टितुम् ॥ ३५ ॥

अतो नियोगात् तव सत्यवादी सत्यां प्रतिज्ञां नृप पालयंस्ते ।

इतो महात्मा वनमेव रामो गतः सुखान्यप्रतिमानि हित्वा ॥ ३६ ॥

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे कौशल्यापालम्भो

नाम पञ्चषष्टितमः सर्गः ॥ ६५ ॥

[वं-६२] = [पट्टपष्टितमः सर्गः] = [दा-६१]

तथा तु बहु कौशल्या विलप्य क्रोधमूर्च्छिता^१ ।

अनिकृष्यैव रोपस्य पुनरेवाभ्यभाषत ॥ १ ॥

त्वया-यस्त्वानियुक्तोऽपि भक्त्या राममनुव्रतः ।

लक्ष्मणोऽनुगतः प्रेम्णा तं शोचामि विशेषतः ॥ २ ॥

यो ऽभिपेके प्रतिहते मम पुत्रस्य धीमतः ।

निःसृतो धनुरादाय तूर्णमश्रुतविस्तरः ॥ ३ ॥

क्रोधेन महता ऽऽविष्टो रामराज्यापहारणम् ।

न स जानाति धर्मात्मा स्वगृहादग्निमृत्थितम् ॥ ४ ॥

गृहीतचीरं यो दृष्ट्वा राघवं प्रियराघवः ।

पूर्वमेव सचीरो ऽभूत्तस्य शोचामि धीमतः ॥ ५ ॥

क्रियमाणं नरेन्द्रेण मम निर्विषयं सुतम् ।

योऽनुयातः स्वयं भक्त्या भ्रातरं भ्रातृवत्सलः ॥ ६ ॥

लक्ष्मणं तमहं रामाच्छोचाम्यद्य विशेषतः ।

राज्ञो महेन्द्रकल्पस्य जनकस्य महात्मनः ॥ ७ ॥

सुतां तामनवधाङ्गीं वैदेहीं चिन्तयाम्यहम् ।

अत्यन्तसुखसंबृद्धां लालितां पितृवेश्मनि ॥ ८ ॥

अत्यन्तसुकुमाराङ्गीं श्यामां पद्मदलेक्षणां ।

या सुखानि परित्यज्य सर्वांश्च ज्ञातिवान्धवान् ॥ ९ ॥

पतिं याऽनुसृता यान्तं किमवस्थाऽद्य सा सती ।

कथं सा सुतनुः साध्वी सुकुमारी सुखोचिता ।

शीतमुष्णं च वर्षं च वैदेही प्रसहिष्यति ॥ १० ॥

या श्राम्यति गृहेऽप्यस्मिथरन्ती वसुधातले ।

कथं सा विजनेऽरण्ये वैदेही प्रचलिष्यति^३ ॥ ११ ॥

भुक्त्वा स्वादानि भोज्यानि ह्यन्नानि जनकात्मजा ।

कथं वन्यान्यभोज्यानि कटुतिक्तानि भोक्ष्यते ॥ १२ ॥

शयनानि महार्हाणि पुरा संसेव्य मैथिली ।

कथं पर्णाटतां भूमिमधिवत्स्यति मे स्तुपा ॥ १३ ॥

वेषुव्रीणास्वनैः सुप्ता लालिता सा विचोध्यते ।

तन्वङ्गी सा कथं घोरैर्वहुपक्षिमृगारुतैः^४ ॥ १४ ॥

पुरा मुख्यानि वस्त्राणि परिधाय यशस्विनी ।

कथं सा कुशचीराणि गात्रैः संधारयिष्यति ॥ १५ ॥

सुललाटं सुकेशान्तं पद्मपत्रायतेक्षणम् ।

सुदतं सुहनुस्ङ्गं पूर्णचन्द्रसमप्रमम् ॥ १६ ॥

धूयमानं वने वातैर्निपीतं चार्करस्मिभिः ।

कथं तच्चारु वदनं तस्या वैवर्ण्यमेष्यति ॥ १७ ॥

देवराजप्रतीकाशो यशस्वी पुरुर्षभः ।

ध्वजो नृपकुलस्यास्य किमवस्यः स संप्रति ॥ १८ ॥

नूनं स्वपिति मेदिन्यां महार्हशयनोचितः ।

भुजं परिषसङ्गाशमुपधाय महाभुजः ॥ १९ ॥

चारुयोणं विशालाक्षं पूर्णचन्द्रसमघति ।

कदा द्रक्ष्यामि रामस्य भ्रुवं पद्मदलेक्षणम् ॥ २० ॥

धात्रा मे हृदयं नूनमश्मसारमयं कृतम् ।
 हीनं यद्रामचन्द्रेण न विदीर्णं सहस्रधा ॥ २१ ॥
 एतत् ते कृपणं कर्म कृतं लोकविगर्हितम्^५ ।
 निरस्ताः परिधावन्ति त्रयस्ते यन्महावने ॥ २२ ॥
 यदि पञ्चदशे वर्षे न रामः पुनरेष्यति ।
 ततस्त्यच्याम्यहं प्राणान् न कार्यं जीपितेन मे ॥ २३ ॥
 सर्वथा ह्यागतो रामः प्रवासात्पुरुषर्षभः ।
 न स तां श्रियमन्विच्छेदीयमानामपि स्वयम् ॥ २४ ॥
 भरतेनोपभुक्तां हि पृथिव्यां निपुलां श्रियम् ।
 नोपभोक्ष्यति धर्मज्ञः परभुक्तामिव स्रजम् ॥ २५ ॥
 न हि सिंहः परालीढमामिषं भोक्तुर्महति ।
 नृसिंहो भरतालीढं रामो राज्यं न भोक्ष्यते ॥ २६ ॥
 आज्यं तिलाः समिधैश्च कुशा धूपाः^६ सुचस्तथा ।
 नैतानि यातयामानि कल्पन्ते^७ पुनरध्वरे ॥ २७ ॥
 अतो राज्यमिदं पश्चात् ततो भ्रातु र्यवीयसः ।
 नाभिपत्तुमलं रामः पीतसोममिवाध्वरे ॥ २८ ॥
 न चेमां धर्षणां रामो ह्यसहिष्यदमर्षणः ।
 नाधारयिष्यद्यदि ते गौरवं मन्दरोपमम् ॥ २९ ॥
 शितैः शरैः स हि क्रुद्धो दारयेदपि मन्दरम् ।
 त्वां तु नोत्सहते वक्तु धर्मात्मा पितृगौरवात् ॥ ३० ॥

ससोमार्कग्रहगणं नमस्ताराविचित्रितम् ।
 पातयेद्यो भुवि क्रुद्धः स त्नां न व्यतिवर्त्तते ॥ ३१ ॥
 आचालयेद्दारयेद्वा ग्भीरं शैलशताचिताम् ।
 यस्तेजस्वी स ते पुत्रो गौरवान्नातिवर्त्तते ॥ ३२ ॥
 एतंधीर्यो महासत्त्वस्त्वया ख्यातपराक्रमः ।
 जनयित्वाऽऽत्मना त्यक्तो जलजेनात्मजो यथा ॥ ३३ ॥
 अनेन ते ऽतिक्रमेण मन्ये ऽहं पृथिवीपते ।
 त्वत्तः श्रियमतिक्रान्तां कीर्तिं पापान्तरादिव^१ ॥ ३४ ॥
 द्विजातिभिरयं धर्मः शास्त्रदृष्टः मनातनः ।
 गुरोर्दुष्टान्महाराज गौरवं विनिवर्त्तते ॥ ३५ ॥
 गुरुर्दुष्टः परित्याज्यस्तथा माता तथा पिता ।
 यो ह्यनर्थाय कल्पेत स तु शत्रुर्न चान्धवः ॥ ३६ ॥
 न त्वेवं भविता गोपस्त्वयि रामस्य राघव ।
 त्वया यदि कृतं पापं न स धर्माचलिष्यति ॥ ३७ ॥
 एतमुक्त्वा तु कौशल्या विलपन्ती यशमिनी ।
 ततो हेत्वर्थसंपुक्तं पुनरेवात्रयीद्वयः ॥ ३८ ॥
 प्रथमा गतिरार्त्तमव द्वितीया गतिरात्मजः ।
 मन्तो गतिस्वृतीयांक्ता चतुर्थो धर्मसञ्चयः ॥ ३९ ॥
 चतसृभ्यः परिभ्रष्टो गतिभ्यस्त्वं नराधिप ।
 यने परित्यजन् रामं सार्धं सुतमकारणम् ॥ ४० ॥
 न हि रामं परित्यज्य चिरं शक्तोऽसि जीवितुम् ।

मद्रमोपार्जिताह्लोकात् कैकेय्यर्थे परिच्युतः ॥ ४१ ॥

मत्स्यं कीर्तिं च मां चैव त्यक्त्वा रामं सुतं च मे ।

प्राणास्त्यक्ष्यसि दुःखार्त्तः सर्वथा ऽस्मि हता त्वया ॥ ४२ ॥

हता त्वयेयं नगरी सराष्ट्रा कीर्त्तिंश्च धर्मश्च तथैव चात्मा ।

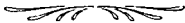
अहं सपुत्रा नृपनागराश्च सर्वे हताः कैकयिराज्यदानात् ॥४३॥

एता गिरो निष्ठुरदारुणाक्षराः श्रुत्वाऽथ^१ राजा सुतशोकदुःखितः ।

विनिःश्वसंश्चापि निमीलितेक्षणः शुशोच रामं हतमच्चचेतनः ॥४४॥

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे कौशल्याप्रलापो

नाम पदपट्टिनमः सर्गः ॥ ६६ ॥



[वं-६३] = [सप्तपष्टितमः सर्गः] = [दा-६२]

नाशल्ययैवं नृपतिर्वाशुररभिपीडितः^१ ।

प्रमोह शयने शुभ्रे दुःखेनामीलितेक्षणः ॥ १ ॥ [N

रत्तिलम्ब्य ततः संज्ञां समुन्मील्य च लोचने । -

गरिपार्श्वस्थितां दृष्ट्वा कौशल्यामिदमब्रवीत् ॥ २ ॥ [३

नार्हस्युरसि मे धारं निपेक्तुं सुतवत्सले । [N

पुत्रशोकार्तमनसो हृदयं मे विदीर्यते ।

अमहान्यकृतप्रज्ञे^२ वाग्वज्राणि विमुञ्चसि ॥ ३ ॥ [N

अनु भक्तेव साध्वीनां गुणवान्निर्गुणोऽपि वा ।

दैवतं च गतिश्चेति महापूज्यतमो मतः ॥ ४ ॥ [८

अमस्वातिक्रमं देवि भृशार्त्तस्त्वां प्रसादये ।

हन्तुमर्हसि वै भूयो दैवेन निहतं न माम् ॥ ५ ॥ [N

जाने त्वां देवि धर्मज्ञां दृष्टलोकपरावराम् ।

अतो नार्हसि मे भूयो वक्तुमेतादृशं वचः ॥ ६ ॥ [९

इति राज्ञोऽतिकरुणं श्रुत्वा दीनस्य भाषितम् । [१०पृ

पुत्रशोकं परित्यज्य कौशल्या पतिवत्सला ॥ ७ ॥ [N

शिरस्यञ्जलिमाधाय^३ भृशं संभ्रान्तमानसा । [११पृ

शिरसा नृपतेः पादौ प्रणिपत्येदमब्रवीत् ॥ ८ ॥ [N

आतिक्रमं मे नृपते त्वमिमं क्षन्तुमर्हसि ।

के, घ, म—वाप्टरै० । ल—वाकरै० । २ के, घ, ल—०दृष्टत-
। म—०न्याहुते प्राक्षैर् । ३ घ, म—०मादाय ।

- १०] अत्रान्यं हि मयोक्तोऽसि पुत्रशोकनिमूढया ॥ ६ ॥ [N
देवभूतेन भर्ता या चमितं (तुं?) न प्रपद्यते ।
- ११] कृताञ्जलि भृशार्तेन हता सेह परत्र च ॥ १० ॥ [N
क्षमस्व राजलार्त्ताया व्यतिक्रममिमं प्रभो ।
- १२] प्रभुश्चैवेश्वरश्चासि मम रामस्य चोभयोः ॥ ११ ॥ [N
जानामि धर्मं धर्मज्ञं जाने त्वां सत्यवादिनम् ।
- १३] पुत्रशोकार्त्तयेदं तु मया किमपि भाषितम् ॥ १२ ॥ [१४
शोको नाशयते प्रज्ञां शोको नाशयते श्रुतम् ।
- १४] शोको धृतिं नाशयति नास्ति शोकममं तमः ॥ १३ ॥ [१५
सोढुं शक्योऽग्निसस्पर्शः शस्त्रस्पर्शश्च दारुणः ।
- १५] न तु शोकमत्र दुःखं संसोढुं नृप शक्यते ॥ १४ ॥ [१६
सर्वज्ञा धृतिमन्तोऽपि छिन्नधर्मार्थसंशयाः ।
- १६] मुनयोऽप्यत्र मुह्यन्ति शोकोपहतचेतसः ॥ १५ ॥
। पञ्चपाणि गतान्यद्य दिवसानि सुतस्य मे ।
- १७] तानि वर्षशतानीय दुःखार्ताया गतानि मे ॥ १६ ॥ [१७
तद्गतासक्तचित्तायाः शोकौघो मे प्ररर्धते ।
- १८] जलौघनेगो गङ्गाया महानिय तपाल्यये ॥ १७ ॥ [१८
एष शोकमहाशत्रुः सुबद्धानपि मानसान् ।
- N] प्रसह्य हरते वृक्षान्नदीस्य इवोल्बणः^४ ॥ १८ ॥ [N
एव सभापमाणायास्तस्याः सुकरुणं वचः ।

१९] कौशल्याया जगामास्तं सविता दिवसक्षये ॥ १९ ॥ [१९

एवं प्रह्लादितो वाक्यैर्मैर्घ्यैः^५ कौशल्याया नृपः । ।

२०] शोकश्रमपरिम्लानः शनैर्निद्रावशं ययौ ॥ २० ॥ [२०

इत्यार्षे रामायणेऽयोध्याकाण्डे दशरथप्रसादनं नाम

सप्तपष्ठितमः सर्गः ॥ ६७ ॥



[वं-६४]=[अष्टपष्टितमः सर्गः]=[दा-N]

एवं तु विलपन्तीं तां कौशल्यां प्रमदोत्तमाम् ।

१] इदं धैर्यान्वितं चाक्यं सुमित्रा धर्म्यमब्रवीत् ॥ १ ॥

दिव्यैर्गुणगणैर्युक्तः पुत्रस्ते देवि राघवः ।

२] पितुर्नियोगे तिष्ठन्तं न तं^१ शोचितुमर्हसि ॥ २ ॥

नादेवसत्त्वा नाप्रज्ञाः पुरुषा नाल्पदर्शनाः ।

३] पितुर्नियोगे तिष्ठन्ति न चाकल्याणभागिनः ॥ ३ ॥

यत् तवार्ये गतः पुत्रो हित्वा राज्यं सुखानि च ।

४] प्राप्तव्यं तेन सुमहत् कल्याणमिति मे मतिः ॥ ४ ॥

सद्भिराचरिते धर्म्ये^२ यशस्ये वर्त्मनि स्थितम् ।

५] पुत्रं धर्मभृतां श्रेष्ठं न त्वं शोचितुमर्हसि ॥ ५ ॥

अस्थानुवर्तते वृत्तं लक्ष्मणो यो ममात्मजः ।

६] तमप्यतो नार्हसि त्वं शोचितुं भ्रातृवत्सलम् ॥ ६ ॥

अरण्यवासदुःखानि जानन्त्यपि च जानकी ।

७] सुखसंवर्धिता त्यक्त्वा गृहनाससुखानि च ॥ ७ ॥

अनुगच्छति भर्त्सरं या सा धर्मपरायणा ।

८] तां येशोभाजनां^३ धन्या नैव शोचितुमर्हसि ॥ ८ ॥

यशःपताका विपुलां त्रिषु लोकेषु विश्रुताम् ।

९] तद्धन्यते^४ न^५ ते पुत्रस्तं न शोचितुमर्हसि ॥ ९ ॥

रामस्य विपुलं सत्त्वं विज्ञायोदारचेतसः ।

१०] न गात्राप्यंशुभिः सूर्यः सन्तापयितुमर्हति ॥ १० ॥

आदाय सुरमन्त्रं गन्धान् वनेभ्यः सगुणोऽनिलः ।

११] पुत्रं ते नातिशीतोष्णः संगेऽप्यति फानने ॥ ११ ॥

भूमावपि शयानं तं वैदेद्या सह राघवम् ।

१२] पितेमांशुकरैः सृष्ट्वा ह्लादयिष्यति चन्द्रमाः ॥ १२ ॥

अस्त्राणि यस्मै दिव्यानि त्रिभ्यामिन्द्रो ददा स्वयम् ।

१३] तं त्वं सर्वोत्तमिन्द्राग्रे कथं शोचितुमर्हसि ॥ १३ ॥

कीर्त्या श्रिया भार्यया च नित्यं न तिसृभिर्पुतः^६ ।

१४] धृतिमांश्च महामत्तः न रामो राज्यमर्हति ॥ १४ ॥

यान्यथ पुत्रशोकात्ता कांशल्येऽश्रुणि मुञ्चसि ।

१५] आनन्दजानि तानि त्वं रामे भोक्ष्यस्युपमिते^७ ॥ १५ ॥

पुत्रमे यद्यथा लोकान् व्याप्य धर्ममृतां वरः ।

१६] चतुर्दशानां वर्षाणामन्ते भोक्ष्यति मेदिनीम् ॥ १६ ॥

शुशचीराम्बरमपि यं यान्तं नरकञ्जरम् ।

१७] श्रीरिवानुगता सीता तस्य किं नाम दुर्लभम् ॥ १७ ॥

तत्र पुत्रो वरः पुंसां वनयामादुपागतः ।

१८] धृत्वावतभुजः पादौ मंसृशन् ह्लादयिष्यति ॥ १८ ॥

तं पादौ वन्दमानं तु दृष्ट्वा राजीवलोचनम् ।

१९] मेघराजीव शैलेन्द्रं वर्षम्यानन्दजाश्रुभिः ॥ १९ ॥

निशम्य तल्लक्ष्मणमातृवाक्यं रामस्य मातुर्नरदेवपत्न्याः ।

शनैः स शोकः प्रथमं जगाम वृष्ट्या यथाऽग्निः परिषिच्यमानः ॥२०॥

इत्यार्षे रामायणे ऽग्रोऽध्याकाण्डे सुमित्रावाक्यं

नाम अष्टपष्ठितमः सर्गः ॥ ६८ ॥

[बं-६५] = [एकोनसप्ततितमः सर्गः] = [दा-६३]

रामे मनुजशार्दूले^१ सानुजे वनमाश्रिते । [N

१] राजा दशरथः श्रीमानापदं समपद्यत ॥ १ ॥ [१५

रामलक्ष्मणयोरेवं विवासाद् वासरोपमः ।

२] जग्राहोपप्लुतगतः तमः सूर्य इरांशुमान् ॥ २ ॥ [२

स पष्ठे दिवसे रामं शोचन्नेत्र महायशाः ।

३] अर्धरात्रे प्रबुद्धः सन् ससाराथ स्वदुष्कृतम् ॥ ३ ॥ [४

स्मृत्वा च देवीं कौशल्यामभिभाष्येदमब्रवीत् । [५

४] यदि जागर्षि कौशल्ये शृणु मेऽग्रहिता वचः ॥ ४ ॥ [N

यदाचरति कल्याणि^२ नरः कर्म शुभाशुभम् ।

५] सोऽग्रश्यं फलमाप्नोति तस्य कालक्रमागतम् ॥ ५ ॥ [६

गुरुलाघवमर्थानामारंभे ह्यवितर्कयन् ।

६] दोषतो गुणतश्चैव बाल इत्युच्यते बुधैः ॥ ६ ॥ [७

तद्यथाऽऽभ्रवनं छित्त्वा^३ पलाशवनमाश्रयेत् ।

७] पुष्पं छित्त्वा^४ फल प्रेप्सु निराशः स्यात् फलागमे ॥ ७ ॥ [८

सोऽहमाभ्रवनं छित्त्वा^५ पलाशवनमाश्रितः ० ।

८] बुद्धिमोहात् परित्यज्य रामं शोचामि दुर्मतिः ॥ ०८ ॥ [१०

तच्च लक्ष्येण कौशल्ये^६ तरुणेन धनुष्मता । ०

९] कौमारे^० शब्दवेधित्वा^०-त्सहसा दुष्कृतं कृतम् ॥ ९ ॥ [११

तदिदं मामनुप्राप्त फलं पापस्य कर्मणः ।-

१ ल—शार्दूला । २ म—कर्माणि । ३ म—हित्वा । ४ म—गता* ।
५ म—मिता (स्वा ?) ० के । ६ च, ल, म—कौशल्ये ।

- १०] भक्षितस्य विपस्येव विपाके जीवितान्तकम् ॥ १० ॥ [१२
 अविज्ञानाद्यथा कश्चित्पुरुषो भक्षयेद्विषम् ।
- ११] तथा मयाऽप्यविज्ञानात् पापं कर्म पुरा कृतम् ॥ ११ ॥ [१३
 कौशल्ये^७ त्वम्यनूढायां युवराजो भवाम्यहम् ।
- १२] अथ प्रावृडनुप्राप्ता मनःसंहर्षणी मम ॥ १२ ॥ [१४
- १३] आदाय हि रसं भौमं विवस्त्रांश्चण्डरोचिषा ।
- N] अगस्त्यचरितामाशास्युपावर्तत भानुमान् ॥ १३ ॥ [१५
 आवृण्वाना दिशः सर्वाः स्निग्धा वृद्धिरे घनाः ।
- १४] मुदा विजहिरे चापि तथा सारङ्गचर्हिणः ॥ १४ ॥ [१६
 आकुलाविलतोयानि स्रोतांसि^९ विजलान्यपि । [१९पू
- १५] उन्मार्गजलवाहीनि बभ्रुवुर्जलदागमे ॥ १५ ॥ [N
 मेघजेनाम्बुना भूमि भूरिणा परितर्पिता ।
- १६] उन्मत्तशिखिसारङ्गा बभौ हरितशाद्वला ॥ १६ ॥ [N
 एतस्मिन्नीदृशे काले वर्तमाने घनागमे ।
- १७] बद्ध्या तूणौ धनुष्पाणिः सरयूमगमं नदीम् ॥ १७ ॥ [N
 धनुष्यार्यामर्शालत्वाच्छब्दवेधचिकीर्षया ।
- १८] तस्या नद्यास्तदा तीर्थं विविक्तमुपसृत्य च ॥ १८ ॥
 निषाने निशि वन्यानां मृगाणां सलिलार्थिनाम् । [२१पू
- १९] स्थितस्तत्राहमेकान्ते रात्रौ विततकार्मुकः ॥ १९ ॥ [N
 तत्राहं महिषं वन्यं गजं वा तीरमागतम् ।
- २०] अन्यं वाऽपि मृगं हन्मि शब्दं श्रुत्वाऽभ्युपागतम् ॥ २० ॥ [२१

अथाह पूर्यमाणस्य जलकुंभस्य नि म्वनम् ।

- २१] अचक्षुःत्रिपयेऽश्रापं वारणस्येव वृंहितम् ॥ २१ ॥ [२२
 ततः सुपुंसं निशितं शर सन्धाय कार्मुके ।
- २२] तस्मिन्^{१०} शब्दे शर क्षिप्रमसृजं दैरमोहितः ॥ २२ ॥ [२३
 शरे चाश्रणव तस्मिन् मुक्ते निपातिते तदा ।
- २३] हा हतोऽसीति करुणां मानुषेणोरिता गिरम् ॥ २३ ॥ [२५
 कथममाद्विधे शस्त्रं निपात्यैतत् तपस्विनि ।^{११} [२६पू
- २४] केनाय सुनृशसेन मयि वाणो निपातितः ॥ २४ ॥ [N
 प्रविविक्ता नदीं रात्राजुदाहारोऽहमागतः । [२६उ
- २५] इपुणाऽभिहतः केन कस्येहापकृत मया ॥ २५ ॥ [२७पू
 ऋषेः सन्न्यस्तशस्त्रस्य वने वन्येन जीवत- । [२७उ
- २६] कथ नृशस शस्त्रेण मद्विधस्य निर्धीयते ॥ २६ ॥ [२८पू
 बृद्धस्यान्धस्य दीनस्य बलकलाजिनवाससः । [२८उ
- २६] केनाह घातित- पुत्रः कश्चाप्यथोऽस्य मद्वधे ॥२७॥ [२९पू
 इमं^{१२} निष्कलमारभ केनलोनर्थमहितम् । [२९उ
- २७] को विद्वान् साधु मन्येत शिष्येणेव गुरोर्वधम् ॥२८॥ [३०पू
 नेम^{१३} तथोऽनुशोचामि जीवितक्षयमात्मन- । [३०उ
- २८] मातर पितर चान्धौ बृद्धौ शोचामि तौ यथा ॥२९॥ [३१पू
 तदन्ध^{१४} मिथुन^{१५} बृद्ध दीर्घकाल भूत मया । [३१उ
- २९] कथ मयि मृते^{१६} ज्ञार्थं^{१७} कृपण वतैरिष्यति ॥ ३० ॥ [३२पू
 तौ चाह चैन कृपणा^{१८} केनागम्य दुरात्मना । [३२उ

- ०] चाणेनैकेन निहतः शकमूलफुलाशनाः ॥ ३१ ॥ [३३पू ७
 इति तां करुणां वाचं श्रुत्वा, मे आन्तचेतसः ॥ ३३ ॥ [३३उ
 १] अधर्मभयभीतस्य करदह्यवताप्रथमः ॥ ३२ ॥ [३४पू ७
 सहसाऽभ्युपसृत्यैतमप्रथमं हृदि ताडितम् ॥ ३२ ॥ [३४उ
 २] जटाऽजिनधरं, धालं विद्धं प्रतितमम्भसि ॥ ३३ ॥ [३५पू ७
 स मां कृपणमुढीक्ष्य मर्मण्यभिहतो भृशम् ॥ ३३ ॥ [३५उ
 ३] इत्युवाच वचो देवि द्विधक्षुरिव तेजसात् ॥ ३४ ॥ [३६पू ७
 किं तवायं कृतं क्षुद्र वने निवसता मया ॥ ३४ ॥ [३६उ
 ४] अपो जिघृक्षुर्गुर्वथैः स्यदहं ताडितस्त्वया ॥ ३५ ॥ [३७पू ७
 अमू हि कृपणावन्धावनाथैः विजने चने ॥ ३५ ॥ [३७उ
 ५] मदीयौ पितरौ वृद्धौ प्रतीक्षेते ममाश्रया ॥ ३६ ॥ [३८पू ७
 एकेनानेन चाणेन त्वया पाप इतास्त्रयः ॥ ३६ ॥ [३८उ
 ६] अहमन्ना च तातेश्च कस्माद्रत्नपराधिनः ॥ ३७ ॥ [३९पू ७
 नूनं न तपसः किञ्चित् फलं मत्स्ये श्रुतस्य त्व ॥ ३७ ॥ [३९उ
 ७] यथा मां नाभिजानाति पिता मूढस्त्वया हतम् ॥ ३८ ॥ [४०पू ७
 जानन्नपि हि किं कुर्यादन्धत्वादपुराक्रमः ॥ ३८ ॥ [४०उ
 ८] छिद्यमानमिवाशक्तस् त्रातुमन्यो नगो नगम् ॥ ३९ ॥ [४१पू ७
 पितुरेव च मे पूर्वं शीघ्रमाचक्ष्व राघव ॥ ३९ ॥ [४१उ
 ९] मा त्वा घक्षयति शपेनं शुष्कं काष्ठमिवानलः ॥ ४० ॥ [४२पू ७
 श्यमेकंपदी यातु मम तत् पितुराश्रमम् ॥ ४० ॥ [४२उ
 १०] तं प्रसादय गत्वाऽऽशु न येन कुपितः शपेत् ॥ ४१ ॥ [४३पू ७
 विशल्यं कुरु मां क्षिप्रं त्वयाऽयं मेऽपितः शरः ॥ ४१ ॥ [४३उ

- ४१] एष वज्राग्निसंस्पर्शः प्राणानुपरुणाद्धि मे ॥ ४२ ॥ [४६५-
 ४२] नै द्विजातिरिहं शङ्कां ब्रह्महत्याकृतां त्यज ॥ ४३ ॥ [५०-
 ४३] इति मामत्रयीद् बालो मच्छराभिहतो भृशम् ॥ ४४ ॥ [५१-
 ४४] जलार्द्रिगात्र विलपन्तमेवं ॥ ४५ ॥ [५२-
 ४५] तथा सरयवां तमहं शयानं ॥ ४६ ॥ [५३-
 ४६] यत्नवान् जीविताकांक्षी मुनेस्तत्र विचेतसः ॥ ४६ ॥ [N
 ४६] विप्रेष्टमानः परिवृत्तनेत्रः ॥ ४७ ॥ [N
 ४७] भृशमहमभयं विमूढचेता ॥ ४८ ॥ [N
 ४८] इत्यापि रामायणे ऽध्याकाण्डे ऋषिकुमारवधो
 ४९] नाम [एकोनसप्ततितमः] सर्गः ॥ ६९ ॥

[च-६६]=[सप्ततितमः सर्गः]=[दा-६४]

ततोऽहं शरमुद्धृत्य दक्षिणमाशीविपोषमम् ।

१] अगच्छं कुम्भमादाय पितुरस्याश्रमं प्रति ॥ १ ॥

ततोऽहं कृपणाचन्द्रौ वृद्धावपरिनायकौ ।

२] अपश्यं जनका तस्य लूनपञ्जाविव द्विजौ ॥ २ ॥

तत्कथाभिरुपासीनौ व्यथिता पुत्रलालमा ।

३] पुत्रं दर्शनमायान्तमाकाक्षन्ता मया हतम् ॥ ३ ॥

तदज्ञानान्महत्पापं कृत्वाऽहं व्याकुलेन्द्रियः ।

४] आश्रमस्थावभिप्रेत्य तावपश्यं तपस्विनौ ॥ ४ ॥

पदशब्दं तु मे श्रुत्वा मुनिर्मामभ्यभाषत ।

५] किं ते चिरायितं पुत्रं पानीयं क्षिप्रमानय ॥ ५ ॥

यज्ञदत्तं चिरं तात पानीये क्रीडितं त्वया ।

६] उत्कण्ठितेयं माता ते तथाऽहमपि पुत्रक ॥ ६ ॥

यादि किञ्चिद् व्यलीकं ते मया मात्राऽपि वा कृतम् ।

७] तत् क्षामये त्वां मा भूयश्चिरायेथाः काचिद्गतः ॥ ७ ॥

अगतमे गतिर्यस्त्वं त्वं मे चक्षुरचक्षुषः ।

८] समासक्तास्त्वापि प्राणाः कस्मान्मां नाभिभाषसे ॥ ८ ॥

ते तथा करुणां वाचं व्रयन्तं पुत्रलालसम् ।

९] अहमभ्येत्य शनकरव्रवं भयविह्वलः ॥ ९ ॥

वाप्यसन्नेन कृपेन धृत्या संस्तम्भ्यं वासुलम् ।

१०] कृताञ्जलि वेंपमानो भयगाद्दन्नागिदम् ॥ १० ॥ [१२

क्षत्रियोऽहं दशरथो नाहं पुत्रो मुने तव ।

११] सज्जनानमत-घोर कृत्वा पापमुपागतः ॥ ११ ॥ [१३

भगवंश्चापहस्तोऽहं सरयवास्तीरमागतः ।

१२] काचन् जिघांसुरज्ञातं मृगं तत्राभ्युपागतम् ॥ १२ ॥ [१४

पूर्यमाणस्य कुंभस्य तत्र शब्दो मया श्रुतः ।

१३] तत्र पुत्रो मयाऽज्ञा ते निहतो गजशङ्कया ॥ १३ ॥ [१५

तस्याहं रुदितं श्रुत्वा हृदि भिन्नस्य परिणा ।

१४] भीत आगत्य तं देशं तमपश्य तपस्विनम् ॥ १४ ॥ [१६

भगवान् शब्दवेधित्वान्मयाऽयं गजशङ्कया ।

१५] विसृष्टोऽस्मासि नाराचो येन ते निहतः सुतः ॥ १५ ॥ [१६ □

समुद्धृते मया बाण प्राणास्त्यक्त्वा दिवं गतः ।

१६] भ्रुन्तो सुचिर कालं परिशोच्य तपस्विनौ ॥ १६ ॥ [१८

अज्ञानतो मया पुत्रो हतस्ते दयित्रो मुने ।

१७] शेषमेवं गते तेजो मय्युत्सृष्टं त्वमहसि ॥ १७ ॥ [१९

स एतदभिस्रत्य मुहूर्त्तमिव मूर्च्छितः ।

१८] प्रत्याश्रयागतप्राणो मामुग्राच कृताञ्जलिम् ॥ १८ ॥ [२० २१

यदि त्वमशुभं कृत्वा न वक्ष्यथा * स्वयं मम ।

१९] लोका अपि तता दग्धाः समस्ताः शापवाहिना ॥ १९ ॥ [२२

— ६ मं—संस्तम्भ्य । ७ क, घ, म, ल—काश्च । ८ कौंघ, ल—भगव ।
म—भगवद् । ९ म—छन्दः । ० १ २ ३ ४ ५ ६ ७ ८ ९ ०

- ३०] किं वत्स कुपितो मेऽसि येन मां नाभिर्भाषमे ॥३०॥ [३०
 ८५] अनन्तरं पिता चास्य शात्राण्यंताः परिस्पृशन् । १००
 ३१] इदमाह प्रियं पुत्रं जीवमानमिवातुरः ॥३१॥ [३१] [N
 ४] ननु तेऽहं पिता पुत्रं सह मात्राऽस्युपागतः । १०१ [३२
 ३२] उत्तिष्ठ तावदेक्ष्यामि कण्ठे गाढं परिप्लज ॥३२॥ [N
 ५] कस्य चापरराजोऽहं स्वाध्यायं कुर्वतो वने । १०२ [३३
 ३३] श्रोष्यामि मधुरं शब्दं पुत्रः शास्त्रं जिघृक्षतः ॥ ३३॥ [३३
 १०३] ननु मूलफलं वन्यमाहरिष्यति को वनात् । १०४ [३४
 ३४] आपयोरन्धयोः पुत्रं कांक्षतोः^{११} क्षुत्परीतयोः^{१२} ॥ ३४ ॥ [३४
 ४] इमामन्धां च वृद्धां च मातरं तेऽतर्पस्विनीम् । १०५ [३५
 ३५] कथं पुत्र भरिष्येऽहमन्धो गतंपराक्रमः ॥३५॥ [३५
 ८६] एकाहमपि^{१३} तावत्तं नैव गन्तुमितोऽर्हसि । १०६ [३६
 ३६] श्यो मया चैव मात्रा च गन्ताऽसि सह पुत्रक ॥३६॥ [३६
 १०७] उभापि भवन्त्युत्पन्नायौ^{१४} च चिरादिव ॥३७॥ [३७
 ३७] प्राणैः पुत्रं प्रियोज्याग्रो मरणे कृतनिश्चयौ ॥३७॥ [३७
 १०८] इतो वै तस्मत्तं गत्वा भिक्षिष्ये कृपणः स्वयम् । १०८ [३८
 ३८] पुत्रभिक्षां प्रदेहीति त्वयैव सहितो गतः ॥ ३८॥ [३८
 १०९] पर्युत्सास्य त्वं कः सन्ध्यां स्नात्वा हुत्वा च पावकम् । १०९
 ३९] ह्लादयिष्यति मे गारं कराभ्यां परिसंस्पृशन् ॥ ३९॥ [३९
 ११०] अपापोऽपि यथा पुत्रं निहतः पापकर्मणा^{१५} । ११० [४०

११ के-कांक्षतो । १२ के-वै, म, ल-एकाहमपि । १३ घ-उदनायौ ।

मन्-उदनायौ । ल-उदनायोप । १४ के-स्वन । १५ घ-उ

४०] त्वमाप्नुहि तथा लोकान् शूराणामनिवर्तिनाम् ॥ ४० ॥ [४०

अपरावर्तिनां लोकाः शूराणां ये तपस्विनाम् ।

४१] यज्वनां च सुवृत्तानां तांस्त्वमाप्नुहि शाश्वतान् ॥४१॥ [४१

पृ४२] यांल्लोकान् वेदवेदाङ्गपारगा मुनयो गताः ।

पृ४४] यांश्चाभयप्रदातारस्तथा यान् सत्यवादिनः ॥ ४२ ॥ [N

उ४४] तां ल्लोकान् मदनुज्ञातो¹⁵ याहि पुत्रक शाश्वतान् । [N

पृ४५] न हीदृशे कुले जन्म प्राप्य यान्त्यधमा गतिम् ॥४३॥ [४५पू

उ४५] तस्मादितश्च्युतः स्थानाल्लोकानाप्नुहि शाश्वतान् । [N

पृ४६] एवमादि विलप्याथ स मुनिः¹⁶ सह¹⁶ भार्यया ॥४४॥ [४६

N] सस्कार लंभयामास दुःसोपहतचेतनः ।

उ४६] ततोऽस्य कर्तुमुदकं प्रतस्थे दीनमानसः ॥ ४५ ॥ [N

अथ दिव्यवपुर्भूत्वा विमानवरमास्थितः ।

४७] मुनिपुत्रस्ततो वाक्यमुवाच पितराविदम् ॥ ४६ ॥ [५०

भवन्तौ परिचर्याहं प्राप्तः पुण्यामिमां गतिम् ।

४८] भवन्तावपि हि क्षिप्रं स्थानमिष्टमवाप्स्यतः¹⁷ ॥ ४७ ॥ [४९

न भवद्भ्यामहं शोच्यो नापि राजाऽपराध्यति ।

४९] भवितव्यमनेनैव¹⁸ येनाहं निघनं गतः ॥ ४८ ॥ [N

एतावदुक्त्वा वचन मृपिपुत्रो¹⁹ दिवं गतः ।

५०] दिवि दिव्यां परो राजन् विमानवरमास्थितः ॥ ४९ ॥ [५०

15 य—मदनुज्ञातो । ०म । 16 च, म—भार्यया सह । 17 च—

०प्स्यथ । म—प्स्यथ । 18 य—०मनेनैवां । म—०मनेन वै । 19 कै,

य—वचनं श्रापि० ।

- ‘सोऽपि कृत्वोदकं तस्य पुत्रस्य सह भार्यया ॥ ५० ॥ [N
 ५१] तपस्वी मामुवाचेदं कृताञ्जलिमुपस्थितम् ॥ ५० ॥ [N
 कथं त्वं ख्यातयशसां राजर्षीणां महात्मनाम् ॥ ५१ ॥
 ५२] अविनीतः कुले जाता इक्ष्वाकूणां नृपायम ॥ ५१ ॥ [N
 न ह्यनिमित्तं वैरं ते क्षेत्रजं नमया सह ॥ ५२ ॥
 ५३] अथैकेनेपुणा कस्मात्सभाग्रोऽहं हतस्त्वया ॥ ५२ ॥ [N
 अविज्ञानितं मे पुत्रो हतो यद् विनयेन वा ।
 ५४] तथा तस्माद्दहमपि शोष्यामि त्वां निबोध मे ॥ ५३ ॥ [N
 पुत्रशोकाद्दहं प्राणान् सन्त्यक्ष्याम्यवशो यथा ।
 ५५] त्वमप्यन्ते तथा प्राणांस्त्यक्ष्यसे पुत्रलालसः ॥ ५४ ॥ [N
 एवं शार्पमहं लब्ध्वा स्वपुरं पुनरागतः वै ।
 ५६] स ऋषिः पुत्रशोकेन चिरादिव संस्थितः ॥ ५५ ॥ [N
 स ब्रह्मशापो नियतमर्घं मां समुपस्थितः ।
 ५७] तथा हि पुत्रशोकात् प्राणाः सन्त्वरयन्ति माम् ॥ ५६ ॥ [N
 चक्षुषो न प्रपद्यामि स्मृतिर्न प्रविलुप्यते ॥ ५७ ॥ [N
 ५८] स्मृत्वा तौ द्वौ गतौ प्राणांस्त्वरयन्ति च मां शुभे ॥ ५७ ॥ [N
 यदि मां संस्पृशेद्रामः संभाषेतापि चागतः ॥ ५८ ॥ [N
 ५९] जीवेयामिति मे बुद्धिः प्राप्यामृतमिवातुरः ॥ ५८ ॥ [N
 दृष्ट्वा हि यद्यहं प्राणांस्त्यजेयं दयितं सुतम् ।
 ६०] प्रेत्यापि च नदक्षेयं पुत्रशोकेन दुःसितः ॥ ५९ ॥ [N
 अतो नु किं कृच्छरं किं वा दुःखतरं भवेत् । ॥ ६० ॥ [N

- ६१] यददृष्ट्वा च रामस्य मुखं त्यक्ष्यामि जीवितम् ॥६०॥ [६१पू
रामादर्शनजः शोकः प्राणान् निर्दहतीव मे ।
- ६२] नदीतीररुहान्^{२१} वृक्षान्^{२१} वारिवेगो महानिव ॥६१॥ [७४
निस्तीर्णवनवासं तमयोध्यां पुनरागतम् । [७१उ
- ६३] द्रक्ष्यन्ति सुखिनो रामं शक्रं स्वर्गादिवागतम् ॥६२०॥ [७२पू
ते देवा न मनुष्यास्ते ये तत् पूर्णेन्दुसन्निभम् । [६८उ
- ६४] मुखं द्रक्ष्यन्ति रामस्य पुरीं प्रविशतो वनात् ॥ ६३ ॥ [६६पू
सुदंष्ट्रं निर्मलं कान्तं चारु पद्मदलेक्षणम् । [६९उ
- ६५] धन्या द्रक्ष्यन्ति रामस्य तारापतिनिभं मुखम् ॥६४॥ [७०पू
शरच्चन्द्रस्य सदृशं कुन्दस्य कमलस्य च । [७०उ
- ६६] सुगन्धि मम पुत्रस्य धन्या द्रक्ष्यन्ति वै मुखम् ॥६५॥ [७१पू
इति रामं स्मरन्नेव शयनीयतले नृपः ।
- ६७] शनैरूपजगामास्तं शशीव रजनीक्षये ॥ ६६ ॥ [N
हा^२ राम हा पुत्र इति ब्रुवन्नेव^{२२} शनैर्नृपः ।
- ६८] तत्याज सुप्रियान् प्राणानायुषोऽन्ते सुदुस्त्यजान् ६७ [७५-७७
तथा स दीनं कथयन्नराधिपः
प्रियस्य पुत्रस्य विवाससंकथाम् ।
- ६९] गतेऽर्धरात्रे शयनीयसंस्थितो
जहौ प्रियं जीवितमात्मनस्तदा ॥ ६८ ॥ [७८
इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे ब्रह्मशापाख्यानं
नाम सर्गः ॥ ७० ॥

[वं-६७]=[एकसप्ततितमः सर्गः]=[दा-६५]

निलप्याथ तमप्येवं तूष्णीभूतं नराधिपम् ।

१] सुप्त इत्यग्रगम्यार्ता कौशल्या न व्यग्रोधयत् ॥ १ ॥ [N

अनुक्तमन्तं भर्तारं किञ्चिच्छोकश्रमाकुला ।

२] सुप्ताप शयने भूयः पुत्रशोकार्तमानसा ॥ २ ॥ [N

अथ रात्रौ व्यतीतायां सन्ध्याकाल उपस्थिते ।

३] वन्दिनः पर्युपातिष्ठन् पार्थिवं प्रतिबोधकाः ॥ ३ ॥ [१

तेषां तु तदुपश्रुत्य^१ सूतमागधमन्दिनाम् ।

४] सर्वा बुबुधिरे सुप्ता नृपान्तःपुरयोपितः ॥ ४ ॥ [N

ततः शुचिसमाचारा राजोपस्थानकारिणः ।

५] स्त्रीनर्षणरभूयिष्ठा उपतस्थुर्नराधिपम् ॥ ५ ॥ [७

गन्धाम्बुपरिपूर्णांश्च कुंभान् काञ्चनराजतान् ।

६] उपतस्थुःसमादाय स्नापकास्तं नृपालयम् ॥ ६ ॥ [८

मङ्गलालम्बनीयानि तथेग्रान्यमुपस्करम् ।

७] यथायोगमुपाजहुरुपचारं निचक्षणाः ॥ ७ ॥ [९

अभ्येत्य चोपचारज्ञाः शयनीये नराधिपम् ।

८] स्त्रियः प्रबोधयाञ्चक्रुरादित्योदयशङ्कया ॥ ८ ॥ [१२

प्रबोध्यमानोऽपि यदा नाबुध्यत स पार्थिवः ।

९] आ सूर्योदयनात् सुप्तस्ततस्ताः शङ्किताः स्त्रियः ॥९॥ [११

ता वेपथुममामिष्टा राज्ञः प्राणेषु शङ्किताः । [१४उ

- १०] प्रतिस्रोतस्त्वृणाप्रेण सदृशं प्रचकंपिरे ॥ १० ॥ [१५पू
 अथ तासां परित्रासं दृष्ट्वा दृष्ट्वा च पार्थिवम् ।
- ११] यत्तदा शङ्कितं पापं तस्य जज्ञे विनिश्चयः ॥ ११ ॥ [१५
 ता वेषमाना संभ्रान्ता मृतं दृष्ट्वा नराधिपम् ।
- १२] हा नाथ हा मृतोऽसीति पतिता वै विचुक्रुशुः ॥१२॥[१२
 तासां तेनार्तनादेन महता शयिते तदा ।
- १३] कौशल्या च सुमित्रा च चुबुधाते सुदुःखिते ॥ १३ ॥ [२१
 १४] उत्थाय शयनात् क्षिप्रं राजानमुपतस्थतुः । [N
 दृष्ट्वा मृतं च भर्तारं ते देव्यावतिदुःखिते ॥ १४ ॥० [२५पू
- १५] सुप्तमेघोद्गतप्राणं^२ भृशं चुक्रुशतुस्तदा । [२५उ
 तयोस्तद्^३ रुदितं^३ श्रुत्वा सर्वशोऽन्तःपुरस्त्रियः ॥१५॥ N]
- १६] सहसा चुक्रुशुस्तत्र कुर्यस्त्रासिता इव । [N
 ईरितोऽन्तःपुरस्त्रीभिरार्ताभिः स स्यनो महान् ॥१६॥[२६पू
- १७] पुरीं तां पूरयामास बोधयंश्चैव सर्वशः । [२६उ
 ततः संभ्रान्तमनसस्तेन शब्देन बोधिताः ॥ १७ ॥ [N
- १८] आग्नियन्त नृपाहृता नृपदेशम पराः स्त्रियः^४ । [N
 ताश्च ताश्चैव संहृत्य^५ शतशोऽथ सहस्रशः ॥ १८ ॥ [N
- १९] रुरुदुश्चुक्रुशुश्चैव नृपे पञ्चत्वमागते । [N
 अथायोध्या पुरी कृत्वा तेन शब्देन बोधिता ॥ १९ ॥ [N
- २०] सवृद्धवाला चुक्रोश राजव्यसनकर्षिता । [N

२ ल—सुप्तमेघोद्गतं प्राणं । म—सुप्तमेघ गतं प्राणं । ०व । ३ कै—तं
 क्रंदितं । ४ म, ल—पुरस्त्रिय । ५ कै, ल—संहृत्य ।

- तत्समुद्विग्नमुद्भ्रान्तं पर्युत्सुकजनाकुलम् ॥ २० ॥ [२७पू
 २१] परिदेवितार्तस्तानितं रुदितोत्क्रुष्टमाकुलम् । [२७उ
 सद्योनिपतितानर्थं विध्वस्तशयनासनम् ॥ २१ ॥ [२८पू
 २२] बभूव नरदेवस्य गृहं दिष्टान्तमागतम् । [२८उ
 ततो भृशार्ता कौशल्या सुमित्रा चैव दुःखिता ॥२२॥ [N
 २३] निपत्य पृथिवीपृष्ठे बहुधैर व्येष्टताम् । [N
 सपत्न्या सह दुःखार्ता वेष्टमाना धरातले ॥ २३ ॥ [N
 २४] पाशुरूपितसर्वाङ्गी^६ कौशल्या न व्यराजत । [N

व्यतीतमाज्ञाय तु पार्थिवर्षभं

यशस्विनं तं परिवार्य ताः स्त्रियः ।

भृश रुदन्त्यः करुणाक्षरा गिरः

- २५] प्रगृह्य बाहून् व्यलपन्त सर्वशः ॥ २४ ॥ [२९

इत्यार्षे रामायणेऽयोध्याकाण्डे दशरथमरणं^७ नाम

[एकसप्ततितम.] सर्ग. ॥ ७१ ॥



[५-६८]=[द्विसप्ततितमः सर्गः]=[दा-६६]

तमग्रिमिव संशान्तं संशोपितमिवार्णवम् ।

१] अस्तं गतमिनादित्यं स्वर्गतं प्रेक्ष्य भूमिपम्^१ ॥ १ ॥ [१

द्विनिधेनापि दुःसेन कौगल्या भृशदुःखिता ।

२] भर्तुः पादौ प्रगृह्णार्ता विललाप सुदुःखिता ॥ २ ॥ [२

कृतपृण्योऽसि नृपते शुद्धसत्त्वश्च मानद ।

३] यस्त्वं प्राणान् परित्यज्य नाद्य शोचसि राघवम् ॥ ३ ॥ [N

पुत्रशोकममुद्भूतो दारुणो देहतापनः ।

४] त्वत्प्राणहरणाद् व्याधिर्मानार्या न^२ बाधते ॥ ४ ॥ [N

सत्यसन्धे महाभागे प्रधानाभिजनात्मनि ।

५] न हि युष्मद्विधे युक्तो भागः करुणवेदिनि ॥ ५ ॥ [N

अहमेनाशुद्धसत्त्वा नीचा^३ चादृढमौहृदा ।

६] अजीवनाहं जीवामि या त्वयाऽद्य विनाकृता ॥ ६ ॥ [N

मृत्युरस्यामवस्थायां प्रशस्तस्ते नराधिप ।

७] न तु मे जीवितं^४ द्यस्यामवस्थायां^४ निगर्हितम् ॥ ७ ॥ [N

अवस्थायामवस्थायां तत्तद् भवति पूजितम् ।

८] पूजितं मरणं तस्य यस्य जीवितमीदृशम् ॥ ८ ॥ [N

यत्र शुद्धस्वभावस्तु पुत्रशोकार्तया मया ।

९] परुषं मुहुरुक्तोऽसि तन्मां दहति किल्बिषम् ॥ ९ ॥ [N

देवोपम नमस्तेऽस्तु शुद्धभाव महीपते ।

१ कै—पाथिव । २ य—नु । ३ कै—पूर्व शुद्धित पश्चात् "पापा" इति पदेन, भिन्नहस्तेन पूरितम् । ४ कै—जायितुमस्याम० ।

- १०] समन्युर्वाञ्जसि मयि तत् क्षामये त्वां प्रसीद मे ॥ १० ॥ [N
पुत्रशोकार्तयाऽप्युक्तो यन्मयाऽस्य कृतज्ञया ।
- ११] तद्देवसत्त्व नाद्युत्र स्मर्त्तुमर्हसि मेऽनद्य ॥ ११ ॥ घ [N
अतिक्रमः कस्य नास्ति त्रिदुषोऽपि महीपते ।
- १२] आतिक्रममतो मे त्वं मूढायाः क्षन्तुमर्हसि ॥ १२ ॥ [N
कृत्वाऽनर्थं मूलहरं राज्यलोभाद्विगर्हितम् ।
- १३] प्राप्ताऽसि निरय क्षुद्रे कैकेयि दृढनिश्चये ॥ १३ ॥ [N
सकामा भव कैकेयि भुच्य^५ राज्यमकण्ठकम् । [३५
- १४] पति प्राणैर्वियोज्येव विकृते निर्धृता भव ॥ १४ ॥ [N
सुखभोगार्थदातारं दैवतं परम पतिम् ।
- १५] का त्वन्या त्वदृते नारी लुब्धा प्राणवियोजयेत् ॥ १५ ॥ [५
कृत्वा कार्यमकार्यं वा न कीर्तिं निरय न च ।
- १६] न धर्मं चापि नाऽधर्म^६ वेत्सि नैव तथेहितम् ॥ १६ ॥ [N
N] कुत्रा^७(वजा ?)—निमित्ते कैकेयि रघूणा ते^८ कुल हतम् । [६३
त्वन्नियोगनियुक्तेन राज्ञा चव महात्मना ।
- १७] प्राणेभ्योजपि प्रियः पुत्रो रामः प्रत्राजितो धनम् ॥^०१७ ॥ [N
यथा प्राणैः प्रियो रामस्त्यक्तो राज्ञा महात्मना ।०
- १८] तद्वियोगात्तथा तेन त्यक्ताः प्राणाः सुदुस्त्यजाः ॥^०१८ ॥ [N
वेधव्यमयश्चेद लोके चेदं विगर्हितम् ।०
- १९] लोभाच्चया त्रयोऽनर्था यत्प्राप्तास्तन्न मे प्रियम् ॥ १९ ॥ [N

५ व—भुक्ता । ६ ये—घाऽधर्म । ७ व, ल—कृत्रा । कै—कृत्वा ।
८ कै—नेर्यलेहत । ०कै, घ, म । ०क ।

श्रीमानिन्दीवरश्यामश्चारूपघदलेक्षणः । [N

२०] पितुर्जीवितनाशाय रामो वनमितो गतः ॥ २० ॥ [८७

चिदेहराजतनया सुकुमारी तपस्विनी ।

२१] त्वत्कृते पापसङ्कल्पे दुःखान्यनुभवत्यसौ ॥ २१ ॥ [९

उग्रं प्रतिभयं नादं घोराणां मृगपक्षिणाम् ।

२२] श्रुत्वा नूनं भयोद्विग्ना रामं श्रयति मैथिली ॥ २२ ॥ [१०

यया बुद्ध्या त्वया रामः पतिं त्यक्त्वा विवासितः ।

२३] धर्मज्ञो भरतस्त्रां तु गर्हयिष्यत्युपागतः ॥ २३ ॥ [N

अनृशंसा पुरा भूत्वा धर्मिष्ठा च पुरा ह्यसि ।

२४] केनेदानीं नृशंसा त्वमधर्मिष्ठा च कैकयि ॥ २४ ॥ [N

कथं चासौ महासन्नो दृढं राममनुव्रतः ।

२५] अपापः पापमङ्कल्पे भरतो दूषितस्त्वया ॥ २५ ॥ [N

रामवृत्तानुवर्त्ती हि भरतः पापनिश्चये ।

२६] नानुवर्तेत ते वृत्तं गर्हयिष्यति चागतः ॥ २६ ॥ [N

नृशंसमप्रशंस्यं^९ च लोके कर्म विगर्हितम् ।

२७] यत्कृत्वा^{१०} मन्यसे साधु सुकृतं पापनिश्चये ॥ २७ ॥ [N

किं न शोचसि भर्तारं रामं लक्ष्मणमेव च ।

२८] उताहो त्वपि वैदेहीमात्मानं चापि दुःखितम् ॥ २८ ॥ [N

शोचयितव्येषु युगपद् बहुष्वन्येषु वै पृथक् ।

२९] ममापि दुःखभागिन्या मृतं श्रेयो न जीवितम् ॥ २९ ॥ [N

विहाय मां वनं रामो भर्ता च त्रिदिवं गतः ।

- ३०] सार्थादिव परिभ्रष्टा कुपथे त्रिचराम्यहम् ॥ ३० ॥ [N
महाराज महाबाहो महाप्राज्ञ महाबल ।
- ३१] महत्यगाधे पतितां पाहि मां शोकसागरे ॥ ३१ ॥ [N
सुलोचिता त्वया त्यक्ता त्वन्नाथा त्वत्परायणा ।
- ३२] त्यक्ता त्वया प्रिये^{११} नाद्य सर्पथैः धिगस्तु माम् ॥ ३२ ॥ [N
न्याय्यं धर्म्यं यशस्यं च मार्गं साधुनिपेवितम् ।
- ३३] अनुगन्तुं न शक्यामि^{१२} रामसन्दर्शनाशया ॥ ३३ ॥ [N
किं मया न कृतं साधु भवेदद्य जनाधिप ।
- ३४] यदि तेऽहं शरीरेण सह दाहमनाप्नुयाम् ॥ ३४ ॥ [N
गच्छन्तं परलोकाय यदि त्वामनुयाम्यहम् ।
- ३५] सुकृतं न मया तेऽद्य राजन् प्रतिकृतं भवेत् ॥ ३५ ॥ [N
नृजं नैनाहमर्हामि पापा पत्युः सलोकताम् ।
- ३६] या त्वां चितां समारूढां* नानुप्रेक्ष्यामि नै चिताम् ॥ ३६ [N
कालस्य वशगो जन्तुर्न मर्त्यः स्वयमीश्वरः ।
- ३७] जीवितुं वाऽप्यतो न त्वां राजन्नहमनुश्रये ॥ ३७ ॥ [N
क्वासि राम महाबाहो क्वासि लक्ष्मण सुव्रत ।
- ३८] क्वासि त्वं साध्वि वैदेहि न मां जानासि दुःखिताम् ॥ ३८ ॥ [N
कैकय्या वचनाद्राज्ञा श्रुत्वा राम विवासितम् ।
- ३९] सभायो जनको राजा परितप्स्यत्यसंशयम् ॥ ३९ ॥ [७
अबलश्चैव वृद्धश्च वैदेहीमनुचिन्तयन् ।

११ द—प्रयेणाद्य । ल—प्रयणाद्य । म—प्रियेनाद्य ।

१२ के—शक्यामि । * (समारूढ ?) ।

- ४०] सोऽपि शोकाग्निसन्तप्तः परित्यक्ष्यति जीवितम् ॥४०॥ [११
साध्वि भर्तृपरा देवि धन्या खल्वसि मैथिलि ।
- ४१] समद्रुःखसुखा या त्वं भर्तारमनुगच्छसि ॥ ४१ ॥ [N
भर्ता बन्धुर्गतिश्चैव गुरुर्देवतमेव च ।
- ४२] भर्तैव परमः स्त्रीणामाश्रमस्तीर्थमेव च ॥ ४२ ॥ [N
इति तां पतिशोकस्य पुत्रशोकस्य चान्तरे ।
- ४३] पतितामातुरां दीनां क्रोशन्तीं कुररीमिव ॥ ४३ ॥ [N
- पृ४४] सर्वत्रानावृतदारो वसिष्ठो भगवानृषिः । [N
N] प्रविश्य राजभवनं वारयामास तां सतीम् । [N
- ४४] व्यादिश्यानाययामास राजस्त्रीभिर्वलादिव ॥४४॥ [N
परिगृह्याथ तामार्तां विलपन्तीमनाथवत् ।
- ४५] अपनिन्युः प्रकर्षन्त्यः कौशल्यां राजयोपितः ॥ ४५ ॥ [N
ततस्तां विजनीकृत्य मन्त्रिभिः सह सद्गतः ।
- ४६] कृत्वा वसिष्ठे¹³ भगवान् प्राप्तकालमकारयत् ॥ ४६ ॥ [N
शरीरं कोसलेन्द्रस्य¹⁴ तैलद्रोण्यां न्यवेशयत् ।
- ४७] मन्त्रयामास सहितो मन्त्रिभिस्तदनन्तरम् ॥ ४७ ॥ [१८
उभौ मातामहकुल चिरं कालं गतावितः ।
- ४८] कथं भरतशत्रुघ्नावानयामेह चेति वै ॥ ४८ ॥ [N
न हि सत्करणं¹⁵ राज्ञो राजपुत्रैर्विना हितैः ।
- ४९] मन्त्रिणः कर्तुमर्हन्ति ततो रक्षत भूमिपम् ॥ ४९ ॥ [१९
तैलद्रोण्यां वसिष्ठेन¹⁶ शायितं तं नराधिपम् ।
- ५०] दृष्ट्वा मृतोऽयमित्युक्त्वा स्त्रियः प्ररुद्रुश्च ताः ॥ ५० ॥ [१६
उत्क्षिप्य बाहून् शोकार्ता वाष्पव्याकुललोचनाः ।

13 क, व, म, ल—वसिष्ठो । 14 कै, म—कौसले० ।

15 न—सत्करणम् । 16 क, म, ल—वसिष्ठेन ।

५१] उरः शिरश्च जानूनि जघ्नुः करतलैर्मुहुः ॥ ५१ ॥ [१७

शशिनेव निशा हीना भर्तृहीनेव चाङ्गना ।

५२] न व्यराजत चायोध्या तेन हीना महात्मना ॥ ५२ ॥ [२४

दुःखपर्याकुलजना हाहाभूतजनस्वना^{१७} ।

५३] विध्वस्तचत्वरपथा विशून्यविपणापणा ॥ ५३ ॥ [२५

हतप्रभा द्यौरिव नष्टभास्करा

व्यपेतचन्द्रेव च निष्प्रभा^{१८} निशा ।

रराज सा नैव भृशं महापुरी

५४] विनाकृता तेन तदा महात्मना ॥ ५४ ॥ [२८

नराश्च नार्यश्च भृशार्तमानसा

विगर्हयन्तो भग्नस्य मातरम् ।

तस्यां नगर्यां नरराजसंक्षये

५५] विलेपुरार्ता न च शर्म लेभिरे ॥ ५५ ॥ [२९

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे दशरथतैलद्रोणिसंक्रमणं

नाम [द्विसप्ततितमः] सर्गः ॥ ७२ ॥



[वं-६६] = [*त्रिसप्ततितमः ; सर्गः] = [दा-६७] :

व्यतीतायां तु शर्वर्यामादित्यस्योदये ततः ।

१] समेत्य राजगुरवः सभामीयुर्द्विजातयः ॥ १ ॥ [२-

वसिष्ठो वामदेवश्च जावालिरथ काश्यपः^१ ।

२] मार्कण्डेयो गौतमश्च मौद्गल्यश्च महातपाः ॥ २ ॥ [३-

एते द्विजाः सहामात्यैः पृथग्वाच उदैरयन्^२ ।

३] वसिष्ठमेवाभिमुखाः श्रेष्ठं राजपुरोहितम् ॥ ३ ॥ [४

शर्वरी समतीतैर्यं क्रूरा वर्षशतोपमा ।

४] शोचतां पुत्रशोकेन मृतं दशरथं नृपम् ॥ ४ ॥ [५

स्वर्गतश्च महाराजो रामश्चारण्यमाश्रितः ।

५] लक्ष्मणश्चापि तेजस्वी रामेण सहितो गतः ॥ ५ ॥ [६

पृ६] उभौ भरतशशुभ्रौ केकेयेपु^३ परन्तपौ ।

N] गिरिव्रजे पुरवरे वसतः प्रागितो गतौ ॥ ६ ॥ [७-

उ७] इक्ष्वाकुवंशप्रभवः को^४ नु^४ राजा भविष्यति ।

अराजकामिदं राष्ट्रं विनाशमुपयास्यति ।

७] इक्ष्वाकुः कश्चिदेवेह राजाऽस्माकं विधीयताम् ॥ ७ ॥ [८पृ

नाराजके जनपदे विद्युन्माली महास्वनः ।

८] अभिवर्षति पर्जन्यो महीं दिव्येन वारिणा ॥ ८ ॥ [९

नाराजके जनपदे धीजमुष्टिः प्रकीर्यते ।

९] नाराजके पितुः पुत्राः सम्यक् तिष्ठन्ति शासने ॥ ९ ॥ ० [१०उ

*नाराजके पतिं भार्या यथावदनुर्वतते ।

१०] नाराजके गुरोः शिष्यः शृणोति नियतं हितम् ॥ १० ॥ [N

स्वं नास्त्यराजके राष्ट्रे प्रशान्तश्च परिग्रहः ।

१ व, म—कश्यपः । २ कै—तदैरयन् । म—तदैरयन् । ल—
उदैरयन् । ३ कै—केकेयेपु (केकेयेपु ?) । ० म । ४ कै—केन (प्रभावः) ।
० कै । * ल—भास्ति ।

- ११] अराजके स्वात्मनो ऽपि प्रभुत्वं नहि कस्यचिद् ॥११॥ [N
नाराजके जनपदे यज्ञशीला द्विजातयः ।
- १२] विविधास्तन्वते यज्ञान् दस्युसंघैः प्रपीडिताः ॥ १२ ॥ [१३
नाराजके जनपदे कारयन्ति नराः सभाः^५ ।
- १३] उद्यानानि च रम्याणि प्रपाः पुण्या गृहाणि च ॥ १३ ॥ [१२
नाराजके जनपदे प्रभूतनटनर्तकाः ।
- १४] उत्सवाश्च समाजाश्च वर्तन्ते जनहर्षणाः ॥ १४ ॥ [१५
नाराजके जनपदे कश्चिदर्थः प्रसिध्याति ।
- १५] व्यवहारा न वर्धन्ते^६ कन्यानां जनहर्षणाः ॥१५॥ [१६
- उ१७] नित्योद्विग्नाः प्रजाः सर्वा दुःखिताश्च भवन्त्यपि ।
नाराजके जनपदे विश्वस्ताः कुलकन्यकाः १०
- १८] अलङ्कृता राजमार्गे क्रीडन्ति विहरन्ति च ॥० १६ ॥ [N
नाराजके जनपदे विचरन्त्यकुतोभयाः ।
- १९] कामिनः सह कान्ताभिर्विहारोद्यानभूमिषु ॥ १७ ॥ [१९
नाराजके जनपदे धनवन्तः कुटुम्बिनः ।
- २०] शेरते विष्टतद्वारा विश्वस्तमकुतोभयाः ॥ १८ ॥ [१८
नाराजके जनपदे नराः पण्योपजीविनः^७ ।
- २१] पण्यान्यादाय^८ गच्छन्ति देशाद् देशान्तरं तथा ॥१९॥ [२२
नाराजके कृषिकराः कर्षन्ति भयपीडिताः ।
- २२] पशवो नाभिवर्धन्ते^{१०} नित्यं राष्ट्रे ह्यराजके ॥ २० ॥ [N
नाराजके जनपदे चरत्येकचरो वशी ।
- २३] भावयंस्तपसाऽऽत्मानं यत्रसायंगृहो^{११} मुनिः ॥ २१ ॥ [२३

५ ल—सताः (प्रमाद.) । ६ म—वर्तते । ल—वर्धते । ० कै ।

७ ल—पुण्योप० । ८ म, ल—पुण्यान्यादाय । ९ कै—तदा । १० म,
ल—नाभिवर्तते । ११ घ, म, ल—०सायंगृहे ।

नाराजके जनपदे योगक्षेमः प्रकल्पते ।

२४] न चाप्यराजकं सैन्यं शत्रून्^{१२} विजयते युधि ॥२२॥ [२४]

नदी शुष्कजला यद्बद्धद्रुचातृणकं वनम् ।

२५] अगोपाला यथा गावस्तथा राष्ट्रमराजकम् ॥ २३ ॥ [२५]

नाराजके जनपदे स्वास्थ्यं भवति कस्यचित् । [३१]

२६] हरन्ति दुर्बलानां हि स्वमाक्रम्य बलाविकाः ॥ २४ ॥ [N]

अराजके जनपदे दुर्बलान् बलवत्तराः ।

२८] क्षपयन्ति निरुद्वेगा^{१३} मत्स्यान्^{१४} मत्स्या इवाल्पकान् ॥२५॥ [३१]

व्युत्क्रान्तधर्मपर्यादा नास्तिका निरपत्रपाः ।

२९] भवन्त्यराजके राष्ट्रे मानवाः क्रूरनिश्चयाः ॥ २६ ॥ [३२]

अन्यं तम इवेदं स्यान्न प्रज्ञायैत किञ्चन ।

३०] राजा चेन्न भवेद्धोके विभजन् साध्वसाधु वा^{१५} ॥२७॥ [३६]

दस्यवोऽपि न च क्षेमं राष्ट्रे विन्दन्त्यराजके ।

३१] द्वावाददाते ह्येकस्य द्वयोश्च बहवो धनम् ॥ २८ ॥ [N]

तस्माद् राजैव कर्तव्य इच्छद्भिः शुभमात्मनः ।

३२] द्विजानां वचनं श्रुत्वा वसिष्ठं मन्त्रिणोऽब्रुवन् ॥ २९ ॥ [N]

जीवित्यपि महाराजे महाभाग^{१६} वयं प्रभो ।

३३] शासने तव तिष्ठामः स नः शाधि^{१७} तपोधन ॥३०॥ [३७]

वसिष्ठ धर्मज्ञ महानुभाव स नः समीक्ष्यार्हसि विप्रवर्य ।

३४] कुमारमिक्ष्वाकुकुलप्रभृतं वमाशु राजानमिहाभिपेक्तुम् ॥३१॥ [३८]

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे राजप्रशंसा नाम

[त्रिसप्ततितमः] सर्गः [॥ ७३ ॥]

१२ म—शत्रू [नृ?] । ल—शत्रु । १३ क—निरुद्वेगान् । १४ म,
ल—मत्स्या । १५ क—साध्वसाधुवत् । म, ल—साधु साधु वा ।

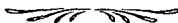
१६ म—महामागो । ल—महामागा । १७ म, ल—शोधि ।

- [वं-७०] = [चतुःसप्ततितमः सर्गः] = [दा-६८]
 तेषां तद्रचनं श्रुत्वा वसिष्ठः प्रत्युवाच ह ।
- १] सुमन्त्रप्रभृतीन् सर्वान् ब्राह्मणांस्तानिदं वचः ॥ १ ॥ [१]
 योऽसौ मातामहकुले कुमारः श्रीमतां वरः ।
- २] भरतो^१ वसति^१ भ्रात्रा शत्रुघ्नेन गतः सह ॥ २ ॥ [२]
 तमितः शीघ्रगैर्गत्वा नराः प्रजवितैर्हयैः ।
- ३] इहानयन्तु वचनान्मृत्युस्यामृत्युवादिनः ॥ ३ ॥ [३]
 इति श्रुत्वा वचस्तस्माद्रसिष्ठाद्राजमन्त्रिणः ।
- ४] गच्छन्तिवति च सर्वे ते प्रत्यूचुर्हृष्टमानसाः ॥ ४ ॥ [४]
 ततो जयन्तं सिद्धार्थमशोकं चाववीदिदम् ।
- ५] वसिष्ठो जपतां श्रेष्ठो दूतानाह तपोधनः ॥ ५ ॥ [५]
 पुरं राजगृहं गत्वा शीघ्रं प्रजवितैर्हयैः ।
- ६] त्यक्तशोकैरिदं वाच्यो भरतो वचनात् पितुः ॥ ६ ॥ [६]
 आह त्वां कुशलं पृष्ट्वा राजा सर्वे च मन्त्रिणः ।
- ७] त्वरावान् शीघ्रमागच्छ कार्यमात्यधिकं^२ विभो ॥ ७ ॥ [७]
 न चास्मै प्रेषितो^३ रामो न राजा स्वर्गतस्तथा ।
- ८] गत्वा भवद्भिरावेद्यः^४ पृष्टैरपि कथञ्चन ॥ ८ ॥ [८]
 राजार्हाणि विचित्राणि भ्रूषणानि वराणि च ।
- ९] शीघ्रमादाय राज्ञश्च भरतस्य च यच्छत ॥ ९ ॥ [९]
 इति ते ज्ञातसन्देशा दूतास्त्वरितमानसाः ।
- १०] वसिष्ठेनाभ्यनुज्ञाता ययुः शीघ्रपुरोगमाः ॥ १० ॥ [११]
 गत्वाऽथ हास्तिनपुरं गङ्गामुत्तीर्य वेगतः^५ ।
- ११] पञ्चालदेशानाजग्मुस्ततस्ते कुरुजांगलान् ॥ ११ ॥ [१३]

१ कै—वसति भरतो । २ कै—०मात्यधिकं । ३ म, ल—प्रेषितो ।

४ कै, व—भवद्भिरावेद्यः । म, ल—०भ्रावेद्यः । ५ व—वेगिताः ।

- पू१२] पूर्वेण वारुणीतीर्थं^६ कुरुक्षेत्रे सरस्वतीम् । [N
 पू१४] शरदण्डां समुत्तीर्य नदीं जलचराकुलाम् ॥ १२ ॥ [१५उ
 उ१४] समूलचैत्यमासाद्य वृक्षं सत्योपयाचनम् ।
 पू१५] अभिगम्य प्रणम्यैनं त्रिलिङ्गां विविशुः पुरीम् ॥१३॥ [१६
 उ१५] अजकूलं ततः प्राप्य द्यौद्धानां^७ नगरं ययुः ।
 उ१७] कथयन्तः कथाश्चित्रा रामलक्ष्मणसंहिताः ॥ १४ ॥ [N
 ययुर्मध्येऽतिवेगेन शतरुद्रां^८ जलाकुलाम्^९ ।
 १८] विष्णोः पदं वीक्षमाणा विपाशां^{१०} चैव शाल्मलीम् ॥१५॥ [१९पू
 गिरिव्रजं पुरवरं विविशुर्न चिरादिव । [२१उ
 १९] सप्तरात्रेण च गत्वा दृतास्ते श्रान्तवाहनाः ॥ १६ ॥ [२१पृ
 संपूज्यमाना विविशुः पुरं हि ते
 ततो ययुः पार्थिववेश्ममुख्यम् ।
 प्रजाहितार्थं कुलरक्षणार्थं ।
 २०] भर्तुश्च वंशस्य परिग्रहार्थम् ॥ १७ ॥ [२२
 इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे दूतप्रस्थापनं नाम
 [चतुःसप्ततितमः] सर्गः ॥ ७४ ॥



६ कै—वारुणी० । ल—वारुणी तीर्थी । ७ म, ल—द्यौद्धानां ।

८ म—शतरुद्रजला० । ९ म—विपशां । ल—विपाशा ।

[वं-७१]=[पञ्चसप्ततितमः सर्गः]=[दा-६९]

यमेव दिवसं दूताः प्रविष्टास्ते गिरिव्रजम्^१ ।

१] भरतेनापि तां रात्रिं स्वप्नो दृष्टो भयावहः ॥ १ ॥ [१

अरि(नि?)ष्टा वेदिनं स्वप्नं दृष्ट्वाऽथ भरतस्तदा ।

२] संस्मरन् पितरं वृद्धमासीदुत्सुकमानसः^२ ॥ २ ॥ [२

आलक्ष्य तस्योत्सुकतां वयस्याः प्रियवादिनः ।

३] आयासमपनेप्यन्तः कथाश्चक्रुरनुत्तमाः ॥ ३ ॥ [३

अवादयन्^३ जगुश्चान्ये ननृतुर्जहसुस्तथा^४ ।

४] नाटकान्यपरे चकुर्हास्यानि विविधानि च ॥ ४ ॥ [४

प्रियैर्वयस्यैर्भरतस्तथाऽपि प्रियवादिभिः ।

५] हास्यानि चैवं^५ कुर्वद्भिर्नैवातुष्यत् सुदुर्मनाः^६ ॥ ५ ॥ [५

तमब्रवीत् प्रियसखः कश्चिद् व्यथितमानसः ।

६] उपास्यमानः सखिभिः किं सखे नैव हृष्यासि ॥ ६ ॥ [६

समानमुखदुःखानामस्माकमपि राघव ।

७] दुःखमार्तिकरं यत्ते तद् व्यपोहितुमर्हसि ॥ ७ ॥ [N

इत्युक्तो भरतस्तेन प्रत्युवाच महायशाः ।

८] शृणुध्व यो मया दृष्टः स्वप्नो येनास्मि दुर्मनाः^७ ॥ ८ ॥ [७

दृष्टो मयाऽद्य स्वप्नेन चन्द्रमाः पतित क्षितौ ।

९] संशुष्कः सागरश्चैव सूर्यो ग्रस्तश्च राहुणा ॥ ९ ॥ [११

अद्राक्षमपि च स्वप्ने पितर रक्तवाससम् ।

१०] कृष्यमाण^८ नरैर्वदुध्वा दक्षिणामभितो दिशम् ॥ १० ॥ [८

पुनश्चाप्येनमद्राक्ष स्नेहाक्तं^९ मुक्तमूर्धजम् ।

१ कै, ल- ०प्रजम् । २ कै- वृद्ध आसीर्युत्सुकः । ३ कै, व
म--अवादय । ल-अवादयन् । ४ कै-ननर्तुः । ५ कै-चैव ।
६ कै-सदुर्मना । ७ य, ल-दुःखित । ल-दुःखिता । ८ य-
कृष्यमान । ९ कै-स्नेहार्थः ।

- ११] पतन्तमद्रिशिखरादगाधे गोमये^{१०} हृदे^{१०} ॥ ११ ॥ [८
 तस्मिन्निमग्नश्चोन्मज्य दृष्टो मे गोमयहृदात् ।
- १२] पिवन्नञ्जलिना तैलं हसन्निव पुनः पुनः ॥ १२ ॥ [९
 ततस्तैलोदकं पीत्वा पुनः पुनरधःशिराः ।
- १३] तैलेनासिक्तसर्वाङ्गं स्तैलमेवावगाहयन् ॥ १३ ॥ [१०
 पीठे काष्णायिसे चैनं निपण्णं कृष्णवाससम् ।
- १४] ग्रहसन्ति च राजानं प्रमदाः कृष्णपिङ्गलाः ॥ १४ ॥ [१४
 दृष्टो रासभयुक्तेन रथेन च पिता मया ।
- १५] रक्तमाल्याम्बरधरः प्रयातो दक्षिणामुखः ॥ १५ ॥ [१५
 प्रदीप्तमम्भसा शान्तं दृष्टवानस्मि पावकम् ।
- १६] सीदन्तं च ततोऽद्राक्षं बन्धलग्नं^{१२} महागजम् ॥ १६ ॥ [१२
 विशीर्यमाणः शैलेन्द्रो भग्नश्चैव महाद्रुमः ।
- १७] स्वप्ने चाद्य मया दृष्टः पतितश्च महाभ्वजः ॥ १७ ॥ [१३
 एवमेव मया स्वप्नो^{१३} दृष्टः^{१३} पापो^{१४} भयावहः^{१४} ।
- १८] व्यक्तं रामोऽथवा राजा प्राणास्त्यक्त्वा दिवं गतः ॥ १८ ॥ [१७
 यो हि रासभयुक्तेन रथेन परिकृप्यते ।
- १९] मृतः स न चिरादेव ध्रुवं याति यमक्षयम् ॥ १९ ॥ [१८
 एतन्निमित्तं दीनोऽहं नाभिनन्दामि वो वचः । [१९पू
- २०] हर्षस्थाने न हृष्यामि चिन्तयन् स्वप्नदर्शनम् ॥ २० ॥ [N
 अस्थाने चापि सोत्कण्ठं मनो विह्वलतीव मे । [१९उ
- २१] अस्थाने व्यथिनश्चायं देहे^{१०} देहेश्वरो मम ॥ २१ ॥ [N

10 घ—गोमयहृदे । के—गोमयाहृदे । म—रोमयाहृदे ।

11 कै—०मुवं । 12 म, ल—बद्धलग्नं । 13 कै—दृष्टः स्वप्नः । 14 ल—
 पाप० । 15 कै—यमालयं । 16 कै—देही ।

हतत्विपमिवात्मानमद्य चैवोपलक्षये । [N

२२] जुगुप्सामि तथाऽऽत्मानमदं स्मात् पतित यथा ॥ २२ ॥ [२०पृ

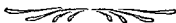
इमां च दुःस्वप्नगार्तं विचिन्तयन्
समुत्सुकत्वाद् व्याथितोऽतिविह्वल ।

न शर्म विन्दामि यथा तथा ध्रुव

२३] किमप्यरि(नि?)ष्टं न चिरादुपैष्यति ॥ २३ ॥ [२३

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे भरतदुःस्वप्नदर्शनं नाम

[पञ्चसप्ततितमः] सर्गः ॥ ७५ ॥



[वं-७२]=[पद्मसप्ततितमः सर्गः]=[दा-७०]

भरते वृषति स्वमं दूतास्ते श्रान्तवाहनाः ।

१] प्रविश्यासह्यपरिखं रम्यं राजनिवेशनम् ॥ १ ॥ [१]

समाजग्मुश्च राजानं भरतेनार्थिनस्तदा ।

२] राज्ञः पादौ गृहीत्वैव तमूचुर्भरतं वचः ॥ २ ॥ [२]

पुरोहितस्त्वां कुशलं प्राह सर्वे च मन्त्रिणः ।

३] त्वरमाणश्च निर्याहि कार्यमात्ययिकं त्वया ॥ ३ ॥ [३]

चैलानां चैव वान्यथै देयं मातामहस्य ते ।

४] तिष्ठः कोऽथ्यस्तु संपूर्णास्तिवेमा नृवरात्मज ॥ ४ ॥ [५]

प्रतिगृह्य च तत्सर्वमनुरक्तमुहृज्जनः ।

५] दूतानुवाच भरतः कामैः संप्रतिपूज्य^१ तान् ॥ ५ ॥ [६]

कच्चित्पिता मे कुशली हृद्धो दशरथो नृपः ।

६] कच्चिद् भ्राता मम ज्येष्ठो रामो धर्मभृतां वरः ॥ ६ ॥ [७]

कुशली लक्ष्मणश्चापि भ्राता मे भ्रातृवत्सलः ।

७] कच्चित्स्मरति मामार्यो रामोऽसौ भ्रातृवत्सलः ॥ ७ ॥ [८]

कच्चिदम्बा च सुखिनी कौशल्या^२ धर्मचारिणी ।

८] माता रामस्य धर्मज्ञा भर्तृव्रतपरायणा ॥ ८ ॥ [९]

कच्चित्सुमित्रा धर्मज्ञा लक्ष्मणं याऽभ्यजायत ।

९] शत्रुघ्नं च महात्मानमरोगा चापि मध्यमा ॥ ९ ॥ [१०]

आत्मकार्यपरा चण्डी^३ क्रोधना नित्यगर्विता ।

१०] कैकेयी चापि मे माता कच्चिद् कुशलिनी हृदम् ॥ १० ॥ [१०]

इति ते कुशलमन्त्रं^४ वृष्टा दूताः ससंभ्रमाः ।

११] मन्त्रसंच(व?)रणं कृत्वा मत्पूचुर्हृष्टमानसाः ॥ ११ ॥ [११]

१ ध—०पूजितान् । कै, ल—०पूज्यताम् । म—०तत् । ०कै ।

२कै, व, म, ल—कौसल्या । ३ल—चागी । ४म—दायितं । कै—कुशला

सर्वे ह्येते कुशलिनो येषां कुशलमिच्छसि ।

१२] आह त्वां च पिता शीघ्रमेहीति रघुनन्दन ॥ १२ ॥ [१२

यदि पश्यसि गन्तव्यं गम्यतामविचारतः ।

१३] भृशं हि दर्शनाकांक्षी पिता ते सह मन्त्रिभिः ॥ १३ ॥ [N

इत्युक्तो भरतो दूतैः प्रत्युवाच वचस्तदा ।

१४] एवं भवतु गच्छामि मुहूर्तं प्रतिपाल्यताम् ॥ १४ ॥ [१३

१५] दूतानेतावदुक्त्वा च मातामहमभाषत ॥ १५ ॥ [१४

अयोध्यां गन्तुमिच्छामि नृपतेर्पितुराज्ञया ।

१६] दूता द्वि त्वरयन्तोमे मामनुज्ञातुमर्हसि ॥ १६ ॥ [N

इति मातामहस्तेन भरतेनाभियाचितः ।

१७] शिरस्याघ्राय सस्नेहादिदं वचनमब्रवीत् ॥ १७ ॥ [१६

गच्छ त्वमनुजाने त्वां कैकेयी सुप्रजा^५ त्वया ।

१८] मातरं कुशलं ब्रूयाः पितरं च समागमे ॥ १८ ॥ [१७

पुरोहितं तथा रामं लक्ष्मणं मन्त्रिणस्तथा ।

१९] कौशल्यां^६ च सुमित्रां च सर्वाश्चैव सुहृज्जनान् ॥ १९ ॥ [१८

तस्मै चित्रान्^७ कुथान्^७ शुभ्रान्^८ कम्बलान्यजिनानि च ।

०] महाऽर्हाणि च वासांसि ददौ राजाऽर्हणं ततः ॥ २० ॥ [१९

रुक्मनिष्कसहस्राणि दश द्वादश चैव हि ।

२१] मातामहः प्रीतिदायं भरताय ददौ धनम् ॥ २१ ॥ [२१

तस्यामात्यान् बहुविधान् शूरान् भक्तिमतस्तथा ।

२२] ददावश्वपतीन् राजा भरतस्यानुयायिनः ॥ २२ ॥ [२२

सहस्रमपि चाश्वानां देश्यानां वातरंहसाम् ।

२३] ददौ दशसहस्राणि गजानां हेममालिनाम् ॥ २३ ॥ [२३

५ कै—सुप्रजास् । ६ कै, घ, म, ल—कौशल्यां । ७ कै, घ, ल—
चित्रां कुथां । म—चित्रा कुथा । ८ घ—शुभ्रां । म—शुभ्रा ।

अन्तर्यहचरान् पुष्टान् व्याघ्रसंहननायुतान् ।

२४] तीक्ष्णदंष्ट्रायुधान् शूरान् शुनश्चोपानयद्ब्रह्मन् ० ॥ २४ ॥ [२०

स्थानति विचित्रांश्च योजयित्वा परः शतान् । ०

२५] गोऽश्वोष्ट्रासै युक्तान् ० भरतं यान्तमन्वयुः ॥ २५ ॥ [२१

स मातामहमामन्व्य मातुलं च युधाजितम् ।

२६] स्थमारुह्य भरतः शत्रुघ्नसहितो ययौ ॥ २६ ॥ [२८

बलेन युक्तो महता महात्मा

सहायकैरात्मसमैरमात्यैः ० ।

आदाय शत्रुघ्नमपेतशत्रुं

२७] ययौ पुरं स्वर्गमिवामरेन्द्रः ॥ २७ ॥ [३०

इत्यार्षे रामायणे ज्योध्याकाण्डे भरतगमनं

नाम [षट्सप्ततितमः] सर्गः [॥७६ ॥]



[वं-७३] = [सप्तसप्ततितमः सर्गः] = [दा-७१]

स ततः प्राङ्मुखो राष्ट्रान्निर्याय भरतस्तदा ।

१] जगाम शीघ्रं श्रुतिमान् पितुरादाय शासनम् ॥ १ ॥ [१

स नदी दूरपारां च तिर्यक्स्रोतःसमागताम् ० ।

२] शतद्रुमतरच्छ्रीमान् क्रमेणैक्ष्वाकुनन्दनः ॥० २ ॥ [२

धीजवाच्यां^१ ० नर्दी ० तीर्त्वा ० प्राप्य चामरकण्टकम् ।

३] शिलामकछगां तीर्त्वा चाग्नेयी^२ शल्यकर्तनाम्^३ ॥ ३ ॥ [३

सत्यसन्धः श्रुचितर्मा प्रेक्षमाणः शिलावहाम् ।

४] प्रत्ययात् स महासत्त्वो वनं चैत्ररथं प्रति ॥ ४ ॥ [४

शब्देनाकारयच्चैषा हादिनी पावनोदका ।

५] यमुनां प्राप्य सन्तीर्य बलमाश्वासयत्तदा ॥ ५ ॥ [६

६] यमुनायां च^४ स^५ स्नात्वा स्नापयित्वा च वाजिनः । [७पृ

पू७] राजपुत्रो महाबाहुरगच्छद्दर्पवर्धनः ॥ ६ ॥ [८पृ

हिरण्योदामपि नदीमुत्तीर्याहिस्थले पुरे । [N

८] तोरणान् दक्षिणेनैव वारणस्थलमभ्यगात्^६ ॥ ७ ॥ [११पृ

ततोऽवतीर्य प्रययौ यामं दशरथात्मजः ।

९] तस्मिन्नुपित्वा तां रात्रिं प्राङ्मुखः प्रययौ ततः ॥ ८ ॥ [१२पृ

उद्यानमुज्जिहाना ये प्रियका यत्र पादपाः । [१२उ

१०] भद्रं शल्यवनं दुर्गं समतीत्य त्वरान्वितः ॥ ९ ॥ [N

अथानुज्ञाप्य भरतो वाहिनीं^६ चतुरङ्गिणीम्^६ । [१३उ

११] ततः शीघ्रतरं प्रायादुत्तीर्योत्तारिकां नदीम् ॥ १० ॥ [१४पृ

सरितोऽन्याश्च विविधाः सन्ततार त्वरान्वितः । [१४उ

० व । १ ल—०वाज्या । म—०वाज्यं । २ ल—प्रीर्यी । म—
प्रीयं । ३ म—०कतनम् । ४ व, म, ल—स च । ५ व, म, ल—०मभ्ययात् ।
६ व, म, ल—वाहिणा (ल—०ना) चतुरङ्गिणा ।

- १२] सप्तस्पद्धी समासाद्य कुलिनागभ्यवर्त्तत ॥ ११ ॥ [१५पृ
 तस्मादभ्येत्य लौहित्य तताराथ च पावनीम् । [१५उ
 १३] एकशल्यां स्थानवतीं विनतां गोमतीं नदीम् ॥ १२ ॥ [१६पृ
 कलिङ्गनगरे ऽतीत्य धन सालवनं ततः । [१६उ
 १४] भरतः क्षिप्रमभ्यायादपरिश्रान्तवाहनः ॥ १३ ॥ [१७पृ
 N] गंगां ततार द्युतिमान् हरितीर्थे महानदीम् । [N
 पू१५] गोमतीमभितः साय द्विजवर्यसमाकुलाम्^७ ॥ १४ ॥ [N
 उ१५] स ततो गोमतीं तीर्त्वा प्रयातश्चोदिते रवौ । [N
 पू१६] अयोध्यां मनुना राज्ञा स ददर्श निवेशिताम् ॥ १५ ॥ [१८पृ
 उ१६] सन्तीर्य गोमतीं तूर्णं भरतो दीनमानसः । [N
 पू१७] तां पुरीं मनुजव्याघ्र सप्तरात्रोपित. पाथि ॥ १६ ॥ [१८उ
 उ१७] दृष्ट्वाऽयोध्यामुवाचेद सारार्थं रथिनां वरः । [१९पृ
 नातिप्रहृष्टदेशैषा ह्ययोध्या दृश्यते पुरी । [१९उ
 १८] आम्लानोपवनोद्याना हतात्विडिव सारथे ॥ १७ ॥ [२०पृ
 विद्वद्भिर्गुणसपत्नै र्वेदवेदाङ्गपारगैः^८ । [२०उ
 १९] द्विजैर्बहुभिराकीर्णा राजर्षिरपालिता ॥ १८ ॥ [२१पृ
 अयोध्याया पुरा घोषो दूरोदेव जनोद्भवः ।
 २०] श्रूयते सागरस्येव मथ्यमानस्य वायुना ॥ १९ ॥ [२१उ
 सोऽद्य न श्रूयते कस्मादयोध्याया जनस्मन. ।
 २१] गतश्रीरिव चाभाति केनायोध्या महापुरी ॥ २० ॥ [N
 उद्यानानि च रम्याणि सुदा प्रक्रीडितैर्जनैः । [२२उ
 २२] आकीर्णान्युपलक्ष्यन्ते तानि नाद्य यथा पुरा ॥ २१ ॥ [N
 अरण्यभूत पश्यामि नगरोपवन पितु. । [२४पृ
 २३] शून्य यथा वनोद्देश नरनारीश्विर्वर्जितम् ॥ २२ ॥ [N

- न यानैरद्य दृश्यन्ते न गजैर्न च वाजिभिः । [२४७]
- २४] निर्यान्तः प्रविशन्तो वा जनाः पुरनिवासिनः ॥ २३ ॥ [२४½]
 अरि(नि?)ष्टान्येव पश्यामि निमित्तान्यद्य सर्वशः । [२६पू]
- २५] केनापि च शरीरं मे व्यथतीव हि सारथे ॥ २४ ॥ [N]
 इति ब्रुवन्नेव वचो भरतः श्रान्तवाहनः ।
- २६] विवेश तां पुरी रम्यां द्वाःस्थैश्च प्रतिपूजितः ॥ २५ ॥ [३३]
 त्वरन्नेकाग्रहृदयो द्वाःस्थं संपूज्य तं जनम् ।
- २७] सूतमश्वपतेः श्रान्तमब्रवीत्तत्र राघवः ॥ २६ ॥ [३४]
 श्रुता नो यादृशाः पूर्वं निवेशे पृथिवीपतेः ।
- २८] आकारास्तानह सर्वानद्य पश्यामि सारथे ॥ २७ ॥ [३६]
 मलिनं चाश्रुपूर्णाक्षं दीनं ध्यानपरं कृशम् ।
- २९] सस्त्रीपुमांसं पश्यामि जनमुत्कण्ठितं पुरे ॥ २८ ॥ [४३]
 इत्येवमुक्त्वा भरतः सूतं तं दीनमानसः ।
- ३०] अरि(नि?)ष्टांस्तानयोध्यायांप्रेक्ष्य धीमान् ययौ गृहम् ॥ २९ ॥ [४४]
 तां शून्यशृङ्गाटकवेश्मरथ्यां
 राज्ञोरणद्वारकवाटयन्त्राम् ।
- दृष्ट्वा पुरीं दीनजनानुकीर्णां
- ३१] शोकेन संपूर्णतरो बभूव ॥ ३० ॥ [४५]
 बहूनि पश्यन् मनसोऽप्रियाणि
 यान्यस्य दीनस्य पुरे बभूवुः ।
- अवाकूशिरा दीनतरो मनस्वी
- ३२] पितुर्महात्मा स विवेश वेष्म ॥ ३१ ॥ [४६]
 इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे भरतागमनं नाम
 [सप्तसप्ततितमः] सर्गः [॥ ७७ ॥]

- [वं-७४]=[अष्टसप्तातितमः सर्गः]=[दा-७२]
 अवीक्षमाणः पितरं स तत्र पितुरालये ।
- २] जगाम निःसृत्य ततो भरतो मातुरन्तिकम् ॥ १ ॥ [१]
 स तत्र गत्वा भरतो मातुरुत्सुकमानसः ।
- ४] जग्राहावनतः पादौ शिरसा पतितो भुवि ॥ २ ॥ [३]
 तं च सा मूर्ध्न्युपाघ्राय परिष्वज्य च कैकयी ।
- ५] उपाविश्याथ भरतं संप्रप्टुमुपचक्रमे ॥ ३ ॥ [४]
 प्राप्तोऽसि कुचिरेणाथ मातामहपुरात् सुत । सु
- ६] मुखेनाभ्यागतः कश्चित् पथि श्रान्तपरिच्छदः^१ ॥ ४ ॥ [५]
 कश्चित्कुशल्यार्यकस्ते युधाजिन्मातुलस्तथा^२ ।
- ७] मुखमप्युपितः कश्चित् पुत्र मातामहे कुले ॥ ५ ॥ [६]
 इति पृष्टुस्तु कैकेय्या भरतो दीनमानसः ।
- ८] शशंस मातुः स क्षिप्रं गमनागमनक्रमम् ॥ ६ ॥ [७]
 अथ मे दिवसाः सप्त निःसृतस्य गिरिव्रजात् ।
- ९] अम्बायाः कुशली तातो युधाजिन्मातुलश्च मे ॥ ७ ॥ [८]
 यन्मे प्रीतिधनं भूरि दत्तं मातामोहन वै^३ ।
- १०] पथि तत्सर्वमुत्सृज्य ततोऽहं शीघ्रमागतः ॥ ८ ॥ [९]
 राज्ञा नु मेपितैर्दूतैः प्रेर्यमाणस्त्वरान्वितः ।
- ११] तत्र त्वां प्रप्टुमिच्छामि तन्ममाख्यातुमर्हसि ॥ ९ ॥ [१०]
 न यथावत् पुरामिदं हृष्टपौरजनावृतम् ।
- १२] कस्मादीनजनाकीर्णं लक्ष्यते विगतद्युति ॥ १० ॥ [११]
 निरुत्साहं निरानन्दं विरताध्ययनस्वनम् ।
- १३] कस्माच्च मां राजमार्गे जनो नायाति चाग्रतः ॥ ११ ॥ [१२]

१ ब-०परिधमः । म, छ-शांतपरिधमः । २ छ-०स्तथ ।

३ घ. म. छ-मे ।

पितरं च न पश्यामि केनाद्य भवने निजे ।

- १४] किं वा भवेद्गतोऽम्नायाः कौशल्याया निवेशनम् ॥१२॥ [१३
वर्जितं शयनीयं ते भर्ता केनाद्य हेतुना ।
- १५] अपहृष्टो जनश्चायं केन वा ब्रूहि तन्मम ॥ १३ ॥ [१२
अथ^४ राजा स यत्रास्ते तत्राहं गन्तुमुत्सहे ।
- १६] न हि शर्माधिगच्छामि तमहृष्टा नराधिपम् ॥ १४ ॥ [N
इति ब्रुवाणं भरत कैकेयी प्रत्यभाषत ।
- १७] निर्लज्जा दारुणं वाक्यमप्रियं प्रियसंहितम् ॥ १५ ॥ [१४पृ
स्वर्गं गतो महाराजः पिता ते सुकृतैः स्वकैः ।
- १८] त्वयि राष्ट्रं विस्मृत्यैव पुत्रशोकपारिषतः ॥ १६ ॥ [N
इति श्रुत्वा बचो मातु भ्रततो दारुणाक्षरम् ।
- १९] पपात सहसा भूमौ छिन्नमूल इव द्रुमः ॥ १७ ॥ [१६
स भूमौ विनिपत्येद^५ विललापाकुलेन्द्रियः ।
- २०] हा कष्ट स्वर्गतो राजा कथं वा केन हेतुना ॥ १८ ॥ [१७, १८
यत्पुरा तेन मे पित्रा शयनं भात्यलङ्घुतम् । [१९पृ
- २१] तदेव रहितं तेन श्रिया हीन न राजते ॥ १९ ॥ [२०पृ
माज्जिज्ञासाऽर्थमथ^६ वा यदि तेऽभिहितं मृषा ।
- २२] प्रसीदाम्ब भृशात्तोऽहं शंस मे क गतो नृपः ॥ २० ॥ [N
इत्यार्त्तरूपं पतित^७ पितुर्दर्शनलालसम् ।
- २३] कैकेयी पतितं भूमावुत्थाप्येद वचोऽब्रवीत् ॥ २१ ॥ [२०, २३
उत्तिष्ठ भरत क्षिप्र न त्वं शोचितुर्महसि ।
- २४] त्वद्विधा न हि शोचन्ति दृष्टधर्माः परन्तप ॥ ०२२ ॥ [२४]

पालयित्वा महीं सम्यागिष्ट्वा दत्त्वा च ते पिता ।

२५] दिष्टान्तं समनुमाप्तो न त्व शोचितुमर्हसि ॥ २३ ॥० [N

इत ऊर्ध्वतरं स्थानं राजा दशरथो गतः ।

२६] न स शोच्यस्त्वया पुत्र सत्यधर्मपरायणः ॥ २४ ॥ [N

इत्येतद् भरत श्रुत्वा कैकेय्या दारुण वचः ।

२७] जननीं पुनरेवेदमुवाच भृशदु खितः ॥ २५ ॥ [२६

अभिषेक्ष्यति राम नु राजा यज्ञ नु यक्ष्यति^९ ।

२८] इत्याशाकृतसङ्कल्पस्त्वरमाणोऽहमागतः ॥ २६ ॥ [२७

तदद्याशसितं सर्वं मम मोघमचेतसः ।

२९] पितरं कृतपुण्यो हि को मृत श्रोतुमर्हति ॥ २७ ॥ [२८

अम्ब केन मृतो राजा व्याधिना मग्यनागते ।

३०] धन्यो रामो लक्ष्मणश्च पिता याभ्यां स सत्कृतः ॥ २८ ॥ [२९

नूनं मां न पिता वृद्धः प्राप्तं जानाति वत्सल ।

३१] उपजिघ्रेत^९ मां स्नेहात्संपरिष्वज्य मूर्धनि ॥ २९ ॥ [३०

क स पाणिः सुखस्पर्शस्तातस्य शुभलक्षणः ।

३२] येन मां रजसा भ्रस्तमभीक्ष्ण परिमार्जयेत् ॥ ३० ॥ [३१

येन मे माता पिता पन्धुर्यस्य दासोऽस्मि धीमतः ।

३३] तं नाथ मे^{१०} त्वमाचक्ष्व^{१०} राम भ्रातरमग्रजम् ॥ ३१ ॥ [३२

य दृष्ट्वा पितृशोकात्तो लभेय निर्दृतिं पराम् ।

३४] यस्य पादातुपाश्रित्य जीवेय त मचक्ष्व मे ॥ ३२ ॥ [N

पृ३५] क मे पितृसमो भ्राता ज्येष्ठो धर्मभृतां वरः ।

० य । ९ य, म—रक्ष्यति । १ म, ल—उपजिघ्रेत । य—उपा-

जिह्वेत । १० के—मो ममाचक्ष्व ।

- पू३७] सर्वमेतद्यथातत्त्वं त्वं ममाख्यातुमर्हसि ॥३३॥ [N
 उ३७] इति पृष्ठाऽथ भरतं कैकेयी वाक्यमब्रवीत् । [३६उ
 पू३८] राजपुत्र महासत्त्वं शृणु तत्त्वमशेषतः ॥ ३४ ॥ [N
 उ३८] श्रुत्वा¹ च¹ न विपादं त्वं गन्तुमर्हसि मानद । [N
 पू३९] यथा पिता ते धर्मात्मा प्राणांस्त्यक्त्वा दिव्य गतः ॥ ३५ ॥ [N
 उ३९] शृणु तत्तेऽभिधास्यामि² यच्चोवाच पिता स ते । [N
 पू४०] हा पुत्र रामेत्युक्त्वा च हा पुत्र लक्ष्मणेति च ॥३६॥ [३६पू
 उ४०] विलप्यैवं सुवहुशः प्राणांस्तत्याज ते पिता । [३६उ
 पू४१] इदं चापश्चिमं वाक्यमुक्त्वा राजा दिवं गतः ॥ ३७ ॥ [०७पू
 N] पुत्रशोकाग्निसन्तप्तः कालदण्डनिपीडितः । [३७उ
 उ४१] सिद्धार्थास्ते हि रामं ये पश्यन्त्यभ्यागतं वनात् ॥३८॥ [३८पू
 निस्तीर्णसमयं सार्धं सीतया लक्ष्मणेन च । [३८उ
 ४२] श्रुत्वैतद्विपसादार्तो द्वितीयाप्रियशङ्कया ॥३९॥ [३९पू
 विपण्णवदनश्चैव भूयः पमच्छ मातरम् । [३९उ
 ४३] केदानीं वर्त्तते रामः किमर्थं वा गतो वनम्³ ॥४०॥ [४०पू
 वैदेह्या सह कस्माच्च गतोऽसौ लक्ष्मणेन च । [४०उ
 ४४] इति पृष्ठा ततस्तेन कैकेयी वाक्यमब्रवीत् ॥ ४१ ॥ [४१पू
 पुनर्वै भरतं क्षुद्रं दीनमप्रियशङ्कया । [४१उ
 ४५] चीरवल्कलसंवीतो गतो राम इतो वनम् ॥ ४२ ॥ [४२पू
 पितुर्नियोगात्सहितो वैदेह्या लक्ष्मणेन च । [४२उ
 ४६] मया च तत्कृतं येन रामः प्रव्रजितो वनम् ॥ ४३ ॥ [N
 स्वर्गतः पुत्रशोकार्चस्तं च प्रव्राज्य ते पिता [N
 ४७] तच्छ्रुत्वा भरतस्तस्या मातुः पापविशङ्कितः⁴ ॥४४॥ [४३पू

1 ल—श्रुत्वाथ। म—श्रुताश्। 2 ल—ने त्रभिः। 3 म—नृगम् ।

4 म—शापविः ।

- स्वयंशशुद्धिमन्विच्छन्^{१५} प्रण्डुमारब्धवानिदम् । [४३७]
- ४८] कश्चिन्न ब्राह्मणधनं हृत रामेण धीमता ॥ ४५ ॥ [४४५]
- कश्चिदाढ्यो दरिद्रो वा भ्रात्रा मे न विद्दिसितः । [४४६]
- ४९] येन निर्वासितः श्रीमान् प्राणेभ्योऽपि मियः सुतः ॥ ४६ ॥ [N]
- कश्चिन्न परदारान्स मम भ्राता ऽभ्यपद्यत^{१६} ।
- ५०] येनासौ दण्डकारण्ये भ्रूणद्वेव विवासितः ॥ ४७ ॥ [४५२]
- स्त्रीचापलात्तु^{१७} नच्छ्रुत्वा^{१७} कैकेयी पुनरग्रवीव ।
- ५१] भरतं श्लाघमानेव^{१८} स्वकर्माख्यापयत्तदा ॥ ४८ ॥ [४५६]
- अशुभा शुभभावाय भरताय महात्मने ।
- ५२] शशंस सा यथातच्च मूढा पण्डितभानिनी ॥ ४९ ॥ [४५७]
- न ब्रह्मस्वं हृतं तेन न च किं द्विद्दिसितम् ।
- ५३] न चैव परदारान् स मनमाऽपि मधर्षति ॥ ५० ॥ [४८]
- शीलवान् धार्मिको विद्वान् विपाप्मा विजितेन्द्रियः ।
- ५४] न स किञ्चिन्महासत्त्वः कृतवान् पापमन्वापि ॥ ५१ ॥ [N]
- तेन धर्मात्मना लोकः कृत्स्नोऽयमनुरञ्जितः ।
- ५५] राजाऽभिपेक्षुकामो वै यौवराज्यपटे स्वके ॥ ५२ ॥ [N]
- ततः श्रुत्वा मया पुत्र तथाकृतमतिर्नृपः ।
- ५६] त्वदर्थं याचितो राजा यौवराज्याभिषेचनम् ॥ ५३ ॥ [४५९]
- रामस्य च वने वासं नखर्पाणि पञ्च च ।
- ५७] तेन निर्वासितो रामः पित्रा ते नगगद्गद्विः ॥ ५४ ॥ [४६३]
- स चापि वचनाद्रामः गितुर्मपरायणः ।
- ५८] वनं गत इतः सार्धं सीतया लक्ष्मणेन च ॥ ५५ ॥ [५०]

१५ घ—स्वकांक्षसिद्धिमः । १६ घ—प्रपद्यत । म—नपश्यत ।
 ल—नु(न्व ?) पश्यत । १७ घ, म—ऽद्यापरात्तत. धृ० । ल—
 ऽद्यापलातंतः श्रु० । १८ ल—ऽमानेन ।

न च पश्यन् प्रियं पुत्र पिता ते धर्मवत्सलः ।

५९] पुत्रशोकपरो दीनः प्राणांस्त्यक्त्वा दिव गतः ॥ ५६ ॥ [५१

त्वत्प्रियार्थं मया कर्म कृतमेतद्विगर्हितम् । [५२उ

६०] यत्सर्वगुणसपन्नो रामः प्रप्राजितो वनम् ॥ ५७ ॥ [N

तद्वियोगाच्च राजाऽसौ पुत्रशोकाकुलेन्द्रियः ।

६१] प्रियान् प्राणान् परित्यज्य भेतराजवश गतः ॥ ५८ ॥ [N

गृहाण तदिदं राज्यं सफलं कुरु मे श्रमम् । [५२पृ

६२] मनो नन्दय मित्राणां मम चामित्रकर्षणं ॥ ५९ ॥ [N

श्वः पुत्रं शीघ्रं विधिवत्स्वराज्ये

विभैर्वसिष्ठममुखैः समेत्य ।

सत्कृत्य राजानमनन्तरं च

६३] स्वात्मानमस्मिन्नाभिपेचयस्व^{१९} ॥ ६० ॥ [५४

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे भरतप्रश्ने कैकेयीवाक्यं

नाम [अष्टसप्ततितमः] सर्गः [॥७८ ॥]



[वं-७५]=[एकोनाशीतितमः सर्गः]=[दा-७३ तथा ७४]

श्रुत्वाऽथ पितरं प्रेतं भ्रातरौ च विवासितौ ।

१] भरतो दुःश्वसन्तप्तो मातरं पुनरब्रवीत् ॥ १ ॥ [७३ । १

रामं राष्ट्राद् भ्रंशयित्वा कैकेय्यनपकारिणि^१ ।

२] पारित्यक्त्वाऽसि धर्मेण गर्हिते पापनिश्चये ॥ २ ॥ [७४ । २

राज्यलोभात् पतिं प्राणैर्वियोज्य च यशस्विनम् ।

३] गन्ताऽसि^२ निरयं घोरं सर्वथैव धिगस्तु ते ॥ ३ ॥ [N

यदि त्वं राज्यलोभेन गन्तुं निरयमिच्छसि ।

४] पतन्त्या निरये कस्माद्दृग्मप्यनुपातितः ॥ ४ ॥ [N

हा दग्धोऽस्मि इतश्चैव त्वया मात्रा^३ नृशंसया^४ ।

५] त्यक्ष्याम्यहमपि प्राणान् मातस्त्वं सुखिनी भव ॥ ५ ॥ [N

किं नु तेऽपकृतं भर्ता किं रामेण महात्मना ।

६] ययो मृत्युर्विवासश्च त्वया तुल्यमुपाहितौ ॥ ६ ॥ [७४ । ३

भ्रूणहत्या त्वया प्राप्ता ब्रह्महत्या च कुत्सिता । [७४ । ४पू

७] रामं राज्याद् भ्रंशयित्वा पतिं प्राणैर्वियोज्य च ॥ ७ ॥ [N

मा तेऽस्त्वयं शुभो लोको मा परो मर्तृघातिनि^५ । [N

८] कैकेयि नरकं गच्छ भर्तृशापपरिहता ॥ ८ ॥ [७५ । ४उ

हा दग्धो नाशितश्चास्मि त्वयाऽहं राज्यलुब्धया ।

९] किं मे राज्येन भोगैर्वा दग्धस्याग्रशसा त्वया ॥ ९ ॥ [७३ । १३

निप्रयुक्तस्य मे पित्रा भ्रात्रा पितृसमेन च ।

१०] जीवितेनापि नार्थोऽस्ति कश्चिद्राज्येन वै कुतः ॥ १० ॥ [N

देवकल्पेन पित्रा यद्विहीनो राघवेण च ।

१ कै—कारिणी (कारिण ?) । २ ल-गता० । म गत० ।

३ म, ल-पतत्या । ४ कै-मण्डनृश० । ५ शलाकार्द्धमेतत्
किञ्चित्पाठभेदेन अत्रे (८० । ३३) वर्तते ।

- ११] केनेच्छेयं हेतुनाऽहं राज्यं प्राप्तुमशक्तिमान् ॥ ११ ॥ [७३।१४
भवेद्यद्यपि मे शक्तिः शासितुं राज्यमूर्जितम् ।
- १२] तथाऽपि न सकामां त्वां करिष्ये मातृगार्धिनि^६ ॥ १२ ॥ [७३।१७
मन्निमित्तं पिता प्राणैस्त्वया मे विप्रयोजितः ।
- १३] प्रत्राजितो वनं चैव रामो धर्मभृतां वरः ॥ १३ ॥ [७४।१०
अहो पापं महन्मूर्ध्नि त्वया मे विनिपातितम् ।
- १४] अपापः पापसङ्कल्पे सर्वथाऽहं हतस्त्वया ॥ १४ ॥ [N
व्रणे क्षारं विनिक्षिप्तं दुःखे दुःखं निपातितम् ।
- १५] त्वया^७ र्गतिं घातयित्वा^८ रामं कृत्वा च तापसम् ॥ १५ ॥ [७३।३
कुलस्यास्य विनाशाय पित्रा मे त्वमिहाहृता ।
- १६] त्वां कालरात्रिमतिमां पिता मे नावबुद्धवान् ॥ १६ ॥ [७३।४
आहृता घोरसङ्कल्पा राज्ञा त्वं मृत्युरात्मनः ।
- १७] व्याली घोरविषेव त्वं भर्त्राऽसि परिपालिता ॥ १७ ॥ [N
अपापः पापसङ्कल्पे सत्यसन्धः पिता मम ।
- १८] छलयित्वा^९ प्रियैः^{१०} प्राणैः सत्पुत्रेण वियोजितः ॥ १८ ॥ [N
तथैव स महाभागो लक्ष्मणो भ्रातृवत्सलः ।
- १९] प्रत्राजितो वनं राज्यात् पितृगौरवयन्त्रितः ॥ १९ ॥ [N
कौशल्या च मुपित्रा च पुत्रशोकपरिप्सुते ।
- २०] दुष्करं यदि जीवेता त्वया पापे निराकृते ॥ २० ॥ [७३।६
न त्वं केकयराज्ञोऽसि^{११} जाता मतिमतां वरात् ।
- २१] पापवृत्तां च जाने त्वां जातां घोरैरेण रक्षसा ॥ २१ ॥ [७४।२
रामे त्वं किं न्वकल्याणमकल्याण्यनुपश्यसि ।

6 व—०गधिनि । ल—०गन्धिनि । म—मातिग दिने । 7 व—
दुःखं निपातितं त्वया । 8 व—र्गतिं च घातयित्वा त । 9 म, ल—
कल्पयित्वा । 10 व—प्रिय । 11 के—केकेयि राज्ञासि । व—केकयराजस्य ।

- २२] येन त्वया साधुवृत्तो रामः प्रव्राजितो वने^{१२} ॥ २२ ॥ [N
मातरीव च यो वृत्तिं रामस्त्वय्यनुवर्त्तते ।
- २३] तस्य प्रव्राजनं पापे किं पश्यन्त्या त्वया कृतम् ॥ २३ ॥ [७३ । ९
पितर्यसाधु किं मे त्वं रामे^{१३} वा दृष्टवत्यसि ।
- २४] येनाकार्यं कृतवती मम त्वमयशस्करम् ॥ २४ ॥ [N
यदा माता च मे ज्येष्ठा कौशल्या धर्मदर्शिनी ।
- २५] त्वयि वृत्तिं परां प्राप्ता भगिन्यामिव वर्त्तते ॥ २५ ॥ [७३ । १०
अथ कस्मान्त्वयाऽनार्ये तस्याः पुत्रः प्रवासितः ।
- २६] त्वयाऽऽत्मानं दूषयन्त्या दूषितोऽहं, नृशंसया ॥ २६ ॥ [७३ । १०
N] अनृशंसं महात्मानमपापं पापनिश्चये ।
- पू२८] निवर्त्तयिष्ये तं गत्वा वनवासादहं स्वयम् ॥ २७ ॥ [७३ । २६
उ२८] विज्ञाप्य रघुशार्दूलं रामं भ्रातरमग्रजम् ।
- पू२९] वत्स्याम्यहं वने घोरे नववर्षाणि पञ्च च ॥ २८ ॥ [७४ । ३१
उ२९] पितुर्नियोगाद् भ्राता मे रामो राजा भविष्यति । [N
इत्येवमुक्त्वा भरतोऽतिरोषाद्
विगर्हयित्वा जननीं मुखार्दः ।
शोकातुरः सस्वनमुन्ननाद्
- ३०] सिंहे यथा पर्वतकन्दरस्थः ॥ २९ ॥ [२८
इत्यार्षे रामाद्यणे ऽयोध्याकाण्डे कैकेयीविगर्हणं नाम
[एकोनाशतितमः] सर्गः [॥ ७९ ॥]



[चं-७६] = [अशीतितमः सर्गः] = [दा-७४]

तथा स गर्हयित्वा तां मातरं भरतस्तदा^१ ।

- १] दुःखेन महताऽऽविष्टः पुनरेवेदमब्रवीत् ॥ १ ॥ [१
 योषितस्वभावे कैकेयि नृशंसे निरपत्रये । [२पृ
- २] किं तेऽपराद्धं रामेण भर्त्रा वा पापनिश्चये ॥ २ ॥ [३पृ
 एवं क्रूरस्वभावायाः सर्वथैव धिगस्तु ते ।
- ३] मा ते ऽस्त्वय शुभो लोको मा परः कुलपांसनि ॥ ३ ॥ [N
 सर्वलोकामिय कृत्वा कथ नाम न लज्जसे ।
- ४] कथं त्वां नयते भूमि स्वामित्व भर्तृघातिनि ॥ ४ ॥ [N
 कथ तेनर्षिकल्पेन मम पित्रा महात्मना ।
- ५] तवापराधः क्षान्तोऽय सर्वलोकविगर्हितः ॥ ५ ॥ [N
 कथं शापाग्निना तेन न दग्धाऽसि महात्मना ।
- ६] त्वद्दोषदूषितश्चाहं न दग्धः केन हेतुना ॥ ६ ॥ [N
 प्राणै र्वियोजितो भर्ता रामः प्रप्राजितो वनम् ।
- ७] मम चाप्ययशो मूर्ध्नि पातित लुब्धया त्वया ॥ ७ ॥ [६
 तस्मात् पापसमुद्धार न ते पश्यामि गर्हिते^२ ।
- ८] लोकानां परिवर्त्तेऽपि निरय न तरिष्यसि ॥ ८ ॥ [N
 मातृरूपेण मेऽमित्रे नृशंसे राज्यकामिके ।
- ९] न तेऽहमभिधातव्यो निर्घृणे भर्तृघातिनि ॥ ९ ॥ [७
 कौशल्या च सुमित्रा च तथाऽन्या मम मातरः ।
- १०] त्वयैकया पापशीले पीडिता निरपत्रये ॥ १० ॥ [८
 न त्व केकयराजस्य दुहिता विदितात्मनः ।
- ११] राक्षसी काश्वि राक्षस्त्व दुष्टित्वमुपागता ॥ ११ ॥ [९
 सर्वलोकप्रियो रामो यत्त्वया पापानिश्चये ।

- १२] प्रवाजितः पापरता का त्वदन्या भविष्यति ॥१२॥ [N
पितुर्वियोगजं दुःखं महदापादितं त्वया ।
- १३] भर्तृत्यागकृतं चैव सर्वलोकविगर्हितम् ॥१३॥ [११
थुद्धस्वभावां सदृचां कौशल्यां पुत्रलालसाम् ।
- १४] विवत्सां वत्सलां कृत्वा कांस्त्वं लोकान् गमिष्यसि ॥१४॥ [१२
नाभिजानासि किं दुःखमिष्टपुत्रवियोगजम् ।
- १५] पुत्रेणेष्येन कौशल्या तथा ते विप्रयोजिता ॥१५॥ [१३
अद्भ्यप्रत्यद्भ्यजो मातुः पुत्रो हृदयसंभवः ।
- १६] तस्माद्दते प्रियतरः पुत्रान्मातुर्न विद्यते ॥ १६ ॥ [१४
पुरा किल गवां माता सुरभिः सुरसंमता ।
- १७] कृशौ प्रतोदनुन्नाद्भौ वहमानौ महीतले ॥१७॥ [१५
दृष्ट्वा पुत्रौ हरोदार्त्ता^३ सीदन्ती च मुहुर्मुहुः ।
- १८] तामिन्द्रो रुदतीं दृष्ट्वा धर्मात्मा वै^४ कृपां^४ गतः ॥१८॥ [१६
आकाशे गच्छतस्तस्याः^५ सुरभ्या अश्रुविन्दवः । [१८उ
- १९] शोकोष्णाः पतिता गात्रे भृशं सुरभिगन्धयः ॥ १९ ॥ [१७उ
तैरश्रुविन्दुभिः स्पृष्टः समुद्रीक्ष्याथ वासवः ।
- २०] सुरभिं प्राञ्जलिर्वाचयमाभिगम्येदमब्रवीत् ॥२०॥ [१९
कच्चिन्न भयमस्माकं कुतश्चिदनुपश्यसि ।
- २१] यन्निमित्तं मुदुःखार्त्ता रोदिपि ब्रूहि तन्मम ॥२१॥ [२०
इत्युक्त्वा सुरभिस्तेन शक्रेणामिततेजसा ।
- २२] प्रन्युवाच मुदुःखार्त्ता पुरन्दरमिदं वचः ॥२२॥ [२१
नाहं भयं वः पश्यामि कुतश्चिदमराधिप ।
- २३] अहं हि स्वौ^६ कृशौ^६ पुत्रौ शक्र शोचामि दुःखितौ ॥२३॥ [२२

३ ल—रुदतीं च । ४ कै—को कृपा० । ५ व—गच्छतास्तस्या ।

६ व—श्वौत्सौ ।

प्रतोदप्रविभिन्नाङ्गौ सीदन्तौ सुबुभुक्षितौ ।

२४] पीड्यमानौ लाङ्गलेन कार्पिकेन दुरात्मना ॥२४॥ [२३

अङ्गप्रत्यङ्गसंभूतौ तावेतौ हृदयोद्भवौ ।

२५] दृष्ट्वा विवर्धते दुःखं नास्ति पुत्रात्परः प्रियः ॥ २५ ॥ [२४

तामव्रवीत्ततः शक्रो देवानामीश्वरः प्रभुः ।

N] शृणु तेऽहं प्रवक्ष्यामि मुरभे लोकपूजिते ॥ २६ ॥ [N

पुरा कृतयुगे देवि गोभिर्ब्रह्माभियाचितः ।

] इच्छाम^८ लोकान् परमान् प्राप्तुं स्वैः कर्मभिर्जितान् ॥२७॥ [N

अव्रवीच्च ततो ब्रह्मा गाः प्रहावनताः स्थिताः ।

N] कुरुध्वं मानुषे लोके तपः पापभयापहम् ॥ २८ ॥ [N

यो वः क्लेशो वभुक्षा च वधो बन्धश्च मानुषे ।

N] लोके भविष्यति तपःशुद्धं^{१०} पापभयापहम् ॥ २९ ॥ O [N

यो दुर्वलं परिश्रान्तं व्याधितं चापि निर्दयः^{११} ।

N] वाहयिष्यत्यनड्वाह गोघ्नः पापमवाप्स्यति ॥ ३० ॥ [N

शक्त समर्थं बलिनं पुष्टं यो वाहयिष्यति ।

N] ग्रासोपदानसंयुक्तं न स पापमवाप्स्यति ॥ ३१ ॥ O [N

न क्रोद्धव्यं तु युष्माभिः क्लिश्यमानैः कथञ्चन ।^{१२}

N] तेनाक्षयान् नरांल्लोकांस्तपसाऽऽप्स्यथ^{१३} दुर्लभान् ॥३२॥ [N

तस्मादेतत् पुरादत्तं^{१४} धान्ना कर्म गवां भुवि ।

N] तस्मान्मन्युर्न कार्यस्ते श्रुत्वैतद्भ्रातृशासनम्^{१५} ॥ ३३ ॥ [N

7 ल—०पूजितः । 8 घ, म—इच्छेम । 10 घ—तप शुद्धौ ।

कै—तप युद्ध । O ल । 11 म, ल—निर्दय । कै—निर्दयः । O म ।

12 ल—एतत् श्लोकाद्धानन्तर ३१ श्लोको विद्यते । 13 घ, ल—

चरा० । 14 ल—परादत्तं । घ—पुगादत्त । म—परादत्तं । 15 ल—

०तद्ब्रह्मशा० । म—मातृशा० ।

- इत्येवं शोचितवती गवां माता मुताभिया । [N
 २६] यस्याः पुनसहस्राणि बहून्यासन्महौजसः ॥ ३४ ॥ [२८पृ
 एक एव मुतो यस्यास्त्वया रामो विवासितः । [२९पृ
 २७] प्राणेभ्योऽपि भियः साऽद्य कथं जीवेत् सदुःखिता ॥३५॥ [२८उ
 यस्मादेवं तु कैकेयि कौशल्यायास्त्वया कृतम् । [N
 २८] हृच्छरीरमनःशोपि^{१०} दुःख पुनर्वियोगजम् ॥ ३६ ॥ [N
 तस्मात्वमपि कैकेयि दुःख भेत्येह चाव्ययम् । [२९उ
 २९] महत् प्राप्स्यासि दुर्मथे निरयं पापमास्थिता ॥ ३७ ॥ [N
 अह त्वपाचिर्ति मातुः^{१७} करिष्यं पितुरेव च ।
 ३०] अस्य चायशसो लोके करिष्याम्यपमार्जनम् ॥ ३८ ॥ [३०
 इति नाग इवारण्ये सहस्रा बन्धन गतः ।
 ३१] नि श्वस्योष्ण मुदुःखाचो रुरोद भरतस्तदा ॥३९॥ [३५
 सरब्धनेत्रः शिथिलः क्रियासु
 सन्त्यक्तशुभ्राभरणाम्बरस्रक् ।
 बभूव भूमौ पतितो नृपात्मजः
 ३२] शचीपतेः केतुरिवोत्सवक्षये ॥ ४० ॥ [३६
 इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे भरतविलापो नाम
 [अशीतितमः] सर्गः ॥ ८० ॥



[वं-७७]=[एकाशीतितमः सर्गः]=[दा-७८]

अथ तत्र यथावार्त्ता तच्छ्रुत्वा लक्ष्मणानुजः^१ । [१५

१] स तमुत्थापयामास शत्रुघ्नो भरतं तदा ॥ १ ॥ [N

श्रुत्वा प्रत्राजितं रामं कुब्जाभेदितया ततः । [N

२ कैकेय्या दुःखशोकार्तः शत्रुघ्नोऽथाब्रवीदिदम् ॥ २ ॥ [१६

विद्वानार्योऽनृशसश्च सर्वभूतहिते रतः । [N

३] स्त्रिया नाम कथ रामो वन प्रत्राजितोऽब्रशः ॥ ३ ॥ [२७

बलवानस्त्रसपन्नो लक्ष्मणो लक्ष्मिवर्द्धनः ।

४] किं नाभिपिक्तवान् राम कृत्वाऽपि पितृनिग्रहम् ॥ ४ ॥ [३

पूर्वमेव स निग्राहो राजा धर्मार्थदर्शिना ।

५] लक्ष्मणेन पिता मूढः कामरागवशं गतः ॥ ५ ॥ [४

इत्येवं भाषमाणे तु शत्रुघ्ने लक्ष्मणानुजे ।

६] प्राग्द्वारेऽभूत्तदा^२ कुब्जा सर्वाभरणभूषिता ॥ ६ ॥ [५

चन्दनागुरुदिग्धाङ्गी महार्हाम्बरभूषिता ।०

७ मेखलादामभिश्चित्रैः पिनद्धा कुररी^३ यथा ॥ ७ ॥ [६,७

समीक्ष्य तां ततो द्वाःस्थां भरतः पापकारिणीम् ।

८] अन्तःपुरचरीं कुब्जा शत्रुघ्नाय न्यवेदयत् ॥ ८ ॥ [८

यस्याः कृते मनो रामो न्यस्तदेहश्च मे गुरुः ।

९] सेव पापा नृशसा च कुरु चास्या यथोचितम् ॥ ९ ॥ [९

तामभ्याशगतां दृष्ट्वा शत्रुघ्नो मन्थरां तदा ।

१०] चकल्पं विनिगृह्यार्तां स हि रोपसमन्वितः ॥ १० ॥ [N

कौत्सुल्लभ्य, चन्द्र, चरुण, पूरुण्यप्रस, पांसुना, । [N

११] अन्तःपुरचरी तां च प्रत्युवाच रूपान्वितः ॥ ११ ॥ [१०७

१ व, म, ल—अन । २ व—भूतत । ०य, म, ल । ३ व,
म ल—कुचरी ।

- यथा कृतं महद्दुःखं भ्रातृणां मे पितुस्तथा । [११पू
 १०] तामिमां मन्यरामद्य नयामि यमसादनम् ॥ १२ ॥ [N
 शत्रुघ्नेन तथा कुञ्जां कृष्यमाणां महीतले । [१२उ
 १३] सहसा विननादात्तो दृष्ट्वा कुञ्जामृद्वज्जनः ॥ १३ ॥ [१३पू
 क्रुद्धमाज्ञाय शत्रुघ्नं भयसंभिन्नमानसः । [१३उ
 १४] अमन्त्रयत चैवार्त्तः कुञ्जापरिजनस्तदा ॥ १४ ॥ [१४पू
 पू१६] यथाऽयमभिसंक्रुद्धो निःशेषं नः करिष्यति । [१४उ
 N] सानुकोशां शरण्यां च दीनानाथार्त्तद्वान्वयाम् ॥ १५ ॥ [१५पू
 उ१५] कौशल्यां शरणं यामः सा हि नोऽद्य परायणम् । [१५उ
 पू१६] स चापि रोपताम्राक्षः शत्रुघ्नः शत्रुतापनः ॥ १६ ॥ [१६पू
 उ१६] विचर्कपं भृशं कुञ्जां^४ क्रौशन्तीं पृथिवीतले । [१६उ
 पू१७] तस्या विकृष्यमाणाया मन्यराया इतस्ततः ॥१७॥ [१७पू
 उ१७] भूपणान्यवशीर्णानि चित्राणि रुचिराणि च । [N
 पू१८] तस्यास्ते भूपणैश्चित्तैर्विनिर्कीर्णं महीतलम् ॥ १८ ॥ [१७उ
 उ१८] रराजामलताराढ्यं शारदं गगनं यथा । [१८उ
 तामाकृष्य च शत्रुघ्नः कैकेयीसन्निधौ तदा ।
 १९] क्रोधसंरक्तनयनः प्रोवाच पश्यं वचः ॥ १९ ॥ [१९
 ययेदमशुभं कर्म कुलसयकर कृतम् ।
 २०] असत्ती साऽद्य कैकेयी कथं त्वां मोचयिष्यति^५ ॥२०॥ [N
 यथा^६ नापेक्षितः पुत्रो न राजा नाम्नो यशः ।
 २१] सा^७ प्राप्स्यत्यशुभस्यास्य प्रेत्य पापफलोदयम् ॥ २१ ॥ [N
 मूलं नस्त्वमनर्थस्य कुलसयकरस्य हि ।
 २२] तस्मात्कुञ्जेऽद्य इत्या त्वां नयामि यमसादनम् ॥२२॥ [N

४ घ, म, ण—मृद्वं । ५ घ, म, ण—मोक्षयिष्यति । ६ कै—यथा ।

७ धारा या इति "या" स्थाने उपरि लिखितम् । ७ म, ण—स— ।

हृच्छोपणं महद्दुःखमद्य रामवियोगजम् ।

- २३] अहं हत्वा विमोक्ष्यामि पापां पापानुसारिणीम् ॥२३॥ [N
इत्युक्त्वा भृशसंक्रुद्धः शत्रुघ्नो लक्ष्मणानुजः ।
- २४] विचर्ष्य यत्नात् कुब्जां निःश्वसन्तीं महीतले ॥ २४ ॥ [१६
तैर्याम्यैः परुषैस्तेन कैकेयी भृशमर्दिता ।
- २५] शत्रुघ्नभयसंवीता पुत्रं शरणमभ्यगात् ॥ २५ ॥ [२०
तं प्रेक्ष्य भरतः क्रुद्धं शत्रुघ्नं वाक्यमब्रवीत् ।
- २६] अवध्याः सर्वभूतानां प्रमदाः क्षम्यतां त्वया ॥ २६ ॥ [२१
हन्यामहमिमां पापां कैकेयीं स्वयमेव हि ।
- २७] यदि रामो न धर्मात्मा त्यजेन्मां मातृघातिनम् ॥ २७ ॥ [२३
इत्येतद्वचनं श्रुत्वा शत्रुघ्नो भरतेरितम् ।
- २८] व्यायच्छदात्मनो * तोषं परिचिक्षेप मन्थराम् ॥ २८ ॥ [२४
सा क्षिप्त्वा सहसोत्थाय मन्थरा भयविह्वला ।
- २९] कैकेयीमभिगम्यार्त्ता ययाचे शरणं तदा ॥२९॥ [२५
शत्रुघ्नविक्षेपविमूढसंज्ञां
समीक्ष्य कुब्जां भरतस्य माता ।
शनैस्तदाऽऽश्वासयदार्त्तरूपां
- ३०] कौश्वी यथाऽऽर्त्तामिव सारसस्त्री ॥ ३० ॥ [२६
इत्यार्पे रामायणे ज्योध्याकाण्डे कुब्जाकर्षणं
नाम [एकाशीतितमः] सर्गः [॥ ८१ ॥]

[वं—७८]=[द्व्यशीतितमः सर्गः]=[दा—७९],

गर्हयन्नेव जननीं दुःखशोकाकुलेन्द्रियः ।

१] भरतो वीक्ष्य शत्रुघ्नमिदं वचनमब्रवीत् ॥ १ ॥ [७४ । १

अनीश्वरोऽपि पुरुषः सुखदुःखाप्तये मतः ।

२] कर्षयत्यवशं ह्येनं कृतान्तः सुखदुःखयोः ॥ २ ॥ [N

अहो कृतान्तो बलवान् येन सर्वगुणान्वितः ।

३] सुखार्हस्त्ववशो रामो बलादद्दुःखेन योजितः ॥ ३ ॥ [N

पुत्रशोकपरिघृणां^१ भर्तृव्यसनकर्षिताम् ।

४] कौसल्यामोहि सहितो मया पद्म्याद्य दुःखिताम् ॥ ४ ॥ [N

गर्हितं चायशस्यं च कष्टं मात्रा कृतं मम ।

५] यदिदं तद्विपश्यामि कृतान्तकृतमेव हि ॥ ५ ॥ [N

शत्रुघ्न स्त्री पुमान् वापि कृतान्तबलमोहितः ।

६] सुविपश्चिदापि प्राप्तं न वेत्त्यात्माहिताहितम् ॥ ६ ॥ [N

कृतान्तमोहिता माता मम शत्रुघ्न कैकयी ।

७] इदं कृतवती पापं सर्वलोकत्रिगर्हितम् ॥ ७ ॥ [N

इदं तु मे महददुःखं शत्रुघ्न हृदि वर्त्तते ।

८] किं नु वक्ष्यामि कौसल्या पुत्रशोकेन दुःखिताम् ॥ ८ ॥ [N

इत्युक्त्वा भरतो वाक्यं शत्रुघ्नसाहितस्तदा ।

९] रुरोदात्तस्वरेणोच्चैः पूरयन्निय तद् गृहम् ॥ ९ ॥ [N

तत्र श्रुत्वा तदा नादं भरतस्य महात्मनः ।

१०] रदतस्तस्य कौसल्या सुमित्रामिदमब्रवीत् ॥ १० ॥ [६

आगतः क्रूरधार्मिण्याः कैकेय्या भरतः सुतः ।

[११] तमहं द्रष्टुमिच्छामि भरतं दीर्घदर्शिनम् ॥ ११ ॥ [६

इत्युक्त्वा दुःखसन्तप्ता कौसल्या करुणं वचः ।

- १२] प्रतस्थे भरत द्रष्टुं सुमित्रासहिता०तदा० ॥ १२ ॥ [७
 स चापि भरतः श्रीमान् शशुघ्नसहितस्तदा ।०
- १३] प्रतस्थे०दुःखितां० द्रष्टुं० कौसल्यां स्वनिवेशने ॥१३॥ [८
 ततो भरतशशुघ्नौ कौसल्यां प्रेक्ष्य दुःखिताम्^३ ।
- १४] दूरादपि प्रणम्योभौ दुःखार्त्तामभिषेततुः ॥ १४ ॥ [९
 तौ परिष्वज्य कौसल्या शशुघ्नभरताबुभौ ।
- १५] परितापेन दुःखेन रुरोढ भृशदुःखिता ॥ १५ ॥ [१०
 उवाच चैनं प्रणतमुत्थाप्य भयविह्वलम् ।
- १६] रुदती वाक्यमेतत् सा कौसल्या परुषाक्षरम् ॥ १६ ॥ [१०
 दिष्ट्या ते राज्यकामेन प्राप्तं राज्यमकण्ठकम् ।
- १७] कैकेय्या ते स्वयं दत्त भर्तारमवहन्य^४ हि ॥१७॥ [११
 प्रराज्य चीरवसनं पुत्र मेऽनपकारिणम् ।
- १८] केन युक्तार्थयोगेन कैकेयी जननी तव ॥ १८ ॥ [१२
 क्षिप्रं मामपि कैकेयी प्रराजयितुमर्हति ।
- १९] यत्र मे दयितं पुत्रो गतो रामः सलक्ष्मणः ॥ १९ ॥ [१३
 अथवा स्वयमेवाह सुमित्राऽनुचरा वने ।
- २०] यास्यामि यत्र रामो ऽसौ गतः सीतासहायवान् ॥ २० ॥ [१४
 काम वा स्वयमेव त्व तत्र मां नय पुत्रक ।
- २१] तपस्तप्यति यत्रासौ पुत्रो मे पितुराज्ञया ॥२१॥ [१५
 इदं त्व धनरत्नाढ्यं चतुरङ्गलान्वितम् ।
- २२] पित्रा निःसृष्टं कल्याणं राज्यं प्राप्नुहि चाञ्छितम् ॥ २२ ॥ [१६
 इति लालप्यमाना तां कौसल्या भरतस्तदा ।
- २३] प्राञ्जलिः प्रयतो वाक्यमिदं प्रश्रितमब्रवीत् ॥ २३ ॥ [१९
 इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे भरतोपालम्भो
 नाम [द्रव्यशीलितमः] सर्गः [॥ ८२ ॥]

[वं-७९] = [त्र्यशीतितमः सर्गः] = [दा-७५]

तामेव^१ द्रुवती दीना कौसल्यां राममातरम् ।

१] कृताञ्जलिर्वाचेद भरतो वाप्पगद्गदम् ॥ १ ॥ [१९

आर्ये कस्माद्जानन्ती गर्हमे मामकल्मषम् ।

२] विपुलां हि मम प्रीतिं स्थिरां जानासि राधवे ॥ २ ॥ [२०

वेदान् निन्दति साङ्गान् स ब्राह्मणाश्च विशेषतः ।

३] सत्यसन्धः सतां श्रेष्ठो यस्वार्योऽनुमते गतः ॥ ३ ॥ [२१

ऋषेभ्यः पापीयसीं यालु सूर्यं च प्रतिमेहतु ।

४] *पदेन^२ हन्याद् गां सुप्तां यस्वार्योऽनुमते गतः ॥ ४ ॥ [२२

उच्छिष्टः स स्पृशतु गामग्निं ब्राह्मणमेव च । [३१

५] स निन्दतु गुरुं चैव यस्वार्योऽनुमते गतः ॥ ५ ॥ [N

सखिभार्यां गुरोर्भार्यां मनसा सोऽभिपद्यताम्^३ ।

६] जन्तुष्वपमतिः पापो यस्वार्योऽनुमते गतः ॥ ६ ॥ [N

यलिपद्भागमादाय राज्ञश्चारक्षतः प्रजाः ।

N] किल्विषं समवाप्नोतु यस्वार्योऽनुमते गतः ॥ ७ ॥ [२५

परिपालयमानाय राज्ञे भूतानि पुन्रवत् ।

N] तस्मै स दृष्टतां प्रापो यस्वार्योऽनुमते गतः ॥ ८ ॥ [२४

कारयित्वा महत् कर्म भर्ता भृत्यान् निरर्थकान् ।

N] किल्विषं समवाप्नोतु यस्वार्योऽनुमते गतः ॥ ९ ॥ [२३

संश्रुत्य च तपस्विभ्यो यज्ञे वै यज्ञदाक्षिणाम् ।

N] स विप्रन्मतां पापो यस्वार्योऽनुमते गतः ॥ १० ॥ [N

इत्त्यश्वरथसराधे युद्धे शस्त्रसमाकुले ।

१. कै, म—तामेव । घ—तमेव । * घ—नास्ति । २ कै—
पादेय । (पादेन १) । ३ ल—उपश्यताम् । म—उपश्यतम् ।

- ७] मा स्म कार्पीव सतां कर्म यस्यार्योऽनुमते गतः ॥ ११ ॥ [२७
उपादिष्टं सुसूक्ष्मार्थं शास्त्रं तत्त्वेन धीमता ।
- ८] स नाशयतु तद् धर्मं यस्यार्योऽनुमते गतः ॥ १२ ॥ [२८
कृत्ये^४ विवदमानेषु^५ पक्षमाश्रित्य जल्पतः ।
- ९] स पापं समवाप्नोतु यस्यार्योऽनुमते गतः ॥ १३ ॥ [N
देवताऽतिथिभृत्यानां मातापित्रोस्तथैव च । [४६पू
- १०] स्वयमश्नात्वदत्तैव यस्यार्योऽनुमते गतः ॥ १४ ॥ [३४उ
नैव शास्त्रानुगा वाचः प्रयुंजीत कदाचन ।
- ११] *सत्सु च प्रतितिष्ठेत् यस्यार्योऽनुमते गतः ॥ १५ ॥ [२१
पायसं कृसरं मांसं वृथा प्राश्नातु निर्गृणः ।
- १३] गुरु चाप्यज्जानातु यस्यार्योऽनुमते गतः ॥ १६ ॥ [३०
आपाढी कार्तिकी माधी वैशाखी चैव^६ पूर्णिमा^६ ।
- १२] अमदानवतो यातु यस्यार्योऽनुमते गतः ॥ १७ ॥^७ [N
पितरं मातरं वृद्धमाचार्यं ब्राह्मणं गुरुम् ।
- १४] दुष्टात्मा सोऽवमन्येत यस्यार्योऽनुमते गतः ॥ १८ ॥ [N
सतां लोकात् सतां कीर्तिः सद्भिर्जुष्टा च कर्मणः ।
- १५] स भ्रश्यतु^८ दुराचारो यस्यार्योऽनुमते गतः ॥ १९ ॥ [४७
यत् पापं ब्रह्महत्यायां यत् पापं कपिलावधे ।
- १६] तत् पापं समवाप्नोतु यस्यार्योऽनुमते गतः ॥ २० ॥ [N
विश्वासघातिनां पापं यत् पापं गुरुघातिनाम् ।
- १७] गुरोश्चालीकानिर्गन्धे तत् पापं प्रतिपद्यताम् ॥ २१ ॥ [N

४ के—कृतो । ५ ल—विधिध० । * व—नास्ति । ६ व—च विशेषत । ७ के—अथ श्लोक पञ्चदशमश्लोकानन्तरं पठ्यते । ८ कै—कश्यतु । म—भशतु । ल—भ्राश्यत् ।

- उभे सन्ध्ये शयानस्य यत् पापं परिकल्पितम् ।
 २०] तव पापं समवाप्नोतु यस्यार्योऽनुमते गतः ॥ २२ ॥ [४४
 प्रमाथिनि नरे पापं यच्चैवानृतयादिनि ।
 २१] तव प्रामोत्वकृतमज्ञो यस्यार्योऽनुमते गतः ॥ २३ ॥ [N
 ग्रामे वसतु पण्मासान् स्वसुतांश्चोपजीवतु^९ ।
 २३] एकाकी मिष्टमश्नातु यस्यार्योऽनुमते गतः ॥ २४ ॥ [३४
 एवमाश्वासयामास भरतो दुःखकर्षिताम्^{१०} ।
 २४] कौसल्यां शोकसंतप्तां पातिपुत्रविनाकृताम् ॥ २५ ॥ [५२
 एयं च शपथान् कृच्छ्रान् शपमानमकल्मषम्^{११} ।
 २५] भरतं दुःखसन्तप्तं कौसल्या पुनरब्रवीत् ॥ २६ ॥ [६०
 शुद्धस्वभाव धर्मात्मन्नैवमि त्वामकल्मषम् ।
 २६] ईदृशान् शपथान् कुर्वन् प्राणानुपरुणत्सि मे ॥ २७ ॥ [६१
 दिष्ट्याऽसि रामसद्वितः पुत्रधर्मान्न चालितः ।
 २७] सह रामेण धर्मात्मन् दीर्घमायुरवाप्नुहि ॥ २८ ॥ [६२
 अपि त्वां सह रामेण पश्येयं लक्ष्मणेन च ।
 २८] तीर्णप्रतिज्ञमानृष्यं गतं पितुरकल्मषम् ॥ २९ ॥ [N
 पूर्वेषां पुण्यकीर्त्तानां राजर्षीणां महात्मनाम् ।
 २९] प्राप्नुव्यायुश्च कीर्त्तिं च धर्मं चैवोचितं कुले ॥ ३० ॥ [N
 चतुर्दशसु वर्षेषु गतेष्वरिनिमृदन ।
 ३०] रामं सीतां लक्ष्मणं च द्रक्ष्यामि^{१२} पुनरागतान्^{१३} ॥ ३१ ॥ [N
 तैलद्रोण्यां शरीरं ते पितुस्तिष्ठति पुत्रक ।
 ३१] त्वत्पतीर्धं महार्हस्य तत्संस्कर्त्तुमिहार्हसि ॥ ३२ ॥ [N

९ कै—सुमुता चोपजीवतु । म—स्वसुतंश्चोप० । ल—स
 सुतांश्चोप० । १० ध. म, ल,—०कल्पितां । ११ कै—शंसमा० । ल—
 शंसमा० । १२ कै—द्रष्टामि (मि ?) । १३ ल—०रागतम् ।

धर्मेणेमाः प्रजाः पुत्र यथा रक्षसि तव कुरु ।

३२] स्वर्गतोऽसौ यथा राजा तुप्यत्यथ तथा कुरु ॥ ३३ ॥ [N

पितुर्वियोगजं दुःखं रामत्यागकृतं तथा ।

३३] तव परित्यज्य हे पुत्र गुर्वी राजधुरं वह ॥ ३४ ॥ [N

एवमाश्वास्यमानस्य भरतस्य महात्मनः ।

३४] शोकभारसमाक्रान्तं बभूवाकुलितं मनः ॥ ३५ ॥ [६४

कौसल्याया विलपितं श्रुत्वा ऽति करुणाक्षरम् ।

३५] मोहमभ्यागमद्भूयो भरतः शोकाविह्वलः ॥ ३६ ॥ [N

लालप्यमानः पतितो धरण्यां शोकलालसः ।

३६] स तदाऽऽत्तोऽतिकरुणं विललापाकुलेन्द्रियः ॥ ३७ ॥ [N

पितरं भ्रातरं चैव स्मृत्वा तद्गतचेतसः ।

३७] तस्य लालप्यमानस्य जगामास्तं दिवाकरः ॥ ३८ ॥ [६५पू

श्वसतो दीर्घमुष्णं च दुःखार्त्तस्य मुहुर्मुहुः ।

३८] तस्य सा वर्षशतवद्द्वयपावर्त्तत शर्वरी ॥ ३९ ॥ [६५उ

रात्रिक्षयं वीक्ष्य बलप्रधाना

द्विजातयो मन्त्रिगणाश्च सर्वे ।

नृपालयं त विविशुः समेता

३९] हीनं महेन्द्रप्रतिमेन राज्ञा ॥ ४० ॥ [N

तमार्चमश्रुपरिपूरुणेत्रं

शोके निमग्नं पतितं धरण्याम् ।

उपाविशत् सा परिपत् समेता

४०] विसंज्ञकल्पं भरतं समीक्ष्य ॥ ४१ ॥ [N

इत्यार्थं रामायणे ऽयोध्याकाण्डे भरतसंतापो

नाम [त्र्यशीतितमः] सर्गः ॥ ८३ ॥

[वं—८०] = [चतुरशीतितमः सर्गः] = [दा—N]

संप्राप्तो व्यसनं कृच्छ्रं हीनवर्णस्वरेन्द्रियः^१ ।

१] मरतो न रराजार्तः शशीव समभिप्लुतः ॥ १ ॥

पितुश्च मरणादीनो राममन्त्राजनेन च ।

२] कैकेय्याश्चार्यलुब्धया धर्मत्यागेन पीडितः ॥ २ ॥

अपश्यंस्तस्य दुःखस्य सागरस्येव संक्षयम् ।

३] अक्षीणदुःखवेगश्च शर्म नैवाध्यगच्छत^३ ॥ ३ ॥

पितृपैतामहं राज्यं शाश्वतं स^३ च^३ चिन्तयन् ।

४] आसीत् परमसंमूढः प्राश्य विप्रः सुरामिव ॥ ४ ॥

५] अगाधपारे महाति पतितः शोकसागरे ।

मन्निपित्त मृतो राजा रामश्चापि विवासितः ।

६] अपापः पापतां नीतो मात्राऽहं राज्यलुब्धया ॥ ५ ॥

विहीनश्चन्द्रसूर्याभ्यां यथा मेरुर्न राजते ।

७] तथा भ्रात्रा च पित्रा च शून्यं पुरमिदं मम ॥ ६ ॥

अत्यन्तमुखसंवृद्धः पित्रा मात्रा च लालितः ।

८] कथमेवंविधं दुःखं प्राप्य जीवामि दुःसहम् ॥ ७ ॥

पित्रा^४ऽनेन^४ सहैवाग्निं सह रामेण वा वनम् ।

९] प्रविशामि विना ताभ्यां न हि जीयितुमुत्सहे ॥ ८ ॥

श्रान्तस्य यदि रामस्य पादौ तौ शुभलक्षणौ ।

१०] सवहेय वनस्थस्य तन्मे राज्यं महत्तरम् ॥ ९ ॥

शुश्रूषमाणश्चरणौ वने वन्येन जीवतः^५ ।

११] अहमार्यस्य वत्स्यामि तस्यार्थं मम जीवितम् ॥ १० ॥

१ कै, व—०स्वरिन्द्रिय । २ व—०प्यगच्छत । ल—नैवाद्य-
गच्छत । म—नैव शगच्छत । ३ म, ल—च स् । ४ म, ल—पित्रा
तेन । ५ कै, म—जीवित ।

रामेण हि विना नाऽहमिच्छाम्येव त्रिविष्टपे ।

१२] राज्यं किमु मनुष्येषु मातृदूषितमधुवम् ॥ ११ ॥

आर्ये रामस्य पूर्णेन्दुसदृशं चारुलोचनम् ।

१३] मम शोको मुखं वीक्ष्य न स्यात् पितृवियोगजः ॥ १२ ॥

इति श्रुत्वा वचो धर्म्यं^७ भरतस्य महात्मनः ।

१४] अमात्या बन्धुवर्गाश्च दुःखादश्रूण्यवर्षयन् ॥ १३ ॥

तमवाक्शिरसं दीनं धरण्यां प्रेक्ष्य राघवम् ।

१५] विलपन्तमुवाचार्त्तं वसिष्ठो भगवानृषिः^८ ॥ १४ ॥

आपत्स्वमूढो धृतिमान् यः सम्यक् प्रतिपद्यते ।

१६] कर्माण्यवश्यकार्याणि तमाहुः पण्डितं बुधाः ॥ १५ ॥

स त्वं धैर्यं समाश्रित्य विहाय हृदयज्वरम् ।

१७] कर्तुमर्हस्यसंमूढः क्रियाः पितुरनन्तराः ॥ १६ ॥

पिता ते पुत्रशोकार्त्तो रामे प्रव्रजिते^९ वनम् ।

१८] त्वय्यनागच्छति प्राणानिष्टांस्त्यक्त्वा दिवं गतः ॥ १७ ॥

अनाथ इव धर्मात्मा लोकनाथः पिता तव ।

१९] निर्हार्यः स कथं नाम^{१०} मृतस्तात त्वया विना ॥ १८ ॥

इत्यस्माभिर्विचार्यैतत्तैलद्रोण्यां न शायितः ।

२०] तस्य निर्हरणं तात पितुस्त्वं कर्तुमर्हसि ॥ १९ ॥

परिसान्त्वय मातृस्त्वं मा च शोके मनः कृधाः ।

२१] अवश्यभाविनो भावा नैव शोच्या भवद्विधैः ॥ २० ॥

त्वं बुधैरागतज्ञानः सत्त्ववद्विर्महात्मभिः ।

२२] तस्मात् संस्तभयात्मानं मा भूर्भरत बालिशः ॥ २१ ॥

6 ल—च । 7 कै—धर्म । 8 कै—भगवान् ऋषिः । 9 कै—
प्रव्रजिते । 10 ल—चान्यैर् ।

काकुत्स्थ बलवान् कालः शक्यते नातिवर्त्तितुम् ।

२३] सर्वैर्न भाव्यमस्माभिस्तन्न शोचितुमर्हसि ॥ २२ ॥

भृशं हि दुःखाभिहतां विचेतनां

मर्त्तुर्वियोगेण विवर्णतां गताम् ।

इमां पितुस्त्वं महिषीमुपोक्षितुं

२४] न राजपुत्रार्हासि नाथतां गतः ॥ २३ ॥

अपश्चिमस्ते पिनुरव्ययो^{११} विधिः

प्रदर्शितस्तत्र हि ते द्विजोत्तमैः ।

तमाशु संपादय धैर्यमास्थितो

२५] विपादमस्मिन्न नृपात्मजार्हासि ॥ २४ ॥

इत्यार्षे रामायणे ज्योध्याकाण्डे वसिष्ठवाक्यं

नाम मर्गः ॥ [८४] ॥

[वं—८१]=[पञ्चाङ्गितितमः सर्गः]=[दा—N]

एवमुक्तो वसिष्ठेन भरतो धीमतां वरः ।

१] वसिष्ठमभिवाद्येदमुवाचार्त्ततरो वचः ॥ १ ॥

त्वय्यप्येवं ब्रुवति मे दीर्यतीय मनो^१ मुने^१ ।

२] लोकनाथे स्थिते रामे नाथत्वं मयि कीदृशम् ॥ २ ॥

किं तु तत्र नयध्वं मां यत्र राजा पिता मम ।

३] करिष्ये तत्र सस्कारं भवद्भिः सहितो वशः ॥ ३ ॥

नेदानीं हृदयं चेन्मे स्फुटिष्यति सहस्रधा^२ ।

४] दर्शयन्तु भवन्तस्त पितरं क्षीणजीवितम् ॥ ४ ॥

ततो वसिष्ठममुखाः संवत्ते नृपमन्त्रिणः ।

५] आनयन् भरतं तत्र यत्र राज्ञः कलेवरम् ॥ ५ ॥

अर्द्धसप्तशतास्ताश्च स्त्रियो राजपरिग्रहः^३ ।

६] भरत पुरतः कृत्वा ययुर्दृष्टुं मृतं नृपम् ॥ ६ ॥

तत प्रविश्य भरतः सह राजपरिग्रहैः ।

७] ददर्श पितरं मृतं राममातुर्निवेशने ॥ ७ ॥

स तं गतासुं पितरं दृष्ट्वा^४ वोपहतत्वपम्^४ ।

८] हा राजन्निति सक्रुदय पयात धरणीतले^५ ॥ ८ ॥

विसंज्ञकल्पः संज्ञां तु पुनर्लब्ध्वा सुदुर्मनाः ।

९] जीवन्तमिव सप्रेक्ष्य पितरं सोऽभ्यभाषत ॥ ९ ॥

राजन्नुत्तिष्ठ किं शेषे^६ भरतोऽहमुपागतः ।

१०] त्वदाज्ञया मदासत्त्वं शत्रुघ्नसहितस्त्वरन् ॥ १० ॥

मम मातामहस्तात कुशल त्वाऽनुपृच्छति ।

१ व—मनोरमे । २ म—सहस्रश । ३ व—०ग्रहा । म—
०ग्रहैः । ४ कै—दृष्ट्वेवपहेतद्विपम् । म—दृष्ट्वेवपहेतोत्वपम् । ल—
दृष्ट्वेवपहेतत्वपम् । ५ कै—पृथिवी० । ६ ल—शेष्ये ।

- ११] प्रणम्य शिरसा तद्वद् युधाजिन्मातुलो मम ॥ ११ ॥
 यतः कुतश्चित् सप्राप्त मङ्कुमारोप्य मां नृप ।
- १२] आनत^७ मूर्ध्न्युपाघ्राय प्रत्यानन्दसि^८ भूमिप ॥ १२ ॥
 स इदानीमनुप्राप्त^९ किमर्थं नाभिभापसे ।
- १३] न ते ऽपकृतवान् किञ्चिदह तात प्रसीद मे ॥ १३ ॥
 धन्यः स रामो येनाज्ञा कृता ते वसुधाऽधिप ।
- १४] लक्ष्मणश्चापि धन्योऽसौ यो राममनुनिर्गतः ॥ १४ ॥
 अधन्योऽहमपुण्यश्च यन्मां प्रति स^{१०} पुण्यवान्^{१०} ।
- १५] दुःखेन महताऽऽविष्टः प्राणान् सन्त्यक्तवानसि ॥ १५ ॥
 नूनं तौ न विजानीतो मृत्यु^{११} ते रामलक्ष्मणौ ।
- १६] यथा हि वनमुत्सृज्य नागताप्रिह दुःखितौ ॥ १६ ॥
 मातृदोषाददयितो यदि तावदह नृप ।
- १७] शत्रुघ्नमपि तावत्त्वमभिभापितुमर्हसि ॥ १७ ॥
 निर्वास्य चीरयसन राम लक्ष्मणमेव च ।
- १८] स्त्रीहेतोः किमसि^१ प्राणास्त्यक्त्वा राजन दिव गत^१ ॥ १८ ॥
 एव विलपतस्तस्य भरतम्य महात्मन^१ ।
- १९] श्रुत्वा नृपतिपत्न्यस्ता रुन्दुः भृशदुःखिता ॥ १९ ॥
 विलपन्त तथा त तु भरत शोककर्षितम् ।
- २०] वसिष्ठो जपतां श्रेष्ठो जागालिश्रेढमृचतु ॥ २० ॥
 मा युचो भग्न प्राज्ञ नैव शान्त्यो महीपति^१ ।
- २१] आनन्तर्यमसमृद्ध^{१२} कर्तुमस्य त्वमर्हसि ॥ २१ ॥

७ कै—आनतौ । ८ ल—प्रत्यानन्दस्य । ९ व, म—तदानीम० ।
 १० व, ल—सु० । ११ के—०तौ । १२ व, ल—०मपि । १३ व, ल—
 अनत० ।

शौचन्तो ननु सस्नेहा वान्धवाः सुहृदस्तथा ।

२२] पातयन्ति गतं स्वर्गमस्रुपातेन^{१४}० राघव^{१४}० ॥ २२ ॥

श्रूयते हि नरव्याघ्र पुरा परमधार्मिकः ।०

२३] भूरिद्युम्नो गतः० स्वर्गं राजा पुण्येन कर्मणा ॥ २३ ॥

स पुनर्वन्धुवर्गस्य^{१५} शौकवाप्सेण राघव ।

२४] कृत्स्ने वै क्षपिते पुण्ये पुनः स्वर्गान्निपातितः ॥ २४ ॥

तस्माच्छोकरयं^{१६} पुत्र^{१६} पितृस्नेहसमुत्थितम् ।

२५] त्यज त्वं नार्हसि स्वर्गात् पुनश्च्याव्रियितुं नृपम् ॥ २५ ॥

अतिशोकाग्निना दग्धः पिता ते स्वर्गतश्च्युतः ।

२६] शोपत्त्वां मन्युना ऽऽविष्टस्तस्मादुत्तिष्ठ मा शुचः ॥ २६ ॥*

नायं शौच्यस्तव पिता सत्कर्मार्जितलोकभाक् ।

२७] मृतो नायं मुता यस्य यूयं रामपुरोगमाः ॥ २७ ॥

धर्मात्मानो महात्मानो लोके प्रथितपौरुषाः ।

२८] देवौजसः सत्त्ववन्तो महेन्द्रवरुणोपमाः ॥ २८ ॥

एवमुक्तो^{१७} वसिष्ठेन भरतो धर्मकोविदः ।

२९] त्यक्त्वा शोकमिदं वाक्यमुवाच वदतां वरः ॥ २९ ॥

ब्रुवन्ति यद् भवन्तो^{१८} मां तथा तदिति मे मतिः ।

३०] बलवांस्तु पितृस्नेहो भृशं मोहयतीव माम्^{१९} ॥ ३० ॥

संस्तंभितो भवद्भिस्तु गुरुभिर्द्विषितवादिभिः ।

३१] त्यक्त्वा शोकं करिष्यामि पितुरस्यौर्ध्वदेहिकम् ॥ ३१ ॥

14 ल—स्वर्गं राजानं पुरायकर्मणा । ०म । 15 व—यन्धुर्वन्ध० ।

16 व, म, ल—च्छोरु राज पुत्र । 17 व—एवमुक्ते । 18 व—ब्रुवतो ।

19 कै मे । * २२, २३, २४, २६, श्लोका. पारस्करश्रुत्यसूत्र—हरिहर

भाष्ये ३ । १० ॥ क्रिञ्चितपाठभेदेनोदाहृता ।

आनयन्तु यथोद्दिष्टं भराद्विनृपमन्त्रिणः ।

३२] सत्काराय^{२०} पितुर्मेऽद्य सर्वसंभारविलसम् ॥ ३२ ॥

इति नृपातिमृतस्य जल्पनः

सह नृपमन्त्रिपुरोहितैश्च तैः ।

भाधिवमित्र विद्वद्यामिनी

३३] शनयामेव बभूव शर्वरी ॥ ३३ ॥

इत्यार्षे रामायणे ज्योध्याकाण्डे भरतविलापो

नाम सर्गः ॥ [८५] ॥

[वं—८२]=[पडशीतितमः सर्गः]=[दा—८१]

तस्यां रात्र्यां व्यतीतायां भरत मृतमागताः ।

१] प्रसुप्त बोधयिष्यन्तस्तुष्टुर्मधुरस्वनाः ॥ १ ॥ [१

सहसा चाभ्यहन्यन्तः तथा दुन्दुभयः पृथक् ।

२] प्रावाचन्त सुधोपाश्च शङ्खत्रेणुगणास्तथा ॥ २ ॥ [२

स तूर्यघोषः सुमहान् पूरयन्निव तां पुरीम् ।

३] बोधयामास भरत शोकव्याकुलचेतसम् ॥ ३ ॥ [३

प्रतिपिभ्याथ" भरतस्त प्रबोधकनिःस्वनम्^१ ।

४] नाह राजेति तानुक्त्वा ततः शत्रुघ्नमब्रवीत् ॥ ४ ॥ [४

पश्य शत्रुघ्न कैकेय्या कुर्वन्त्या लोकगर्हितम् ।

५] अयशः पातित मूर्ध्नि ममासह्यमनागस^२ ॥ ५ ॥ [५

कुलधर्मागता राज्ञः पितुर्मे तद्विनाकृता ।

६] परिभ्रमति राजश्रीरकर्णा नौरिवाम्भसि ॥ ६ ॥ [६

इत्येव भरत त तु विलपन्त पुन पुन ।

७] दृष्ट्वा प्ररुदुः सर्वाः दुःखार्ता^३ नृपयोपित^४ ॥ ७ ॥ [७

भरतेन ततः सार्धं प्रसिष्टो वेदवित्तमः ।

८] प्रविवेश सभां राज्ञस्तदा मन्त्रयितु नृपम् ॥ ८ ॥ [८

शातकौम्भैः स्तम्भशतै र्मणिचित्रैर्विभृषिताम् ।

९] बृहस्पतिरिवेन्द्रेण सुधर्मा सहित सभाम् ॥ ९ ॥ [९

तत्रासने^५ रवचित्ते स्प र्यास्तरणसस्तृते^६ ।

१ कै—चाभिहन्यत । २ कै—प्रतिपिभ्या च । ३ म— ०निस्व
यम् । ४ कै—दु खेन । ' खेन " इति पश्चात् पूरितम् । ५ कै— तत्रा-
सर्वे । ६ ल—स्पर्व्यास्तरणसभृते ।

म— " व्य " " ।

कै—स्पर्व्यास्तरणसस्तृते ।

१०] उपविश्य ततः सर्वानानयामास मन्त्रिणः ॥ १० ॥ [N
सुमन्त्रं जैमिनिं^१ चैव वामदेवं जयं तथा ।

११] मन्त्रिणो नैगमांश्चान्यान् प्रधानांश्च तथा जनान् ॥ ११ ॥ [N
जनौघः सुमहांस्तत्र समुपायात् समन्ततः ।

१२] सभायां भरतं द्रष्टुं शशुघ्रसहितं तदा ॥ १२ ॥ [N
ततो हलहलाशब्दः सुमहान् समजायत ।

१३] कौतूहलाज्जनौघस्य सभां प्रत्यभिधावतः ॥ १३ ॥ [१४
तत्राद्य भरतं दृष्ट्वा सभायां सपुरोहितम् ।

१४] प्रत्यनन्दन्^२ प्रकृतयो यथा दशरथं तथा ॥ १४ ॥ [१५
नृपजनगुरुमन्त्रिभिस्तथा

मणिरुचिरासनरत्नभूषिता ।

दशरथसुतशोभिता सभा

१५] सदशरथेव रराज सा तदा ॥ १५ ॥ [१६

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे भरतस्तभाप्रवेशो
नाम सर्गः ॥ [८६] ॥

[वं—८३]=[सप्तशतितमः सर्गः]=[दा—N]

समावृत्ते जने तस्मिन्नुदिते च^१ दिवाकरे ।

१] वसिष्ठस्तमुवाचेद् भरत तांश्च मन्त्रिणः ॥ १ ॥

एताः प्रकृतयः सर्वा नागराश्च प्रधानतः ।

२] राजसंस्कारिक द्रव्यमादाय समुपस्थिताः ॥ २ ॥

उत्तिष्ठ भरत क्षिप्र मा भूत् कालाख्यः प्रभो ।

३] पितुः कुरु यथान्याय संस्कार भूरिदक्षिणम् ॥ ३ ॥

हीतारस्ते पितुरिमे वेदवेदाङ्गपारगाः ।

४] अग्निहोत्रमुपादाय^२ जात्रालिप्रमुखाः स्थिताः ॥ ४ ॥

गन्धकाष्ठानि^३ चेमानि संस्कारार्थं पितुस्तव ।

५] उपादायागताः प्रेप्याः प्रतीक्षन्त^४ उपासते ॥ ५ ॥

सर्पिस्तैल च गन्धाश्च सज्जिताश्चापि ते पितुः ।

६] अग्नेः समिन्धनार्थाय गन्धमाल्य च पुष्कलम् ॥ ६ ॥

गन्धतैलानि गन्धाश्च धूपाश्चागुरुसम्भवाः ।

७] सज्जिता शिविका चैव पितुस्ते रत्नभृपिता ॥ ७ ॥

अथैव शिविकायां त्व सवेशय नराधिपम् ।

८] शिविकागतमुत्क्षिप्य^५ नयैव वहिराशु वै ॥ ८ ॥

एवमुक्तो वसिष्ठेन भरतः प्रत्युवाच तम् ।

९] वसिष्ठ वदतां श्रेष्ठ पितुर्वहुमत गुरुम् ॥ ९ ॥

यथाऽऽज्ञापयासि प्राज्ञ करवाणि तथाऽऽदृतः^६ ।

१०] दैवत त्वसि मान्यश्च गुरोश्चापि गुरुर्मम ॥ १० ॥ ०

१ वै—य । २ वै—०होत्र समादाय । ३ वै, य, म—काष्ठानि ।
ल—काष्ठानि । ४ वै—प्रतीक्षन्तु । ५ वै—०मुत्क्षिप्य । ६ य—
तथादृत । ०ल ।

वाक्येनानेन तस्याथ भरतस्य महात्मनः ।

- ११] आजगाम परं हर्षं वसिष्ठो द्विजसत्तमः ॥ ११ ॥
 शोकवेगमसंश्रितं धारयन् भरतस्ततः ।
- १२] कलेवरं भूमिपतेः समस्तं तदुद्धृतम् ॥ १२ ॥
 नाशक्रोच्चैव शोकन्य वेगं धारयितुं तदा ।
- १३] महाऽर्णवस्यापततस्तोयवेगमिवोद्धृतम् ॥ १३ ॥
 तमार्त्तिमान् नीयमानं ततः स विलपन् बहु ।
- १४] शत्रुघ्नसहितः श्रीमान्^८ शिविकामानयन्तृपम्^९ ॥ १४ ॥
 शिविकास्थं महाराजमञ्जुकृत्य विधानतः ।
- १५] वाससा तु महाऽर्हण समाच्छाद्य^{१०} मुसंतृतम् ॥ १५ ॥
 अवकीर्य च माल्येन दिव्यधूपेन धूपितम् ।
- १६] मधुपुष्पैः मुराभिभिः परिकीर्य च सर्वशः ॥ १६ ॥
 उवाहोत्क्षिप्य शिविकां शत्रुघ्नसहितस्तदा ।
- १७] हा राजन् कासि गन्तेति रुदन्नार्त्तः पुनः पुनः ॥ १७ ॥
 तस्मिंस्तदा प्ररुदिते वसिष्ठकरदेहिताः ।
- १८] ययुः शीघ्रतरं प्रेष्याः शिविकां परिगृह्य ताम् ॥ १८ ॥
 पुरतः पाण्डुरं^{११} छत्रं बालव्यजनमेव^{१२} च ।
- १९] आनाय्य नृपतेः प्रेष्या रुद्रुः शोकविक्रवाः ॥ १९ ॥
 दीप्यमानं हुतं पूर्वं जाबालिमसुखैर्द्विजैः ।
- २०] अग्निहोत्रं नरपतेः प्रतस्थे तस्य चाग्रतः ॥ २० ॥
 शकटानि च पूर्णानि रत्नानां कनकस्य च ।
- २१] दधुर्धनं विसर्गार्थं दीनानाथातुरेषु च ॥ २१ ॥
 सद्यः प्रेक्ष्यजनस्तत्र रत्नानि विविधानि च ॥ १०

7 कै—तु । 8 कै, ब, म, ल—श्रीमां । 9 ब, म, ल—०का यां
 नय० । 10 कै—समासाद्य । 11 ल—पांडुरं । 12 ल—बाल० । ०म ।

- २२] और्ध्वदैहिकडानार्थं० नृपतेर्विसृजन्ति वै ॥ २२ ॥
अग्रतः प्रययुश्चैन सत्कर्मस्तुतिभिर्नृपम् ।
- २३] अभिष्टुवन्तो मधुर सूतमागधवन्दिनः ॥ २३ ॥
तस्मिन्निर्हरणे^१ - राज्ञः प्रवृत्ते सुमहांस्तदा ।
- २४] आर्तनादोऽभवत् स्त्रीणां यथाऽस्य मरणे तथा ॥ २४ ॥
ततः पौरजनः सर्वः सस्त्रीवृद्धकुमारकः ।
- २५] अनुराजशरीरं तन्निर्ययौ नगराद्बहिः ॥ २५ ॥
तथा भरतशत्रुघ्नौ शिपिकां परिशृञ्च ताम् ।
- २६] दुःखशोकसमाविष्टौ रदन्तावनुजग्मतुः ॥ २६ ॥
कौसल्या च सुमित्रा च कैकेयी च तथापराः ।
- २७] अर्धसप्तशता नार्यः प्रकीर्णासितमूर्धजाः^{१४} ॥ २७ ॥
क्रौञ्चन्त्यश्च रदन्त्यश्च कुरय इव सर्वशः ।
- २८] अनुजग्मुः शरीर तद्राज्ञो^१ राजीवलोचनाः ॥ २८ ॥
अथास्य सम्युत्तीरे विपिक्ते मृदुशाद्वले ।
- २९] चन्दनागुरुकाष्ठैश्च भ्रम्याश्चक्रुश्चितां तदा ॥ २९ ॥
कालीयकृमृणालैश्च बालकोशरिपद्मकैः ।
- ३०] तां चितां विधिप्रचक्षुर्विपुलाभय ते जनाः ॥ ३० ॥
तस्यां चितायां नृपतेः शरीरं तन्मुहृज्जनाः ।
- ३१] आनाययुः^{१५} समुत्क्षिप्य शोकव्याकुलचेतनाः ॥ ३१ ॥
तां चितां पृथिवीपालमारोप्य क्षौमत्राससम् ।
- ३२] यज्ञपात्रत्रय चक्षुस्ततस्तस्योपरि द्विजाः ॥ ३२ ॥
यथाम्थानेषु विन्यस्य त्रीनग्निं विधिप्रदधुतान्^{१६} ।

० म । १) न कं—निहरणे । ल—निहरणे । १४ य—कीर्णा-
वरमूर्धजा । १५ म—ते । १६ कं—अनाययुः । म, ल—आनाययत् ।
य—आनाययन् । १७ म—रजताम् । कं—०दूधृतान् ।

- ३३] मन्त्रानन्तर्मनोभिश्च^{१८} जपन्तो ऽभ्युदितस्रुचः ॥ ३३ ॥
 होतारो यज्ञपात्राणि पवित्रैर्मृजुस्तदा ।
- ३४] प्रमृज्यानन्तरं तस्यां चितायां परिचिक्षिपुः ॥ ३४ ॥
 सुकृपात्राणि चपालानि मुमुलोलूखलं तथा ।
- ३५] अरणीसाहितं चैव पवित्राणि च सर्वशः ॥ ३५ ॥
 विशस्य च पशुं मेध्यं मन्त्रसंस्कारसंस्कृतम् ।
- ३६] अन्यास्तरिणकं^{१९} राज्ञः समन्तात् परिचिक्षिपुः ॥ ३६ ॥
 प्राग्लाल्वलविकृष्टां तु चिताभूमिं समन्ततः ।
- ३७] कृत्वा विधानतो धेनुं सप्तसामभ्यवासृजन् ॥ ३७ ॥
 सर्पिस्तैलयसाभिश्च समन्तात् परिपिन्य ताम् ।
- ३८] चितां प्रज्वालयाञ्चके भरतः सह यन्धुभिः ॥ ३८ ॥
 प्रज्वाल^{२०} ततो^{२१} वह्निः सहस्रय समेधिनः^{२२} ।
- ३९] महाऽर्चिष्यान् दहन् राज्ञश्चिताखण्डं कलेवरम् ॥ ३९ ॥
 विधिवत् संस्कृतो राजा ब्राह्मणं वैदपारगैः ।
- ४०] जगाम परमं स्थानं यज्वनां पुण्यकर्मणाम् ॥ ४० ॥
 ततः प्रज्वाल महान् समिद्धो हिरण्यरेताः प्रदहन् सधूमः ।
- ४१] दृष्ट्वा च तं प्रज्वलितं चिताग्निमार्तस्वरं चक्षुरतीव नार्यः ॥ ४१ ॥
 पीराश्च सर्वे सहसा विलेपुस्तथैव राज्ञः मुद्दहः मुर्तो च ।
- ४२] हा नाथ हा भूमिपते किमर्थं यासित्ययस्मानवशान् विहाय ॥ ४२ ॥
 इत्यार्षे रामायणे ज्योध्याकाण्डे द्वापरत्र-
 सत्कारः^{२३} सर्गः- ॥ [८७] ॥

18 कै—०नान्तर्मनोभिश्च । 19 घ, ए—०यां । 20 कै—प्रा-
 च्यल । ल—प्रज्ज्वल । म—प्रज्ज्वाल । 21 कै—तुतो । 22 कै—सम-
 चितः । 23 ल—संक्रो नाज० । म—संकर रुगां ।

[वं-८४]=[अष्टाशीतितमः सर्गः]=[दा-७७]

अवकीर्य च माल्येन तां चितामपसव्यतः ।

१] सगणो भरतश्चक्रे विपपीत इव स्वलन् ॥ १ ॥ [N

विह्वलन्निव दुःखेन विभ्रमन्निव चातुरः ।

२] ननाम स पितुः पादौ निपत्य धरणीतले ॥ २ ॥ [N

तमार्तरूप पतित विह्वलन्तमचेतसम्^१ ।

३] उत्थापयामास बलात् परिगृह्य मुहृज्जन ॥ ३ ॥ [N

अवेक्ष्य स पितुर्दीप्त सर्गात्रेषु पावकम् ।

४] प्रगृह्य चाट्ट चुकोश दुःखेनावससाद् च ॥ ४ ॥ [१२

मन्थरावाक्यतोयोध वरदानमहाहृदम् ।

N] कैकेयीनिश्चयग्राहमगात्र^२ शोकसागम् ॥ ५ ॥ [१३

वाप्सोपहतकण्ठश्च सवाप्समाभिनिःश्वसन् ।

५] शोकदुःखपरीतात्मा मदक्षीव इव श्वसन् ॥ ६ ॥ [५

पृ३] विललापातिकरुण भरतः परिविह्वल^३ । [N

पृ७] यस्या गतिरनाथायाः पुत्रः प्रत्राजितो वनम् ॥ ७ ॥ [७पृ

उ७] तामिमा तात कौसल्यां किमर्थं नाभिभाषसे । [७उ

पृ८] एवमाद्यतिदुःस्वार्तो विलपन्नथ रात्रवः ॥ ८ ॥ [N

उ८] भूर्मा पपात शक्रस्य यन्त्रच्युत^४ इव श्वजः । [१३

पृ^{१०}] परिपेतुः पतन्त त पुण्याः परिचारकाः ॥ ९ ॥ [१०पृ

उ^{१०}] पुण्यसंयं च्युत स्वर्गाद्यियातिमृपयो यथा । [१०उ

पृ^{१०}] शत्रुप्रश्नापि भक्त पतितं समोक्ष्य^५ तम् ॥ १० ॥ [११पृ

उ^{१०}] विसङ्गवल्पो न्यपनच्छोचन् पितरमातुरः । [११उ

१ के०—मचेतनम् । २ त—कैकेयी० । ३ ल—यत० ।

म—यत० । ४ क, व सप्तमीत्य ।

- पृ११] उन्मत्त इव विप्रेक्ष्य त्रिललाप निपत्य सः ॥ ११ ॥ [१२५
 उ११] गुणसङ्कीर्तनं कुर्वन् पितुर्वै पितृवत्सलः । [१२७
 N] इदमाह महातेजाः शत्रुघ्नः शत्रुमूढनः ॥ १२ ॥ [A
 मृकुमारं च बालं च सततं लालितं लया ।
 १२] क तात भरतं हित्वा त्रिलपन्तं गमिष्यसि ॥ १३ ॥ [१४
 यतः पुरा शिशूनस्पान्भोजनाच्छादनादिभिः ।
 १३] संवर्धयासि नः सर्वान् पुनः कोऽद्य करिष्यति ॥ १४ ॥ [१५
 एवं दुःखाभितप्तानां पृथिवी नो विदीर्यते ।
 १४] पित्रा गुणाविशिष्टेन लालितानां विधुन्वताम् ॥ १५ ॥ [१६
 स्वयि राजन गते स्वर्गे रामे चारण्यमाश्रिते ।
 १५] न जीवितुं व्यवस्थामि प्रवेक्ष्यामि हुताशनम् ॥ १६ ॥ [१७
 पित्रा हीनां तथा भ्रात्रा शून्यामिव महीमिमाम् ।
 १६] अयोध्यां न प्रवेक्ष्यामि प्रवेक्ष्यामि हुताशनम् ॥ १७ ॥ [१८
 रावमाट्टे तयोः श्रुत्वा भ्रात्रोर्विलपितं तदा ।
 १७] सर्वः परिजनो भूयो भृशमार्तस्वरो रुदन् ॥ १८ ॥ [१९
 ततः शोकपरिश्रान्तौ शत्रुघ्नभरताबुभौ ।
 १८] विलपित्वाऽतिकर्षणं ध्यानमेवान्वपद्यताम् ॥ १९ ॥ [२०
 तौ तु दृष्ट्वा ध्यानगतौ पितुरिष्टः पुरोहितः ।
 १९] वसिष्ठो भरतं वास्यमुत्थाप्येतदुवाच ह ॥ २० ॥ [२१
 द्वन्द्वदुःखैर्जगत्सर्वमभितप्तमिदं यथा ।
 २०] अवश्यभाविनं भावं तद्य शोचितुमर्हसि ॥ २१ ॥ [N

५ ल—०गुणविस्तरेण । ६ प—पित्रा दीनां । म—पितृहीनं
 क—पित्रा । हीनं ७ प—०गतः । ८ म—अवश्यं । ९ ल—अधिपत्यां ।

*जातस्य नियतो मृत्युर्ध्रुवं जन्म मृतस्य च ।

२१] *तस्मादपरिहायेऽर्थे न त्वं शोचितुमर्हसि ॥ २२ ॥ Q [N

मुमन्त्रश्चापि शत्रुघ्न पतित ' धरणातलात् ।

२२] उत्थापयदविश्रान्तः सर्वभूतहितावहम् ॥ २३ ॥ [२४

२३] उत्थितौ तौ नरव्याघ्रावस्रुक्तिभौ न रेजतुः । [२५पू

असूणि परिमार्जन्तौ वाष्पह्निन्नेक्षणौ तु तौ ।

२४] अमात्यास्त्वरयामामुः पितुः^{१०}कर्तुं^{१०}जलक्रियाम् ॥ २५ ॥ A [२६

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे भरतशशुधन-

विलापो नाम सर्गः ॥ [८८] ॥

* प, म, स—नास्ति । Q गोता II. 27. 9 प—पातित । 10 ब,
स, स—परिकर्तुं । A प—अपगाह तत पुष्पां मृत्यूं त सु[६] अत ।

[वं-८५]=[एकोनत्रितितमः सर्गः]=[दा—N]

एवं विधाय सत्कारं भरतः पृथिवीपतेः ।

१] जलक्रियां ततः सर्वां कर्तुं समुपचक्रमे ॥ १ ॥

पुण्यां पुण्यजलां प्राप्य महर्षिगणसेविताम् ।

२] उदकं स पितुर्दातुं सरयूं सरितं ययौ ॥ २ ॥

अवगाह्य ततः पुण्यां सरयूं समुद्बुज्जनः ।

३] ददौ पितरमुद्दिश्य भरतः सजलाञ्जलिम् ॥ ३ ॥

ददतः सलिलं तस्य भरतस्य महात्मनः ।

४] सान्निभ्यं सरितः पुण्याः सरन्वां विदधुस्तदा ॥ ४ ॥

विपाशा च शतद्रुश्च गङ्गा च यमुना तथा ।

५] सरस्वती चन्द्रभागा तथा स्याः सरितां वराः ॥ ५ ॥

तासां नदीनां पुण्यानां सलिलेन दिवंगतम् ।

६] पितरं तर्पयामास भरतः समुद्बुज्जनः ॥ ६ ॥

स च पौरजनः सर्वः सामात्यः सपुरोहितः ।

७] तर्पयामास राजानं सलिलेन विधानतः ॥ ७ ॥

ततः कृन्वोदकं ते तु विधानेन नृपस्य च ।

८] पृथगास्थापयामासुः भरतः शोकलालसम् ॥ ८ ॥

आड्वास्यमानस्तैश्चापि प्रययौ भरतस्ततः ।

९] तैरेव सहितः सर्वै रयोध्यां नगरीं तदा ॥ ९ ॥

दूरदेव च तां दृष्ट्वा दीनातुरजनादनाम् ।

१०] पुरीमयोध्यां भरतः पौरान् वचनमब्रवीत् ॥ १० ॥

गते स्वर्गे नरपते रामे च वनमाश्रिते ।

११] भातीयं मे निरानन्दा इमशानसदृशी पुरी ॥ ११ ॥

प्रमदा हतवीरेव विचन्द्रेव च शर्परी ।

- १२] विहीना नरदेवेन पुरीयं न विराजते ॥ १२ ॥
नेच्छाम्येतामहं द्रष्टुं प्रवेष्टुं वा हतत्वियम् ।
- १३] इहैव प्रायमासिष्ये पितुर्दर्शनकाम्यया ॥ १३ ॥
किं मे पित्रा विहीनस्य जीवितेन सुखेन वा ।
- १४] इच्छामि जीवितुं नाहमनुयास्यामि भूपतिम्^१ ॥ १४ ॥
अथ राज्ञो महामात्रो^२ धर्मपाल इति श्रुतः ।
- १५] परिदेवयमानं तं भरतं वाक्यमब्रवीत् ॥ १५ ॥
शोको विमुच्यतामप यः प्राप्तो भरताशु वै ।
- १६] कुलस्यं त्वस्य ते नेदमनुरूपं नृपात्मज ॥ १६ ॥
शोकं भरत नात्यर्थं त्वमेवं^३ कर्तुमर्हसि ।
- १७] सर्वस्वजननाशेऽपि नैव शोचन्ति पण्डिताः ॥ १७ ॥
शोचतो रुदतश्चापि यदि नाम मृतः पुनः ।
- १८] सञ्जीवेत्स्वजनः कश्चित्तदा शोचेत् स सर्वशः ॥ १८ ॥
यदा त्ववश्यं मर्तव्यं^४ सर्वैरस्माभिरागतैः ।
- १९] मृत्युकाले तदा शोके नास्ति सामर्थ्यमण्वपि ॥ १९ ॥
एहाशु त्वं सहास्माभिरयोध्यां प्रविश प्रभो ।
- २०] स्वजनं शोकसन्तप्तं समाश्वासय मा शुचः ॥ २० ॥
ततोऽनन्तरमेव त्वं स्वर्गतस्य महीपतेः ।
- २१] श्राद्धकर्म प्रयत्नेन विधिवत् कर्तुमर्हसि ॥ २१ ॥
त्वं ह्यद्य नाथः सर्वेषामस्माकं स्वजनस्य च ।
- २२] शोचितुं नार्हसि त्वं नः प्रजानां नाथतां गतः ॥ २२ ॥
एवमुक्तः स विप्रेण धर्मपालेन धार्मिकः ।

१ घ, म, ल—भूमिपम् । २ ल—महासाधो । ३ ल—याः ।

कै—यः । ४ कै, ल—त्वमेव । ५ कै, घ, म, ल—मर्तव्यं ।

- २३] प्रविवेश निरानन्तामयोध्यां सपदानुगः ॥ २३ ॥
 विशून्यचत्वरपथां विध्वस्तविपणापणाम् ।
- २४] शोकातुरजनाकीर्णां दीनस्वजननादिताम् ॥ २४ ॥
 ततो विवेश स्वजनेन संवृतः
 पितुर्निवेशं भरतो ऽतिदुःखितः ।
 विहीनमिन्द्रप्रतिमेन राज्ञा
- २५] गतोत्सवाकारमिवातिनिष्प्रभम् ॥ २५ ॥
 प्रविश्य तस्मिंश्च^० पितुर्निवेशने
 वृणानि सन्तीर्य दशाहमावुरः ।
 ततः सुसुष्याप तमेव चिन्तयन्
- २६] पितुर्विनाशं भरत प्रतापमान् ॥ २६ ॥
 इत्यापं रामायणे ऽयोध्याकाण्डे उदकप्रदानं
 नाम सर्गः ॥ [८९] ॥

[वं—८६]=[नवतितमः सर्गः]=[दा—७६]

समतीते दशाहे तु कृतशौचो^१ नृपात्मजः^२ ।

१] चक्रे द्वादशिकं श्राद्धं त्रयोदशिकमेव च ॥ १ ॥ [७७।१

ददौ चोद्दिश्य पितरं ब्राह्मणेभ्यो धनं तदा ।

२] महार्हाणि च वस्त्राणि^३ गाश्च वाहनमेव च ॥ २ ॥ [७७।२

यानानि दासीदासं च वेदमानि वसुमन्ति च ।

३] भूषणानि च मुख्यानि राजस्तस्यौर्ध्वदैहिकम् ॥३॥ [७७।३

त्रयोदशाहेऽतीते तु कृते चानन्तरे विधौ ।

४] समेता मन्त्रिणः सर्वे भरतं वाक्यमब्रुवन् ॥ ४ ॥ [१

गतः स नृपातिः स्वर्गं भर्ताऽऽसीद्यो गुरुश्च नः ।

५] प्रव्राज्य दयितं पुत्रं रामं लक्ष्मणमेव च ॥ ५ ॥ [२

त्वमद्य भव नो राजा धर्मतो नृवरात्मज ।

६] प्राप्नोति नापदं यावदिदं^३ राष्ट्रमराजकम्^४ ॥ ६ ॥ [३

आभिषेचनिकं द्रव्यमिदमादाय सर्वशः ।

७] राजानमभिषेक्तुं त्वामिच्छन्ति नृपमन्त्रिणः ॥ ७ ॥ [४

इदं राज्यं गृह्णाण त्वमन्ववायक्रमगतम् ।

८] अभिषेचय चात्मानं पाहि चास्मान्नराधिप ॥ ८ ॥ [५

इत्युक्तो भरतो द्रव्यमभिषेचनिकं तदा ।

९] मङ्गलार्थं समालभ्य राजस्तान्मन्त्रिणोऽब्रवीत् ॥ ९ ॥ [६

ज्येष्ठो भ्राता सदा राज्ये मामतोनुचितं* कुले ।

१०] भवन्तो वक्तुमर्हन्ति नैव मां कुशला इव ॥ १० ॥ [७

भ्राता मे गुणयान् ज्येष्ठो राजा भवितुमर्हति । [८पू

१ के—कृतशौचनृपात्मज । व—वृत्तशौचे० । २ व, म, ल—यासांसि । ३ कै—यावदिष्टं । ४ कै—०मकंष्टकम् । * कै—सामननुचित । म—मामुतोनुचितं । व—ममातानुचितं । ५ व, म—नैव ।

- ११] राजधर्मविदां श्रेष्ठो रामो राजीवलोचनः ॥ ११ ॥ [N
भृत्यो नियोज्यस्तस्याह रामो राजा भविष्यति । [N
- १२] वने त्वह निवत्स्यामि^६ नववर्षाणि पञ्च च ॥ १२ ॥ [८उ
युज्यतामाशु महती सेनाऽथ चतुरङ्गिणी^७ ।
- १३] आनयिष्याम्यह ज्येष्ठ भ्रातर राघव वनात् ॥ १३ ॥ [९
आभिषेचनिक द्रव्य सर्वमेतदशेषतः ।
- १४] पुरस्कृत्य गमिष्यामि भवद्भि सहितो वनम् ॥ १४ ॥ [१०
तत्रैव च नरव्याघ्रमभिषिन्य पुरस्कृतम् ।
- १५] आनयिष्याम्यह राम इव्यग्राहमिग्राहरे ॥ १५ ॥ [११
न सकामां करिष्यामि जननीं राज्यद्विङ्गिणीम् ।
- १६] वने वत्स्याम्यह दुर्गे रामो राजा भविष्यति ॥ १६ ॥ [१२
क्रियतां शिल्पिभिः पन्थाः समे वा विषमेऽध्वनि ।
- १७] दैशिकाश्च पथिज्ञाश्च कुशला यान्तु मेऽग्रत ॥ १७ ॥ [१३
इत्येव भरत धर्म्यं भाषमाण वचस्तदा ।
- १८] प्रत्यूचुर्दृष्टरोमाण. सर्वं ते नृपमन्त्रिण. ॥ १८ ॥ [१४
एव ते भाषमाणस्य पद्माश्रीरुपतिष्ठतु ।
- १९] यस्त्व भ्रात्रे श्रिय दातु ज्येष्ठोयेञ्जसि राघव ॥ १९ ॥ [१५
अनुत्तम ते वचन नृपात्मज प्रजल्पत* सस्तवन निशम्य ।
- २०] प्रहर्षजाः सप्रति वाष्पाविन्दन्. पतन्ति राजात्मजनेत्रसभवाः [१६
युक्तार्थं वचनमथो निशम्य हृष्टास्तेऽमात्या. सपरिपदोऽद्युवस्तदा ।
पन्थानं नरवरभक्तितत्त्वचित्तो^८ व्यादिष्टस्तव वचनाच्च शिल्पिवर्गः ॥
- २१] [१७

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे भरत-
भक्तिर्नाम सर्गः ॥ [९०] ॥

[वं—८७] = [एकनवतितमः सर्गः] = [दा—८०]

अथ भूमिप्रदेशज्ञाः सूत्रकर्मविशारदाः^१ ।

१] स्वकर्मनिरताः पौराः खनका यन्त्रकास्तथा ॥ १ ॥ [१

कर्मान्तिकाः स्थपत्यः पुरुषा मन्त्रकोविदाः ।

२] तथा वार्धाकिनश्चैव^२ दात्रिणो वृक्षरोपकाः ॥ २ ॥ [२

कूपकाराः सभाकारा वंशकर्मकरास्तथा ।

३] समर्था वेदविद्वांसः^३ पुरस्ते संप्रतस्थिरे ॥ ३ ॥ [३

विपमं च समं कर्तुं छिन्दंश्चैव पथि द्रुमान् ।

४] सेनापति र्ययावग्रे भरतस्य प्रयास्यतः ॥ ४ ॥ [N

स तु हर्षात् समुत्क्रोशो जनौघो विपुलः^४ प्रयान्^५ ।

५] अशोभत महावेगः पर्वणीव जलाशयः ॥ ५ ॥ [४

पृ६] ते तु स्वमधिष्टाय कर्म कर्मसु कोविदाः । ; [५पू

७] कुर्वन्तःशोधयन्तश्च पन्थानं गहने वने ॥ ६ ॥ [N

चिच्छिदुः^६ शैलसङ्काशान् केचिद् वृक्षान् परश्वधैः । [N

८] अवक्षेपु च देशेषु केचिद् वृक्षानरोपयन् ॥ ७ ॥ [७पू

लतावितानगुल्मांश्च शलाकाकोशपर्वतान् । [६पू

९] केचित्कुठारैष्टुङ्कैश्च दात्रैश्चैव प्राचिच्छिदुः ॥ ८ ॥ [७उ

अपरे चिच्छिदुः सालान् बालिनो बलवत्तराः ।

१०] विधमन्ति स्म कुहालैः स्थलानि च समन्ततः ॥ ९ ॥ [८

तथा कण्टकदुर्गाश्च पथश्चक्रुरकण्टकान् । [N

११] पांशुभिः पूरयामासुरन्ध्रपांस्तथा ऽपरे ॥ १० ॥ [९पू

निम्नान् देशांस्तथा चान्ये समीचक्रुः समन्ततः । [९उ

1 कै, म, ल—सूत्रकर्म० । 2 कै, म, ल—यन्त्रकास्तथा ।

3 कै, म, ल—वार्धान्तिका० । 4 व—च ये० । 5 कै—विपुलाश्रयान् ।

6 कै, व—चिच्छेदुः ।

- १२] संक्रमांश्चैव कुर्वन्तस्तीर्थानि च सहस्रशः ॥ ११ ॥ [N
 नदीतीरतटोच्छ्रयान् प्रकुर्वन्तः^७ समांस्तथा । [N
 १३] अनुमार्गं ययुः पूर्वं खनका भरताज्ञया ॥० १२ ॥ [N
 विभिद्भु भेदनीयांश्च दुर्गदेशान् नगांस्तथा ।० [१०उ
 १४] जलाशयांस्तथा चक्रुर्नचिरेण बहूदकान् ॥ १३ ॥ [११पू
 सागरप्रतिमान् मार्गं सुतीर्थान् विमलोदकान् । [११उ
 १५] चक्रुर्देशेषु देशेषु पञ्चशः^८ पञ्चतोरणान् ॥ १४ ॥ [N
 उदपानान् बहुविधान् वेदिकापरिचारिकान् । [१२उ
 १६] समुधाकुट्टिमलतः^९ सुपुष्पितमहीरुहः^{१०} ॥ १५ ॥ [१३पू
 मत्तद्वृष्टद्विजगणः पताकाभिरलङ्कृतः । [१३उ
 १७] चन्दनोदकसंसिक्तो नानाकुसुमभूषितः ॥ १६ ॥ [१४पू
 पृ१८] बह्वशोभत^{११} सेनायाः पन्थाः स्वर्गपथोपमः । [१४उ
 पृ२०] भूयस्तं शोधयामासुर्भूपाभिश्चाप्यभूपयन् ॥ १७ ॥ [१६
 उ२०] नक्षत्रे सुप्रशस्ते^{१२} च मुहूर्त्तं चैव तद्विदः । [१६
 पृ२१] निवेशं स्थापयामासुर्भरतस्य महात्मनः ॥ १८ ॥ [१७
 उ२१] बहुपांसुचयश्चासीत् परिखापरिवारितः । [१८
 पृ२२] [यत्रेन्द्रक्रीडपरिखा प्रतोलीपरिवेष्टितः ॥ १९ ॥ [१८
 उ२२] मासादतलसंसिक्तः शोधकैश्च सुसंस्कृतः ।^{१३} [१८
 पृ२३] पताकाशोभितः श्रीमान् सुनिर्मितमहापथः ॥ २० ॥ [१९
 उ२३] गृहैस्तन्याद्विरिव खं सविटङ्काविमानकैः । [१९
 पृ२४] समुच्छ्रितपताकैश्च शक्रसन्नोपमैर्वृतः ॥ २१ ॥ [२०

७ ल—प्राकुर्वन्तः । कै—कुर्वन्तः । ०कै । ८ व—पदशः । ९ ल—लताः ।
 कै, म—कुट्टिमलताः । १० कै—महीरुहः । म—महीरुहा । ११ कै,
 व, म—बहु शोभत । १२ कै—सुप्रशस्तं । १३ कै, म, ल—नास्ति ।

७२४] जाह्नवी च समासाद्य विविधद्रुमकाननाम् ।

N] शीतलामलपानीयां महामीनसमाकुलाम् ॥ २३ ॥ [२१]

सचन्द्रतारागणमण्डितो यथा

क्षपाऽऽगमे वीतमलो विराजते ।

नक्षत्रमार्गः स तथा¹⁴ व्यराजत

२५] क्रमेण पन्थाः शुभशिल्पिनिर्मितः ॥ २४ ॥ [२२]

इत्यार्षे रामायणो ऽयोध्याकाण्डे मार्गसत्कारो¹⁵

नाम सर्गः ॥ [६०] ॥

- [वं—८८] = [द्विनवतितमः सर्गः] = [दा—८२]
 तामार्यजनसम्पूर्णां भरतप्रग्रहां^१ सभाम्^१ ।
 १] ददर्श बुद्धिसम्पन्नो वसिष्ठो भगवानृषिः ॥ १ ॥ [१
 आसनानि यथान्यायमार्याणां जुषतां ततः ।
 २] विभान्ति स्म धनापाये द्योततां^२ ज्योतिषामिव ॥ २ ॥ [२, ३
 सर्वाश्च राजप्रकृतीः समन्तात् प्रेक्ष्य धर्मवित् ।
 ३] इदं पुरोहितो वाक्यं भरतं प्रत्यभाषत् ॥ ३ ॥ [४
 तात राजा दशरथः स्वर्गतो धर्ममाचरन् ।
 ४] धनधान्यवती स्फीतां प्रदाय पृथिवी तव ॥ ४ ॥ [५
 रामस्तथा सत्यधृतिः सतां धर्ममनुस्मरन् ।
 ५] नाजहात् पितुरादेशं लक्ष्मीं^३ शीतांशुमानिव^४ ॥ ५ ॥ [६
 पित्रा भ्रात्रा च ते दत्तं राज्यं निहतकण्ठकम् ।
 ६] तद्रुंक्ष्व त्वं सहामात्यः^५ क्षिप्रमेवाभिपिच्य च ॥ ६ ॥ [७
 उदीच्याश्च प्रतीच्याश्च दाक्षिणत्याश्च केरलाः ।
 ७] कर्णधाराश्च सामुद्रा रत्रान्युपहरन्ति ते ॥ ७ ॥ [८
 तच्छ्रुत्वा भरतो वाक्यं शोकेनाभिपरिल्पुतः ।
 ८] जगाग मनसा रामं धर्मज्ञो^६ धर्मकाम्यया ॥ ८ ॥ [९
 सवाप्पया तदा वाचा कलहसस्वनो युवा ।
 ९] निजगाद् सभामध्ये जगर्हं च पुरोहितम् ॥ ९ ॥ [१०
 चरितब्रह्मचर्यस्य विद्यास्त्रात्तस्य धीमतः ।
 १०] धर्मं प्रयतमानस्य को राज्यं मद्विधो हरेत् ॥ १० ॥ [११
 कथं दशरथाज्जातो भवेद्राज्यापहारकः ।

१ कै—भरतप्रग्रहं मभम् । म—भरतप्रग्रहसभम् । २ कै—
 द्योतितां । ३ कै—लक्ष्मी । ४ व, ल—सीतांशु० । ५ म—महामान्य ।
 ल—महामात्य । कै—महामान्य । 'सहामात्य' । ६ व—धर्मज्ञ ।

- ११] राज्यमाहृत्य रामस्य नाधर्मं वक्तुमेर्हसि ॥ ११ ॥ [१२
ज्येष्ठ. श्रेष्ठश्च धर्मात्मा दिलीपनहुपोपम' ।
- १२] लब्धुमर्हति काकुत्स्थो राज्यं दशरथो यथा ॥ १२ ॥ [१३
अनार्यजुष्टमस्वर्ग्यं कुर्यां पापमहं यदि ।
- १३] इक्ष्वाकृणा कुले जातो भोग्य कुलपासनः ॥ १३ ॥ [१४
यन्मे मात्रा कृतं पापं नाहं तदभिरोचये ।
- १४] इहस्थोऽहं वनस्थं तं नमस्यामि कृताञ्जलिः ॥ १४ ॥ [१५
राममेवानुगच्छामि स राजा द्विपदां वरः ।
- १५] त्रयाणामपि लोकानां राघवो राज्यमर्हति ॥ १५ ॥ [१६
यदि त्वार्यं न शक्यामि विनिवर्त्तयितुं वनात् ।
- १६] अहं तत्रैव वत्स्यामि यथाऽसौ लक्ष्मणस्तथा ॥ १६ ॥ [१७
अयोध्यायामहं वस्तुं नोत्सहे भ्रातरं विना ।
- १७] सर्वश्रेष्ठगुणं ज्येष्ठं रामं राज्ञि लोचनम् ॥ १७ ॥ [१८
पित्रा भुक्त्वा नृपश्रीर्मे दायाद्यं तस्य धीमतं ।
- १८] नाधिगन्तुं मया शक्या सावित्री वृषलैरिव ॥ १८ ॥ [१९
पितर्युपरते^७ तस्मिंल्लोकनाथे महात्मनि ।
- १९] शरणं च गतिं ज्येष्ठो भ्राता चैव पिता च मे ॥ १९ ॥ [२०
तं निवर्त्तयितुं बुद्धिर्वनवासे कृता मया ।
- २०] न केनचिदियं शक्या प्रत्यावर्त्तयितुं प्रभो ॥ २० ॥ [२१
तद्वाक्यं धर्मसयुक्तं श्रुत्वा सर्वे सभासदः ।
- २१] हर्षान्मुमुचुरस्त्रूणि रामे निर्दत्तचेतसः^{१०} ॥ २१ ॥ [२२
ततः सभायां सचिवा सोपाध्याया विचुकुशु ।

७ कै, म—वाप्पलैरिव । ८ कै, ल—०र्यपरते । ९ म—प्रतिवतयत ।

१० ष, म, ल—निभृत० ।

२२] साधु साध्विति भूतार्थं शंसन्तो भरतं गुणैः ॥ २२ ॥ [N

यसिष्ठस्त्वव्रवीद्धृष्टो भरतं वाप्पगददम् ।

२३] इदं परिपदो मध्ये परया भ्वरसंपदा ॥ २३ ॥ [N

शशाङ्कविमलं चित्तमनाश्चर्यामिदं त्वयि ।

२४] पित्रा दशरथेन त्व धर्मज्ञेन महात्मना ॥ २४ ॥ [N

अभिजातोऽसि^{११} शूरेण राज्ञा दानययोधिना ।

२५] यस्त्रं वनगतं राम निवर्त्तयितुमिच्छसि ॥ २५ ॥ [N

अभिजानासि रामस्य दृढ गुणयतो गुणान् ।

२६] धन्योऽस्ति स च धर्मात्मा धन्यो यस्यासि वान्यवः ॥ २६ ॥ [N

ईदृशा हि महात्मानो^{१२} यत्र स्युः प्रियवान्धराः ।

२७] देशे किमिव तत्र स्याद्दुर्लभं वीतकल्पये ॥ २७ ॥ [N

त्वया ह्यपत्येन गुणैः कृतात्मना

गतो दिवं भूमिपतिः प्रतिष्ठितः ।

सभा समग्रा परितुष्यते त्वियं

२८] यद्युद्यतो रामनिवर्त्तने त्वसि ॥ २८ ॥ [N

इत्यार्थं रामायणे ऽयोध्याकाण्डे भरतप्रशंसा

नाम सर्गः ॥ [९२] ॥

[वं—८९]=[त्रिनवतितमः सर्गः]=[दा—८२]

एवमुक्तो वसिष्ठेन भरतो भ्रातृवत्सलः ।

०] गुरुं प्रणम्य शिरसा ततो वचनमब्रवीत् ॥ १ ॥ [N

सर्वोपायान् प्रयुञ्जेऽहं तं निवर्त्तयितुं गुरुम्^१ ।

१] समक्षमार्यामिश्राणां गुरुणां गुरुवर्त्तिनाम् ॥ २ ॥ [१९

एवमुक्त्वा स धर्मात्मा भरतो भ्रातृवत्सलः ।

२] समीपस्थं तदा मृतं भूय एवाब्रवीदिदम् ॥ ३ ॥ [२१

तूर्णमुत्थाय गच्छ त्वं मुमन्त्र मम शासनात् ।

३] यात्रामाज्ञापय क्षिप्रं बलं चैव समानय ॥ ४ ॥ [२२

एवमुक्तः मुमन्त्रस्तु भरतेन महात्मना ।

४] प्रहृष्टः सन्दिदेशाशु यथासन्दिष्टमेव तत् ॥ ५ ॥ [२३

ताः प्रहृष्टाः प्रकृतयो बलाभ्यक्षप्रणोदिताः ।

५] श्रुत्वा यात्रां समाज्ञप्तां काकुत्स्थविनिवर्त्तने ० ॥ ६ ॥ [२४

ततो ऽयोध्यागताः सर्वे हृष्टा स्वे स्वे गृहे तदा । ०

६] यात्रासमयमाज्ञाय ० रामस्य गमनं प्रति ॥ ७ ॥ [२५

ते ह्यै गोरथैः शीघ्रैः- स्यन्दनैश्च मनोहरैः ।

७] सह योधिर्वलाध्यक्षा^३ बलं सज्जमवेदयन् ॥ ८ ॥ [२६

सज्ज तु तद्बलं ज्ञात्वा भरतो गुरुसन्निधौ ।

८] रथं मे त्वरयस्वेति मुमन्त्र पार्श्वतोऽब्रवीत् ॥९॥ [२७

ततः मुमन्त्रस्तामाज्ञां श्रुत्वा शीघ्रपराक्रमः ।

९] रथं गृहीत्वा प्रययौ युक्त परमवाजिभिः ॥१०॥ [२८

स राघवः सत्यधृति^४ प्रतापवान्

वचः सुयुक्तं दृढसत्यविक्रमः ।

गुरुं महाऽरण्यगतं यशस्विनं

१०] प्रसादयिष्यन् भरतोऽब्रवीद्विदम् ॥ ११ ॥ [२०

तूर्णं समुत्थाय सुमन्त्रं^५ गच्छं^६

योगं समाज्ञापय मे बलानाम् ।

आनेतुमिच्छामि गुरु वनस्थं

११] प्रसाद्य राम जगतो हिताय ॥ १२ ॥ [३०

स स्यूतपुत्रो भरतेन सम्यग्

आज्ञापितः संपरिपूर्णकाम ।

शशास सर्वान् प्रकृतिप्रधानान्

१२] बलस्य मुख्यान् स्वमुद्दृजनं^७ च ॥ १३ ॥ [३१

कल्पे समुत्थाय^८ ततः कुलीनां^९

राजन्यवैश्या नगरप्रधानाः ।

अयोजयन्नुप्लवणान्^{१०} समन्तान्-

१३] मत्तांश्च नागान् बहुलान् हयांश्च^{११} ॥ १४ ॥]३२

हृत्पार्श्वे रामायणे ऽधोऽध्याकाण्डे सेनाप्रस्थानिको^{११}

नाम सर्गः ॥ [६३] ॥

५ म—गच्छतो समुत्र । ६ घ—सुमुद्दृजनं । ७ ल—काल्ये ।
 व, म—काले । ८ कै—कुलीना । ९ ल—अयोजयन्नुप्लवणान् । १० कै—
 हृत्पार्श्वे । ११ व—सेनाप्रास्थानिको ।

[व—६०]=[चतुर्नवतितमः मर्गः]=[दा—८३]

तत. श्वेतेर्हयेयुक्तमास्थाय स्यन्दनोत्तमम् ।

१] प्रययौ भरत श्रीमान् रामदर्शनकाम्यया ॥ १ ॥ [१

अग्रतः प्रययुस्तस्य सप्त मन्त्रपुरोहिता. ।

२] अधिरूहा हयेयुक्तान् रथान् सूर्यरथापमान् ॥ २ ॥ [२

दशनागसहस्राणि कल्पितानि यथाविधि ।

३] अन्वयुर्भरत यान्तामिक्ष्वाकुकुलनन्दनम् ॥ ३ ॥ [३

पष्टीरथसहस्राणि वन्विना सायुधानि वै ।

४] अन्वयुर्^१ भरत यान्त राजपुत्र महारलन् ॥ ४ ॥ [४

शत चाश्वसहस्राणि समारूढानि राघवम् ।

५] अन्वयुर्^२ भरत यान्त राजपुत्र यशास्वनम् ॥ ५ ॥ [५

केकेयी च सुामत्रा च कोसल्या च यशास्वती ।

६] रामानयनसहस्रा ययुर्धाने प्रभास्वरे. ॥ ६ ॥ [६

प्रययौ चार्यसङ्घाता राम द्रष्टुसलक्ष्मणम् ।

७] तस्य चेष्टा कथाश्चक्रु सवे सहस्रमानसा ॥ ७ ॥ [७

मेघश्याम महागद्गु स्थिरसत्त्वं दृढव्रतम् ।

८] द्रक्ष्यामस्त कदा राम जगत शोकनाशनम् ॥ ८ ॥ [८

द्रष्ट एव मन शोकमपनष्यति राघव ।

९] तम कृत्स्नस्य लोकस्य समुद्यन्निव भास्कर ॥ ९ ॥ [९

इत्येव कथयन्तस्त सप्रहृष्टा कथा शुभा ।

१०] पारिष्वजन्तश्चान्यान्य ययुर्नरगणास्तदा ॥ १० ॥ [१०

पुराच्च निययु सवे समवायेन नैगमा ।

११] रामदर्शनसहस्रा सर्वा प्रकृतयस्तथा ॥ ११ ॥ [११

१ कै, म—अन्वयन् (य—रु) । २ वै—०न्वयन् । म—०न्वय ।

मणिकाराश्च ये केचिच्छत्रकाराश्च शोभनाः ।

१२] यन्त्रकर्मकृतश्चैव^४ तथा चास्त्रोपजीविनः ॥ १२ ॥ [१२

मायूरिका स्तैत्तिरिकाश्च उदका भेदकास्तथा ।

१३] दन्तकाराः मुवाकारास्तथा दन्तोपजीविनः ॥ १३ ॥ [१३

स्वर्णकाराश्च विख्यातास्तथा कनकशोधकाः ।

१४] स्नापकाः स्तावका वैद्याः शौण्डिका.पौष्पिकास्तथा ॥ १४ ॥ [१४

१५] रजकास्तन्तुवायाश्च^५ मृतमागधनन्दिनः^६ । [१५पू

पू१६] वाट्या वेत्रकाराश्च गान्धिकाः पाणिकास्तथा ॥ १६ ॥ [N

उ१६] प्रावारिका^७ मूपकारास्तथा शिल्पोपजीविनः ।

पू१७] ह्यैरण्यकाश्च प्रत्यातास्तथा बृद्धुपजीविनः ॥ १७ ॥ [N

उ१७] प्राकारिकास्तथा चैव तथा शास्त्रोपजीविनः ।

उ१८] स्यूलायाः^८ कांस्यकाराश्च^९ चित्रकाराश्च^९ योविनः ॥ १७ ॥

उ१८] धान्याविक्रयिणश्चैव गन्धविक्रयिणस्तथा ।

पू१९] फलोपजीविनः सर्वे पुष्पमूलोपजीविनः ॥ १८ ॥ [N

उ१९] मूपकारा.स्थपतयस्तक्षण कारपत्रिकाः^९ ।

पू२०] श्रीरामेक्षास्तथा सर्वे इष्टकाकारकास्तथा ॥ १९ ॥ [N

उ२०] दिव्यभेदककाराश्च मालाकाराश्च शोभनाः ।

पू२१] श्रीरामेक्षास्तथा सर्वे तथा मासोपजीविन ॥ २० ॥ [N

उ२१] पांक्तिकाः^{१०} पायकाश्चैव^{१०} तथा चूर्णोपजीविनः । [N

पू२२] कार्पासिका धनुष्कारा. मूत्रविक्रयिणस्तथा ॥ २१ ॥ [N

उ२२] वक्त्रकर्मकृतश्चैव काण्डकारास्तथैव च ।

४ कै, म—यत्रकर्मकृताश्चैव । ल—यत्रकर्मकृताश्चैव । ५ कै,
ब—०स्तत्र । म—०स्तत्रवायश्च । ६ कै, म, ल—०वदिना । ७ यावजा ।

म—यारजा । ८ कै—स्तुलवाया । ल—मूलवाया । ९ य—०लोहका० ।

१० कै—०कराय । ११ कै—०मत्रिका । १२ कै—पांक्तिका० । य—०मायिका०

- पू२४] शलाकाशल्यहर्त्तारो विषवैद्याश्च शोभनाः ॥०२२॥
 उ२४] भूतग्रहविधिज्ञाश्च^१ वालानां च चिकित्सकाः ।
 पू२५] आरकूटकृतश्चैव ताम्रकारास्तथैव च ॥ २३ ॥०
 उ२५] स्वास्तिकाराः कोशकारास्तथा भक्तोपजीविनः ।
 पू२६] भर्जकाराः^{१२} सक्तुकारास्तथा वाटाविकाश्च ये ॥२४॥ [N
 उ२६] खण्डकारास्तथा^{१३} मुख्यास्तथा वाणिजकाश्च ये ।
 पू२७] काचकाराश्छत्रकारास्तथा^{१४} बोधकशोधकाः ॥ २५ ॥ [N
 उ२७] खण्डसंस्थापकाश्चैव तथा ताम्रोपजीविनः ।
 पू२८] श्रेणीमहत्तराश्चैव ग्रामधोषमहत्तराः ॥ ०२६ ॥ [N
 उ२८] शैलूपाश्च सह स्त्रीभिर्धृतवैतंसिकाश्च ये ।० [१५
 पू२९] सश्रेणीनिर्गमं सर्वं नगरं संकुलीकृतम् ॥ २७ ॥ [N
 उ२९] आतुरं दृढवालं च वर्जयित्वा पुरे जनम् । [N
 पू३०] समाहिता वेदविदो ब्राह्मणाः श्रुतसंगताः ॥ २९ ॥ [१६
 उ३०] गौरयैर्भरतं यान्तमनुजग्मुः सहस्रशः । [१६
 पू३१] सुवेशाः शुद्धवसनाः सन्तो मृष्टानुलेपनाः ॥ २९ ॥ [१७
 उ३१] सर्वे ते विविधैर्यान्तं यानैर् भरतमन्वयुः । [१७
 पू३२] हृष्टा प्रमुदिता सेना साऽन्वयात् कैकयीसुतम्^{१५} ॥ ३० ॥ [१८
 उ३२] शास्त्रदृष्टेन मार्गेण तथाऽन्यैर्द्रिजसत्तमैः ।
 उ३४] अतिष्ठत् सा तदा सेना गङ्गामासाद्य वै नदीम् ॥ ३१ ॥ [२१
 निरीक्ष्य च स्थितां सेनां गङ्गां चैव बहूदकाम् ।
 ३५] भरतः सचिवान् सर्वानिव्रवीद्वाक्यकोविदः ॥ ३२ ॥ [२२
 निवेशयत् मे सेनाभाभिप्रायेण सर्वशः ।
 ३६] विश्रान्ताः सन्तरिप्यामो गङ्गामेतां महानदीम् ॥ ३३ ॥ [२३

० ष । 11 कै, म—भूतग्राहणं । 12 व—भल्लकाराः । 13 ल-
 ञ्जङ्ग० । 14 व—राक्षित्रकृतस्तथा । ० म । 15 य—कैकयी० ।

अस्यां तु तावदिच्छामि स्वर्गतस्य महीपतेः ।

१७] ऊर्ध्वदेहानिमित्तार्थमहं दातुं जलाञ्जलिम् ॥ ३४ ॥ [३४

तस्यैवं द्रुवतोऽमात्यास्तथेत्युक्त्वा समाहिताः ।

१८] न्यवेशयन्तश्छन्देन स्वेन स्वेन पृथक् पृथक् ॥ ३५ ॥ [३५

निवेश्य गङ्गाप्लुतां महाचमूम्

यथाभिधानं परिवर्हशोभिताम् ।

उवास वासं भरतो महामना

१९] विचिन्तयन् रामानिर्त्तनं च ॥ ३६ ॥ [३६

इत्यार्षे रामायणे ज्योध्याकाण्डे भरतानुयानं

नाम सर्गः ॥ [९४] ॥

[वं—९१]=[पञ्चनवातितमः सर्गः]=[दा—८४]

ततो निविष्टां ध्वजिनीं गङ्गामासाद्य तां नदीम् ।

- १] निपादराजो दृष्ट्वैव ज्ञातीन् स्वानिदमब्रवीत् ॥ १ ॥ [१
इयं सेना सुमहती समन्तात् परिदृश्यते ।
- २] अन्तमस्या न पश्यामि विस्तृतायाः समन्ततः ॥ २ ॥ [२
इक्ष्वाकूणामियं सेना संशयो नात्र कश्चन ।
- ३] एष सन्दृश्यते दूरात्कोविदारध्वजो रथः ॥ ३ ॥ [३
ग्रहीष्यते हस्तिनः किं मृगयां नु चरिष्यति । [पृ४
- ४] हनिष्यति न खल्वस्मान् सैन्यमेतदमानुषम् ॥ ४ ॥ [४
अथो दाशरथिं रामं पित्रा प्रव्राजितं वनम् । [४३
- ५] सामात्यो राज्यलोभेन भरतो हन्तुमुद्यतः ॥ ५ ॥ [५
समर्था राज्यलक्ष्मीर्हि सुश्लिष्टं भ्रातृसौहृदम् ।
- ६] क्षणेन विच्यावयितुं^१ सर्वथाऽस्मि विशङ्कितः ॥ ६ ॥ [६
मम दाशरथी रामो भर्ता बन्धुः सखा गुरुः ।
- ७] अहं तस्य हितार्थाय गङ्गामन्वाश्रितो नदीम् ॥ ७ ॥ [७
संमन्त्रयामि^२ यद्युक्तं^३ मन्त्रज्ञै^३ मन्त्रिभिः सह ।
- ८] मन्त्रयित्वाऽब्रवीत् सर्वान् वचो वनचरांस्तथा^४ ॥ ८ ॥ [८
सुसन्नद्धाः सुधनुषाः^५ सर्व एव समाहिताः ।
- ९] व्यूह्य सेनां नदीं व्याप्य मम तिष्ठत शासनात् ॥ ९ ॥ [९
नौकाशतानां पञ्चानामेकैकस्य शतं शतम् ।
- १०] सन्नद्धानां तथा यूनां तिष्ठन्तृद्यतधन्विनाम् ॥ १० ॥ [१०
यदि यास्यति सन्दुष्टा रामस्यालिष्टकर्मणः ।

१ कै—विद्यावयितुं । २ कै—ममन्त्रयामि [य] पु० ।

ब, म—स मन्त्रयामि० । ३ ब—मन्त्रज्ञो । ४ य, म—०स्तथा ।

५ ब—सधनुषः ।

- नेयं स्वस्तिमती सेना गङ्गामद्य^० तरिष्यति^० ॥११॥ [९
 रामावमाननकृतं क्रोधमद्य हृदिस्थितम् ।
 १२] सेनाघ्राते विमोक्ष्यामि निर्मोकं पन्नगो यथा ॥ १२ ॥ [N
 रामं वने वासयता कैकेयीवशगेन यत् ।
 १३] कृतं पापं नरेन्द्रेण तत् प्रमोक्ष्यामि संयुगे ॥ १३ ॥ [N
 अद्य मे शरसङ्घाता मत्कार्मुकपरिच्युताः ।
 १४] निपतिष्यन्ति गात्रेषु नराश्वरयदन्तिनाम् ॥ १४ ॥ [N
 वाजिनां च सिताङ्गानां क्रुद्धस्य मम सायकाः ।
 १५] अद्य भित्त्वा प्रवेक्ष्यन्ति शरीराणि मयेरिताः ॥ १५ ॥ [N
 हतयोधां हतरथां विध्वस्तगजसादिनीम् ।
 १६] सेनामद्य करिष्यामि क्रव्यादा(द?)खगभोजनं[नाम्]१६॥ [N
 निविष्टा यत्र सैन्या सवाजिरथकुञ्जरा ।^०
 १७] तत्र^० भूमिं^० करिष्यामि^० शरैः शोणितकर्दमाम् ॥१७॥ [N
 अद्याहं तोषयिष्यामि शृङ्गगोमायुवायसान् ।
 १८] सैनिकानां समस्तानां रुधिरैः क्षतजाशिनः ॥ १८ ॥ [N
 अद्य कर्म करिष्यामि रामस्वार्थं मुद्गुप्करम् ।
 १९] स्वप्स्ये वाऽहं विनिहितः कथाशेषः किल क्षितौ ॥ १९ ॥ [N
 निवारयिष्यामि हि वाहिनीमिमां
 धनं व्रजन्तीं बहुवाजिकुञ्जराम् ।
 गुणैर्घृहीतो बहुभिर्महात्मनः
 २०] मियस्य रामस्य हितं चिकीर्षुः ॥ २० ॥ [N
 इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे शुहकोपो
 नाम सर्गः ॥ [१५] ॥

- [वं—९२]=[घण्णवतितमः सर्गः]=[दा—८४, ८५]
 अथोपायनमादाय मत्स्यान्^१ मास^१ मधूनि च ।
- १] अभिचक्राम भरत निपादाधिपतिर्^२ गुह ॥ १ ॥ [१०
 तमायान्तमभिप्रेक्ष्य मृतपुत्र प्रतापवान् ।
- २] भरतायाचक्षे च विनयज्ञो विनीतवत् ॥ २ ॥ [११
 वृतो ज्ञातिसहस्रेण गुहस्त्वा प्रत्युपस्थित ।
- ३] कुशलो दण्डकारण्ये वृद्धो भ्रातुश्च ते सखा ॥ ३ ॥ [१२
 तस्मादसौ पश्यतु त्वा त्वत्प्रीत्यर्थमुपागतः ।
- ४] असशयमय वेत्ति यत्र तौ रामलक्ष्मणौ ॥ ४ ॥ [१३
 एतच्चु वचन श्रुत्वा सुमन्त्राद् भरतस्तदा ।
- ५] उवाच सारथिं श्रीमान् गुहः पश्यतु मामिति ॥ ५ ॥ [१४
 लब्धाभ्यनुज्ञः सहृष्टो ज्ञातिभिः परिवारितः ।
- ६] आगम्य भरत प्रहो गुहो वचनमब्रवीत् ॥ ६ ॥ [१५
 निष्कण्ठकश्च देशोऽयमसङ्कीर्णश्च राघव ।
- ७] इदं च ते दासगृहं स्वके दासगृहे वस ॥ ७ ॥ [१६
 अस्ति मूलफल चेह निपादै^३ समुपार्जितम्^३ ।
- ८] अद्रिं मांसं च शुष्कं च भक्ष्यं चोन्नावच बहु ॥ ८ ॥ [१७
 आशसे त्या^४ जितामित्रं सौहार्दादहमीदृशम्^५ ।
- ९] अर्चितो विविधै^६ कामैश्च प्रभाते गमिष्यसि ॥ ९ ॥ [१८
 एवमुक्तस्तु भरतो निपादाधिपतिं गुहम् ।
- १०] प्रत्युवाच महामाज्ञो चाक्षय हेत्यर्थसहितम् ॥ १० ॥ [८५ । १
 सर्वे खलु कृता कामास्त्रया मम गुरो^७ सखे ।

१ ल—मत्स्यानास । घ—मत्स्यां मास- । २ कै म—निपादाधिपतिर् । ३ घ—निपादसमुपार्जितं । ४ कै—द्या । त्या इति पाठ्यं लिखितम् । ५—त्या । म—ता । ६ कै—मोहात्मादह० ।

- ११] यो मे त्वमीदृशी सेनामभ्यर्चयितुमिच्छसि ॥ ११ ॥ [८५ । २
 इत्युक्त्वा^६ स महातेजा गुह^७ वचनमीदृशम् ।
- १२] अब्रवीद् भरतः श्रीमान् निपादात्रिपतिं पुनः ॥१२॥ [८० । ३
 कतरेण गमिष्यामो भारद्वाजाश्रमं गुह ।
- १३] गहनोऽयं भृशं देशो गजानीको दुरत्ययः ॥ १३ ॥ [८५ । ४
 तस्य तद्वचनं श्रुत्वा राजपुत्रस्य धीमतः ।
- १४] अब्रवीत् प्राञ्जलिर्वाक्यं गुहो गहनगोचरः ॥ १४ ॥ [८५ । ५
 दासास्त्वाऽनुगमिष्यान्ति धन्विनः सुसमाहिताः ।
- १५] अहं^८ चानुगमिष्यामि राजपुत्रं महाबलं ॥ १५ ॥ [८० । ६
 कच्चिन्न दुष्टो व्रजसि रामस्याऽऽष्टिर्कर्मणः ।
- १६] अतिभीमा हि सेनेयं शङ्कां जनयतीव मे ॥ १६ ॥ [८० । ७
 तमेवमभिजल्पन्तमाकाशसमनिर्मलः ।
- १७] भरतः श्लक्ष्णया वाचा गुहं वचनमब्रवीत् ॥ १७ ॥ [८५ । ८
 मा भूत् स कालो धिक्कष्टं न मां शङ्कितुमर्हसि ।
- १८] राघवार्थं स हि भ्राता^९ ज्येष्ठः पितृसमो मम ॥१८॥ [८५ । ९
 उपावर्त्तयितुं यामि काकुत्स्थं वनवासिनम् ।
- १९] बुद्धिरन्या न ते कार्या सत्यमेतद्वरीभ्यहम् ॥ १९ ॥ [८५ । १०
 स तु प्रहृष्टवदनः श्रुत्वा भरतभाषितम् ।
- २०] पुनरेवाब्रवीद्वाक्यं भरतं प्रनिर्हर्षणम् ॥ २० ॥ [८५ । ११
 धन्यस्त्वं न त्वया तुल्यं पश्यामि जगतीतले ।
- २१] अयत्रादागतं राज्यं यस्त्वं त्यक्तुमिच्छसि ॥२१॥ [८५ । १२
 शाश्वती खलु ते कीर्त्तिर्लोकाननु भविष्यति ।
- २२] यस्त्वं कृच्छ्रगतं रामं प्रत्यानयितुमिच्छसि ॥२२॥ [८५ । १३

६ म—इत्युक्त्वा । ७ य—इत्युक्त । ८ य, म—गुहो । ९ कै—अर्थ ।

११ कै—भ्रात्रा । म—भ्राता ।

एवं संभाषमाणस्य गुहस्य भरतेन तु ।

२३] वभौ नष्टप्रभः सूर्यो रजनी चाप्यवर्त्तते^{१०} ॥२३॥ [८५।१४

सनिवेश्य ततः सेनां गुहेन परिसान्त्वितः ।

२४] शशुघ्रेण सह श्रीमान् शयनं विवेशोऽगमत् ॥२४॥ [८५।१५

तत्र चिन्तापरीतः सन्न न निद्रामभ्यपद्यत ।

२५] रामप्रसादमाकांक्षंस्ततस्तद्बहु चिन्तयन् ॥२५॥ [८५।१६

अन्तर्दाहेन घोरिण दह्यमानोऽनिशं तदा ।

२६] दार्वीणिपरिसन्तप्तो^{११} महानाग इव श्वंसन् ॥२६॥ [८५।१७

सुस्राव सर्वगात्रेभ्यः स्वेद शोकाग्निसभवम् ।

२७] हिमवानिव शैलेन्द्रो बहुधातुपरिस्रवः ॥२७॥ [८५।१८

चिन्ताविस्तारमूलेन विनिःश्वसितसानुना ।

N] दैन्यपादपसङ्गेन दुःखमृद्गोच्छ्रयेण^{१२} च ॥२८॥ [८५।१९

निःश्वासायासधूमेन शोकासुस्रवनेन^{१३} च ।

N] अन्तः सन्तापवशेन हीनसत्त्वोचितेन च ॥२९॥ [८५।२०

मोहसन्तापदुर्गेण^{१४} कैकेयीवाग्दवाग्निना ।

N] आक्रान्तो दुःखशैलेन भरतः कैकयीसुतः^{१५} ॥३०॥ [८५।२०

गुहेन सार्धं स समागतस्तदा

महानुभावो भरतः प्रतापवान् ।

सुदुःखितं तं पुनरब्रवीत् तदा

२८] गुहः समभ्यागतधर्मवत्सलः ॥३१॥ [८५।२२

इत्यार्थं रामायणे ऽयोध्याकाण्डे गुहसमागमो

नाम सर्गः ॥ [९६] ॥

१० कै, म—चास्य वर्त्तत । ल—चाव्यवर्त्तत । ११ कै—दया० ।
१२ य—०येण । १३ य—०सूषणेन । १४ कै—घर्गेन । १५ कै, य, म—
कैकयी० ।

[वं—२३]=[सप्तनवतितमः सर्गः]=[दा—N]

स तु वाप्ससमाविष्टो गुहो ज्ञातिगणैर्वृतः ।

१] भरत वाक्यकुशलो वद्धाञ्जलिरभापत ॥ १ ॥

इक्ष्वाकुवशसदृश व्याहृत भरत त्वया^१ ।

२] अनुरूप गुणानां च श्रुतस्य यशसस्तथा ॥ २ ॥

यस्य त्व वृत्तसपन्नो गुणहो बन्धुरादृशः ।

३] धन्यश्चासौ मम सखा राघवः भियवान्धव. ॥ ३ ॥

यस्त्व लब्धां श्रिय त्यक्त्वा निर्गुणामिव योषितम् ।

४] वनादुपावर्त्तयितु यासि भ्रातरमग्रजम् ॥ ४ ॥

इद मुदुर्लभ लोके यादृश ते च सौहृदम् ।

५] राघव प्रति धर्मज्ञ यत्र सत्य मतिंष्ठितम् ॥ ५ ॥

यः पितुर्वचन कुर्वन् जनन्याश्च तव प्रभो ।

६] सहमार्यः^३ सह भ्रात्रा मविष्टो निर्जनं वनम् ॥ ६ ॥

एवमुक्तस्तु भरतो राजपुत्रो गुहेन स. ।

७] मत्युवाच गुह धीमान् सान्त्वपूर्वामेद वच^४ ॥ ७ ॥

अनेनैव विधानेन स्निग्धेन च हितेन च ।

८] पूजितश्चाचितश्चास्मि परितुष्टश्च ते गुह ॥ ८ ॥

किञ्चित्तु श्रोतुमिच्छामि वक्तव्य खलु नानृतम् ।

१०] कस्मिन्देशे वन गच्छन्नुपितो मम बान्धवः ॥

मुखानामुचितो नित्यममुखानामकोविद ।

११] रामो राजीवपत्राक्षो मैथिल्या सह सीतया ॥ ११ ॥

भ्रातृस्नेहादनुगत पृष्टतो य स^४ राघवम्^४ ।

१२] सौमित्रि लक्ष्मणो नाम कञ्चित् स परिवृत्तवान् ॥ ११ ॥

१ कै—भरतर्षभ । २ कै—जनन्यां च । ३ कै म—सहमार्या-।

स-सहपत्न्या । ४ कै—सराग्यम् (?) ।

क रामः शयितो रात्रौ क स्थितः क विलंबितः ।

१३] सीतया सह धर्मात्मा कुत्र चाऽऽसीन्नरर्षभः ॥ १२ ॥

किं चान्नं कृतवान् वीरः किं चासीत्तस्य भोजनम् ।

१४] मत्पूर्वः स्वापितः कस्मिन्देशे क्षितिधरोपमः ॥ १३ ॥

अस्मिन् किलेद्भुदीदृक्षे भ्राता मे सह सीतया ।

१५] सुप्तवान् रजनीमेकां शरीरेण न चक्षुपा ॥ १४ ॥

तथा कमलपत्राक्षो धनुष्पाणिः^५ सलक्ष्मणः^५ ।

१६] तां निशां जागरितवान् समूतः सहसाराधिः ॥ १५ ॥

एतदाचक्ष्व मे सर्वं यथावत् परिपृच्छतः ।

१७] तस्य देव प्रभावस्य राघवस्य विचेष्टितम् ॥ १६ ॥

एतत्तु वचनं श्रुत्वा भरतस्य महात्मनः ।

१८] अब्रवीत् प्राञ्जलिर्वाक्यं गुह्यो गहनगोचरः ॥ १७ ॥ [८६।१

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे भरतवाक्यं^६

नाम^६ सर्गः ॥ [१७] ॥

=====

[वं—९४]=[अष्टनवतितमः सर्गः]=[दा—८६]

शक्रचापनिभं चापं प्रगृह्य स महाभुजः ।

२] जजागार स्वयं रात्रिं लक्ष्मणो भ्रातृवत्सलः ॥१॥ [N

त जाग्रतमदंभेन वरचापेषुधारिणम् ।

३] भ्रातृगुप्त्यर्थमत्यर्थमहं लक्ष्मणमद्भुवम्^१ ॥२॥ [२

इयं तात सुखा शय्या त्वदर्थमुपकल्पिता ।

४] पर्याश्वसिहि सो [सौ]म्यास्यां सुखं राघवनन्दन ॥३॥ [३

वचितोऽयं जनः सर्वः क्लेशानां त्वं सुखोचितः ।

५] गुप्त्यर्थं जागरिष्यामि रामस्य सह सीतया ॥४॥ [४

न च रामात् प्रियतरो ममास्ति भ्रात्रे कश्चन ।

६] सो [मो] ? त्स्त्रुको भूद् [इ ?] ब्रवीम्येतदहं सत्यं तयाग्रतः ॥५॥ [५

अस्य प्रसादादाशंसे लोकेऽस्मिन् सुमहद्यशः ।

७] धर्मावार्तिं च बहुलामर्थकामौ न केषलौ ॥६॥ [६

सोऽहं प्रियसख रामं शयानं सह सीतया ।

८] रक्षिष्यामि धनुष्पाणिः सर्वैः स्वज्ञातिभिर्वृतः ॥७॥ [७

न हि मेऽविदितं किञ्चिद्दनेऽस्मिंश्चरतः सदा ।

९] चतुरङ्ग ह्यपि बलं सुमहत्प्रसहाम्यहम् ॥८॥ [८

एवमस्माभिरुक्तेन लक्ष्मणेन महात्मना ।

१०] अनुनीता वयं सर्वे धर्ममेवानुपश्यता ॥९॥ [९

कथं दाशरथौ भूमौ शयाने सह सीतया ।

११] शक्या निद्रा मया लब्धुं जीवितं च सुखानि च ॥१०॥ [१०

यो न देवासुरैः शक्यः मोहं युधि समागतैः ।

१२] तं पश्य गुह सविष्टं तृणेषु सह सीतया ॥११॥ [११

महता तपसा लब्धो विविधैश्च क्रियाफलैः ।

- १३] एको दशरथस्यैष पुत्रः सदृशलक्ष्मणः^२ ॥१२॥ [१२
 अस्मिन् प्रव्रजिते राजा न चिरं वर्त्तयिष्यति ।
- १४] विधवा मेदिनी नूनं क्षिप्रमेवा भविष्यति ॥१३॥ [१३
 विनद्य सुमहानादं श्रमेण च युताः स्त्रियः । [१४पू
- N] मृतकल्पा भविष्यन्ति निद्रया परिमोहिताः ॥१४॥ [N
 निर्घोपनिन्दो^३ नूनमद्य राजनिवेशने । [१४उ
- N] भविष्यति महाघोरो^४ रामे प्रव्रजिते^५ वनम् ॥१५॥ [N
 N] निर्घोपनिन्दं श्रुत्वा चाद्य राजनिवेशने । [N
- पू१६] कौसल्या चैव राजा च तथैव जननी मम ॥ १६ ॥ [१५पू
 उ१६] नाशंसे यदि ते सर्वे जीवेयुः शर्वरीमिमाम् । [१५उ
- पू१७] जीवेदापि हि मे माता शत्रुघ्नस्यान्ववेक्षया ॥ १७ ॥ [१६पू
 उ१७] एतद्दुःखात्तु कौसल्या वीरसूर्विनशिष्यति । [१६उ
 N] अनुरक्तजनाकीर्णा मुखदुःखासहा सदा ॥ १८ ॥ [N
 N] राजधानी कुलस्यास्य साऽद्य नूनं विनक्ष्याति^६ । [N
 N] अतिक्रामादति^७ क्रान्तमनवाप्य^७ मनोरथम् ॥ १९ ॥ [१७पू
 N] रामे राज्यमानिषिष्य पिता मे विनशिष्यति । [१७उ
- पू१८] सिद्धार्थः पितरं वृद्धं तस्मिन् काले विशेषतः ॥ २० ॥ [१८पू
 उ१८] म्रेतकार्येषु सर्वेषु संस्मरिष्यति राघवः । [१८उ
- पू१९] रम्यचस्वरसंस्थानां^८ सुविभक्तमहापथाम्^९ ॥ २१ ॥ [१९पू
 उ१९] इर्म्यप्रासादसंघार्था तूर्यनादविनादिताम्^{१०} । [१९उ

२ म, य—०लक्षण. । ३ य—०नन्दे । ४ कै, म—०घोरे । ५ य, म—प्रया० । ६ कै, ल—विनश्यति । म—विनश्यति । ७ कै, ल—अतिक्रामादतिघ्नांत० । ८ य, म—०संस्थानं । ९ य, म—०पथं । १० कै—दुर्षताद्य० ।

- पृ२०] रथाद्वगजसवाधां सर्वरत्नोपशोभिताम् ॥ २२ ॥ [२०पू
 उ२०] सर्वकल्याणसपत्ना तुष्टपुष्टजनायुताम् । [२०उ
 पृ२१] आरामोद्यानसङ्कीर्णां समाजोत्सवशालिनीम् ॥ २३ ॥ [२१पू
 उ२१] सुखिनो विचरिष्यन्ति राजधानीं पितुर्मम । [२१उ
 पृ२२] अपि सत्यप्रतिज्ञेन सार्धं कुशलिनो वयम् ॥ २४ ॥ [२२पू
 उ२२] निवृत्ते समये तस्मिन्नयोध्या प्रविशेम हि । [२२उ
 पृ२३] परिदेवयमानस्य तस्यैव सुमहात्मनः ॥ २५ ॥ [२३ पू
 उ२३] तिष्ठतो राजपुत्रस्य सा-व्यतीयाय शर्वरी । [२३उ
 पृ२४] प्रभातेऽभ्युदिते सूर्ये कारयित्वा जटास्ततः ॥२६ ॥ [२४पू
 उ२४] अस्मिन् भागीरथीतीरे मुख सन्तारितौ^१ मया ॥२७॥ [२४उ
 जटाधरौ तौ कुशचीरवाससौ
 महाबलौ कुञ्जरयूथपोपमौ ।
 वरेषु चापासिधरौ परन्तपौ
 २५] मज्जमतुस्तौ सह सीतया ततः ॥ २८ ॥ [२५
 इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे गुहवाक्यं
 नाम सर्गः ॥ [६८] ॥

[चं—९५]=[नवनवतितमः सर्गः]=[दा—८७]

गुहस्य वचनं श्रुत्वा भरतो भृशमप्रियम् ।

- १] जगाम मोहं तत्रैव यत्र तच्छ्रुतवान् वचः ॥१॥ [१]
 स विह्वलितसर्वाङ्गो विवृत्तविपुलेक्षणः ।
- २] पपात 'सहसा भूमौ कूलभ्रष्ट' इव द्रुमः ॥२॥ [२]
 सुकुमारो महासत्त्वः सिंहस्कन्धो महाभुजः ।
- ३] पुण्डरीकविशालाक्षस्तरुणः प्रियदर्शन ॥३॥ [२]
 भरत मोहितं दृष्ट्वा विवर्णवदनो गुहः ।
- ४] वभूव व्यथितस्तत्र भूमिकंपादिव द्रुमः ॥४॥ [४]
 ततः सर्वा समापेतुर्मातरो भरतस्य ताः ।
- ६] उपवासात्^१ कृशा^२ दीना भर्तृव्यसनकार्षिता ॥५॥ [६]
 तास्तां निपतित दृष्ट्वा भूमौ सुप्त प्रिय सुतम् ।
- ७] सभ्रान्तहृदयास्तत्र रुदन्त्यः पर्यवारयन्^३ ॥६॥ [७]
 कौसल्या त्वभिसृत्यैन व्यथित स्नेहविक्रवा । [८पू]
- ८] संस्पृश्याश्वासयामास सुखस्पर्शेन पाणिना ॥७॥ [N]
- ७९] पप्रच्छ चैव रुदती भरत शोककार्षिता [८उ]
 कश्चिद्व्याधिर्न^४ ते पुत्र शरीर संप्रापते ।
- १०] अस्य राजकुलस्याद्य त्वदधीन हि जीवितम् ॥८॥ [९]
 त्वां दृष्ट्वा पुत्र जीवामि रामे सभ्रातृके गते ।
- ११] त्वमिदानीं कुले नाथो मृते दशरथे नृपे ॥९॥ [१०]
 कश्चिन्न लक्ष्मणात् पुत्राच्छ्रुत^५ ते किञ्चिदप्रियम् ।

१ कै व—कुल० । म—कुलद्रष्ट० । २ व—उपवासदृशा । ३ कै,

ल—परिवारयन् । ४ कै—कश्चिद्व्याधिर्न । म—कश्चिद्व्याध्या न ।

५ म—पुत्रः श्रुतं ।

- १२] पुत्राद्वाप्येकपुत्राया. सहभार्याद्वनाश्रयात् ॥१०॥ [११
 एरमुक्त्वा जलक्लिनैर्वस्त्रैराश्वासयत्तदा ।
- १३] कौसल्या भरत दीनमिष्टं पुत्रमिवात्मजम् ॥११॥ [N
 स मुहूर्त्तात् समुत्तस्यौ० रुदन्ने० महायशाः० ।
- १४] कौसल्यां प्रतिपृज्याथ गुहं वचनमब्रवीत् ॥०१२॥ [१२
 गुह० पृच्छामि भूयस्त्वां वक्तव्यं खलु नानृतम् ।
- १५] राघवः सह वैदेह्या तदा किमुपभुक्तवान् ॥१३॥ [१३
 लक्ष्मणो वा महातेजाः कुललक्ष्मीविवर्धनः ।
- १६] अनियुक्तोऽनुपातो वा जनवासाय राघवम् ॥१४॥ [N
 सोऽत्रवीद् भरतं पृष्टो निपादाधिपतिर्गुह ।
- १७] श्रूयतामिति वाक्यज्ञो गृहीत्वा वाप्पमाहृतम् ॥१५॥ [१४
 अन्नमुद्यात्रच मक्ष्यं लेह्य चोप्यं^९ तथैव च ।
- १८] रामायाभ्यवहारार्थं बहुशो दर्शित मया ॥१६॥ [१५
 तत्प्रीत्या च मयाऽऽनीत प्रणयेन च राघवः ।
- १९] सर्वं न प्रतिजग्राह^१ क्षात्र^२ धर्ममनुस्मरन् ॥१७॥ [१६
 आह च स्म स धर्मात्मा चलित मामधोमुखम् ।
- २०] अस्माभिर्न प्रतिग्राह्य देयमेव तु सर्वश. ॥१८॥ [१७
 चापं चोद्यम्य^{१०} योद्धव्यमेतव क्षत्रभृता^{११} त्रतम् । [N
- २१] लक्ष्मणेनाहृत वारि स्वयमेव महात्मनि ॥१९॥ [१८पू
 तेनोपवासं काकुत्स्थश्चचार सह सीतया । [१८उ
- २२] ततस्तु जलशेषेण लक्ष्मणोऽप्यकरोत्तदा ॥२०॥ [१९पू

०म । ६ म—०मुपयु० । ७ कै, ल—०साहृतम् । ८ ल—चोष्ट ।

कै—चोष । ९ कै—०ग्राह्यं क्षत्र । १० कै—चाभ्यस्य । ल—चोद्यस्य ।

११ ध—क्षत्र० । म—क्षेत्र० ।

उपवास स्थितस्यैव तस्य सन्ध्याऽभ्यवर्तत ।

- २३] ततस्त्वसौ यथान्याय रामो धर्मभृतां वरः ॥२१॥ [N
 पृ२४] उपास्य सन्ध्यां तत्रैव वाग्यतः सुसमाहितः^{१२} । [१९ उ
 उ२५] अस्मिन्नुपाविशद्रामः संस्तरे सह सीतया ॥२०॥ [२१ पृ
 मसाल्य च ततः पादावपचक्राम^{१३} लक्ष्मणः । [२१ उ
 एतत्तदिद्गुदीमूलमेतदेव^{१४} च तत्तृणम् ॥२३॥ [२० पू
 यस्मिन् रामश्च सीता च तां रात्रिं शयिताबुभौ । [२२ उ
 नियम्य पृष्ठे तु तलाङ्गुलित्रवान्

महेषुपूर्णाविपुधी परन्तपः ।

धनुश्च सज्यं परिगृह्य लक्ष्मणो

- २७] निशामातिष्ठत् परिपालयंस्तदा ॥२५॥ [२३

इत्यार्षे रामायणे ऽध्याकाण्डे गुहवाक्यं

नाम सर्गः॥ [९९]^{१०} ॥

[वं—६६]=[शततमः सर्गः]=[दा—८८]

श्रुत्वा तु निपुर्णं सर्वं भरतः सह मन्त्रिभिः ।

- १] इद्गुदीमूलपागम्य भ्रातुः शय्यामवैक्षत ॥ १ ॥ [१
 वीक्षमाणश्च तां शय्यां क्रमेण तृणसभृताम्^१ ।
- २] बभूव भरतो दुःखी चाप्पबुद्धिबलोचनः ॥ २ ॥ [N वि
 जननीश्चाग्रवीत सर्वास्तेनैव मुमहात्मना ।
- ३] शर्वरी गमिता भूमाविद विपरिवर्चितम् ॥ ३ ॥ [२
 महात्मना कुलीनेन राजराजेन धीमता ।
- ४] कथं दशरथेनाद्य जातो^२ भूमौ प्रसूतवान् ॥ ४ ॥ [३
 अजिनोत्तरसंस्तीर्णो वरास्तरणसभृते^३ ।
- ५] शपित्वा पुरुषव्याघ्रः कथं शेते स्म भूतले ॥ ५ ॥ [४
 पुष्पसंभयाचित्रेषु चन्दनागुदगन्धिषु ।
- ६] पाण्डुराभ्रप्रकाशेषु कोविलाभिस्तेषु च ॥ ६ ॥ [६
 प्रासादाग्रविमानेषु जपित्वा तेषु सर्वशः ।
- ७] हेमराजतमौमेषु मुप्त्वा^४ भूमौ प्रसूतवान् ॥ ७ ॥ [७
 गीतवादित्रनिर्घोषैर्वराभरणानिःस्वनैः^५ ।
- ८] मृदङ्गशङ्खशब्दैश्च सततं प्रतिरोधितः ॥ ८ ॥ [८
 वन्दिभिर्गोधिभिः^६ काले षड्भुभिः मृतमागधैः ।
- ९] कथाभिरनुकूलाभिः स्तुतिभिश्च समन्ततः ॥ ९ ॥ [९
 सर्वश्रेष्ठे कुले जातः सर्वलोकनमस्कृत ।
- १०] सर्वलोकाभिर्या त्यक्त्वा राजाश्रयमनुत्तमाम् ॥ १० ॥ [१०

१ व—०मस्तनं । म—०सम्भृतम् । ल—०संभृतम् । २ के.
 म—जातो । व—जाता । ३ व—०सरसृते । म—०सरसृते । ४ व—
 सृते । म—सृता । ५ के—वग० । ६ व—वोधितः ।

कथमिन्दीवरश्यामो रक्ताक्षः प्रियदर्शनः ।

११] व्यूढोरस्को मदाबाहुः सुसवान् भुवि तादृशः ॥ ११ ॥ [१९

अश्रद्धेयमिदं लोके न सम्यक् प्रतिभाति मे ।

१२] मुह्यते खलु मे भावः स्वप्नोऽयामिति मे मतिः ॥ १२ ॥ [१०

नूनं न पौरुषं कश्चिद्वैवं हि बलवत्तरम् ।

१३] यत्र दाशरथी रामो भूमात्रेवमशेत ह ॥ १३ ॥ [११

तृणशय्या मम भ्रातुरिदं विपरिवर्तितम् ।

१४] स्थण्डिले कथयत्येतद् रात्रौ त्रिमृदितं तृणम् ॥ १४ ॥ [१३

विदेहराजस्य मुता वैदेही प्रियदर्शना ।

१५] दायिता शयिता भूमौ स्नुषा दशरथस्य च ॥ १५ ॥ [N

मन्ये साभरणा मुक्ता यथा स्वभवने पुरा ।

१६] तत्र तत्र हि दृश्यन्ते शीर्णाः कनकविन्दवः ॥ ०१६ ॥ [१४

मन्ये भर्तुः सुखछाया यत्र सीता तपास्विनी ।

१७] सुकुमारा सती दुःखं नैव जानाति मैथिली ॥ १७ ॥ [१६

उत्तरीयमिहासक्तं मन्ये तनुतरं तथा ।

१८] यथा ह्येते प्रकाशन्ते मुक्ताः कनकतंतवः ॥ १८ ॥ [१५

सिद्धार्था खलु वैदेही पतिं यानुगता वनम् ।

१९] वयं सशयिताः सर्वे विना तेन महात्मना ॥ १९ ॥ [२१

अकर्णधारैव हि नौः पृथिवी प्रतिभाति मे ।

२०] गते दशरथे स्वर्गे रामे चारण्यमाश्रिते ॥ २० ॥ [२२

न च प्रार्थयते कश्चिन्मनसाऽपि वसुन्धराम् ।

२१] घनेऽपि वसतस्तस्य बाहुवीर्याभिपालिताम् ॥ २१ ॥ [२३

शून्यामशरणामितामचिन्तितहयाद्विपाम् ।

२२] अपाटत्तपुरद्वारां राजधानीं पितुर्मम ॥ २२ ॥ [०४

अप्रातिष्ठां परिदृष्ट्वा विषमस्थामनावृताम् ।

२३] शात्रवा^७ नाभिदृश्यन्ते^८ भक्ष्यान्विपयुतानिव^९ ॥२३॥ [२४

अद्यमभृति भूमौ हि स्वप्स्यामि कुशसंस्तरे ।

२४] फलमूलाशनो^१ नित्य जटाचीराजिनाम्बरः ॥२४॥ [२६ ✓

इम कालान्तरं तस्य कृते वत्स्याम्यहं वने ।^१

२५] तत्प्रतिश्रुतमार्यस्य नैव मिथ्या भविष्यति ॥२५॥ [२७

वसन्तं भ्रातुरर्थे मां शत्रुघ्नोऽप्यनुवत्स्यति ।

N] लक्ष्मणेन सहायोध्यामार्यो मे पालयिष्यति ॥ २६ ॥ [२८

पर्णच्छायां मुख भोक्ष्ये वनेषु निरसन्मुनिः ।

N] राज्यच्छायामयोध्यायामार्यः समुपभोक्ष्यते ॥ २७ ॥ [N

अभिपेक्ष्यामि काकुत्स्थमयोध्यायां यशस्विनम् ।

२६] अपि देवाश्च^{१०} मे^{१०} कुर्युरिमं सत्यं मनोरथम् ॥ २८ ॥ [२९

प्रसाद्यमानः शिरसा मया स्वयं

बहुप्रकार यदि न प्रपत्स्यते ।

ततो नु^{११} वत्स्यामि^{१२} चिराय राघवम्

२७] वनेचरं नार्हति मामुपेक्षितुम् ॥ २९ ॥ [३०

तत प्रट्ठा रजनी दिनक्षये

श्रयन्ति नीडानि खगाः कृतालयाः ।

विसर्जितश्चापि गुहः स्वमालय

२८] जगाम दुःखेन सहानुजीविभिः ॥ ३० ॥ [N

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे इंदुदीमूलवृत्तं^{१३}

नाम सर्गः ॥ [१००] ॥

७ घ—शत्रुवा । ८ घ, म—०भिपद्यते । ९ घ—श्रुतितोऽय पाठ ।

भक्ष्या..... भिय । म—श्रुतित पाठ । भक्ष्यान्वि .. भिय ।

१० घ—मे देयता । म—देयता । ११ व—न । १२ व, ल—

वक्ष्यामि । १३ घ—०मूलवर्तन नाम । ल—वृत्तो नाम ।

[वं—९७]=[एकाधिकशततमः सर्गः]=[दा—८९]

उपित्वा रजनीमेकां गङ्गातीरे महामनाः^१ ।

१] भरतः कल्य^२उत्थाय शत्रुघ्नमिदमब्रवीत् ॥ १ ॥ [१

उत्तिष्ठोत्तिष्ठ किं शेषे शत्रुघ्न रजनी गता । [२पृ

२] पद्मबोधं समुद्यन्तं पश्य सूर्य^३ तमोनुदम् ॥ २ ॥ [N

शीघ्रमानायय गुह शृङ्गवेरपुरेश्वरम्^४ ।

३] स हि गङ्गाभिमां वीर तारधिष्यति बाहिनीम् ॥ ३ ॥ [२८

शत्रुघ्नस्त्वब्रवीच्छ्रुत्वा भ्रातरं प्रियवान्धवम् ।

४] भरतं सोपचाराणामभिज्ञो^५ वचसां प्रभुः ॥ ४ ॥ [V

शोकशून्येन^६ मनसा त्वयि स्वपाति^७ राघव । [N

५] जागर्मि न च सुप्तोऽस्मि तवैवार्थ^८ विचिंतयन् ॥ ५ ॥ [३पृ

अपि रामः प्रसाद वः^९ कुर्यात् स पुरुषर्षभः ।

६] प्रसाद्यमानो भवता मया च सह मन्त्रिभिः ॥ ६ ॥ [N

एवमुक्त्वा तु शत्रुघ्नो भरतस्याज्ञया ततः ।

७] अब्रवीत्पुरुषांस्तत्र गुहमानयतोति सः ॥ ७ ॥ [N

इति संभाषमाणस्य शत्रुघ्नस्य महात्मनः ।

८] अभिगम्याञ्जलिं बद्ध्वा गुहो बचनमब्रवीत् ॥ ८ ॥ [४

कञ्चित्सुखं नदीतीरे याता काकुत्स्थ शर्वरी ।

९] कञ्चित् सर्वस्य सैन्यस्य सर्वतोऽनामयं प्रभो ॥ ९ ॥ [५

अथवा समुदाचारः प्रयुक्तोऽय मया तव ।

१ ल—महात्मन । २ ध ल—कल्य । म—कालम् । ३ कै—
मूहं । ४ कै—शृङ्गरीरपुरेश्वरम् । ध म—शृङ्गरीर० । ल—शंशाशर० ।
५ कै—सोपचारा० । ६ कै ल—शोकशून्येन । ७ कै सुपिति । ८ ध
म तमेवार्थ । ९ व ल—न ।

- १०] कुतो हि मुखशय्या ते स्नेहेन परितप्यतः ॥ १० ॥ [N
 भ्रातरं चिन्तयानस्य मृतं च जगतीपतिम् ।
- ११] शरीरमानसैर्दुःखैःस्नेहो ऽपि न निवर्तते ॥ ११ ॥ [N
 तयोक्तो भरतो दीनः प्रत्युवाच गुह वचः ।
- १२] मानयन् समुदाचार^{१०} हृदयेन च दुःखितः ॥ १२ ॥ [N
 मुखं नः शर्परी राजन् पूजिताश्च वयं त्वया ।
- १३] गङ्गां तु नोभिर्वह्नीभिर्दाशाः^{११} सन्तारयन्तु नः ॥ १३ ॥ [७
 ततो गुहः सत्वरितः श्रुत्वैवेश्वरशासनम् ।
- १४] मतिं प्रविश्य नगरीं स्मृत्वातीनिदमब्रवीत् ॥ १४ ॥ [८
 उत्तिष्ठत प्रदुध्यन्व ज्ञातयो भद्रमस्तु वः ।
- १५] नावः समुपकर्षध्वं तारयिष्याम[भि] वाहिनीम् ॥ १५ ॥ [९
 ते तयोक्ता समुत्थाय त्वरिता राजशासनात् ।
- १६] नावां शतानि पञ्चैव समन्तात् समुपानयन् ॥ १६ ॥ [१०
 काश्चित् स्वस्तिकचिह्नाङ्कान् महाचण्डवराः^{१२} पराः^१ - ० ।
- १७] शोभमानाः पताकिन्यो युक्ता नावः सुसम्मताः ॥ ०१७ ॥ [११
 ततः ० स्वस्तिकचिह्नाङ्गां पाण्डुकंजलसंघताम् ।
- १८] आनन्दघोषां कल्याणीं गुहो नावमुपानयत् ॥ १८ ॥ [१२
 तत्रारुरोह भरतः शत्रुश्च महायशाः ।
- १९] कौसल्या च सुमित्रा च याश्चान्या राजयोपितः ॥ १९ ॥ [१३
 पुरोहितो ऽभवत्पूर्वं ये चान्ये ब्राह्मणाः पृथक् ०
- २०] अन्तःपुरं राजभृत्यास्तथैव शक्ययनाः ॥ २० ॥ [१४
 आवासमादीपयतां तीर्थानि च निरायताम् ।

१० घ—स सदाचार । ११ घ—दासा । म, ल—माया ।

०घ । १२ कै—महाचण्डौधरा पुराः । ०कै, ल ।

- २१] भाण्डानि च^{१३} दधानां च^{१३} घोपस्त्रिदिवमस्पृशत्^{१४} ॥२१॥ [१५
तास्तु संप्रस्थिता नावः शीघ्रैर्दाशैरधिष्ठिताः^{१५} ।
- २२] वहन्त्यस्तं जनं सर्वं पार^{१६} जग्मुः समाहिताः ॥२२॥ [१६
नारीणां तारिताः काश्चित् काश्चित्परमवाजिनाम् ।
- २३] काश्चिन्नावो वहन्ति स्म यानयुध्य^{१७} महावलाः^{१८} ॥२३॥ [१७
तास्तु गत्वा पर पारमयतार्यं च त जनम् ।
- २४] निवृत्ताः कर्णधारैश्च धावन्त्यो विपुलांबुभिः ॥ २४ ॥ [१८
सवैजयन्त्यश्च^{१९} गजा गजारोहैः प्रचोदिताः ।
- २५] आरूढाः स्म प्रकाशन्ते सध्वजा इव पर्वताः ॥ २५ ॥ [१९
नावमारूढुः केचित् केचिदारूढुः पुवान् ।
- २६] केचिद् गङ्गा^{२०} घटैस्तेरुः केचित्तेरुः स्ववाहुभिः ॥२६॥ [२०
सा सर्वा ध्वजिनी गङ्गां दाशैः^{२१} सन्तारिता तदा ।
- २७] मैत्रे मूहूर्त्ते प्रययौ प्रयागवनमुत्तमम् ॥ २७ ॥ [२१

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे^{२२} गङ्गासन्तरणं
नाम सर्गः ॥ [१०१] ॥

13 ल—च दधानां च । म—चादधानां च । घ—चादधानानां ।
4 घ—घोरस्त्रि० । 1० घ, म ल—र्दाशैः । 16 कै—परा । 17 ब—
ानधुर्यं । ल—यानयुग्य । म—यानयोग्य । 18 कै, म—०यल ।
9 कै—सवैजयतश्च । 20 घ, म, ल—बुभ- । 21 घ, म, ल—दाशैः ।
2 कै, ब, म ल—अयोध्या० ।

[वं—१८] = [हृद्यधिकशततमः सर्गः] = [दा—N]

सन्तीर्य भरतो गङ्गां ससैन्यः सहमन्त्रिभिः ।

१] पुरोहितस्यानुमते गुहं वचनमब्रवीत् ॥ १ ॥

कतमेन तु देशेन गन्तव्यं यत्र राघवः ।

२] गुहं मार्गं समाचक्ष्व त्वं सदा वनगोचरः ॥ २ ॥

सोऽब्रवीद् भरतस्यैवं वचः श्रुत्वा गुहस्तदा ।

३] अभिशस्तस्य देशस्य यस्मिन् वसति राघवः ॥ ३ ॥

इतः प्रयागं काकुत्स्थ गम्यतां वनमुत्तमम् ।

४] नानापक्षिगणाकीर्णमुपेतं सलिलाशयैः ॥ ४ ॥

कमलप्रतिमालाभैः सुतीर्थैरल्पकर्दमैः ।

५] खगपादक्षतैः^१ पूर्णेनिरुद्धं नीलशेखरैः^२ ॥ ५ ॥

वनं प्रकोशमात्रं च प्रयागस्य नरर्षभ ।

६] तत्रोपित्वा च गन्तव्यं भरद्वाजाश्रमं प्रति ॥ ६ ॥

तत्र गत्वा राजपुत्र मुनिं तमभिवाद्रथ^३ ।

७] धर्मज्ञं तपसा सिद्धं त्रिषु लोकेषु विश्रुतम् ॥ ७ ॥

तस्य त्वमाशीर्वचनं गिरश्च हृद्यद्गमाः ।

८] श्रुत्वा यास्यासि संहृष्टो द्रष्टुं भ्रातरमग्रजम् ॥ ८ ॥

उपित्वा रजनीं^४ तत्र^५ विभवैस्तेन पूजितः ।

९] दृष्ट्वा हि मोक्षयते न त्वामेकामनुगतो निशाम् ॥ ९ ॥

शुवाणमेव तु गुहं सत्कृत्य भरतस्ततः^६ ।

१.०] एवमस्तिवति तं वाक्यं परिष्वज्येदमब्रवीत् ॥ १.० ॥

गच्छ सौम्य निवर्तस्व समस्तैर्ज्ञातिभिः सह ।

१ म—०रुतै । २ कै—०शेखरै । ल—०शेखरै । ३ कै—०वाद्ये
म—०वाद्ये । ४ कै, म—तत्र रजनीं । ५ व—०स्तदा ।

- १.१] सत्कृतश्चानुयातश्च भृशं प्रीतोऽस्मि ते^६ गुणैः ॥ १.१ ॥
 भ्रातुर्मे पूजितं सख्य^७ त्वया रामस्य धीमतः ।
- १.२] अनुरागश्च भक्तिश्च सौहृदं च प्रदर्शितम् ॥ १.२ ॥
 भरतेनाभ्यनुज्ञातो गुहस्तु ज्ञातिभिः सह ।
- १.३] ययौ संपूज्य भरतं सोपाध्यायपुरोगमम् ॥ १.३ ॥
 ततः प्रतिगतो नावं गुहो ज्ञातिसमन्वितः ।
- १.४] जगाम सेनया सार्द्धं प्रयागं भरतो वनम् ॥ १.४ ॥
 सुमन्त्रं दैशिकं कृत्वा मन्त्रिणं राघवामियम् ।
- १.५] मन्त्रकर्मणि च प्राज्ञं देशे काले च कौविदम् ॥ १.५ ॥
 सफलान् पादपान् पश्यन् पुष्पाणि च समन्ततः ।
- १.६] वन्याद्विजानां च रुतं शृण्वन्^८ श्रोत्रमनोहरम्^९ ॥ १.६ ॥
 गुणान् रामस्य कथयन् मैथिल्या लक्ष्मणस्य च ।
- १.७] अगुणांश्चात्मनो मातुः कैकेय्याः समुदाहरन् ॥ १.७ ॥
 अध्यर्धं योजनं गत्वा ददर्श सुमहद्वनम् ।
- १.८] प्रयागमिति विख्यातं यथा चैत्ररथं तथा ॥ १.८ ॥
 तत्प्रविश्याश्रमपदं सर्वकामफलप्रदम्^{१०} ।
- १.९] शोभितं पङ्कजवनैः सुतीर्थं बहुपुष्करैः ॥ १.९ ॥
 अभिगम्य प्रयागं तद्^{११} देवस्थानमनुत्तमम् ।
- २०] प्रदक्षिणं प्रणामं च चकार भरतस्तदा ॥ २० ॥
 ताः सर्वा मातरस्तस्य^{११} शत्रुघ्नश्च महामतिः ।
- २१] प्रयाताश्चाप्रमत्ताश्च चक्रुरेनं प्रदक्षिणम् ॥ २१ ॥
 ते ऽभिवाद्य विनिष्क्रम्य वनात्तास्मादनन्तरम् ।

२२] आश्रयं क्रोशमात्रे तु ददृशुः पिण्डितद्रमम्^{१२} ॥ २२ ॥

भरद्वाजसगोत्रस्य^{१३} महर्षेर्भावितात्मनः ।

२३] आश्रमं भरतो दृष्ट्वा प्रहर्षमतुलं ययौ ॥ २३ ॥

आश्रवास्य तां चापि चमूं महात्मा

निवेशयित्वा च यथोपजोषम् ।

द्रष्टुं भरद्वाजमृषिमर्यं^{१४}

२४] गन्तुं मार्तिं राजसुतश्चकार ॥ २४ ॥ [८९।२२

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे^{१५} प्रथागवनगमनं

नाम सर्गः ॥ [१०२] ॥



१२ म-पीडित० । १३ म-भारद्वाज० । १४ कै-०मृषियर्यं ।
पार्श्वे भिन्नमस्यां "सु" इति लिखित्वा ०मृषिसुधर्यं इत्येवं पाठ
प्रदर्शितः । १५ कै, य, म, ल-अयो० ।

[वं-९९] = [त्र्युत्तरशततमः सर्गः] = [दा—९०]

भरद्वाजाश्रमं गत्वा दूरोदेव नरर्षभः ।

१] बल सर्वमवस्थाप्य जगाम सह मन्त्रिभिः ॥ १ ॥ [१

पद्मधामेव स धर्मज्ञो न्यस्तशस्त्रपरिच्छदः ।

२] वसानो वाससी क्षौमे पुरस्कृत्य पुरोहितम् ॥ २ ॥ [२

सूपद्वारं सुसंमृष्टं कदलीवनशोभितम् ।

३] क्षान्तव्यालमृगाकीर्णं वेदीमण्डलमण्डितम् ॥ ३ ॥ [N

स्वर्गस्य विवृतं^१ द्वार भ्राजमानं वनश्रिया ।

४] नातिदूरं ततो गत्वा स ददर्श तमाश्रमम् ॥ ४ ॥ [N

तत्प्रविश्याश्रमपटं भरतः सपुरोहितः ।

५] ददर्श परमोदारमूर्षिं ज्वलनतेजसम् ॥ ५ ॥ [N

ततः सन्दर्शने तस्य भरद्वाजस्य राघवः ।

६] मन्त्रिणस्तत्र विन्यस्य जगाम सपुरोहितः ॥ ६ ॥ [३

ततो वसिष्ठं दृष्ट्वैव भरद्वाजो महातपाः ।

७] सञ्चचालासनात्तस्माच्छिष्यान् पाद्यमिति श्रुत्वा ॥७॥ [४

समागम्य वसिष्ठेन भरतेनाभिवादेतः ।

८] अबुध्यत महातेजाः पुत्रौ दशरथस्य तौ ॥ ८ ॥ [५

दत्त्वा च स ऋपिस्ताभ्यामपि मूलफलादिकम् ।

या ९] आनुपूर्व्यात्^२ स धर्मात्मा सर्वाश्चैवानुपायिनः^४ ॥९॥ [६

पप्रच्छ कुशल चास्य राज्ये कोशे पुरे तथा ।

१०] ज्ञात्वा मृतं दशरथं स राजानं न पृष्टवान् ॥ १० ॥ [७

१ य, म, ल—दृष्ट्वा । २ म—विवृत- । ३ म, य, ल—अनुपूर्व ।
ल पुस्तके केनचित् पश्चात् “आनु” इत्येष दृष्टम् । ४ कै—०घात्र
घायिनः । म, ल—०घात्रयायिनः ।

वसिष्ठभरतौ चैनं पयच्छतुरनामयम् ।

- ११] शरीरे चाग्निहोत्रे च शिष्येषु भृगपाक्षिषु ॥ ११ ॥ [८
 तथेति च प्रतिज्ञाय भरद्वाजो महातपाः ।
- १२] भरतं प्रत्युवाचेदं राघवापेक्षया मुनिः ॥ १२ ॥ [९
 किमागमनकृत्यं ते परित्यज्य नृपश्रियम् ।
- १३] एतदाचक्ष्व मे सर्वं न हि तुष्यति^६ मे मनः ॥ १३ ॥ [१०
 मुपुत्रे यमभिन्नघ्नं कौसल्याऽऽनन्दवर्द्धनम् ।
- १४] यो^७ वनं^८ चीरवसनः प्रयातः सह सीतया ॥ १४ ॥ [११
 नियुक्तः स्त्रीनियुक्तेन^९ पित्रा यः सत्यवादिना ।
- १५] भव त्वं वनवासीति समाः किल चतुर्दश ॥ १५ ॥ [१२
 कश्चित् त्वं तस्य^{१०} रामस्य धार्मिकस्य क्षमावतः ।
- १६] निःस्नेहो^{११} राज्यलोभेन विकल्थितुमिहागतः ॥ १६ ॥ [N
 तस्यापापस्य पापं त्वं^{१२} न कश्चित्कर्तुमर्हसि ।
- १७] अकण्ठक भोक्तुमना राज्यं तस्याग्रजस्य च ॥ १७ ॥ [१३
 न खल्वपापे पापं ते कार्यं तस्मिन्महात्मनि ।
- १८] यदसौ त्वत्कृते^{१३} पित्रा वनमेव विवासितः ॥ १८ ॥ [N
 एवमुक्तस्तु भरतो भरद्वाजेन^{१४} धीमता ।
- १९] विवर्णवदनो भूत्वा प्रत्युवाच कृताञ्जलिः ॥ १९ ॥ [१४
 हतोऽस्मि भगवन्नेव यदि मामवगच्छसि ।
- २०] मयि ते या विशङ्केयं नाहं तां कर्तुमुत्सहे ॥ २० ॥ [१५
 न मे तदिष्टं^{१५} माता मे यदवोचन्मदन्तरे ।

६ य—शुष्यति । म—श्रुति । ६ ल—युयाम । ७ ल—स्त्रीषु
 युक्तेन । म—श्रीणियुक्तेन । ८ य—किल । ९ कै, म, ल—निस्नेहो ।
 १० कै—नास्ति । ११ ल—त्वद्गते । १२ म—भारद्वाजेन । १३ कै,
 ल—तमिष्टं ।

- २१] नाहमेतां समीक्षेयं नैतद्वचनमाददे ॥ २१ ॥ [१६
पातितं^{१४} ह्ययशो मूर्ध्नि मात्रा मे राज्यलुब्धया ।
- २२] तन्नाहमनुमन्येयं न चैतद्विदितं मम^{१५} ॥ २२ ॥ [N
को जातो भूमिपालानां शशाङ्कविमले कुले ।
- २३] ज्येष्ठस्य भ्रातुरिष्टस्य द्रुह्येत व[च]त निर्घृणः ॥ २३ ॥ [N
न मे राज्यश्रिया कार्यं न सुखेन न चात्मना ।
- २४] तमेव राघवं ज्येष्ठं भ्रातरं वनवासिनम् ॥ २४ ॥ [N
अहं तु तं नरच्याघ्रं प्रसादयितुमागतः ।
- २५] अभिनेतुमयोध्यायां^{१६} पादौ वाप्सुपसेवितुम् ॥ २५ ॥ [१७
तन्मापेवगुणं मत्वा प्रसादं कर्तुमर्हसि ।
- २६] शंस मे भगवान्^{१७} रामः क्व संगति महामतिः ॥ २६ ॥ [१८
एतच्च वदतस्तस्य भरतस्य महात्मनः ।
- २७] रामस्नेहाभिभूतस्य सहसा वाप्समागतम्^{१८} ॥ २७ ॥ [N
वाप्सक्लिन्नमुखं चैनं भरद्वाजोऽब्रवीदिदम् ।
- २८] उपपन्नमिदं पुत्र तवाद्य वचनं शुभम् ॥ २८ ॥ [N
परितुष्टं च विज्ञाय तमाकारैर्महामुनिम् ।
- २९] प्रशृङ्खास्रूणि भरतः पुनर्वाक्यमुवाच ह ॥ २९ ॥ [N
यथास्ति मयि विश्वासो यद्यपेक्ष्योऽहमस्मि ते ।
- ३०] शंस मे भ्रातरं रामं कसत्समिति वर्तते ॥ ३० ॥ [N
तस्यैवं भाषमाणस्य राघवं परिपृच्छतः ।
- ३१] मनश्चक्रे भरद्वाजो वक्तुमेनं महामुनिः ॥ ३१ ॥ [N
पृजयित्वा यथान्यायं^{१९} भरद्वाजस्तपोधनः ।

१४ कै, ल—पतितं । १५ घ—तव । १६ घ, ग, ल--योष्या
तु । १७ घ, म—भगवन् । १८ घ, म—वाप्स आगतम् । १९ कै, घ—
यथान्याय्यं ।

३२] उवाचेदं महातेजाः महसन् भरत वचः ॥३२॥ [१९

एव त्वयि नरव्याघ्र युक्तमिक्ष्वाकुवशजे^{२०} । [२०५

३३] उपावर्तयितुं यस्त्वं वनादिच्छसि राघवम् ॥३३॥ [N

गुरुवृत्तिर्दमश्चैव सानुक्रोशगुणक्षमा^{२१} । [२०७

३४] एतान्येव सुवर्णानि शरीरे भूषणानि^{२२} ते ॥३४॥ [N

विदित्वा तत्त्वं^{२३} सद्यः^{२३} शौचगुणं तव ।

३५] भवतः^{२४} श्रोतुकामेन प्रियमेतदुदाहृतम् ॥३५॥ [N

श्रूयतां तु महाबाहो धर्मज्ञ गुरुवत्सल ।

३६] यत्र राजीवताम्राक्षो बन्धुस्तव स राघवः ॥३६॥ [N

पृ३७] जाने चाप्यन्तरस्थ ते भाव चन्द्राशुनिर्मलम् । [५२१

पृ३८] देशे च चित्रकूटस्य राघव' सह भार्यया ।

उ३८] निवसत्याश्रमे रामो लक्ष्मणेनानुपालितः ॥३७॥ [२२

श्वो गन्ताऽसि सहामात्यो वस त्वं समुहज्जनः ।

३९] त्वामघार्चितुमिच्छामि काममेतव^{२५} कुरुष्व मे ॥३८॥ [२३

ततस्तपेत्येवमुदारदर्शनः

प्रतीतरूपो भरतो ऽब्रवीद्वचः ।

चकार बुद्धिं च महाश्रमे मुनेस

४०] तदा निवासाय नराधिपात्मज' ॥३९॥ [२४

इत्यार्षे रामायणेऽथोध्याकाण्डे भारद्वाजाश्रमनिवासो^{२६}

नाम सर्गः ॥ [१०३] ॥



२० व-यत्तुमि० । २१ व म-०गुणाक्षमा । ल-०नुक्रोश गुणा
क्षमा । २२ व, म-भाषणानि । २३ व म सत्य० । २४ व-भवता ।
२५ व, म-काममेत । २६ भरद्वा० ।

[वं-१००]=[चतुरुत्तरशततमः सर्गः]=[वा-९१]

कृतबुद्धिं निवासाय तत्रैव स मुनिस्तदा ।

१] भरत केकयीपुत्रमातिथ्येन न्यमन्त्रयत् ॥१॥ [१]

अब्रवीद् भरतस्त्वेन योदित भवता कृतम् ।

२] पाद्यमर्प्यमथातिथ्यं वने यदुपपद्यते ॥२॥ [२]

अथोवाच महातेजा भरत प्रीतिमान्वचः ।

३] जाने त्वां मत्प्रिये युक्तं तुष्टस्त्य येन केनचित् ॥३॥ [३]

सेनायास्तु तवैतस्याः कर्तुमिच्छामि भोजनम् ।

४] प्रीतिः कृता ममाप्येव^१ भविष्यति नरर्षभ ॥४॥ [४]

किमर्थं चास्य^२ निक्षिप्य दूरे बलमिहागतः ।

५] कस्मान्नेहोपयातोऽसि सवल' सहघाहनः ॥५॥ [५]

भरतः प्राञ्जलिस्त्वेवं प्रत्युवाच तपोधनम् ।

६] न बलेनोपयातोऽस्मि भगवन् भयतोभयात् ॥६॥ [६]

मनुष्या वार्जियुक्ताश्च मत्ताश्च वरवारणाः ।

७] प्रच्छाद्य महर्ती भूमिं भगवन्ननुयान्ति माम्^३ ॥७॥ [७]

ते वृक्षानुदकं भूमिमाश्रमेपूटजास्तथा^४ ।

८] मा हिंस्युरिति तेनाहमायातो गुरुभि सह ॥८॥ [८]

आनीयतामितः सैन्यमित्यादिष्टो महर्षिणा ।

९] तथा चक्रे स भरतस्तेन प्रीतो ऽभवन्मुनिः ॥ ९ ॥ [१०]

पू१०] अपिशालां^५ प्रविश्याथ चारि सृष्ट्वा^६ च^७ समुतः [११५]

N] समाधिमवलब्ध्याथ भरतस्य चै पृजने ॥१०॥ [N]

१ व, म, ल ममाप्येव । २ व चासि । ३ ल-ताम् । ४ ल-

०माभमेपुटजास्तथा । म ०माभमेशुटजास्तथा । ५ क-सृष्ट्वाथ ।

दिव्येन योगेन तदा चिन्तयामास वै मुनिः ।

N] विशिष्टतरमेवास्य करोम्यातिथ्यमद्य वै ॥११॥

[N

वसिष्ठप्रमुखा विप्रास्समाप्ताग्नेऽद्य चाश्रमम् ।

N] परम यत्रमासाद्य दिव्यज्ञानान्वितो मुनिः ॥१२॥

[N

उ१०] आतिथ्यार्थं भरद्वाजो विश्वकर्माणमाह्वयत् ।

[११३

उवाच विश्वकर्माणमयं त्वष्टारमेव च ।

११] आतिथ्यं कर्तुमिच्छामि तच्च मे संविधीयताम् ॥१३॥

[१२

प्राक्स्रोतसश्च या नद्यः प्रत्यक्स्रोतस एव च ।

१२] पृथिव्यामन्तरिक्षे च ता इहायान्तु सर्वशः ॥१४॥

[१४

अन्याः स्रवन्तु मैरेय सुरामन्याः सृनिष्टि [इष्टि] ताः ।

१३] अपराश्रोदकं शीतमिष्टुदण्डरसोपमम् ॥१५॥०

[१५

आह्वये^७ देवगन्धर्वान^८ विश्वावसुहृदाद्बृह[न] ।

१४] तथैवाप्सरसो दिव्याः किन्नराश्चैव सर्वशः ॥१६॥०

[१६

पृ१५] घृताचीं मेनकां रम्भां मिश्रकेशीमलबुसाम् ।

N] तिलोत्तमां च हेमां च मुअकेशीं^९ बरुधिनीम् ॥१७॥

[१७

उ१५] इन्द्रादींस्त्रिदशांश्चैव ब्रह्माण^{१०} च महाद्युतिम् ।

पृ१६] सर्वास्तुम्बुरुणा^{११} सार्द्धमाह्वयेः^{१२} सपरिच्छद्गान्^{१३} ॥१८॥[१८

उ१६] वन्य^{१४} कुरुष्व मे दिव्य वासः पुष्पाविलेपनम् ।

N] दिव्यनागफलं चैव कारयेस्त्वमिहाद्य तु ॥१९॥

[१९

इह मे भगवान् सोमो विदधात्वन्नमुत्तमम् ।

१७] भक्ष्यं भोज्यं च चोप्य^{१५} च लेह्यं च विविधं बहु ॥२०॥ [२०

० के, म, ल--०माण मय । ० म । ७ के, म, ल--आह्वये देष० ।

८ य--मुअके० । ९ य--ब्रह्माणं । ल--ब्रह्माणं । १० म--सर्वास्तु० ।

११ के म--०माह्वयेस्तपरि० । १२ म--याज्य । १३ के, य--चूप्य ।

के पुस्तके पश्चात् " चोप्य " इति छतम् । म--द्वय ।

विचित्राणि च माल्यानि पादपांश्च मधुश्च्युतः ।

१८] सुरादीनि च पेयानि मांसानि विविधानि च ॥२१॥ [२१

एतत् समाधिना युक्तस्तेजसा नियमेन च ।

१९] शिलास्वरसमायुक्त^{१४} तपसा चाब्रवीन्मुनिः ॥२२॥ [२२

मनसा ध्यायतस्तस्य प्राङ्मुखस्य कृताञ्जलेः ।

२०] आजग्मुस्तानि सर्वाणि दैवतानि पृथक् पृथक् ॥२३॥ [२३

मलयान्^{१५} मन्दराच्चैव सेव्यः स्वेदनुदो ऽनिलः ।

२१] सुगन्धिः प्रवचो तत्र हर्षयन् सर्वशो जनान् ॥२४॥ - [२४

ततोऽभ्यवर्षन्त घना दिव्याः कुसुमवृष्टयः ।

२२] देवगन्धर्वनिर्योपो दिक्षु सर्वाष्टु शुश्रुवे ॥२५॥ [२५

प्रववुश्चोत्तमा गन्धा ननृतुश्चाप्सरो गणाः ।

२३] प्रजगुर्देवगन्धर्वा^{१६} वीणाश्चैवाप्यवादयन्^{१७} ॥२६॥ [२६

स शब्दो द्यां च भूमिं च प्राणिनां श्रवणानि च ।

२४] विवेशोच्चारितः सम्यग् देवधिष्ण्येषु युक्तिमान् ॥२७॥ [२७

तस्मिन्नुपरते शब्दे दिव्यश्रोत्रपथानुगे^{१८} ।

२५] ददर्श भरतः सर्वं विहितं विश्वकर्मणा ॥२८॥ [२८

वभूव सुसमा^{१९} भूमिः^{२०} समन्तात् पञ्चयोजनम् ।

२६] शाद्वलैर्बहुभिश्छन्ना नीलवैदूर्य सन्निभैः ॥२९॥ [२९

तत्र बिल्वाः कपित्थाश्च पनसा वीजपूरकाः ।

२७] आमलक्यश्च जेव्वश्च चूताश्च^{२१} फलभूषणाः ॥३०॥ [३०

सृष्टरेभ्यः कुरुभ्यश्च वनं दिव्योपभोगवत् ।

१४ ब—शिलास्वर । ल—शिलांबुर । १५ य—मलयान् । म—मलयं ।

१६ ल—प्रजगुर्वे० । १७ म—०श्चैवापि वादयन् । १८ ब—दिव्ये

श्रोत्रे० । १९ ल—सुसमा । ब—समा । २० य—भूमिः । २१ ल—

- २८] आजगाम नदी दिव्या तत्र चापि सरस्वती ॥३१॥ [३१
 अन्याश्च नद्यो बह्व्योऽथ नानारसवहास्तथा ।
- २९] आजग्मु वचनात्तस्य महर्षे भवितात्मनः ॥३२॥ [४
 चतुः^{२२} शालानि शुभ्राणि शालाश्च गजवाजिनाम् ।
- ३०] हर्म्यमासादसङ्घाश्च तोरणानि महान्ति च ॥३३॥ [३२
 सितमेघप्रभं चापि राजवेश्म सतोरणम् ।
- ३१] शुक्रमाल्यास्तरास्तीर्णं गन्धतोयसमुक्षितम् ॥३४॥ [३३
 चतुरश्रमसंवाधं शयनासनयानवत ।
- ३२] दिव्यै^{२३} सर्वरसैर्युक्तं दिव्यभोजनवस्त्रवत ॥ ३५ ॥ [३४
 उपकल्पितसर्वाङ्गं धौतनिर्मलभाजनम् ।
- ३३] क्लृप्तादिव्यासनं श्रीमदास्तीर्णशयनोत्तमम् ॥ ३६ ॥ [३५
 प्रविवेश महाबाहुरनुज्ञातो महर्षिणा ।
- ३४] वेश्म तद्गन्धसम्पन्नं भरतः केकयीमुतः ॥ ३७ ॥ [३६
 अनुजग्मुश्च ते^{२४} सर्वे मन्त्रिणः सपुरोहिताः ।
- ३५] बभूवुश्च मुदा युक्ता दृष्ट्वा वेश्मविधिं ततः ॥ ३८ ॥ [३७
 तत्र राजासनं दिव्य व्यजन छत्रमेव च ।
- ३६] भरतस्याभवद्युक्तमनुरूपं^{२५} च^{२५} मन्त्रिणाम् ॥३९॥ [३८
 आसनं पूरयामास रामायापि प्रणम्य सः ।
- ३७] बालव्यजनमादाय बीजयन् भरतस्तदा ॥ ४० ॥ [३९पू
 N] बीजायित्वा ऽर्चयित्वा च न्यपीदत्परमासने । [३९उ
- पू३८] आनुपूर्व्यान्निपेदुश्च सर्वे मन्त्रिपुरोहिताः ॥ ४१ ॥ [४०पू
 उ३८] ततः सेनापातिः पश्चात् प्रशस्ता^{२६} च^{२६} निपेदतुः । [४०उ

२२ ब- चतुश् । २३ कै- दिव्यैस् । ब- दिव्य- । २४ ब, म, ल-
 तं । २५ ब-०मनुरूपश्च । २६ ब-प्रशस्ताश्च । ल-प्रशादस्तुश्च ।

- पृ३९] ततः परममातिथ्यं^{२७} गन्धरूपरसान्वितम् ॥ ४२ ॥ [N
 उ३९] वसिष्ठपूर्व काकुत्स्थः प्रतिजग्राह धर्मावित् । [N
 पृ४०] ताश्च सर्वा मुहूर्तेन नद्यः पायसकर्दमाः ॥३॥ [पृ४१
 उ४०] उपातिष्ठन्त भरत भरद्वाजस्य शासनात् । [उ४१
 पृ४१] तासामुभयतः कूलं पाण्डुमृत्तिकलेपनाः ॥४४॥ [पृ४२
 उ४१] रम्याश्चावसथा दिव्या ब्राह्मणस्य प्रसादतः । [उ४२
 पृ४२] ततश्चैव मुहूर्तेन दिव्याभरणभूषिताः ॥४५॥ [४३पू
 उ४२] आजग्मुर्बहुसाहस्राः कुवेरप्रहिताः स्त्रियः । [४४उ
 पृ४३] सुवर्णताराप्रतिमाः पद्मकिञ्जल्कसप्रभाः ॥४६॥^{२८} [४४पू
 याभिर्गृहीतः पुरुषो भवत्युत्तमचेतनः ।
 ४४] आसन् त्रिंशतिसाहस्राः स्त्रियो वै नन्दनाद्वनात् ॥४७॥ [४५
 नारदस्तुम्बुरूर्गोपः पर्वतः सूर्यमण्डलः ।
 ४५] एते गन्धर्वराजानो भरतस्याग्रतो जगुः ॥४८॥ [४६
 अलंबुसा मिश्रकेशी पुण्डरीकाक्ष्य वामना ।
 ४६] उपानृत्यन्त भरत भरद्वाजस्य^{२९} शासनात् ॥४९॥ [४७
 यानि माल्यानि देवानां यानि चैत्ररथे वने ।
 ४७] प्रयागे तान्यदृश्यन्त भरद्वाजस्य शासनात् ॥५०॥^० [४८
 दिव्यगन्धरसास्तत्र शम्यग्राहा^{३०} विभीतकाः ।
 N] अश्वत्था रक्तमालाश्च भरद्वाजनियोजिताः ॥५१॥ [४९
 रसान्नाश्चैव तालाश्च तिलकाश्चैव वजुलाः ।
 N] प्रमृष्टास्तत्र संपेतु ककुभाश्चैव^{३१} वामनाः ॥५२॥ [५०

27 के, म—०मातिष्ठ । 28 घ, म, ल—आजग्मुर्बहुसाहस्रा-
 पद्मकिञ्जल्कसप्रभाः । सुवर्णताराप्रतिमा. कुवेरप्रहिता. [ल-प्रतिमा]
 स्त्रिय. ॥ 29 म—भारद्वाजस्य । 0म, ल । 30 घ, म, ल शस्य० ।
 31 ब, म—ककुभश्चैव ।

शिशपाऽऽमलका जेवस्तयान्याः कानने लताः ।

४८] ममेदाविग्रहं कृत्वा भरद्वाजाश्रमे^{३२} वसन् ॥६३॥ [६१

सुरां सुरापास्त्रपिवन् पायस च बुभुक्षिताः ।

४९] मांसानि च महार्हाणि भक्ष्यं वै^{३३} यावदीप्सितम् ॥६४॥ [६२

आच्छादेयन्तः स्नान्तश्च नदीतीरेषु वल्गुषु । .

६०] अप्येकमैकं पुरुषं^{३४} प्रमदाः^{३४} पञ्च पञ्च वै ॥६५॥ [६३

संवाहयेन्त्युपासीनाः शुभा रुचिरलोचनाः ।

६१] परिगृह्य तथाऽन्योन्यं पाययन्ति वराङ्गनाः ॥६६॥ [६४

हयानश्वानजानुघ्रांस्तथैव सुरमीसुतान् ।

६२] इक्षंश्च मधुरास्वादान् भोजयामासुरेव च ॥ ६७ ॥ [६५पू

इक्ष्वाकुवरयोधास्ते^{३५} चोदयन्तो महानलाः ।

६३] नाश्वबन्धोऽश्वमज्ञासीनि न गजं कुञ्जरग्रहः ॥ ६८ ॥ [६७पू

मत्तोन्मत्तसमाकीर्णा सैवमासीन्महा चमूः ।

६४] तर्पिताः सर्वकामैस्ते दिव्यचन्दनभूषिताः ॥ ६९ ॥ [६८पू

अप्सरोगणसंघुष्टाः^{३६} सैन्यो^{३७} वाच^{३७} उदैरयन् ।

६५] नैवायोध्यां गमिष्यामो गमिष्यामो न दण्डकम् ॥६०॥ [६९पू

कुशलं भरतस्यास्तु रामस्यास्तु तथा सुखम् ।

६६] इत्यबोचन्त योधास्ते हस्त्यश्वारोहबन्धकाः^{३८} ॥६१॥ [६०पू

N] अनाथास्त त्रिधिं लब्ध्वा पुण्या^{३९} वाच उदैरयन् । [६०उ

संमहृष्टाः प्रतिजगु र्नेरास्तत्र सहस्रशः ।

६७] भरतस्यानुयातारः स्वर्गोऽयमिति चाद्युवन् ॥ ६२ ॥ [६१

३२ म—भारद्वा० । ३३ घ, म ल—घा । ३४ य, म, ल—प्रमदा
पुरुषं । ३५ ल—इक्ष्वाक्यवद० । ३६ घ—संघुष्टाः । ३७ म, ल—सैन्य-
य-सैन्यवादा । ३८ ल—०गन्धकाः । ३९ म, ल—पुण्य ।

ततो भुक्तवतां तेषां तदन्नममृतोपमम् ।

५८] दिव्यानामथ^{४०} भोगानामभवद् भक्षणे मतिः ॥६३॥ [६३

ब्रह्मचारिगृहस्थाश्च वानप्रस्थाश्च सर्वशः ।

५९] बभूवुः सुभृशं वृत्ताः सर्वे चादृतवाससः ॥०६४॥ [६४

कुञ्जराश्च खरोष्ट्राश्च गोवाजिमृगपाक्षिणः ।०

६०] बभूवुः सुभृशं तत्र नानाविधगतिस्वराः ॥ ६५ ॥ [६५

नाशुक्लवासास्तत्रासदि^{४१} धुधितो मलिनोऽपि वा ।

६१] रजसा ध्वस्तकेशो वा नरः कश्चिदप्यभवत् ॥६६॥ [६६

बभूवुर्वनपार्श्वेषु हृदाः पायसकर्दमाः ।

६२] ताश्च कामवहा नद्यो द्रुमाश्चैव मधुश्च्युतः ॥ ६७ ॥ [६९

वाप्यो मैरेयपूर्णाश्च मिष्टमांसचयैर्वृताः ।

६३] प्रतप्तपिठिरैश्चैव मार्गमायूरतैश्चिरैः ॥ ६८ ॥ [७०

आजैरथ च वाराहैर्मिष्टान्नवरसञ्चयैः ।

६४] फलैर्निर्व्यूढसम्बद्धैः^{४२} सूपैः पूषैश्च संस्कृतैः ॥ ६९ ॥ [६७

दृश्यन्ते चान्नपूर्णानि मुथुभानि च तत्र वै ।

६५] पाश्रीणां^{४३} च सदृशाणि शातकौभान्यनेकशः ॥७०॥ [७१

स्थाल्यःकुंभाः कलशश्च^{४४} दत्रः पूर्णाः^{४५} सुसस्कृताः^{४५} ।

६६] गोरसस्य च तक्रस्य कपित्थसमगन्धिनः ॥ ७१ ॥ [७२

हृदाः पूर्णान्नशालाश्च^{४६} दध्नः श्वेतस्य चापरे ।

६७] बभूवुः पयसश्चापि शर्करायाश्च^०सञ्चयाः^० ॥ ७२ ॥ [७३

कल्कचूर्णकपायांश्च वासांसि विविधानि च ।०

६८] ददुर्भोज्य रसांश्चापि^०तीर्थेषु सरितां वराः ॥ ७३ ॥ [७४

। 40 ब, म, ल—०मपि० । ०म । 41 कै—स शुक्ल^० ।

42 कै, ल—०निर्व्यूढ । 43 ध—पाश्रीणा । 44 ध—कलशश्च ।

45 ब, म, ल—पूर्णाश्च सस्कृता 46 ध—पूर्णाश्च शालाश्च ।

श्लक्ष्णानंशुमतरचैव दन्तधावनसञ्चयान् ।

- ६९] श्लक्ष्णचन्दनकल्काश्च^{४९} समुद्रेषु च तिष्ठतः ॥ ७४ ॥ [७५
 दर्पणा परिमृष्टाश्च^{५०} माल्यानि विविधानि च ।
 ७०] पादुकोपोनहश्चैव युग्यानि च संहस्रशः । । ७५ ॥ ० [७६
 अञ्जन्यः ककताः कर्चा [ः] शस्त्राणि विविधानि च ।
 ७१] तनुत्राणि पिचित्राणि शयनान्यासनानि च ॥ ७६ ॥ ० [७७
 प्रतिपानहृदाः पूर्णाः खरोष्ट्रगजवाजिनाम्^{५१} ।
 ७२] अवगाह्याः सुतीर्याश्च हृदाः सौत्पलपुष्कराः^{५०} ॥ ७७ ॥ [७८
 नीलवैडूर्यवर्णाश्च मृष्टानांवाससञ्चयान्^{५१} ।
 ७३] निवासार्थं पशूनां च ददृशुस्तत्र तत्र ह ॥ ७८ ॥ [७९
 व्यस्मयन्त मनुष्यास्ते स्वमकल्पं^{५२} तदद्भुतम्^{५२} ।
 ७४] दृष्ट्वाऽऽतिथ्यं कृतं तादृग् भरतस्य महार्पिणा ॥ ७९ ॥ [८०
 इत्येव रममाणानां देवानामिव नन्दने ॥
 ७५] भरद्वाजाश्रमे रम्ये सा रात्रिव्यत्यवर्तत^{५३} ॥ ८० ॥ [८१
 प्रतिजग्मुश्च तां नीर्योगिन्धर्वाश्च यथागतम् ।
 ७६] भरद्वाजमनुज्ञाप्य ताश्च सर्वा वराङ्गनाः ॥ ८१ ॥ [८२
 तथैव मत्ता मद्विरोक्तया नरास्
 तथैव दिव्यागुरुचन्दनोसिताः ।
 तथैव दिव्या विविशोत्तमस्रजः
 ७७] गृयकृ प्रकीर्णा मनुजैः प्रमार्दिताः ॥ ८२ ॥ [८३
 इत्यार्षे रामायणेऽयोध्याकाण्डे भरद्वाजातिथ्यं
 नाम सर्गः ॥ [१०४] ॥

४७ म—कल्पाश्च ।

य—कल्काश्च ।

४८ म—परिमृष्टाश्च ।

म, ल ० ।

म, ल ० ।

४९ म—श्लक्ष्णचन्दनम् ।

५० म—सौत्पलम् ।

५१ ल—मृष्टम् ।

य—०११५५० ।

५२ म—०कल्पान्तमद्भुम् ।

५३ ल म—व्यत्यवर्तत ।

[वं-१०१]=[पञ्चोत्तरशततमः सर्गः]=[दा-६२]

रजनीं तामृपित्वाऽथ भरतः सपरिच्छदः ।

१] कृतातिथ्यं भरद्वाजं कश्ये^१ऽभ्येत्याभ्यवादयत् ॥१॥ [१

तमृषिः पुरुषव्याघ्रं संप्रेक्ष्य प्राञ्जलिं स्थितम् ।

२] हुताग्निहोत्रो^२ भरतं भरद्वाजोऽभ्यभाषत ॥२॥ [२

कश्चित्^३ पुत्रं सुखेनेयं तवाद्य रजनीं गता ।

३] समग्रभोजनं कश्चिदातिथ्यं शंस मेऽनघ ॥३॥ [३

तमुवाचाञ्जलिं कृत्वा भरतोऽभिपणम्य च ।

४] आश्रमादनतिक्रान्तमृषिमुत्तमतेजसम् ॥४॥ [४

सुखोषितोऽस्मि भगवन् समन्त्रिवलवाहनः ।

५] तपितः^४ सर्वकामैश्च भगवन् सर्वशस्त्वया ॥५॥ [५

अपेतवलेशसन्तापाः सुभिक्षाः सुप्रतिष्ठिताः ।

६] अपि मेऽप्यानुपादाय सुखिनः स्म सुखोषिताः^५ ॥६॥ [६

आमन्त्रये त्वां भगवन् मामनुज्ञातुमर्हसि^६ ।

७] भ्रातुस्समीपं यास्यामि शुभेनेक्षस्व चक्षुषा ॥७॥ [७

आश्रमं तस्य धर्मज्ञ राघवस्य महात्मनः ।

८] आचक्ष्व केन मार्गेण गच्छेयं भगवन्नहम् ॥८॥ [८

योजनै कतिभिरचैव कस्मिन् देशे स आश्रमः ।

९] ससीतालक्ष्मणसखो धर्मात्मा यत्र वर्तते^७ ॥९॥ [९

१ व-काल्येभ्येत्या० ।

म-कालेभ्योभ्या० ।

२ व, ल-हुत्वाग्निहोत्र ।

३ व, ल, म-कश्चित् ।

४ व-तपिताः ।

५ ल-ससुखोषिताः ।

६ ल--मर्हति ।

७ व, ल; म-तिष्ठति ।

इति पृष्टस्तदा तेन भरतेन महात्मना ।

१०] ततः स भरतं धीमान् महर्षिरिदमब्रवीत् ॥१०॥ [६

भरतार्द्धवृत्तीयेषु योजनेष्वजने वने ।

११] चित्रकूटो गिरिस्तात रम्यो निर्जनकाननः^c ॥११॥ [१०

उत्तरं पार्श्वमाश्रित्य तस्य यन्दाकिनी नदी ।

१२] पुष्पितद्रुमसंच्छन्ना नानापत्तिनिषेविता ॥१२॥ [११

तामन्तरा च सरितं चित्रकूटं च पर्वतम् ।

१३] ततः पार्णकुटीं तत्र द्रष्टाऽसि त्वं सुसंवृताम्^d ॥१३॥ [१२

N] वाल्मीकेराश्रमे दिव्ये महर्षेस्तत्र राघवः ।

१४पू] कृत्वाऽऽश्रमपदं रम्यमेकान्ते सहलक्ष्मणः ॥१४॥ [N

१४उ] सीतया भार्यया सार्द्धं वसतीति मया श्रुतम् । [N

१५पू]. दक्षिणेनैव मार्गेण दक्षिणाशाप्रदक्षिणा । १५॥ [१३पू

१५उ] गजवाजिगणाकीर्णा वाहिनी^e यातु राघव । [१३उ

१६पू] प्रयाणमिति च श्रुत्वा भरद्वाजस्य वै तदा ॥१६॥ [१४उ

१७उ] कौसल्या प्रतिजग्राह कराम्भ्यां चरणान्वुभौ ।

१८पू] असमृद्धेन कायेन सर्वलोकेषु गर्हिता ॥१७॥ ० [१६

१८उ] कैकेयी चापि जग्राह महर्षेश्वरणीं तदा । ०

१९पू] प्रदक्षिणं समागम्य^f भगवन्तं महामुनिम् ॥१८॥ [१७

c ब--निर्जर० ।

२ ब, ल-सनितं ।

१० ल-सुसंवृताम् ।

११ ल-वाहियोयात् ।

म-० ।

१२ ब, म क--समास्तात् ।

- १६७] सुमित्रा भरताभ्यासे तस्थौ हृदि समाकुला । [N
 २०५] ततः पमच्छ भरतं भरद्वाजो दृढव्रत ॥१६॥ [१८७
 २०७] विशेषं ज्ञातुमिच्छामि मातृणां तिसृणां तव ।
 २१५] एवमुक्तस्तु भरतो भरद्वाजेन धार्मिकः ॥२०॥ [१६
 २१७] उवाच प्राञ्जलिर्वाक्यमिदं वचनकोविदः ।
 २२५] यामिमां भगवन्दीनां शोकोपहतचेतसाम्^{१३} । २१॥ [२०
 २२७] स्थितां साश्रुमुखी^{१४} साध्वीं देवतामिव पश्यसि ।
 २३५] एषा तं पुरुषव्याघ्रं सिंहविक्रान्तगामिनम् ॥२२॥ [२१
 २३७] कौसल्या सुपुत्रे रामं धातारमदितिर्षथा ।
 २४५] अस्या वामभुजं श्लिष्टा यैषा तिष्ठति दुर्मनाः ॥२२॥ [२३
 २४७] कर्णिकारस्य शाखेव शीर्षपर्णा वनान्तरे । [२३७
 २५५] एतस्यास्तौ सुतौ ब्रह्मन् कुमारौ देवरूपिणौ ॥२४॥ [२४५
 २५७] उभौ लक्ष्मणशत्रुघ्नौ वीरौ सत्यपराक्रमौ । [२४७
 २६५] पर्याभ्युद्दिमहृदयाप्रमहृष्टमुखीं स्थिताम् ॥ २५ ॥ [N
 २६७] सुमित्रा जननीमेतां लक्ष्मणस्योपधारय । [५
 २७५] यस्याः कृते नरव्याघ्रौ वनवासमितो गतौ ॥२६॥ [२५५
 २७७] राजपुत्रौ नरेन्द्रश्च स्वर्गं दशरथो गतः । [२५७
 २८५] ऐश्वर्यकामां^{१५} कैकेयीमनार्यीपतिघातिनीम् । २७॥ [२६७
 २८७] ममैतां मातरं विद्धि नृशंसां कुलपांसुनीम् । ० [२७५
 २९५] सैषा तिष्ठति कैकेयी नृशंसा पापनिश्चया ॥२८॥ [A,

३ कै—चेतस ।

४ ष म, ल—चाश्रुमुखी ।

१५ म—ऐश्वर्यकामा कैकेयी नृशंसा
 पापनिश्चया इतिपाठः ।
 म ०

- २६उ] अतोमूलं हि पश्यामि व्यसनं महदात्मनः । [२७उ
 ३०पू] इत्युक्त्वा स नरव्याघ्रो वाष्पगद्गदया गिरा २६॥ [२८पू
 ३०उ] निशश्वास सुताम्राक्षः क्रुद्धो वनगजो यथा । [२८उ
 ३१पू] भरद्वाजो महर्षिस्तु ब्रुवाणं भरतं तथा ॥३०॥ [२९पू
 ३१उ] मत्पुत्राच महाबुद्धिरिदं वचनमर्थवत् । [२९उ
 ३२पू] न दोषेणावमन्तव्या कैकेयी भरत त्वया ॥३१॥ [३०पू
 ३२उ] रामप्रवाजनं ह्येतत् सुखोदकं^{१६} भविष्यति । [३०उ
 ३३पू] अभिवाद्य तु संसिद्धं कृत्वा चाभिप्रदक्षिणम् ॥३२॥ [३२पू
 ३३उ] आमन्त्र्य^{१७} भरतः सैन्यं युज्यतामित्यचोदयत् । [३२उ
 ३४पू] ततोवाजिरथान्युक्तान्^{१८} दिव्यहेमपरिष्कृतान् ॥३३॥ [३३पू
 ३४उ] अध्यारोहत् प्रयाणार्थं बहून् बहुविधो जनः । [३३उ
 ३५पू] गजयोधा गजाश्चैव हेमकक्ष्याः पताकिनः ॥३४॥ [३४पू
 ३५उ] जीमूता इव घर्मान्ते संहृष्टा समतस्थिरे । [३४उ
 ३६पू] विविधान्यथ यानानि बृहन्ति च लघूनि च ॥३५॥ [३५पू
 ३६उ] प्रययुः स्म^{१९} महार्हाणि पदस्थाश्च पदारतयः । [३५उ
 ३७पू] अथ यानप्रवेकैस्ताः कौसन्याममुखाः स्त्रियः ॥३६॥ [३६पू
 ३७उ] रामदर्शनकार्त्तिकण्यः^{२०} प्रययुर्भदितास्तदा । [३६उ
 ३८पू] स चापि तह्यकार्त्तभां सुयुक्तां^{२१} शिविकां शुभाम् ॥३७॥ [३७पू

१६ म-सुखोदक्य ।

१७ म-अमन्त्र ।

म-आमन्त्र्य ।

१८ व-० रथाद्यु० ।

१६ घ, म, ल-०यु सुमहा० ।

२० ल-कार्त्तिक्य ।

म-काक्षन्या ।

२१ व-सुमक्ता ।

३८७] आस्थाय प्रययौ धीमान् भरतः सपरिच्छदः । [३७७

४०५] सा^{२२} प्रयाता बभौ सेना गजवाजिसमाकुला ॥३८॥ [३८५

४०७] दक्षिणं दिशमास्थाय महामेघ इवोत्थित^{२३} । [३८७

३८५] सुमन्त्रश्चानुयात्रेण^{२४} सहित^{२५} सपताकिना^{२६} ॥३९॥ [३८५

३८७] सज्जवारणयन्त्रेण^{२७} वीरो भरतमन्वगात् [३८७

४१५] वनानि च व्यतिक्रम्य जुष्टानि मृगपत्तिभिः ॥४०॥

४१] अगाधामीनकलिलां^{२८} यमुनामतरन्नदीम् ॥ ४१ ॥ [४१

सा संमहृष्टद्विपवाजियोधा

वित्रासयन्ती मृगपत्तिसङ्घान्^{२९} ।

महावनं तत् परिगाहमाना

४२] नरेन्द्रपुत्रस्य रराज सेना ॥ ४२ ॥ [४०

इत्यार्षे रामायणे अयोध्याकाण्डे भरतानुयान^{३०}

नाम सर्गः ॥ [१०५] ॥

२२ ल, म—स ।

२३ ब—इवोत्थिताम् ।

२४ म—समत्र ।

२५ म—सहिता सा ।

२६ ब, म—पताकिनी ।

२७ म—०वायन० ।

२८ म—०मेन० ।

२९ म—संगान् ।

३० ब—भरतान्वधान ।

म—भरतान्वायामं ।

[वं-१०२] = [षडुत्तरशततमः सर्गः] = [दा-६३]

तया महत्या वाहिन्या^१ ध्वजिन्या वनवासिनः ।

१] अर्दिता यूथपास्तत्र सयूया विप्रदुद्रुवुः ॥ १ ॥ [१]

श्रुत्ताः^२ पृपतसंघाश्च रुखश्च समन्ततः ।

२] दृश्यन्ते वनराजीषु^३ पर्वतेषु नदीषु च ॥ २ ॥ [२]

स संप्रतस्ये धर्मात्मा धीमान् दशरथात्मजः ।

३] वृतो योधैर्महावीरैः शब्दवालाप्रवेधिभिः ॥ ३ ॥ [३]

भरतस्तु महामाज्ञो भ्रातृदर्शनकांतया ।

४] मृगव्यालानुचरितं प्रविवेश महद्वनम्^४ ॥४॥ [N]

सागरौघनिभा सेना भरतस्यानुगामिनी ।

५] महीं संब्धादयामास प्रावृषि घामिवाम्बुदः ॥५॥ [४]

“तुरगोघैस्वतता” वारणैश्चाचलोपमैः ।

६] अनालच्या चिरं कालं तस्मिन् देशे बभूव सा ॥६॥ [५]

स गत्वा^५ दूरमध्वानमपरिश्रान्तवाहनः ।

७] उवाच भरतो धीमान् शत्रुघ्नं शिष्टसंमतम् ॥ ७ ॥ [६]

यादृशं लक्ष्यते रूपं यादृशं च श्रुतं मया ।

८] व्यक्तं प्राप्तोऽस्मि तं देशं भरद्वाजो यथाऽब्रवीत् ॥८॥ [७]

अयं गिरिश्चित्रकूट इयं मन्दाकिनी नदी ।

१ व, म, ल-वाहिन्या ।

२ व-श्रुत्ताः ।

म-वृत्ताः ।

३ म-वनराज्येषु ।

४ म महाधुनम् ।

५ व, ल, म-तुरगोघैः ।

६ व-०रघवतती ।

७ म-गता ।

- ६] एतत् प्रकाशते दूरात्नीलमेघनिर्भं वनम् ॥ ६ ॥ [८
 गिरेस्सानूनि रम्याणि चित्रकूटस्य समिति ।
 १०] वारणौरवमृद्यन्ते मामकैः पर्वतोपमैः ॥ १० ॥ [६
 मुञ्चन्ति कुमुदं चित्रं नगाः पर्वतसानुषु^१ ।
 ११] नीला इवातपोपाये^{१०} तोयं जलदरार्शय ॥ ११ ॥ [१०
 एते मृगगणा भान्ति शीघ्रवेगाः प्रधावितो ।
 १२] वायुमज्जना^{११} शरदि मेघराज्ये^{१२} इवावरे ॥ १२ ॥ [१२
 किन्नराचरितं चेमं पश्य शत्रुघ्न पर्वतम् ।
 १३] हयैर्मदीयैराकीर्णं सागरं मकरैरिव ॥ १३ ॥ [११
 कुर्वन्ति कुसुमापीत्वा^{१३} शिरांसि सुरभीण्यपि ।
 १४] मेघप्रकाशैः फलकैर्दाक्षिणांत्यास्सुयोधिनैः^{१४} ॥ १४ ॥ [१३
 निष्कृजमिव भातीदं वनं घोरप्रदर्शनम् ।
 १५] अयोध्येव जनाकीर्णं संप्रति प्रतिभाति मे । १५ ॥ [१४
 खुरोद्भूता रेणुराजी दिवमावृत्त्य तिष्ठति ।
 १६] तं बहत्यनिलः शीघ्रः कुर्वन्निव मम प्रियम् ॥ १६ ॥ [१५
 स्पन्दनास्तुरगोपेतान् सूतमुख्यैरधिष्ठितान् ।

८ ल-० रेव दृश्यते ।

६- रेव० ।

म यवमृडपते ।

६ म-मामुष ।

१० ल-इवातपोपाये ।

११ व प्रणुन्ता ।

१२ ल मेघराजा ।

१३ ल सुपपी क्रीडा ।

व कुसुमापीडा ।

म-कुसुमै पीडा ।

१४ व-दाक्षिण्याद्या ।

म-दाक्षिणाभ्यास योबिन ।

- १७] एतान् संपततः परय शीघ्रं^{१५} गत्रुघ्नं^{१५} कानने^{१५} ॥१७॥ [१६
 एतान् वित्रासितान् परय वर्हिणः प्रियदर्शनान् ।^{१७} [१७पू
 १८] मनोज्ञरूपा ये भान्ति कुसुमैश्चित्रिता इव ॥१८॥ [१६उ
 मृगा मृगीभिस्सहिता बहवः पृष्टतो वने । [१६पू
 १९] एते चाध्यासते शैलमधिवास पतत्रिणाम् ॥१९॥ [१७उ
 - अतिमात्रमयं देशो मनोज्ञः प्रतिभाति मे ।
 २०] तापसानां निवासोऽयं व्यक्तं स्वर्गपथो यथा ॥२०॥ [१८
 साधु सैन्या प्रतिष्ठंतां त्रिचिन्वन्तु च काननम् ।
 २१] यथा तौ पुरुषव्याघ्रौ परयेयं तद्विधीयताम् ॥२१॥ [२०
 भरतस्य वचः श्रुत्वा पुरुषाश्शस्त्रपाणयः ।
 २२] विविशुस्तद्वनं गीरा धूमं च ददृशुस्तदा ॥२२॥ [२१
 ते तदालोक्य धूमाग्रमूचुर्भरतमीश्वरम् ।
 २३] नामात्रैव^{१६} भवत्यग्निर्नमत्रैव राघव ॥२३॥ [२२
 अथ वा तौ नरव्याघ्रौ राजपुत्रौ महाबलौ ।
 २४] अन्येऽप्यनुभविष्यन्ति तापसा वनगोचराः^{१६} ॥२४॥ [२३
 तच्छ्रुत्वा वचनं तेषां भरतः साधुसंपतः ।^०
 २५] सैन्यानुवाच सर्वास्तानमित्रबलमर्दनः ॥२५॥ [२४
 यत्ता भवन्तस्तिष्ठन्तु नेतो गन्तव्यमन्यतः ।
 २६] अहमेको गमिष्यामि सुमन्त्रो वृष्टिारेव च ॥२६॥ [२५

१५ ल-वर्हिण प्रियदर्शिन ।

ल-०

ल-मनुष्यो ।

१७ य, ल म-यतवासिन ।

य, ल, म-० ।

एवमुक्त्वा ततः सेनां स प्रतस्थे महाबलः ।

२७] भरतो यत्र धूमाग्रं दृष्टं^{१८} तत्र समादधत् ॥२७॥ [२६

व्यवस्थिता सा महती तदा चमू-

निरीक्ष्य दूरादनुधूममग्रतः ।

बभूव हृष्टा पुनरेव भारती

२८] निशम्य रामस्य समागमं तदा ॥२८॥ [२७

इत्यार्षे रामाग्रणे अघोध्याकाण्डे^{१९}

रामाश्रमदर्शनं नाम सर्गः ॥ [१०६] ॥

[वं-१०३]=सप्तोत्तरशततमः सर्गः]=[दा-९४]

दीर्घकालोपितस्तस्मिन् गिरौ गिरिवनप्रियः ।

- १] वैदेह्याश्च प्रियं कुर्वन् स्वं च चित्तं विनोदयन् ॥१॥ [१]
दर्शयंश्चिन्नकूटं च रमणीयं शिवं प्रियम् ।
- २] उवाच रामो वैदेहीं शचीमिव पुरन्दरः ॥२॥ [२]
न राज्याद्भ्रंशानं^२ सीते न मुहूर्त्त्रिविधासनम् ।
- ३] मनो मे बाधते दृष्ट्वा रमणीयमिदं वनम् ॥३॥ [३]
परयेममचलं सीते नानाद्विजगणावृतम् ।
- ४] शिखरैः खमिवाविद्धैर्धातुमद्भिर्विभूषितम् ॥४॥ [४]
केचिद् रजतसङ्काशाः केचित्^३ क्षतजसन्निभाः ।
- X] केचिदर्ककराभाश्च^४ केचित् कनकसप्रभाः ।
- ६] विराजन्तेऽचलेन्द्रस्य शतशरच्च विभूषिताः ॥५॥ [६]
शाखापृग्मृगद्वीपितरक्षुगणसेवितैः ।
- ७] सानुभिर्भात्ययं शैलो नानावृक्षोपशोभितः ॥ ६ ॥ [७]
आम्रजम्बसनैरोध्रैः पियालैः ककुभैर्धवैः ।
- ८] अक्षोत्भव्यपनसैर्विन्वतिन्दुकभेणुभिः ॥७॥ [८]
काश्मर्यरिष्टवरणैर्मधुकैस्तिलकैस्तथा ।
- ९] बदर्यामलकैर्नापैर्वेत्रचन्दनवीजकैः ॥८॥ [९]
पुष्पवद्भिः फलोपेतैश्छायावद्भिर्मनोरमैः ।
- १०] एवमादिभिरध्यास्तः श्रियं पुष्यत्ययं^५ गिरिः ॥६॥ [१०]
शैलमस्येषु रम्येषु परयैतान् देवरूपिणः ।

१ ल-विनोदयत् ।

२ म-राज्यभ्रंशन ।

३ ल-०द्रक्षतसन्निभाः ।

४ म-०दत्क० ।

५ ब, ल-कश्मीर्य० ।

म-कश्मीर्य० ।

६ ब, ल, म-पुष्पा० ।

- ११] किन्नरान्^७ द्बद्धशो^८ भद्रे रममाणान् मनस्विनः ॥१०॥ [११]
शाखावशक्तखड्गांश्च प्रवराण्यं वराणि च ।
- १२] पश्य विद्याधरस्त्रीणां, क्रीडोद्देशान् मनोरमान् ॥११॥ [१२]
जलप्रपातैर्वहुभिरुद्देशैश्च कञ्चित् कञ्चित् ।
- १३] ह्यवद्भिर्भात्ययं शैलः स्रवन्मद, इव द्विपः ॥१२॥ [१३]
गुहाभ्य मुग्धभिर्गधो, नाना पुष्पगुणान्वितः ।
- १४] घ्राणतर्पण उद्भूतः कं नरं न प्रहर्षयेत् ॥१३॥ [१४]
यद्यहं शरदोऽनेकास्त्वयासार्धमनिन्दिते ।
- १५] लक्ष्मणेन च चत्स्यामि न मां शोकः प्रथक्ष्यति ॥१४॥ [१५]
नाना पुष्पफले रम्ये नाना द्विजगणायुते ।
- १६] विचित्रशिखिरे ह्यस्मिन्कृतवासोस्मि भामिनि ॥१५॥ [१६]
अनेन वनवासेन मया प्राप्तं महत्फलम् ।
- १७] अनृणत्वं पितृर्धर्माद्भरतस्य प्रियं तथा ॥१६॥ [१७]
वैदेहि रमसे कच्चिच्चित्रकूटे मया सह ॥
- १८] पश्यंती विविधान्भावान्^९ मनोयाक्त्रायसंयतान् ॥१७॥ [१८]
इदमेवामृतं प्राहुः सीते राजर्षयः परे^{१०} ।
- १९] वनमेव तपोर्याय, प्राप्ता मे प्रपितामहाः ॥१८॥ [१९]
शिलाः शैलस्य राजन्ते विशालाः शतशास्त्रिणमाः ।
- २०] बहुधा बहुभिर्वर्णैर्नीर्लपीतसितारुणैः ॥१९॥ [२०]
मृद्भिर्भात्यचलेन्द्रोयं हुताशनशिखाप्रभैः^{११} ।

७ म-किन्नरान्स्वन्स्य० ।

८ म-रममाणाः ।

९ ब, ल, म-कणान्वि० ।

१० म-विविधा भाया ।

११ म-पुरे ।

१२ म-०शाब्धिप्रभैः ।

- २१] ओपध्यश्च^{१५} प्रभालक्ष्या भ्राजमानाः सहस्रशः ॥२०॥ [२१
 केचिद्वेश्मप्रभा देशाः केचिदुद्यानसंस्थिताः ।
- २२] केचिदेकशिला भान्ति पर्वतस्यास्य भामिनि ॥ २१॥ [२२
 भित्त्वेव धरणीं भाति चित्रकूटस्समुच्छ्रितः ।
- २३] चित्रकूटस्सुकूटोयं गुह्यकैः^{१६} सेवितरिशवैः ॥२२॥ [२३
 कुन्दपुत्रागवहुलभूर्जपत्रपरिच्छदान् ।
- २४] कामिनां संस्तरान्पश्य कौशोयानिव भामिनि ॥२३॥ [२४
 सुदिताश्चापविद्धाश्च भान्त्येताः कूलसंगताः^{१७} ।
- २५] तथा भान्ति लतारचेमा वृक्षेभ्यश्च पृथक् पृथक् ॥२४॥ [२५
 कानने^{१८} वनिते पश्य फलानि विविधानि च ॥२५॥ [२५
 वस्वोरुसारां नलिनीं पश्यैताश्चोत्तरान्कुरुन् ।
- २६] पर्वते चित्रकूटेस्मिन्न[न्नि]भ्यभूतगणाश्रये ॥२६॥ [२६
 इमं हि कालं विहरन्विरानने
 त्वया स ह्येन च लक्ष्मणेन ह ।
 रतिं प्रपत्स्ये कुलधर्मवर्धिनीं
- २७] गिरिस्थितोहं नियमे पितुः स्थितः ॥ २७ ॥ [२७
 हृत्यार्यं रामायणे अयोध्याकाण्डे चित्रकूटवर्णनं
 नाम सर्गः ॥ [१०७]

१५ म-ओपध्यश्च ।

१६ व-गुह्यकः ।

१७ व, म. ल-कुल० ।

१८ म-कपने ।

[चं-१०४]=[अष्टोत्तरशततमः सर्गः]=[दा-६५]

अथ शैलाद् विनिष्क्रम्य मैथिली कोसलेश्वरः ।

१] अदर्शयच्छुचिजलां रामो मन्दाकिनीं नदीम् ॥ १ ॥ [१

अत्रवीच वरारोहां चारुवक्त्रनिभाननाम्^१ ।

२] विदेहराजतनयां रामो राजीवलोचनः ॥ २ ॥ [२

विचित्रपुलिनां रम्यां हंससारससेविताम् ।

३] कुमुदोत्करसंच्छन्नां^२ पश्य मन्दाकिनीं नदीम् ॥ ३ ॥ [३

नाना वृक्षैस्तीररुहैः संवृता फलपुष्पदैः ।

४] राजन्ती राजराजस्य नलिनीमिव सर्वशः ॥ ४ ॥ [४

मृगयूथानुपीतानि^३ कलुषाम्भांसि सम्प्रति ।

५] तीर्थानि रमणीयानि प्रीति सञ्जनयन्ति मे ॥ ५ ॥ [५

जटाजिनधरा^४ सिद्धा बल्कलाजिनवाससः^५ ।

६] ऋपयोऽप्यवगाहन्ते कल्पे मन्दाकिनीं नदीम् ॥ ६ ॥ [६

आदित्यमुपतिष्ठन्ति नियता ह्रुर्ध्ववाहवः ।

७] इमे परे विशालाक्षि मुनयः संशितव्रताः ॥ ७ ॥ [७

मारुतोद्भूतशिखराः पतन्त इव पर्वते^६ ।

८] पादपाः पुष्पवर्षेण किरन्त्येते च मेदिनीम् ॥ ८ ॥ [८

आधूतान् वायुना पश्य समन्तात् पुष्पसञ्चयान् ।

९] दोधूयमानानपरान् प्रवृत्तानिव पर्वते ॥ ९ ॥ [१०

१ व, म, ल - चारुव-द्र० ।

२ व, ल, म - कुसुमात्कर० ।

३ व - राजन्ते ।

४ ल - यूथान्वपी० ।

५ म - जटाजिन० ।

६ म - बल्कल० ।

७ ल - काले ।

८ व ल - पर्वता ।

म - पर्वतः ।

९ व, म पर्वतान् ।

कचिन्मणिनिभामेनां क्वचित् पुलिनशालिनीम्^{१०} ।

- १०] क्वचिज्जनपदाकीर्णां पश्य मन्दाकिनीं नदीम् ॥१०॥ [६
पते हि बल्लुवचसः स्वकानाद्वपते द्विजा. ।
- ११] अवरोहन्ति कल्याणि विक्रजन्तः^{११} शुभा गिरः ॥११॥ [११
दर्शनाच्चित्रकूटस्य मन्दाकिन्याश्च^{१२} सर्वशः ।
- १२] अधिकं पुरवासेन मन्ये च तव दर्शनात् ॥ १२ ॥ [१२
विधूतकृन्मपैः^{१३} सिद्धैस्तपोधनसमन्वितैः ।
- १३] नित्यवित्तोभितजलां विगाहस्व मया सह ॥ १३ ॥ [१३
यथावच्च विगाहस्व सीते मन्दाकिनीं नदीम् ।
- १४] प्रसन्नां सुवर्हां नित्यतरङ्गां हृदभ्रुपणाम् ॥ १४ ॥ [१४
जनैरिव नगैः पूर्णामयोध्यामिव सर्वतः ।
- १५] पश्यस्युत्फेनितां^{१४} नित्यं सरयूमतिर्मां नदीम् ॥१५॥ [१५
लक्ष्मणश्चापि धर्मात्मा मन्निदेशे^{१५} व्यवस्थितः ।
- १६] त्वां चानुकूला वैदेहि प्रीति वर्द्धयसीव मे ॥ १६ ॥ [१६
फलमूलानि भुञ्जाना^{१६} सलिलानि च भामिनि ।
- १७] पाणिभ्यां पद्मपत्राभ्यां^{१७} विगाहस्व सरिद्वराम्^{१८} ॥१७॥ [१७]

म—पर्वता ।

१० ल—०शालिनीम् ।

११ ल—विक्रजन्त ।

११ म—मन्दाकिन्या च ।

१३ ल—०मपैः ।

१५ म—०स्युत्फेनितां ।

ल—०स्युत्फेनितां ।

१५ ल, म—सन्निदेशे ।

१६ म—भुञ्जान ।

१७ म—०पत्रात् ।

१८ म—०द्वरम् ।

उपसृशंस्त्रिपवणं^{१९} मांसमूलफलाशनः^{२०} ।

१८] नायोध्यायै न राज्याय स्पृहयामि त्वया सह ॥१८॥ [१७

इमां हि पश्यन् मृगयूयलोलिताम्^{२१}

निपीततोऽर्या गजसिंहवानरैः ।

सुपुष्पितैस्तीररुहैरलङ्कृता^{२२}

१९] न सोऽस्ति योऽस्यां न गतक्लमो भवेत् ॥१९॥ [१८

इत्येव रामो बहुसद्गतं वचः

प्रियाद्वितीय,^{२३} सरितं प्रति^{२४} ब्रुवन् ।

चचार रम्भां नयनाञ्जनप्रभं

२०] स चित्रकूटं रघुवंशवर्धन, ॥ २० ॥ [१९

इत्यार्षे रामायणे अयोध्याकाण्डे मन्दाकिनी-

वर्णनं नाम सर्गः ॥ [१०८] ॥

१९ म—०स्त्रिपवण ।

२० ल—०फलाशना ।

२१ ब, ल, म—०लोहिता ।

२२ ल—०पुष्पितैः ।

२३ ब—प्रियाद्वितीया ।

२४ ब—सरितमिति ।

[वं-१०५] = [नवोत्तरशततमः सर्गः] = [दा-प्रक्षिप्त]

रामस्तु नलिनी रम्यां चित्रकूटं च पर्वतम् ।

१] पुत्र्या^१ जनकराजस्य दर्शयित्वा न्यवत्तत ॥ १ ॥

स तथा तु गिरेः पादे चित्रकूटस्य राघव ।

२] ददर्श कन्दरं रम्यं शिलाधातुसमाचितम् ॥ २ ॥

सुखमदेश्च^२ तरुभिः^३ पुष्पभारावलम्बिभिः^२ ।

३] संवृतं सरहस्यं च मत्तद्विजगणायुतम् । ३ ॥

तद्दृष्ट्वा सर्वभूतानां मनो दृष्टिहरं वनम् ।

४] उवाच राघवः सीतां वनदर्शनविस्मिताम् ॥ ४ ॥

वैदेहि रमते चक्षुस्तवास्मिन् गिरिकन्दरे ।

५] परिश्रमविघातार्थं साधु तावदिहास्यताम् ॥ ५ ॥

त्वदर्थमिव^३ विन्यस्तः शिलायां सुखसंस्तरः ।

६] यस्याः पार्श्वे तरुः पुष्पैर्विनष्ट^४ इव वेशरैः ॥ ६ ॥

राघवेषु वैमुक्ता सा सीता प्रकृतिसुन्दरी ।

७] उवाच प्रणयात् क्लिग्धमिदं श्लक्ष्णातरं वचः ॥ ७ ॥

अवश्यकार्यं वचनं तव^५ मे^६ रघुनन्दन ।

८] भूतलं चैवं पश्यामि एवं पुष्पितकाननम् ॥ ८ ॥

एवमुक्ते तथा तस्मिन्नुपविष्टः शिलातले ।

९] सह पत्न्या विशालाक्ष्या वचनं चेदमब्रवीत् ॥ ९ ॥

गजदन्ताचितान् वृक्षान् पश्य निर्यासवर्षिणः ।

१०] भ्रूल्लिकाविरुतैर्दीर्घै^६ रुदन्तीव समन्तत ॥ १० ॥

१ ल-प्रत्या ।

२ य, पुस्तके चेत्य-सुखैश्च तरुभिः ।

पुष्पफलभा० ।

३ य, ल, म-विभ्रष्ट ।

४ ल-तर्षेण ।

५ म-०र्दितान् ।

पुत्रमियोऽसौ शकुनिः पुत्र पुत्रेति भापते ।

११] मधुरा करुणां वाचं पुरेव जननी मम ॥ ११ ॥

विहङ्गो भृङ्गराजोऽयं सालस्कन्धमुपाश्रितः^{१०} ।

१२] सङ्गीतमिव कुर्वाणः कोकिलां चानुकूजति ॥ १२ ॥

श्रयं च बालकः शंके कोकिलानां विहङ्गमः ।

१३] असम्बद्धमसम्बद्धं तथा ह्येष प्रभाषते ॥ १३ ॥

एषा कुसुमितं चूतं पुष्पभारानता लता ।

१४] दृश्यते^{११} मामिवात्यर्यं यथा देवि त्वमाश्रिता ॥ १४ ॥

एवमुक्ता प्रियस्याङ्कं मैथिली प्रियभाषिणी ।

१५] भूयस्तथाऽनवद्याङ्गी सन्नारोहत भामिनी ॥ १५ ॥

विवर्त्तमाना चोत्सङ्गे सीता सुरसुतोपमा ।

१६] हर्षयामास रामस्य हृदयं प्रियदर्शना ॥ १६ ॥

स निघृण्याङ्गुलिं रामो गिरौ धौतमनःशिले ।

१७] चकार तिलकं पत्न्या ललाटे रुचिरं तदा ॥ १७ ॥

बालार्कसमवर्णेन तेन सा गिरिधातुना ।

१८] ललाटे विनिष्ठिनेन मूचयन्ती निशाऽऽगमम् ॥ १८ ॥

N] मुखचन्द्रस्तु वैदेहा रक्तेन गिरिधातुना ।^{१०}

अङ्कितस्तन्ध्यया पूर्णो निशाकर इवावभौ ॥ १९ ॥

N] समनःशिलातिलकं वक्त्रं पङ्कजसन्निभम् ।

N] रक्तोत्पलविशालाक्षं पुण्डरीकमिवावभौ ॥ २० ॥

केसरस्य तु पुष्पाणि करेणामृष्य राघवः ।

१६] अलकान्^{१२} पूरयामास मैथिल्याः प्रीतिमावहन् ॥२१॥

अभिगम्य तथा तस्यां शिलायां रघुनन्दनः ।

२०] अन्वीयमानो वैदेह्या^{१३} देशमन्यं जगाम सः ॥२२॥

विचरन्ती तदा सीता ददर्श हरियूथपम् ।

२१] वने बहुमृगाकीर्णं सा भयाद् राममाश्रिता ॥ २३ ॥

रामस्तामपि बाहुभ्यां परिरभ्य^{१४} महाभुजः ।

२२] सान्त्वयामास चामोरुमभिलक्ष्य स वानरम् ॥ २४ ॥

मनःशिलायास्तिलकः सीतायाः सोऽथ वक्षसि ।

२३] समदृश्यत सङ्क्रान्तो रामस्य विपुलौजसः^{१५} ॥ २५ ॥

प्रजहास तदा सीता गते वानरयूथपे ।

२४] दृष्ट्वा भर्त्सरि सङ्क्रान्तं^{१६} तिलकं समनःशिलम्^{१७} ॥ २६ ॥

अपश्यदथ वैदेही वने तस्मिन् मनोहरम् ।

२५] अविदूरादशोकानां प्रदीप्तमिव काननम् ॥ २७ ॥

दृष्ट्वा च सात्रवीद् राममशोककुसुमार्थिनी ।

२६] सार्धं तदभिगच्छावो वनमिच्छाकुनन्दन ॥ २८ ॥

तस्याः मियार्थं रामस्तु देव्या दिव्यान्तरूपया^{१८} ।

२७] सहितस्तदशोकानां विशोकः प्रययौ वनम् ॥२६॥

तदशोकवनं रामः सभार्यो व्यचरत्तदा ।

२८] गिरिपुत्र्या पिनाकीव सह ह्यैवतं वनम् ॥ ३० ॥

१२ ल-अलकां ।

१३ म-वैदेही ।

१४ म-परिरत्य ।

१५ ल-विपुलोऽऽ ।

१६ म-सङ्क्रान्तो ।

१७ य-शिलाम् ।

१८ य-दिव्यान्तरूपया ।

तावन्योन्यमशोकस्य पुष्पैः पल्लवधारिभिः^{१९} ।

२६] समलञ्चक्रतुरुभौ कांमिनौ नीललोहितौ ॥ ३१ ॥

श्रावद्धवनंभालौ द्वौ कृतापीडावतंसकौ ।

३०] भार्यापती तावचलं शोभयाञ्चक्रतुस्तदा ॥ ३२ ॥

एवं स विविधान् देशान् दर्शयित्वा मिर्या मियः ।

३१] आजगामाश्रमपदं सुसंमृष्टमलङ्कृतम् ॥ ३३ ॥

प्रत्युज्जगाम संक्रान्तो^{२०} लक्ष्मणो गुरुवत्सलः ।

३२] दर्शयन् विविधं कर्म सौमित्रि, स्ववृत्तं^{२१} तदा ॥ ३४ ॥

शुद्धवाणहर्तास्तत्र मेध्यान् कृष्णमृगान् दश ।

३३] राशीकृतान् पुष्टमांसानन्यास्त्यक्त्वा च कांश्चन ॥ ३५ ॥

त [द्व] दृष्ट्वा कर्म सौमित्रेभ्राताप्रीतोऽभवत्तदा ।

३४] क्रियन्ता वलयश्चेति रामः सीतामथान्वशात् ॥ ३६ ॥

अग्रं प्रदाय भूतेभ्यः सीताऽथ वरवर्णिनी ।

३५] तयोरप्यददद् भ्रात्रोर्मेध्यं मांसं च सम्भृतम् ॥ ३७ ॥

तयोस्तुष्टिमयोत्पाद्य वीरयोः कृतशीचयोः ।

३६] विधिवज्जानकी साऽथ चक्रे स्वा^{२२} प्राणधारणाम्^{२३} ॥ ३८ ॥

शिष्टं मांसं निकृत्तं यच्चोपणायोपकल्पितम्^{२४} ।

३७] तद् रामवचनात् सीता काकेभ्य पर्यरक्षत ॥ ३९ ॥

तां ददर्श ततो भर्ता काकेनायासितां भृशम् ।

३८] यः स सारान्तरचरः^{२५} कामचारी विहङ्गमः ॥ ४० ॥

काकेनालोढयमाना तां रामो व्यहसदाचराम् ।

३९] साधुकोपानवद्याद्गौ भर्तुः प्रणयदर्पिताम् ॥ ४१ ॥

१९ ल-धारिभि ।

२० य, ल, म-सम्क्रान्तो ।

२१ य, ल, म-सुष्टत ।

२२ य-स्य प्राणधारणम् ।

२३ म-०८६५लेपणोऽर्थे ।

२४ य-सारान्तरचरः ।

इतरचेतश्च तां काको वारयन्तीं पुनः पुनः ।

४०] पक्षतुण्डनखाग्रैश्च कोपयामास कोपनाम् ॥ ४२ ॥

तस्याः प्रस्फुरमाणौष्ठं भ्रुकुटीपुटशोभितम् ।

४१] मुखमालोक्य काकुत्स्थस्तं काकं मत्पपेधयत् ॥ ४३ ॥

स घृष्टमानी विहगोः राममप्यविचिन्तयन् ।

४२] सीतामभिपपातैव ततरज्जुक्रोध राघवः ॥ ४४ ॥

सोऽभिमन्त्र्य शरैपीकामिपीकास्त्रेण वीर्यवान् ।

४३] काकं तमभिसन्धाय ससर्ज पुरुषर्षभः ॥ ४५ ॥

स तयाऽभिद्रुतः काकस्त्रील्लोकान् पर्यधावत ।

४४] देवैर्दत्तवरः पत्नी धारान्तरचरो लघुः ॥ ४६ ॥

यत्र यत्रागमत् काकस्तत्र तत्र ददर्श ह ।

४५] इपीकाभूतमाकाशं स^{२५} रामं^{२६} पुनरागमत् ॥ ४७ ॥

स मूर्धन्यपतत् काको राघवस्य महात्मनः ।

४६] सीतायास्तत्र पश्यन्त्या मानुषीमीरयन् गिरम् ॥ ४८ ॥

प्रसादं कुरु मे राम प्राणैः सामग्र्यमस्तु मे^{२६} ।

४७] अस्त्रस्यास्य प्रभावेन शरणं न लभे क्वचित्^{२७} ॥ ४६ ॥

तं काकमश्रवीद्रामः पादयोः शिरसा नतम् ।

४८] सानुक्रोशतया धीमानिदं वचनमर्थवत् ॥ ५० ॥

मया रोपपरीतेन सीतामियचिकीर्षणा ।

४९] अस्त्रमैतत् समाधाय त्वद्रथायाभिमन्त्रितम् ॥ ५१ ॥

यतो मे चरणौ मृद्भ्र्वा नतस्त्वं जीवितेच्छया ।

५०] अथ^{२८} त्ववेक्षा^{२९} त्वयि मे रक्ष्यो हि शरणागतः ॥ ५२ ॥

अमोघं क्रियतामस्त्रमङ्गमेकं^{२९} परित्यज ।

५१] किमङ्गं शातयत्वेषा^{३०} शरैपीकेति कथ्यताम् ॥५३॥

एतावद्धि मया शक्यं तव कर्तुं मियं स्वमे ।

५२] एकाङ्गहीनो जीव त्वं जीवितं मरणाद्वरम् ॥५४॥

एवंमुक्तस्तु रामेण सम्पधार्याथ वायसः ।

५३] अर्धयवस्य द्वयोरंशोस्त्यागमेकस्य पण्डितः ॥५५॥

सोऽत्रवीद्राघवं काको नेत्रमेकं त्यजाम्यहम् ।

५४] एकनेत्रोऽपि जीवेयं त्वत्प्रसादान्नराधिप । ५६॥

रामानुजातमस्त्रं तत् काकनेत्रमशातयत् ।

५५] वैदेही विस्मिता तत्र काकस्य नयने हते ॥५७॥

निपत्य शिरसां काको जगामाशु यथेप्सितम् ।

५६] लक्ष्मणानुचरो रामश्चकारानन्तराः क्रियाः ॥५८॥

अथ सैन्यस्य महतो गजवाजिरयोद्धतः ।

५७] शुश्रुवे तुमुलः शब्दः सागरस्येव मथ्यतेः ॥५९॥

अथ स विबुधराजविक्रमः

कमलदलायतदृष्टिरववीत् ।

किमिदमिति समीच्य लक्ष्मणं

५८] स गुरुवचः प्रतिपूज्य बोधितः ॥६०॥

इत्यार्षे रामायणे अयोध्याकाण्डे हृषीकास्त्रविसर्जनं

नाम सर्गः ॥ [५०९] ॥

[व-१०६]=[दशाधिकशततम. मर्गः]=[०६]

अथ रामे तदासीने लक्ष्मणे चापि गच्छति ।

१] तस्य सैन्यस्य महतः प्रादुरासीन् महास्वनेः ॥११॥ [N
तेन स्वनेन महता वर्षमानेन बोधिताः ।

२] गुहास्सन्तत्यञ्जुर्व्याघ्रां निलिन्धुर्वनवासिनः ॥१२॥ [N
समुत्पेतुः खगास्तत्र मृगयूथाश्च दुद्रुतुः ।

३] ऋक्षाश्चोत्सृज्यं वृक्षाग्रान् मपेतुर्हरयो गुहाः ॥१३॥ [N
दवाग्नेरिव विवस्ता दुद्रुतुर्गजयूथपाः ।

४] व्यजृम्भन्त महासिंहा महिष्याश्च व्यलोकयन् ॥१४॥ [N
विलानि विविशुर्व्यालाः स्वस्ति जेपुर्द्विजातयः ।

५] विद्याधराः समुत्पेतुः किन्नरा भोजिरे दरीः ॥१५॥ [N
तमर्भ्यासमनुप्राप्तं तस्य देशस्य लक्ष्मणः ।

६] सैन्यस्यागच्छतः शब्दमेत्य रामे न्यवेदयत् ॥१६॥ [N
तमुवाच ततो रामः सुमित्रा सुप्रजास्त्वया ।

७] महास्वनोतिगम्भीर स त्वया ज्ञायतामिति ॥१७॥ [७
स लक्ष्मणश्च त्वरितः सालमारुह्य पुष्पितम् ।

८] दिशः क्रमेण सम्प्रेक्ष्य प्राचीं दिशमवैक्षत ॥१८॥ [११
उदङ्मुखः स सम्प्रेक्ष्य ददर्श महतीं चमूम् ।

९] रथाश्वगजसम्पूर्णा यत्तैर्गुप्तां पदातिभिः ॥१९॥ [१२
शंसमानो नरव्याघ्रो लक्ष्मणः परवीरहा ।

१०] शशंस सेनामायान्तीं वचनं चेदमब्रवीत् ॥१०॥ [१३
अग्निं संशमयत्वार्यां सीतां चाविशतां गुहाम् ।

११] कुरु सज्ज्ये च धनुषी कवचं धारयस्व च ॥११॥ [१४

नागांश्चरथसम्पूर्णां तां त्वम् सन्निशम्य सः ।

१२] रामः प्रपच्छ सौमित्रि कस्येमां मन्यसे त्वमूम् ॥ १२१ ॥ [१२०]

राजा वा राजपुत्रो वा वनेऽस्मिन् भृगयाङ्गतः ।

१३] मन्यसे वा यथा तस्व तथा लक्ष्मणं शंस मे ॥ १२३ ॥ [१२२]

एवमुक्त्वाऽथ रामेण लक्ष्मणो वाक्यमब्रवीत् ।

१४] द्विधत्तुरिव कोपेन ज्वलितो हव्यवाहनः ॥ १२४ ॥ [१२३]

सपत्नो राज्यकामोऽयं व्यक्तं राज्ञाऽभिपेक्षितः ।

१५] आर्वा हन्तुमिहाभ्येति भरतः केकयीसुतः ॥ १२५ ॥ [१२४]

असौ हि सुमहास्कन्धो विटपीव महाद्रुमः ।

१६] विराजते गजस्कन्धे कोविदारध्वजो यथा ॥ १२६ ॥ [१२५]

भजन्ति च यथाऽऽकाशमरवा वायुजवा द्रुताः ।

१७] गृहीतधनुषथापि योधाः सज्जो भवानघ ॥ १२७ ॥ [१२६]

अथ वा त्वं गिरिगुहो सभार्य प्रविश स्वयम् ।

१८] अपि मेऽद्य समागच्छेत् कोविदारध्वजो रणे ॥ १२८ ॥ [१२७]

[N] वाहोर्यदुचितं सर्वं तत्करिष्यामि राघव ।

[N] अहमेकः करिष्यामि त्वत्प्रेष्यस्फीचितं यथा ॥ १२९ ॥ [N]

अथ मत्कार्मुकोत्सृष्टारशराः कनकभूषणाः ।

[N] पास्यन्ति रुधिर, नृणां हृदयादचिरादिक् ॥ १३० ॥ [N]

एते भ्राजन्ति संहृष्टा हयानास्व सादिनः ।

१९] समन्तात् परियातास्ते रामशूलमुपाश्रिताः ॥ १३१ ॥ [N]

[N] अपि पश्येयमद्याह भरतं यत्कृते महत् ।

२०] राघव त्वमिह प्राप्तो दुखं वै सहितो मया ॥ १३२ ॥ [१३१]

यत्कृते त्वमितो राज्यात् प्रच्युतो रघुनन्दन । [२२पू

२१] स सम्प्राप्तोऽप्ययं पापो भवतो वाणगोचरम् ॥२३॥ [२३पू

२२पू] भरतस्य वधे दोष नाह परयामि राघव । [२३उ

N] पूर्वापकारिणं हन्याद् धर्मोऽयं तु विधीयते ॥ २४ ॥ [२४पू

N] पूर्वापकारी भरतस्त्यक्तधर्मश्च राघव । [२४उ

२२उ] तस्मिन् विनिहतेऽय त्वमनुशाधि यमुन्धराम् ॥२५॥ [२५पू

अय पुत्रे हते साऽय कैकेयी राज्यकामिनी । [२५उ

२३] पुत्रं पश्यतुं दु खार्ता हस्तिभग्नपिव द्रुमम् ॥ २६ ॥ [२६पू

कैकेयां च हरिष्यामि सानुग्रहां सरान्धवाम् । [२६उ

२४] कलुषेणाय महता मेदिना सममुच्यताम् ॥२७॥ [२७पू

अग्नेमं सञ्चितं क्रोधमसस्कारं च राघव । [२७उ

२५] प्रतिमोक्ष्यामि योधेषु कक्षेष्विव हुताशनम् ॥ २८ ॥ [२८पू

अग्नेदं चित्रहृत्स्य कानन निशितै शरैः । [२८उ

२६] क्षिप्त्वा शत्रुशरीराणि करिष्ये शोणितोदकम् ॥२९॥ [२९पू

शरैर्निभिन्नहृदयान् कुञ्जरांस्तुरगांस्तथा । [२९उ

२७] भूताधिराय भक्तानां नरांस्त्वन्निहतान् भुवि ॥३०॥ [३०पू

शराणां धनुपश्चाहमनृणोऽस्मिन् महाबने । [३०उ

२८] ससैन्यं भरतं हत्वा भवेयं नात्र संशयः ॥३१॥ [३१उ

ममथितहयनागां स्पन्दनोत्क्षिप्तचक्रां

विमथितनरगाणां शोणितार्द्रां नरेश ।

भरतनृपतिसेनां पश्य चेमां शयाना

३०] मृगखगलकक्षुक्तायद्य मद्राण्यभिन्नाम् ॥३२॥ [N

इत्याप्यं रामायणे अयोध्याकाण्डे लक्ष्मणकोपो

नाम सर्गः ॥[११०]॥

[चं-१०७]=[एकादश/अधिकाशततमः सर्गः]=[दा-६७]

अप्यक्रोधं च सौमित्रि लक्ष्मणं क्रोधमूढितम् ।

१] रामः संशमयामास वचनं चेदमववीत् ॥१॥ [१

विभियं कृतपूर्वं नो कदा नु भरतेत किम् ।

२] अनिष्टं भरतात् किं नो येन त्वं हन्तुमिच्छसि ॥२॥ [१४

किमत्र धनुषा कार्यमसिना चर्मवर्मणा ।

३] महेश्वासे महामात्रे भ्रातरि स्वयमागते ॥३॥ [२

मासकालो यदेषोऽस्मान् भरतो द्रष्टुमिच्छति ।

४] अस्मासु मनसाऽप्येष नाहितं कर्तुमर्हति ॥४॥ [१३

न च ते निष्ठुरं वाच्यो भरतो नाहितं वचः ।

५] अहं त्वभियमुक्तः स्यां भरतस्याभिये कृते ॥५॥ [१५

कयं नु पुत्रः पितरं हन्यात् कस्याश्चिदापदि ।

६] भ्राता वा भ्रातरं हन्यात् सौमित्रे भियमात्मनः ॥६॥ [१६

यदि वा राज्यहेतोस्तुभियं वाचं मभापसे ।

७] वक्ष्यामि भरते दृष्ट्वा राज्यमस्मै प्रदीयताम् ॥७॥ [१७

उच्यमानो हि भरतो मया लक्ष्मण तत्त्वतः ।

८] राज्यमस्मै प्रयच्छेति वाढमित्येव वक्ष्यति ॥८॥ [१८

तथोक्तो धर्मशीलेन भ्रात्रा तस्म हिते रतः ।

९] लक्ष्मणः प्रविवेशेव स्वानि गात्राणि लज्जया ॥९॥ [१९

तद्वाक्यं लक्ष्मणं श्रुत्वा व्रीडितः प्रत्युवाच ह ।

१०] त्वां मन्ये द्रष्टुमायातो भ्राता ते भरतः स्वयम् ॥१०॥ [२०

व्रीडितं लक्ष्मणं दृष्ट्वा राघवः प्रत्युवाच ह ।

११] एष मन्ये महाबाहुरस्मान् द्रष्टुमिहागतः ॥११॥ [२१

१ व, ल, म-भ्रातृष्टं ।

२ ल-त्वां ।

३ ल-० प्रकं ।

४ ल-० मिच्छति ।

५ व, म-तु भिय० ।

६ ल, म-भ्राता ।

७ व, ल, म-मन्ये त्वां ।

८ व, ल-भ्रातास्ते ।

- N] वनवासकृतं दुःखं चिन्तयन् भ्रातृवत्सलः । [N
 इमां च प्रेक्ष्य वैदेहीमेत्यन्तमुखसेविताम् ॥ १० ॥
- १२] वनवासमनुभ्याय गृहं^{१०} नेतुमिहोगतः^{१०} ॥ १२ ॥^१ [२३
 एतौ तौ सम्प्रकाशेते शोभयन्तौ महाभुजौ ।
- १३] वायुवेगोपमैर्नीतावग्रतो जवनेर्हयैः ॥ १३ ॥^१ [२४
 एष वै स महाकायो राजते वाहिनीमुखे ।
- १४] नागः शत्रुञ्जयो नामेदृद्धस्तातस्य सम्मतः^{११} ॥ १४ ॥^१ [२५
 इति सम्भाषमाणस्तु रामः सौमित्रिणो सह ।
- १५] तां चमूं हर्षसंपन्नां ददर्श सह सीतया ॥ १५ ॥^१ [N
 भवतीर्यं च शैलाप्राञ्चमणो लज्जया नतः ।
- १६] रामस्य पार्वमागत्य वीरंस्तस्थावधोमुखं^{१२} ॥ १६ ॥^१ [२८
 भरतेनाथ सन्दिष्टा सम्पदो मा भवेदिति ।
- १७] समन्तात् तस्य देशस्य सेनावासमकल्पयत् ॥ १७ ॥^१ [२९
 अर्धमिच्छवाकुचमूर्योजनं पर्वतस्य च ।
- १८] आवृत्त्यावासिताऽरण्ये गजवाजिसमाकुला^{१३} ॥ १८ ॥^१ [३०
 निवेश्य सेनां स विभुः पद्भ्यां पादवर्ता वरः ।
- १९] अभिगन्तुं स काकुत्स्थमियेष गुरुवत्सलः^{१४} ॥ २० ॥^१
 सा चित्रकूटे भरतेन सेनां^{१५}
 धर्मं पुरस्कृत्य विहाय दर्पम् ।
 प्रसादनार्थाय तदाऽग्रजस्य -
- २०]. विराजते नीतिविदा मणीता^{१६} ॥ २१ ॥^१ [३१
 इत्यार्षे रामायणे अयोध्याकाण्डे लक्ष्मणवाक्यं
 -नामः सर्गः ॥ [१११] ॥

[चं-N]=[द्वादशाधिकशततमः मर्गः]=[दा-९८]

निविष्टार्यां तु सेनार्यां यथाऽऽदिष्टं विनीतवत् ।

भरतो भ्रातरं वाक्यं शत्रुघ्नमिदमब्रवीत् ॥ १ ॥ [२

क्षिममिदं वनं सौम्य नरसिंहः^१ समन्ततः ।

लुब्धकैः सहित सर्वैः समन्वेपितुमर्हति ॥ २ ॥ [३

गुहो^२ ज्ञातिसहस्रेण शरचापासिधारिणा ।

वने बसन्तं काकुत्स्थमस्मिन् परिवृतस्त्वया ॥ ३ ॥ [४

रामं यावन्न पश्यामि लक्ष्मणं च महाबलम् ।

वैदेहीं च महाभागां न मे शान्तिर्भविष्यति ॥ ४ ॥ [६

[यावन्न चन्द्रसंकाशं पश्यामि शुभमाननम् ।

भ्रातुः पद्मपलाशाक्षं न मे शान्तिर्भविष्यति] [A

यावन्न चरणौ भ्रातुः पार्थिवव्यञ्जनान्वितौ ।

शिरसा प्रष्टुहीष्यामि न मे शान्तिर्भविष्यति ॥ ५ ॥ [७

परिष्वङ्गं भुजाभ्यां तु यावन्न वदतां वरः ।

स करिष्यति धर्मात्मा न मे शान्तिर्भविष्यति ॥ ६ ॥ [N

यावन्न चंद्रसङ्काशं पश्यामि सुभमाननम् ।

भ्रातुः पद्मपलाशाक्षं न मे शान्तिर्भविष्यति ॥ A [N

यावन्न राज्ये राज्यार्हः पितृपैतामहे स्वके ।

न निवेक्ष्यति काकुत्स्थो राजीवाक्षो महाद्युतिः ॥७॥ [१०

कृत्कार्या महाभागा वैदेही जनकात्मजा ।

भर्तारं च समागत्य पृथिवीं नाधिगच्छति ॥८॥० [११

१ ब—नरसिंह ।

२ ल—गुहो० ।

A ब, ल—इत्यधिकम् ।

म—० ।

स्वस्ति^३ नश्चित्रकूटोऽयं^३ गिरिराजो महाद्युतिः ।०
यस्मिन् वसति काकुत्स्थः कुबेर इव मन्दिरे ॥ १० ॥ [१२
कृतकार्यमिदं दुर्गं वनं व्यालनिषेवितम् ।
अध्यास्ते यन्महातेजाः रामः शस्त्रभृतावरः ॥११॥ [१३
एवमुक्त्वा महाबाहुर्भरतः पुरुषर्षभः ।
पद्भ्यामेव महातेजाः प्रविवेश महद्वनम् ॥ १२ ॥ [१४
स तानि द्रुमजालानि जातानि गिरिसानुषु ।
पुष्पिताग्राणि मध्येन जगाम वदतां वरः ॥१३॥० [१५
स गिरेश्चित्रकूटस्य सानून्यन्विष्य वेगितः ।०
रामाश्रमकृतस्याग्नेर्दृष्टवान् धूममुत्थितम्^४ ॥१४॥ [१६
तं दृष्ट्वा भरतः श्रीमान् मुमोद सह बान्धवः ।
अस्ति राम इति ज्ञात्वा गतः^५ पारमिवाम्भसः ॥१५॥ [१७
स चित्रकूटेऽथ^६ गिरौ निशम्य
रामाश्रमं पुण्यजनोपसेवितम् ।
गुह्येन सार्धं त्वरितो जगाम
पुनर्व्यवस्थाप्य चमूं महात्मा ॥१६॥ [१८
इत्यार्षे रामायणे अयोध्याकाण्डे भरतगमनं
नाम सर्गः ॥ [११२] ॥

३ ल- स्वस्थिर० ।

० म ।

० ल-)

४ ल-०मुत्थितः ।

५ ल-गत्या ।

६ ल म-०पु ।

[चं-१०८]=[त्रयोदशाधिकशततमः सर्गः]=[दा-९९]

निविष्टायां तु सेनायामृत्सुको भरतस्तदा ।

१] जगाम भ्रातरं द्रष्टुं शत्रुघ्नसहितो विभुः ॥१॥ [१

धृषिं वसिष्ठं सन्दिश्य मातृर्मे शीघ्रमानय ।

२] इति त्वरितमग्रे स जगाम गुरुवत्सलः ॥२॥ [२

सुमन्त्रस्त्वथ शत्रुघ्नं त्वरावानन्वपद्यत ।

३] रामदर्शनजो हर्षो भरतस्येव तस्य हि ॥३॥ [३

पृच्छन्नेवाथ भरतस्तापसात्तातप्रस्थितात् ॥४॥

४] ददर्श च वने तस्मिन् महतः सञ्चयान् कृतान् ।

मृगाणां महिषाणां च करीपान्प्रिकारणात् ॥५॥ [७

५] गच्छन्नेव महाबाहुर्युतिमान् गुरुप्रर्षभः ।

अमात्यान्ब्रवीत् सर्वान् भरतः सत्कृताश्रितः ॥६॥ [८

६] मन्ये प्राप्ताः स्म तं देशं भरद्वाजोऽग्रमब्रवीत् ।

नातिदूरामहं मन्ये नदीं मन्दाकिनीमितः ॥७॥ [९

७] इदं फलानां संश्लिष्टं पुष्पाण्यवचितानि च ।

काष्ठानि परिभ्रानि मूलान्पावेष्टितानि च ॥८॥ [५७

८] उच्चैर्बद्धानि चीराणि लक्ष्मणेन तथैव च ।

अभिज्ञानादितः पन्था विमलोऽनसूमीयुषाम् ॥९॥ [१०

९] अयं पाण्डुरदन्तानां कुञ्जराणां तरस्विनाम् ।

शैलपार्श्वे समाक्रान्तुमन्योन्यमभिगर्जताम् ॥१०॥ [११

१०] यमप्याधातुमिच्छन्ति तापसाः सततं वने ।

तस्यासौ दृश्यते धूमः सङ्कुलः कृष्णवर्त्मनः ॥११॥ [१२

१ ल—०सांस्तानुप० ।

२ ल—०रावहं ।

३ ल—अविज्ञा० ।

४ व, ल—०क्रान्तम० ।

५ अ, ल—यमप्याधातु० ।

- ११] अहं तं पुरुषव्याघ्रं पितुरादेशकारिणम् । :
 अयं^१ द्रक्ष्यामि काकुत्स्थं महर्षिसमदर्शनम् ॥१२॥ [१३]
- १२] अयं गन्वा मुहूर्त्तं स चित्रकूटं समीपतः ।
 मन्दाकिनीमनुप्राप्य तं जनं वाक्यमब्रवीत् । १३॥ [१४]
- १३] अयं स पुरुषव्याघ्र आस्ते वीरासने रतः ।
 नरेन्द्रो निर्जनं प्राप्तो लोकनाथो महाद्युतिः ॥१४॥ [१५]
- १४] मत्कृते व्यसनं प्राप्तो लोकपालोपमोऽवशः ।
 सर्वान् कामान् परित्यज्य वने वसति राघवः ॥१५॥ [१६]
- १५] तस्याहं लोकनाथस्य पादयोः सम्प्रसादयन् ।
 रामस्य निपतिष्यामि सीतायाश्च पुनः पुनः ॥१६॥ [१७]
- १६] एवं लालप्यमानः स वने दशरथात्मजः ।
 ददर्श महतीं पुण्यां पर्णशालां मनोरमाम् ॥१७॥ [१८]
- १७] सालतालाश्वकर्णानां पर्णैर्वहुभिराचिताम् ।
 विशालां मृदुविस्तीर्णां दर्भैर्वेदीमिवाध्वरे ॥ १८ । [१९]
- १८] शक्रापुत्रनिक्ताशाभ्यां^२ कार्मुकाभ्यां विभूषिताम् ।
 महद्भ्यां रुक्मपृष्ठाभ्यां नागाभ्यामिव चाचिताम् ॥१९॥ [२०]
- १९] अर्कुररिमतीकाशैर्घोरैस्त्रुणगतैः शरैः ।
 शोभितां दोस्तवदनैर्नागैर्भोगवतीमिव ॥ २० ॥ [२१]
- २०] महारजतकान्ताभ्यामसिन्ध्यां च विराजिताम् ।
 रुक्मविन्दुविचित्राभ्यां^३ धनुर्भ्यामुपशोभिताम् ॥२०॥ [२२]
- २१] गोषाद्भुलित्रैरासक्तीध्रैः फनकभूपणैः ।
 अरिसंघैरनाष्ट्रप्यां^४ नरैः सिंहगुहामिव ॥ २२ ॥ [२३]

- २२] प्रागुद्दिष्टे^१ वनोद्देशे वेदीं सन्दीप्तपावकाम् ।
ददर्श भरतस्तत्र पुण्यां रामनिवेशने ॥ २३ ॥ [२४
- २२] स विलोक्य मुहूर्त्तं तु ददर्श भरतो गुरुम् ।
२४पू] उदजे राममासीनं जटावन्कलधारिणम् ॥२४॥ [२५
N] तं तु कृष्णाजिनधरं जटिलं चीरवाससम् ।
N] ददर्श राममासीनमभित, पावकोपमम् ॥२५॥ [२६
- २४उ] सिंहस्कन्धं महाबाहुं पद्मपत्रनिभेक्षणम् ।
पृथिव्याः सागरान्ताया गोप्तारं धमचारिणम् ॥२६॥ [२७
- २५] महात्मानं महाभागं ब्रह्माणमिव शाश्वतम् ।
सहोपविष्टमासीनं सीतया लक्ष्मणेन च ॥२७॥^० [२८
- २६] तं दृष्ट्वा भरत श्रीमान् दुःखशोकपरिप्लुतः ।
अभ्यवादत धर्मात्मा भ्रातर केकयीसुतः ॥२८॥ [२९
- २७] दृष्ट्वा च विललापातों वाष्पसन्दिग्धया गिरा ।
अशक्नुवन् वारयितुं शोकं वचनमववीत् ॥२९॥ [३०
N] यः संतदि प्रकृतिभिः सतत परिवार्यते ।
२९उ] वन्यैर्दृगैः परिवृत, सोऽयमास्ते ममाग्रजः ॥३०॥ [३१
वासोभिर्बहुसाहस्रैर्यो महात्मा परिप्लुतः ।
३०] मृगाजिनधरः सोऽद्य प्रसुप्तो जगतीतले ॥ ३१ ॥ [३२
अधारयद् यो विविधारिचत्राः सुमनसां स्रजः ।
३३] सोऽयं जटोभारमिमं बहते राघवः कथम् ॥३२॥ [३३
मन्निमित्तमिदं प्राप्तो दुःख रामः सुखोचितः ।
३४] धिग् जीवितं नृशंसस्य मम लोकविगर्हितम् ॥३३॥ [३६

इत्येवं विलपन् दीनः प्रस्विन्नमुखपङ्कजः ।

३५] पादाबुपेत्य रामस्य प्राप्तद् भरतो भुवि ॥ ३४ ॥ [३७

दुःखाभिभूतो भरतो राजपुत्रो महाबलः ।

३६] उक्त्वाऽऽर्येति सकृद् दीन पुनर्नोवाच किञ्चन ॥ ३५ ॥ [३८

वाप्याभिहितकण्ठो^{१२} हि रामं दृष्ट्वा यशस्विनम् ।

३७] हा ऽऽर्येत्येवं समाभाष्य व्याहर्तुं न शशाक ह ३६ ॥ [३९

शत्रुघ्नश्चापि रामस्य ववन्दे चरणौ रदन् ।

३८] ताबुभौ तु समालिङ्ग्य रामोऽप्यश्रूण्यवर्त्तयत् ॥ ३७ ॥ [४०

ततः सुभन्त्रेण च तेन चैव

समीयिवान् राजसुतावरण्ये ।

दिवाकररचैव निशाकरश्च

३९] ययाम्वरे शुक्रवृहस्पतिभ्याम् ॥ ३८ ॥ [४१

तान् पार्थिवान् वारणमुख्यकल्पान्^{१३} ।

समागतास्तत्र महत्परण्ये ।

वनौकसः भैक्ष्य समेत्य सर्वे

४०] कृपागृहीता रुरुदुस्तदानीम् ॥ ३९ ॥ [४२

इत्यार्षे रामायणे अयोध्याकाण्डे भरतदर्शनं

नाम सर्गः ॥ [११३] ॥

[वं०-१०६]=[चतुर्दशाधिरुशततमः सर्गः]=[दा-१००

आघ्राय च स तं मूर्ध्नि परिप्वज्य च राघवः ।

१] अङ्गे भरतमारोप्य पर्यपृच्छत् समाहितः ॥ १ ॥ [३

क नु तात पिता ते ऽभूद् यदरण्यं त्वमागत ।

२] न हि त्वं जीवतस्तस्य गुरोरागन्तुमर्हसि ॥ २ ॥ [४

चिरस्य वत पश्यामि दूराद्भरतमागतम् ।

३] दुष्पणीतमरण्ये ऽस्मिन् किं तात वनमागतः ॥ ३ ॥ [५

कचिद्द दशरथो राजा कुशली सत्यसङ्गरः ।

४] राजसूयाश्वमेधानामाहर्ता^१ धर्मतत्त्ववित् ॥ ४ ॥ [=

स कचिद्द^२ ब्राह्मणो विद्वान् धर्मनित्यस्तपोधनः ।

५] इक्ष्वाकूणामुपाध्यायो यथावत् तात पूज्यते ॥ ५ ॥ [६

तात कच्चिच्च कौसल्या सुमित्रा च तपस्विनी ।

६] सुखिता कचिदार्या च देवी नन्दति कैकयी ॥ ६ ॥ [१०

कच्चिद्द विनयसम्पन्नः कुलपुत्रो बहुश्रुत ।

७] अनसूयुरनुमष्टा सत्कृतस्ते पुरोहितः ॥ ७ ॥ [११

कच्चिदग्निषु ते युक्तो ब्राह्मणो मत्तिमानृजुः ।

८] हुतं च होप्यमाणं च काले वेदयते सदा ॥ ८ ॥ [१२

इष्वस्त्रे परमाचार्यमर्थशास्त्रविशासदम्^३ ।

९] सुधन्वानमुपाध्यायं कचिद्धं नायमन्यसे ॥ ९ ॥ [१४

कचिदात्मसमाः शूराः श्रुतवन्तो जितेन्द्रियाः ।

१०] कृतज्ञाश्चोर्जितज्ञाना भवतास्ते तात मन्त्रिणः ॥ १० ॥ [१५

१ अ—०माहता ।

ल—०माहता ।

२ म—कश्चिद्द ।

३ अ, ल, म—०मन्त्रशास्त्र० ।

- मन्त्रमूलो हि विजयो राज्ञां भवति राघव ।
 ११] सुसंवृतो मन्त्रिवरैरमात्यैर्मन्त्रकोविदैः ॥ ११ ॥ [१६
 कचिन्निद्रावश नैपि कचित् काले विबुध्यसे ।
 १२] कच्चिच्चापररात्रेषु चिन्तयस्वर्थमर्थवित् ॥ १२ ॥ [१७
 कचिन्मन्त्रयसे नैक. कचिन्न बहुभिः सह ।^०
 १३] कचिन्नामन्त्रितो मन्त्रो न राज्यमनुधावति ॥ १३ ॥ [१८
 कच्चिदर्थं विनिश्चित्य लघुमूल महोदयम् ।
 १४] क्षिप्रमारभसे कर्तुं न वित्रयसि राघव ॥ १४ ॥ [१९
 कचिन्न क्रियमाणानि कच्चित्प्रवणानि वा ।
 १५] विदुस्ते सर्वकार्याणि कतव्यानि नरेश्वराः ॥ १५ ॥^० [२०
 कचिन्न राज्यहेतोर्वा चयापचयशङ्किना ।
 १६] त्वया चाप्यथवाऽमात्यैर्विध्वन्ते तातमानवाः ॥ १६ ॥^० [२१
 कचिन् मूर्खसहस्रेणाप्येकं क्रीणासि पण्डितम् ।
 १७] पण्डितो ह्यर्थकृद्भेषु नृयान्नि श्रेयसं वचः ॥ १७ ॥ [२२
 सहस्रैरपि मूर्खाणां यो नृप पर्युपास्यते ।
 १८] तथैवाप्ययुतैस्तस्य नास्ति तेषु सहायता ॥ १८ ॥ [२३
 एको ह्यमात्यो मेघावी शूरो दान्तो विचक्षणः ।
 १९] राजानं राजपुत्रं वा प्रापयेत् महता श्रियम् ॥ १९ ॥ [२४
 कचिन् मुख्या महत्स्वेव मध्यमेषु च मध्यमाः ।
 २०] जघन्याश्च जघन्येषु भृत्पास्ते तात योजिताः ॥ २० ॥ [२५
 कचित् कृपिकरास्तात सुनिविष्टा जनाकुलाः ।
 २१] देवस्यानैः मपाभिश्च तदागैश्चापसेविताः ॥ २१ ॥ [४३
 महत्पुनरनारीकं समाजोत्सवभूषितं ।

० क्वि—नास्ति ।

० ल, म—नास्ति ।

० ल, म—नास्ति ।

४ व—०श्चापशामिताः ।

१ ल—०शेवा ।

६ ल—भूषिता ।

- २२] सुकृष्टसोमः पशुमान् विहिंसापरिवर्जितः ॥२२॥ [४४
अदेवद्रोहक कच्चिदापद्भिश्चैव वर्जितः । [५
- २३] कच्चिज्जनपदः स्फीतः सुखं वसति राघव ॥२३॥ [४६ उ
N] महृष्टनरनारीकाः सुनिरुद्धिग्रगोकुलाः । [N
- २४] कच्चित्ते निरता वैश्याः कृपिगोरच्यकर्मसु ॥ २४ ॥ [४७ प
२५] रच्या हि राज्ञा धर्मेण सर्वे विषयवासिन ॥२५॥ [४८ उ
कच्चित् निया समयसि कच्चित्ताश्च सुरक्षिता ।
- २६] कच्चिन्न श्रद्धास्यासां कच्चिद् गुह्यं न भापसे ॥२६॥ [४९
कच्चिन्नागवलं गुह्यं कैकेयी सुप्रजास्त्वया ।
- २७] कच्चिदुन्नतदन्तानां कुञ्जराणां न तृप्यसे ॥ २७ ॥ [५०
कच्चित् सभायो रमसे कच्चित् काले विबुध्यसे ।
N] कच्चिच्च पररात्रेषु धर्मार्थे विप्रबुध्यसे ॥ २८ ॥ [N
कच्चित् सङ्गामनीनिन्नः शूरस्ते वाहिनीपतिः ।
- २८] असंहार्योऽनुरक्तो हि लोको नित्यं च तिष्ठति ॥२८॥ [N
कच्चिच्च लोकायतिकान् ब्राह्मणानुपसेवसे ।
- २९] अनर्थकुशला ह्येते मृदाः^{१०} परिहृतमानिनः ॥३०॥ [३८
शास्त्रेष्वन्येषु मुख्येषु विद्यमानेषु दुर्वुधाः ।
- ३०] बुद्धिमान्वीक्षिकां प्राप्य न निन्दां वर्धयन्ति^{११} ते ॥३१॥ [३९
कच्चिद्दर्शयसे नित्यं मनुष्यान् समलङ्कृतान् ।
N] उत्थायोत्थाय पूर्वाद्दे मुत्त्वा च विदितं जनम् ॥३२॥ [५१
कच्चित् का [क] न्ये^{१२} च सायं च तवासीनस्य चाप्रतः ।

७-म - नास्ति ।

७-कै-अस्यश्लोकस्य पूर्वाद्दे
लुडित प्रतीयते ।

०-ल, म-नास्ति ।

८-ल, म-पश्चिष्ठा० ।

६-घ ल, म-असहायो० ।

१०-घ, ल, म-भूय ।

११-घ, म-कारयन्ति ।

१२-ल-काले ।

- २] पिवन्ति मदिरां नागा शुद्धते भोजनानि च ॥ ३३ ॥ [N
 कच्चित् पितरि सद्वृत्तिं वर्तसे पुरुषर्षभ ।
- ३१] पितामहानामपि वा वर्तसे तुल्यगौरवः ॥ ३४ ॥ [N
 श्रमात्यानुपवास्तीतान् पितृपैतामहान् शुचीन् ।
- ३२] ज्येष्ठान् ज्येष्ठेषु कच्चिच्च नियोजयसि कर्मसु ॥ ३५ ॥ [२६
 कच्चिद्भयं तथा भोज्यमेको नादसि राघव ।
- ३३] कच्चिदाशंसमानेभ्यो भ्रातृभ्यः^{१३} सम्प्रयच्छसि ॥ ३६ ॥ [७५
 कच्चिदश्वंशं नागांश्च भोजयन्ति तवागृतः ।
- ३४] शस्त्रकर्मकृतो^{१४} वैद्या दत्ता कुशलमानिनः ॥ ३७ ॥ [N
 कच्चित्ते वाहनं गुप्तं वज्रका न हभन्ति ते ।
- ३५] कच्चिन्न राष्ट्रे वर्तन्ते पररत्नापहारिणः ॥ ३८ ॥ [N
 कच्चित् त्वां नावजानन्ति याजका पातितं यथा ।
- ३६] उग्रं प्रतिवृद्धीतारं कामपानमिव स्त्रियः ॥ ३९ ॥ [२८
 ये बालिगा^{१५} ये च दत्ता ये मूढा ये^{१६} च पण्डिताः ।
- ३७] दृष्ट्वा^{१७} तं जीवितं तेषां कच्चित्ते ते सुरक्षिताः ॥ ४० ॥ [N
 उपायकुशलं वैद्यं भृत्यं सम्भाषणे रतम् ।
- ३८] शूरमैश्वर्यकामं च यो न युद्धते^{१८} स वर्धते ॥ ४१ ॥ [२९
 कच्चित् ते बलिनो मुख्याः सर्वयुद्धप्रियाः ।
- ३९] दृष्ट्वापदानविक्रान्तास्त्वया सत्कृत्य मानिताः ॥ ४२ ॥ [३०
 कच्चिद् पृष्ट्वा शूर्य श्रुतिमान् मतिमान् शुचिः ।
- ४०] कुलीनश्याममक्षय दत्ताः सेनापतिस्तव ॥ ४३ ॥ [३१

१३-य, ल, म-भृत्येभ्यः ।

१४-ल-दृष्टे ।

१५-ल-बालिगाश्च ये दत्ताः ।

१६ य ल, म-मूर्खाः ।

१७-य, ल, प-तिष्ठन्तः ।

१८-य-नियुङ्क्ते ।

कच्चिद् बलस्य भवतं च वेतनं च यथोचितम् ।

४१] सम्प्राप्तकालं दातव्यं ददासि न विशङ्कसे ॥४४॥ [३२

कालातिक्रमणादेव भक्ष्यदातव्यवर्जिता ।

४२] भर्तुरप्यकुर्वन्ति सोऽनयेः सुमहान् भवेत् ॥ ४५ ॥ [३३

कच्चित् पूर्वानुरक्तास्ते कुलपुत्रा, प्रधानतः ।

४३] आह्वेषु म्रियान् प्राणान् सन्त्यजन्ति समाहिताः ॥४६॥ [३४

कच्चिद् दानवशो विद्वान् दक्षिणः प्रतिभानवान् ।

४४] यथोक्तवादी^१ दूतस्ते कृतो भरत पण्डितः ॥४७॥ [३५

कच्चिदष्टादशान्येषु स्वपक्षे दश पञ्च च ।

४५] त्रिभस्त्रिभिरविज्रातैर्वेत्सि तीर्थानि चारकैः ४८ ॥ [३६

कच्चित्त्वं युध्यतामग्रे प्रतिपन्नश्च सर्वशः ।

४६] सुदुर्बलान् वारयंश्च वर्तसे रिपुसूदन ॥ ४९ ॥ [N

वीरैरध्युपितां^२ नित्यमस्माकं तात पूर्वजैः ।

४७] सत्यनाम्नीं दृढद्वारां हस्त्यश्वरथसङ्कुलाम् ॥ ५० ॥ [४०

ब्राह्मणैः क्षत्रियैर्वैश्यैः रतैस्तात स्वकर्मुमु

४८] जितेन्द्रियैर्महोत्साहैर्दृढवीर्यैः सहस्रदैः ॥ ५१ ॥ [४१

प्रासादैविविधाकारैर्भृता दिव्यैरलङ्कृताम् ।

४९] कञ्चिच्च मुदितां स्फीतामयोध्यां परिरक्षसि ॥५२॥ [४२

कच्चिन् मनुष्यशार्दूल मनुष्यान् समलङ्कृतान् । ०

५०] उत्थायोत्थाय पूर्वाह्ने राजपुत्राभिवीक्षसे ॥ ५३ ॥ [५१

कच्चित् सदां ते दुर्गाणि धनगन्यायुधादिकैः^३ ।

५२] यन्त्रैश्च परिपूर्णानि तथ्य शिन्पैर्धनुर्धरैः ॥ ५४ ॥ [५३

१६-स युक्तोर्यथादी ।

०-म-नास्ति ।

२०-स,म-वीरैश्चाप्यु ।

२१-म-न्यायुधाधिकैः ।

आयस्ते विपुलः कश्चित् कश्चित्स्वल्पतरं व्ययः ।

५३] अयात्रेषु नते कश्चित् कोपो गच्छति राघव ॥५५॥ [५४

देवतार्थेषु पितृषु ब्राह्मणाभ्यागतेषु च ।

५४] ज्योषेषु मित्रवर्गेषु कश्चिद् गच्छति ते व्ययः ॥५६॥ [५५

कश्चिदार्यो विशुद्धात्मा क्षपितश्चोरुर्कर्मणो ।

५५] अदृष्टशास्त्रकुशलैर्नायं ध्यायति मानवः ॥ ५७ ॥ [५६

गृहीतलोक आरक्तः^{२२} कुशलो दृष्टकारणः ।

५६] कश्चिन्न मुच्यते वीरो धनलोभान्नरर्षभ ॥५८ः [५७

कश्चिच्चाविदितार्थेषु बलिनो दुर्बलस्य च ।

५७] अपक्षपातात् पश्यन्ति कार्येष्वधिकृता नराः ॥ ५९ ॥ [N

यानि मिथ्याऽभिगस्तानां पतन्त्यश्रूणि रोदताम्^{२३} ।

५८] तानि पुत्रपशून् द्रन्ति तेषां मिथ्याऽभिशांसिनाम् ॥६०॥ [५९

कश्चिद् वृद्धाश्च बालाश्च मुख्यान् वैद्यांश्च सम्मतान् ।

५९] दानेन वचसा चैव यथावद्यार्चसे जनय ॥ ६१ ॥ [६०

कश्चिद् गुरुंश्च वृद्धांश्च तापसान् देवताऽत्थिनीन् ।

६०] पूज्यांश्च सर्वान् सिद्धार्थान् ब्राह्मणांश्च नमस्पसि ॥६२॥ [६१

कश्चिदर्थेन वा धर्ममर्थं धर्मेण वा पुनः ।

६१] उभौ वा भीतिसारेण न कामेन भयापसे ॥६३॥ [६२

कश्चिदर्थं च धर्मं च कामं च षदर्ता वर ।

६२] विभज्य काले कालज्ञ सर्वान् भरत सेवसे ॥ ६४ ॥ [६३

कश्चित्ते ब्राह्मणा. सर्वे धर्मकामार्थकोविदाः ।

६३] न शोचन्ति महामात्रा. पौरजानपदैः सह ॥ ६५ ॥ [६४

नास्तिक्यमनृत क्रोधः प्रमादो दीर्घसूत्रता ।

६४] अदर्शनं ज्ञानवतामालस्यं पापवृत्तिता ॥ ६६ ॥ [६७

एकं चित्तमर्थानामनर्थश्चोपमन्त्रणम्^{२४} ।

६५] निश्चितानां व नारम्भो मन्त्रस्यापरिरक्षणम् ॥६७॥ [६६

८] मङ्गलानामयोगश्च^{२५} प्रीत्युत्सर्गश्च सर्वशः ।

कश्चित् त्वं वर्जयस्येतान् राजदोषान् चतुर्दश ।

६६] यैराविष्टः श्रियं क्षिप्रं नाशयेत्पृथिवीपति ॥६८॥ [६७

तया तं चानुपृच्छन्तं रामं व्यपितचेतनः ।

११०-१] अज्ञापयत शोकार्तो भरतो मरणं पितुः ॥ ६९ ॥ [२

त्वामेव शोचंस्तव दर्शनैप्सु-

स्त्वय्येव तां तामविचार्य बुद्धिम् ।

त्वया विहीनस्तव शोकरुद्र^{२६}-

३] स्त्वदर्थमेवास्तमितः पिता नः ॥ ७० ॥ [N

पूर्वं च राजास्तमिहानुयुज्य

श्रुत्वा च वाक्यं भरतस्य तस्य ।

चिकीर्षमाणो रघुनन्दनस्तदा

४] पितुः प्रतिज्ञां स बभूव तूष्णीम् ॥ ७२ ॥ [N

इत्यार्षे नामायणे अयोध्याकाण्डे

कश्चित्को नाम सर्गः ॥ ११४ ॥

[घ-११०]=[पञ्चदशाधिकशतततमः सर्गः]=[दा-१०१]

तं तु रामः समाश्वास्य भरतं गुरुवत्सलम् । [१५०

N] उत्थाप्य मूर्ध्नि चाघ्राय पादयो पतितं तदा ॥१॥ [N

किमेतदिच्छेयमहं श्रोतुं यद् व्याहृतं त्वया ।

N] कस्मात् त्वमागतो देशमिमं चीरजटाधरः ॥२॥ [२

यन्निमित्तमिमं देशं कृष्णोजिनजटाधरः ।

N] हित्वा राज्यं प्रविष्टस्त्वं तत् सर्वं वक्तुमर्हसि ॥३॥ [३

इत्युक्तः केकयीपुत्रः काकुत्स्थेन महात्मना ।

N] मृष्य वाप्यं घातुभ्यां माञ्जलिर्वाचयमब्रवीत् ॥४॥ [४

आपो राज्यं परित्यज्य कृत्वा कर्म सुदुष्करम् ।

२] गतः स्वर्गं महाबाहुः पुत्रशोकाभिपीडितः ॥५॥ [५

दुष्टां स्त्रीषुद्धिमास्थाय कैकेयी राज्यकामिनी ।

५] चकार सुमहत्पापमिदं मम यशोहरम् ॥६॥ [६

सा राज्यफलममाप्य विरवा शोककर्षिता ।

६] पतिप्यति महायोरे निरये जननी मम ॥७॥ [७

तस्य मे दासभूतस्य प्रसादं कर्तुमर्हसि ।

७] अभिपिच्यस्व चानेन राज्येन मयवानिब ॥८॥ [८

इमाः प्रकृतयः सर्वा विपत्रा मातररच मे ।

८] त्वत् सकाशमनुशाताः प्रसादं कर्तुमर्हसि ॥९॥ [९

त्वमानुपूर्वतो^१ युक्तं युक्तं कामेन मानद ।

९] राज्यं प्राप्नुहि धर्मेण सकामान् गृहदः इह ॥१०॥ [१०

भस्त्वविपत्रा भूमिन्बवा पत्या ममन्विता ।

१०] शशिना विमलेनेर शारदी रजनी यथा ॥११॥ [११

मातृभिः सचिवैः सर्वैः शिरसा याचितो मया ।

- ११] भ्रातुः प्रियस्य दासस्य प्रसादं कर्तुमर्हसि ॥१२॥ [१२
तदिदं शाश्वतं सर्वं पित्र्यं सचिवमण्डलम् ।
- १२] पूजितं मनुजव्याघ्र नावमानितुमर्हसि ॥१३॥ [१३
एवमुक्त्वा महाबाहुः सत्वाढ्यः केकयीसुतः ।
- १३] रामस्य पादौ शिरसा जग्राह भरतस्तदा ॥१४॥ [१४
१४पू] तमार्चमिव मातङ्गं निःश्वसन्तं मुहुर्मुहुः । [१५पू
१५पू] कुलीनः सत्त्वसम्पन्नस्तेजस्वी चरितव्रतः ॥१५॥ [१६पू
१४उ] रामोऽप्यथाघ्नवीद्वा वाक्यं भरतं केकयीसुतम् । [१५उ
१५उ] राज्यहेतोः कथं पापमाचरेन्मद्विधो जनः ॥१६॥ [१६उ
न दोषं त्वयि पश्यामि सूक्ष्ममप्यरिसूदन ।
- १६] न चापि जननीं वाज्यात् त्वं विगर्हितुमर्हसि ॥१७॥ [१७
यावत् पितरि धर्मज्ञे गौरवं मम मानद ।
- १७] तावदेव जनन्यां मे कैकेय्यामपि गौरवम् ॥१८॥० [२१
स ताभ्यां धर्मशीलाभ्यां वनं गच्छेति राघव ।
- १८] मातापितृभ्यामुक्तः सन् कथं कुर्यामतोऽन्यथा ॥१९॥० [२२
त्वया राज्यमयोध्यायां प्राप्तव्यं लोकसत्कृतम् ।
- १९] वस्तव्यं दण्डकारण्ये मया वल्कलवाससा ॥२०॥ [२३
एवं कृत्वा महाभागो विभागं लोकसन्निधौ ।
- २०] व्यादिरय चैव धर्मात्मा दिवं दशरथो गतः ॥२१॥ [२४
स चेत् प्रमाणं राजेन्द्रो राजा लोकशुरुस्तव ।
- २१] पित्रा दत्तं यथाभागमुपभोक्तुं त्वमर्हसि ॥२२॥ [२५

कै० (त्यक्तं भाति प्रमादेन)

कै० (त्यक्तं भाति प्रमादेन ।)

३ व, ल, म—दाभ्यां ।

चतुर्दशसमाः सौम्य दण्डकारण्यमाश्रितः ।

२२] उपभोज्ये यथादत्तं भागं पित्रा महात्मना ॥२३॥ [N*

यदब्रवीन्मां सुरलोकसत्कृतः

पिता महात्मा विबुधोपमो नृपः ।

'तदेव मन्ये परमात्मसंहितं

२३] न सर्वलोकेश्वरताऽपि सत्कृता ॥२४॥ [२६

इत्यार्षे रामायणेऽयोध्याकाण्डे रामप्रश्नो

नाम सर्गः ॥११५॥



[वं-११']=[षोडशाधिकशततमः सर्गः]=[दा-१.२, १०३]

रामस्य तु वचः श्रुत्वा भरतः प्रत्युवाच ह ।

१] किं मे धर्माद् विहीनस्य राजधर्मः करिष्यति ॥ १ ॥ [१

शाश्वतो ज्यं सदा धम स्थितो ऽस्माकं नरर्षभ ।

२] ज्येष्ठे त्वयि स्थिते राजन् न कनीयान् भवेन् नृपः । २ ॥ [२

सुसमृद्धजना रम्यामयोर्ध्या गच्छ राघव ।

४] अभिषेचय चात्मानं कुलस्यास्य भवाय न. ॥ ३ ॥ [३

राजानं मानुष माहुर्देवस्त्वं संमतो मम ।

४] यस्य धर्मार्थचरितं वृत्तमाहुरमानुषम् ॥ ४ ॥ [४

केकयस्थे मयि श्रीमस्त्वयि चारण्यमाश्रिते ।

५] दिवं यातो महाराजः पिता न संमत. सताम् ॥ ५ ॥ [५

उत्तिष्ठ पुरुषव्याघ्र क्रियतामुदकं पितुः ।

६] अहं चायं च शत्रुघ्न पूर्वमेव कृतोदकौ ॥ ६ ॥ [७

मियेण किल दत्तं हि पितृलोकेषु राघव ।

७] अक्षय्यं भवतीत्याहुर्भवास्तस्य मिय. सुतः ॥ ७ ॥ [८

तां श्रुत्वा करुणां वाच'पितुर्मरणसहिताम् ।

८] राघवो भरतेनोक्तो बभूव गतचेतनः* ॥ ८ ॥ [१

६७] बागवज्जं भरतेनोक्तममनोज्ञं परन्तपः । [२७

१०५] मृग्य रामो बाहुभ्यां पुष्पिताग्रो द्रुमो यथा ॥ ६ ॥ [३५

१०७] वने परशुना कृत्तस्तथा भूमौ पपात सः । [३७

११५] तथा निपतित रामं जगत्यां जगतीपतिम् ॥ १० ॥ [४५

११७] कूलपातपरिश्रष्टं प्रसुप्तमिव कुञ्जरम् । [४७

१२५] आतरस्तं महेष्वास द्विगुणं शोककपितम् ॥ ११ ॥ [५५

१ म-राजा ।

[* अतस्लोकादारभ्य दाक्षिणात्यपाठे त्र्यु चरशततम सर्ग आरभ्यते]

- १२७] रुदन्तः सह वैदेहा सिपिचुर्नेत्रवारिणा । [५७
 १२८] स तु संज्ञां पुनर्लब्ध्वा नेत्राभ्यां वाप्पमुत्सृजन् ॥१२॥ [६४
 १२९] उपचक्राम काकुत्स्थः कृपणं बहुभाषितुम् । [६७
 N] कस्तां नृपतिना हीनामयोध्यां पालयिष्यति ॥ १३ ॥ [८७
 किं तु तस्य मया कार्यं दुर्जनेन महात्मनः ।
 १४] यो मृतो मम शोकेन त्वया चापि न संगतः ॥१४॥ [६
 अहो त्वं षत् सिद्धार्यो येन राजा त्वयाऽनघ ।
 १५] शत्रुघ्नेन च सर्वेषु प्रेतकार्येषु सत्कृतः ॥ १५ ॥ [१०
 निष्प्रधानामनेकाग्रां हीनां नरवरेण ताम् ।
 १६] निवृत्तवनवासोऽपि नायोध्यां गन्तुमुत्सहे ॥ १६ ॥ [११
 सम्पूर्णवनवासं मामयोध्यायां पुनर्गतम् ।
 १७] कोऽनुशासिष्यति पुनस्ताप्ते लोकान्तरं गते ॥१७॥ [१२
 पुरा मोष्य निवृत्तं मां यान्याह परिसान्त्वयन् ।
 १८] क्लृप्तःश्रोष्यामि वाक्यानि तानि कर्णमुखान्यहम् ॥१८॥ [१३
 एवंमुक्त्वा ऽथ भरतं भार्यामभ्येत्य राघवः ।
 १९] उवाच शोकसन्तप्तः पूणचन्द्रनिभाननाम् ॥ १९ ॥ [१४
 सीते मृतस्ते श्वशुरः पित्रा हीनश्च लक्ष्मणः ।
 २०] भरतो दुःखमाचष्टे स्वर्गतं पृथिवीपतिम् ॥ २० ॥ [१५
 जानकी श्वशुरं श्रुत्वा सर्वलोकशुभं मृतम् ।
 २१] नेत्राभ्यामश्रुपूर्णाभ्यां न शशाक निरीक्षितुम् ॥२१॥ [१८
 ततो बहुगुणं तेषामसु (श्रु ?) नेत्रैरजायत ।
 २२] तथा ब्रुवति काकुत्स्थे कुमारार्णां यशस्विनाम् ॥२२॥ [१६
 ततस्ते भ्रातरः सर्वे श्रातमाभास्य राघवम् ।

- २३] अत्रुवन् जगतीपाल वाप्पसन्दिग्धया गिरा ॥ [N
उत्तिष्ठ पुरुषव्याघ्र क्रियतामुदकं पितुः ॥२३॥ [१७
- २४] अहं चार्यं च शत्रुघ्नः पूर्वमेव कृतोदकौ ॥ २४ ॥ [N
स राम सम्परिष्वज्य रुदन्ती जनकात्मजाम् ।
- २५] प्रोवाच लक्ष्मणं प्रेक्ष्य दुःखितं दुःखितो वचः ॥५२॥ [१६
आनयेर्गुहपिण्याकं चीरमानय चोत्तमम् ।
- २६] जलक्रियार्थं तातस्य गमिष्यामि परन्तप ॥२६॥ [२०
सीता पुरस्ताद् व्रजतु त्वं चैनामभितो व्रज ।
- २७] अहं पश्चाद् गमिष्यामि गतिरेषा सनातनी ॥ २७ ॥ [२१
ततो नित्यानुगस्तेषां विजितात्मा महाद्युतिः ।
- २८] मृदुः क्षान्तश्च दान्तश्च रामे च हृदभक्तिमान् ॥ २८ ॥ [२२
सुमन्त्रस्तैर्नृसुतैः सार्धमाश्वास्य राघवम् ।
- २९] अवातारयदालम्ब्य नदीं मन्दाकिनीमनु ॥२९॥० [२३
ते च तीर्था नदी कृच्छ्रादुपगम्य यशस्विनः ।०
- ३०] पुण्यां मन्दाकिनीं रम्यां नित्यपुष्पितपादपाम् ॥३०॥ [२४
शीघ्रस्रोतां समागम्य शिवतीर्थमकर्दमाम् ।०
- ३१] असिञ्चन्नुदकं सर्वे पितुरेतद् भवत्विति ॥ ३१ ॥ [२५
परिगृह्य रघुश्रेष्ठो जलपूरितमञ्जलिम् ।
- ३२] दिशं याम्यामभिमुखो रुदन् वचनमब्रवीत् ॥३२॥ [२६
एतत् ते नृपशार्दूल विमलं दिव्यमक्षयम् ।
- ३३] पितृलोकेषु पानीं महत्तमुपतिष्ठतु ॥ ३३ ॥ [२७

ततो मन्दाकिनीतीरे सुचौ देशे^६ नराधिपः ।

३४] पितुर्न्यवर्त्तयन्^७ श्रीमान् निवापं भ्रातृभिः सहा ॥३४॥ [२८

ऐद्भुदं वदरोन्मिश्रं पिण्याकं दर्भसंस्तरे ।

३५] न्युप्य रामः सुदुःखार्थं इदं वचनमब्रवीत् ॥३५॥ [२९

इदं भुञ्च महाराज पिव तोयं च निर्मलम् ।

३६] यदन्नः पुरुषो राजंस्तदन्नास्तस्य देवताः ॥३६॥ [३०

ततस्तेनैव मार्गेण प्रत्युत्तीर्य नराधिपः ।

३७] आरूरोह नरव्याघ्रो रम्यसानुं महीधरम् ॥३७॥ [३१

ततः पर्णकुटीद्वारमागत्य जगतीपतिः ।

३८] प्रतिजग्राह पाणिभ्यामुभौ भरतलक्ष्मणौ ॥३८॥ [३२

गृहीत्वा तौ रुरोदारतो^८ राघवः सह सीतया ।

३९] तेषां तु रुदतां शब्दं श्रुत्वा भरतसैनिकाः ॥३९॥ [३६पू

अ^९वंशचैव रामेण सङ्गतो भरतोऽधुना ।

४१] तेषामेव महान् शब्दः शोचतां पितरं मृतम् ॥४०॥ [३५

अथ वासं परित्यज्य सर्वे तेऽभिमुखः स्वयम् ।

४२] अप्येकतः समाजग्मुर्^{१०}धावत्संमधाविताः ॥४१॥ [३६

अचिरमोपितं रामं चिरविमोपितं यथा ।

४३] द्रष्टुकामो जनः सर्वो जगाम सहसा ऽऽश्रमम् ॥४२॥ [३८

भ्रातॄणां त्वरितास्ते तु द्रष्टुकामाः समागमम् ।

४४] ययुर्बहुविधैर्यानिस्त्वरं ऽऽविष्टाः समाकुलाः ॥४३॥ [३९

अश्वैरन्ये गजैरन्ये रथैरन्ये स्वलङ्कृतैः ।

४५] सुकुमारास्तथैवान्ये^{११} पद्भ्यामेव प्रदुद्रुवुः ॥४४॥ [३७

सा भूमिर्वह्नुभिर्यानैः सुरनेमिसमाहता ।

४६] मुमोच तुमुत्तं शब्दं द्यौरिवाभ्रसमागमे ॥४५॥ [४०

तेन वित्रासिता नागाः करेणुपरिवारिताः^{१०} ।

४७] नासहंस्तुमुत्तं शब्दं जग्मुरन्यद्वनं च ते ॥४६॥ [४१

वराहमृगसिंहाश्च महिपाश्च वनेचराः ।

४८] व्याघ्रगोमायुसर्पाश्च वित्रेसुर्यभूषणैः सह ॥४७॥ [४२

रथाद्गशाद्गदात्पूहहंसकारणवसवा ।

४९, तथा कोकिलसङ्घाश्च विसन्ना भेजिरे दिशः ॥४८॥ [४३

तेन शब्देन वित्रस्तैराकाशं पक्षिभिरुतम् ।

५०] मनुष्यैरावृता भूमिरुभयं प्रवभौ तदा ॥४९॥ [४४

तान् नरान् वाष्पसम्पूर्णान् समीक्ष्य च स्रुदुःखितान् ।

५१] पर्यपृच्छत धर्मज्ञ पितृवन् मातृवच्च सः ॥५०॥ [४७

स तत्र कांश्चित् परिपस्वजे नरान्

नराश्च तं के विदथाम्यवादयन् । ०

चकार सर्वैरपि^{११} संविदं तदा

५२] यथाऽहमासाद्य तदा नृपात्मजः ॥ ५३ ॥ [४८

तथा तु तेषां रुदता महात्मनां

दिवं च खं चानुननाद निस्वनः ।

गिरेर्गुहाश्चैव दिशश्च नादयन्

५३] मृदङ्गघोषमतिम स शुश्रुवे ॥ ॥ ५४ ॥ [४९

इत्यार्षे रामायणे ऽयोध्याकाण्डे उदकप्रदानं

नाम मर्गः ॥ [११६] ॥

[चं-११२]=[सप्तदशाधिकशततमः सर्गः]=[दा-१८४]

वसिष्ठः पुरतः कृत्वा दारा दशरथस्य सः ।

१] अभिचक्राम तं देशं रामदर्शनकाञ्चया ॥१॥ [१

राजपत्न्यस्तु गच्छन्पो' नदीं मन्दाकिनीं प्रति ।

२] ददृशुस्तास्तदा सर्वा रामं लक्ष्मणसेवितम् ॥२॥ [२

कौसल्या वाप्यपूर्णेन मुखेन परिशुष्यता ।

३] सुमित्रामत्रवीद्व दीनां यात्रान्या राजयोपितः ॥३॥ [३

इदं तेषामनाथानां शुभमक्लिष्टकर्मणाम् ।

४] वने प्राक् केवलं तीर्थं ये ते निरिंपयीकृताः ॥४॥ [४

इतः सुमित्रे रामार्थं जलमादाय वीर्यवान् ।

५] सदा गच्छति साँमित्रिर्मम पुत्रस्य कारणात् ॥५॥ [५

दुष्करं कुरुते' पुत्रः सुमित्रे तत्र धार्मिकः ।

६] शुश्रूषते तु धर्मेण ज्येष्ठं यो भ्रातरं वने ॥६॥ [६

स्त्रीमथानेन यः पित्रा त्यक्तो निरपराधवान् ।

७] भ्रष्टश्च सानुजो राज्यात् सीतया भायंया सह' ॥७॥

एवं विलापमाना सा कौसल्या शोकविदला' ।

८] ददरोद्भृदपिण्याकैर्निवापं पुलिने कृतम् ।'८॥ [८

दक्षिणाग्रेषु दर्भेषु सपुष्पेषु' निधापितम् ।

९] उपहारं विवृर्द्धं भर्तुरापतलोचना ॥९॥ [९

१ व-गच्छन्तः ।

२ पुस्तः ।

३ व, ल-ज्येष्ठं ।

४ व, ल म-राष्ट्र भार्यया ।

५ व ल, म-शोकवर्षिता ।

६ ल-शुश्रूषेषु ।

सा तमिद्गदपिण्याकं दृष्ट्वा द्विगुणदुःखिता । [१०]

१०] उवाच देवी कौसल्या सर्वा दशरथस्त्रियः ॥१०॥ [६]

इदमिच्छाकुनाथस्य राघवेण महात्मना ।

११] पितुरिद्गदपिण्याकं न्युप्तं परयत यादृशम् ॥११॥ [१०]

तस्य देवसमस्येदं पार्थिवस्य महात्मनः ।

१२] नैतदौपायिकं मन्ये भुक्तभोगस्य भोजनम् ॥१२॥ [११]

चतुरन्तां महीं भुक्त्वा महेन्द्रसदृशो विभुः ।

१३] कथमिद्गदपिण्याकं स भुङ्क्ते वसुधाधिपः ॥१३॥ [१२]

अतो दुःखतरं लोके न किञ्चित् प्रतिभाति मे ।

१४] यत्र रामः पितुर्दत्ते तापसायन्नमीदृशम् ॥१४॥ [१३]

रामेणेद्गदपिण्याकं पितुर्दत्तं समीच्य वै ।

१५] कथं ममेदं हृदयं विशीर्येन्न^३ सदृस्रथा ॥१५॥ [१४]

श्रुतिश्च खल्वियं सत्या मुमित्रे प्रतिभाति मे ।

✓ N] यदन्नः पुरुषो हि स्यात् तदन्नास्तस्य देवताः ॥१६॥ [१५]

N] एवमार्ता सपत्नीभिस्ताभिराश्वासिता तदा । [१६]

१६पू] सा जगामाश्रमपदं कौसल्या यत्र राघवः ॥१७॥ [१६]

१६उ] ततस्तास्त्वरितं गत्वा सर्वा नृपतियोपितः । [N]

१७पू] अपश्यन्नाश्रमे रामं स्वर्गाच्च्युतमिवामरम् ॥१८॥ [१६उ]

१७उ] सम्भोगैः सम्परित्यक्तं रामं दृष्ट्वैव मातरः ।

१८पू] आर्ता मुमुक्षुरश्रूणि सस्वराः शोककपिताः ॥१८॥ [१७]

- १८३] तासां रामः समुत्थाय जग्राह चरणञ्छुभान् ।
 १९५] मातृणां पुरुषव्याघ्रः सर्वासामनुपूर्वशः ॥२०॥ [१८
 १९७] पाणिभिः मुखसंस्पर्शैर्धृद्रुलितलैः शुभैः । [१९५
 २०५] मूर्धन्याघ्राय ता रामं रुरुदुः पार्थिवद्वियः ॥२१॥ [N
 २०७] सौमित्रिरपि ताः सर्वाः समातः शोककर्षिताः ।
 २१५] अभ्यवादयत महो दीनो रामादनन्तरम् । २२॥ [२०
 २१७] आशीर्वादैश्च रामस्य लक्ष्मणस्य तथैव च ।
 २२५] देशकालानुरूपैश्च मातृभिः सम्प्रयोजितैः ॥२३॥ [N
 २२७] यथा रामे तथा तस्मिन् सर्वा वृत्तिरेद्वियः ।
 २३५] वृत्तिं दशरथाज्जाते लक्ष्मणे शुभलक्षणे ॥२४॥ [२१
 २३७] सीताऽपि रुदती तासां पादान् स्पृष्ट्वा सुदुःखिता ।
 २४५] स्वश्रूणामश्रुपूर्णाक्षी सा बभूवाग्रतः स्थिता ॥२५॥ [२२
 २४७] तां परिष्वज्य कौसल्या माता दुहितरं यथा ।
 २५५] वनवासकृशां दीनामिदं वचनमब्रवीत् ॥२६॥ [२३
 २५७] विदेहराजस्य सुता स्तुपा दशरथस्य च ।
 २६५] रामपत्नी कथं दुर्ग वनं प्राप्ताऽसि जानकि ॥२७॥ [२६
 २७३] पद्ममातपसन्तप्तं परिक्रिन्नमिवोत्पलम् । [२५५
 फाञ्चनं रजसा ध्वस्तं दिवा चन्द्रमिवाप्रभम् [२५७
 २७] मुखं ते मेक्ष्य मां शोको दहत्यग्निरिवाश्रयम् ॥२८॥ [२६५
 भृशं तवेह वैदेहि व्यसनारणिसंभवः । [२६७

८ व, ल, म तथा ।

६ कै—त ।

० व, ल, म—नास्ति ।

२८] दहत्यग्निर्मुखं कान्तं निस्तोयमिव पङ्कजम् ॥२६॥ [N
द्ववन्त्यामेवमार्तायां जनन्यां भरताग्रजः ।

२९] पादावासाद्य जग्राह वसिष्ठस्य महात्मनः । ३०॥ [२७

पुरोहितस्याग्निसमस्य तस्य
दृहस्पतेन्द्रि इवामराधिपः ।

निपीड्य पादौ स समिद्धतेजसः

३०] सहैव तेनोपविवेश राघवः ॥३१॥ [२८
तत्रोपविष्टेन च तेन मन्त्रिभिः

पुरप्रधानैश्च सहैव सैनिकैः ।

गुह्येन धर्मव्रतमेन धर्मवित्

३१] सहोपविष्टः समुपेत्य राघवः ॥३२॥ [२९

ततोपविष्टस्तु तथैव वीरं

ततः स धर्मेण सहैव राघवम् ।

श्रिया ज्वलन्तं भरत कृताञ्जलिः

N] यथा महेन्द्रः प्रयतः प्रजापतिम् ॥३३॥ [३०

किमेष वाक्यं भरतोऽथ राघवं

प्रणम्य सत्कृत्य च साधु वक्ष्यति ।

इतीव तस्याथ जनस्य तत्त्वतो

बभूव कौतूहलमुत्तमं तदा ॥३४॥ [३१

स राघवः सत्यवृत्तिश्च लक्ष्मणौ

महानुभावो^{११} भरतश्च धर्मवित् ।

वृताः सुहृद्भिः प्रविरेजुरोजमा

३३] यथा सदस्यैर्ज्वलितास्रयोऽग्रयः ॥३५॥ [३२

इत्यार्षे रामायणेऽथोऽध्याकाण्डे मातृस्मागमौ

नाम मर्गः^{११} ॥३५॥ १. ३



११ श्लो-पूर्वे वृत्तिं दद्यात् 'महानुभावोः' इति पदेन विद्विषमश्च
वृत्तिश्च ।

[चं-११३]=[अष्टादशाधिकशततमः सर्गः]=[दा-१०६]

अथोपविष्टं ध्यायन्तं रामं प्रकृतिसंसदि । [N

१] उवाच भरतश्चित्रं धार्मिको धार्मिकं वचः ॥१॥ [२५

प्रोपिते मयि यन्मात्रो पापं मत्कारणं कृतम् ।

२] क्षुद्रया न तदिष्टं मे प्रसीदतु भवान् मम ॥२॥ [८

धर्मबन्धानुबद्धोऽस्मि येन स्वां नेह मातरम् ।

३] हन्मि तीक्ष्णेण दण्डेन दण्डार्हामपकारिणीम् ॥३॥ [६

कथं दशरथाज्जातः शुद्धाभिजनकर्मवान् ।

४] अहं भ्रातृव्यवद् भ्रातुः कुर्यां कर्म विगर्हितम् ॥४॥ [१०

गुरुः क्रियावान् वृद्धश्च राजा प्रेतः पितेति च ।

५] तातं तेन न गर्हामि दैवतं च परं मम ॥५॥ [११

धर्मार्थाभ्यां हि को हीनमीदृशं कर्म गर्हितम् ।

६] स्त्रियः मियचिकीर्षार्थं कुर्याद्द्रु धर्मज्ञ धर्मवित् ॥६॥ [१२

अन्तकाले हि भूतानि मुह्यन्तीति परिश्रुतम् ।

७] राज्ञा योवाहिता^१ लोके प्रत्यक्षा सा श्रुति कृता ॥७॥ [१३

तस्यैतं मतिसम्मोहमन्तकालसमुद्भवम् । [N

८] तातस्य समतिक्रान्तं प्रत्याहर्तुं^२ त्वमर्हसि ॥८॥ [१४३

पितुर्हि^३ समतिक्रान्तं यः साधु कुरुते सुतः ।

९] तदपत्यमिति प्रोक्तमनपत्यमतोऽन्यथा ॥९॥ [१५

तदपत्यं भवानस्तु मास्म भू[द्] दुष्कृतं पितुः । [१६५

१०] अनुवर्चस्व काकुत्स्थ मार्गं साधुनिपेवितम् ॥१०॥ [N

१ व—राजायोवाहिता ।

२ ल—प्रत्याहर्तुं ।

कैकेयीं मातरं मां च मुहूदो वान्धवाश्च नः ।

११] पौरजानपदान् भृत्यास्त्रायस्व सकलानिमान् ॥११॥ [१७

क चारण्यं क च क्षत्रं क जटा परिपालनम् ।

१२] इदं शाठ्यात्मकं कर्म न भवान् कर्तुमर्हति ॥१२॥ [१८

अथ क्लेशजमेव त्वं धर्मं चरितुमिच्छसि ।

१३] संगृह्य चतुरो वर्णास्तेन क्लेशमवाप्नुहि ॥१३॥ [२१

चतुर्णामाश्रमाणां हि गार्हस्थ्यं श्रेष्ठमाश्रमम् ।

१४] आहुर्वन्द्यं हि धर्मज्ञास्तं कथं त्यक्तुमिच्छसि ॥१४॥ [२२

त्वत्तश्च बुद्ध्या ज्ञानेन जन्मनाऽप्यवरो ह्यहम् ।

१५] स कथं पालयिष्यामि मेदिनीं त्वयि तिष्ठति ॥१५॥ [२३

हीनबुद्धिबलो बालो हीनज्ञानस्तथैव च ।

१६] भवन्तं च विना भूप न वर्त्तयितुमुत्सहे ॥१६॥ [२४

इदं निरिवलमव्यग्रं पित्र्यं राज्यमकण्टकम् ।

१७] अनुशाधि स्वधर्मेण धर्मज्ञ सह बन्धुभिः ॥१७॥ [२५

इहैव त्वाभिपिञ्चन्तु सर्वाः भक्तियस्त्विमा ।

१८] ऋत्विजः सवसिष्ठाश्च ऋपयो मन्त्रज्ञोविदाः ॥१८॥ [२६

अभिपिक्तस्त्वमस्माभिरयोध्यागमनं कुरु ।

३ य-क्षत्र ।

८ य, ल, म-मुत्तम ।

४ य, ल, म-कजटा क च पालनम् ।

९ य ल म-धर्म्यं ।

५ य, म-साध्यात्मकः ।

१० य, ल म-तिष्ठति । ?

६ कर्तुं ।

११ ल, म-०मकण्टकम् ।

७ य-पदि ।

- १६] निक्षिप्य तरसा लोकान् मरुद्भिरिव वासवः ॥१६॥ [N
 ऋणानि त्रीण्यपाकुर्वन् दुर्हृदः साधु कर्षयन्^{१२} ।
- २०] मुहद. पूरयन् कामैर्वसंस्तत्र प्रशाधि नः ॥२०॥ [२८
 अत्र वै^{१३} मुदिताः सन्तु मुहदस्तेऽभिपेचने ।
- २१] अथ भीताः पलायन्तां दुर्हृदस्ते दिशो^{१४} दश ॥२१॥ [२६
 किल्बिपं मम मातुश्च प्रमार्जं पुरुषर्षभ ।
- २२] अत्र तत्र भवांस्तं च पितरं रक्ष किल्बिपात् ॥२२॥ [३०
 २३] धर्मो ह्येष पर प्रोक्तः क्षत्रियस्याभिपेचनम् ।
- N] यो धर्मेण महामाज्ञ प्रजाश्च परिपालयेत् ॥२३॥ [N
 शिरसा त्वाऽभियाचेऽहं^{१५} कुरुष्व कुरुणां मयि ।
- २४] गन्धर्वेषु च सर्वेषु भूतेष्विव महेश्वरः ॥२४॥ [३१
 अथ मां पृष्ठतः वृत्वा घनमेव^{१६} भवानितः ।
- २५] गमिष्यति गमिष्यामि भवता सार्द्धमप्यहम् ॥२५॥ [३२
 तमृत्विजो^{१७} मामधस्तवन्दिनः
 सुतमिया वाप्यकलाश्च मातरः ।
 तथा वृवन्तं भरतं प्रतुण्डुवुः
- २६] प्रणम्य रामं च ययाचिरे सह ॥२६॥ [३५
 इत्यार्षे रामायणेऽयोध्याकाण्डे भरतवाक्य
 नाम सर्गः ॥११८॥

१२ घ-धर्षयन् ।

१३ ल-अधैव ।

१४ घ ल, म-०ऽभिपेचने ।

१५ घ त्वभियाचेऽह ।

१६ घ घनवासे ।

१७ ल तस्यत्विजो ।

[चं-११४]=[एकोनविंशत्यधिक-

शततमः सर्गः]=[दा-१०५, १०६]

स तथा भरतेनोक्तो रामो धर्मपथे स्थित ।

१] इदं वचनमङ्गीवं मध्ये परिपदोऽब्रवीत् ॥१॥ [४

नात्मनः कामकारोऽस्ति पुरुषोऽयमनीश्वरः ।

२] इतरचेतश्चरन्तं तं कृतान्तः परिकर्षति ॥२॥ [१५

सर्वे क्षयान्ता निचयाः पतनान्ताः समुच्छ्रयाः ।

३] संयोगा विप्रयोगान्ता मरणान्त हि जीवितम् ॥३॥ [१६

यथा फलानां पकानां नान्यत्र पतनाद् भयम् ।

४] तथा नराणां जातानां नान्यत्र मरणाद् भयम् ॥४॥ [१७

यथाऽऽगारं दृढं स्थूलं शीर्णं भूत्वाऽवसीदति ।

५] तथैव सीदन्ति नरा मृत्युपाशवशद्गताः ॥५॥ [१८

सहैव मृत्युर्व्रजति सह मृत्युश्च तिष्ठति ।

६] गत्वा सुदूरमध्वानं सह मृत्युर्निवर्त्तते ॥६॥ [२२

अहोरात्राणि वर्त्तन्ते सर्वेषां प्राणिनामिह ।

७] आथूपि कर्षयन्त्याशु ग्रीष्मे जलमिवांशवः^१ ॥७॥ [२०

आत्मानमनुशोच त्वं किमन्यमनुशोचसि^२ ।

८] आपुस्ते क्षीयते पश्य स्थितस्य चरतस्तथा^३ ॥८॥ [२१

गात्रेषु प्रलयः प्राप्ता श्वेताश्चैव शिरोरुहाः ।

९] जरया पुरुषः कीर्णः किं हित्वेह सुखी भवेत् ॥९॥ [२३

इमे चोदित आदित्ये तथा चास्तमिते त्विह ।

१०] आत्मनो नावबुध्यन्ते पुरुषा जीवितक्षयम् ॥१०॥ [२४

१ घ—०मिव शयः ।

३ घ, ल, म—भवतस्तथा ।

२ घ, ल, म—०दनुशोचसि ।

हृष्यत्पुरुफलं दृष्ट्वा नवं नवमिवागतम् ।

११] ऋतूनां^५ परिवर्त्तेन^६ प्राणिनां प्राणसंज्ञयः^७ ॥११॥ [२५

यथा काष्ठं च काष्ठं च समेयातां महोदधौ ।

१२] समेत्य च व्यपेयातां स्थित्वा किञ्चित् क्षणान्तरम् ॥१२॥ [२६

एवं भार्याश्च पुत्राश्च सुहृदश्च वसूनि च ।

१३] समेत्य^८ व्यवधीयन्ते ध्रुवं तेषां परामवः ॥१३॥ [२७

न कश्चिदन्यथाभावं प्राणी समतिवर्त्तते ।

१४] तेन नास्तीह सामर्थ्यं प्रेतस्य ह्यनुशोचतः ॥१४॥ [२८

यथा हि सार्धं गच्छन्तं द्रूयात् कश्चित् पथि स्थितः ।

१५] अहमप्यनुयास्यामि पृष्ठतो भवतामिति ॥१५॥ [२९

यः^९ पूर्वैः प्राकृतो मार्गः पितृपैतामहो ध्रुवः ।

१६] तमापन्नः कथं शोचेद्द्रु यस्य नास्ति व्यतिक्रमः ॥१६॥ [३०

पयसः^{१०} सवमानस्य स्रोतसो वाऽतिवर्त्तिनः ।

१७] आत्मा धर्मेऽभियोक्तव्यो धर्मज्ञेन विपश्चिता ॥१७॥ [३१

धर्मात्मानः शुभैर्दृष्टैः क्रतुभिश्चाप्तदक्षिणैः । [३२पू

१८] धर्मात्मानो गताः स्वर्गं पितृमातृनिषेवितम् ॥१८॥ [N

भृत्यानां भरणं कृत्वा प्रजानां परिपालनम् ।

१९] अर्थदानं^{११} च साधुभ्यः पिता नस्त्रिदिवं गतः ॥१९॥ [N

इष्ट्वा यज्ञैर्वहुविधैर्भोगांश्चावाप्य केवलम् ।

२०] उत्तमं वपुरासाद्य स्वर्गतो जगतीपतिः ॥२०॥ [N

सञ्जीर्णं मानुषं देहं परित्यज्य पिता मम ।

४ ल-ऋतवः ।

५ ब, ल म-परिवर्त्तन्ते ।

८ घ, ल, म-वैः ।

९ घ. ल. म-पयसः ।

- २१] दैवीं गतिमनुमाप्तो दिव्यलोकविहारिणाम् ॥२१॥ [३३
 तत्र नैवंविधः कश्चित् माज्ञः शोचितुमर्हति ।
- २२] त्वद्विश्वो मद्विश्वो वाऽपि श्रुतिमान् मतिमान् नरः ॥२२॥ [३४
 एते बहुविधाः शोका विलापो रुदितं तथा ।
- २३] विसर्जनीया धीरेण सर्वावस्थाम् धीमता ॥२३॥ [३५
 असंशयं तत शोकं मा शुचो वसतां पुरीम् ।
- २४] यथा पित्रा नियुक्तोऽसि तथा कुरु नरर्षभ ॥२४॥ [३६
 यत्राहमपि तेनैव नियुक्तः पुत्रकर्मणि ।
- २५] तदेवाहं करिष्यामि पितुरार्यस्य शासनम् ॥२५॥ [३७
 न मया शासनं तस्य शक्यं त्यक्तुमरिन्दम ।
- २६] नन्वयं सहितो ऽमात्यैर्दैवतं परमं पिता ० ॥२६॥ [३८
 स एवमुक्तो भरतो रामं वचनमब्रवीत् ।
- २७] कियन्तस्तादृशा लोके यादृशोयमरिन्दम । २७॥ [३९
 न त्वां मन्वथयेद्द दु खं मुखं वाऽपि महर्षयेत् ।
- २८] संमत्श्चासि वृद्धानां शक्रो नाकौकसामिव ॥२८॥ [४०
 यथा मृते तथा जीवे यथाऽसति तथा सति । [१०१मर्षः]
- २९] कस्यैप बुद्धिलाभः स्याद्द यथा ते मनुजाधिप ॥२९॥ [४१
 ३०पू] एवं च व्यसनं प्राप्य न विपत्तुं त्वमर्हसि । [५३
 ३२पू] आसाद्य हि निवर्त्तन्ते सन्तापास्त्वामरिन्दम ॥३०॥ [४२
 ३२उ] अस्माकमिह काकुत्स्थ परशुर्वीर पातित ।
 ३३पू] अहं तु रहितो धीर्मास्त्वया दशरथेन च ॥३१॥ [४३
 ३३उ] न जीविष्यामि दुःखार्तो हेरुर्दिग्यहतो यथा ॥३२॥ [४४

वसन्तमार्यं सह लक्ष्मणेन

सभार्यमायस्तपनाः समीक्ष्य ।

प्राणान् न जह्यां विजने यथाऽहं

३४] तथा कुरु त्वं पृथिवीं प्रशाधि ॥३३॥ [N

तथा तु रामो भरतेन तेन

प्रसाद्यमानः गिरसा महीपतिः ।

मतिं न चक्रे गमनाय सत्ववान् ।

३५] स्थितः पितुस्तद्वचन समीक्ष्य ॥३४॥ [३३

इत्यार्ये रामायणे अयोध्याकाण्डे रामभरतसंवादो

नाम सर्गः ॥ [११९] ॥



[वं-११६]=[विंशत्याधिक-अततमः सर्ग]=[दा-१०७]

पुनरेवं ब्रुवाणं तु भ्रातर भरताग्रज ।

१] उवाच रामो धर्मात्मा भरतं धर्मवत्सलम् ॥१॥ [१

उपपन्नमिद् वीर त्वयि सर्वं नरर्षभ ।

२] यस्त्व जातो दशरथात् कैशेयानन्दवर्धन. ॥२॥ [२

२५] पुरा तात महाराजो मातरं ते समुद्रहन् । [३५

देवासुरे च संग्रामे जनन्यास्तव पार्थिव. ॥३॥

४] महृष्ट प्रददौ राजा वरौ द्वौ याचित प्रभुः ॥४॥ [४

ततः सा तौ प्रतिस्मृत्य तव माता यशस्विनी ।

५] अयाचत नृप गत्वा द्वौ वरौ वरवर्णिनी ॥५॥ [५

तव राज्य नरव्याघ्र मम भ्राजान तथा ।

६] तद्वै राजा तदा तस्या नियुक्त. प्रददौ स्वयम् ॥६॥ [६

तेन पित्रा ममाप्यत्र नियोगः पुरुपर्षभ ।

७] चतुर्दश वने वासस्तव वर्षाणि भूतले ॥७॥ [७

सोऽह वनमिद् दुर्गं निर्जन लक्ष्मणान्वितः ।

८] ससीतश्चागतो वीर सत्यवाक्ये स्थितः पितु ॥८॥ [८

भवानपि तथा क्षिप्र पितर सत्यवादिनम् ।

९] कर्तुमर्हति राजेन्द्रं शाधि राज्यमकण्टकम् ॥९॥ [९

ऋणान्मोचय राजान कैशेयानन्दवर्धन' ।

१०] पितरं त्राहि धर्मज्ञ मातरं चापि पालय ॥१०॥ [१०

श्रूयते च पुरा तात श्रुतिर्गीता तपस्विभिः ।

११] गयस्य यजमानस्य यजतः स्वपितृनपि ॥११॥ [११

पुंनाम्नो नरकाद् यस्मात् पितर त्रायते मृतः ।

१२] तस्मात् पुत्र इति प्रोक्तः स्वयमेव स्वयंभुवा ॥१२॥ [१२

इष्टव्या वहवः पुत्रा गुणवन्तो बहुश्रुताः ।

१३] तेषां हि समवेतानां यद्येको गुणवान् भवेत् ॥१३॥ [१३]

इत्युचुर्ऋषयः सर्वे प्रतीता रघुनन्दन ।

१४] तस्मात् त्राहि नरश्रेष्ठ पितरं नरकात् प्रभो ॥१४॥ [१४]

अयोध्यां गच्छ भरत प्रकृतीरनुपालय ।

१५] शत्रुघ्नसहितो वीर सह सर्वैर्द्विजातिभिः ॥१५॥ [१५]

प्रवेक्ष्यामि महाऽरण्यमहं च मुनिभिः सह ।

१६] आभ्यां च सहितो राजन् वैदेह्या लक्ष्मणेन च ॥१६॥ [१६]

त्वं राजा भरत-भवाद्य नागराणां

वन्यानामहमपि वने^१ गृगाणाम् ।

गच्छ त्वं पुरुषवराद्य संप्रहृष्टः

१७] शान्तात्मा त्वमहमपि दण्डकान् प्रवेक्ष्ये ॥१७॥ [१७]

छायां ते दिनकरभाः प्रचोद्यमानं

सच्छत्रं भरत करोतु मूढर्षिं शुभ्रम् ।

एतेषामहमपि काननद्रुमाणां

१८] छार्यां तामतिशिशिरां^२ समाश्रयिष्ये ॥१८॥ [१८]

शत्रुघ्नः कुशलतरोऽस्ति^३ ते सहायः

सौमित्रिर्मम विहितः स्वयं विधात्रा ।

चत्वारस्तनयवरा वयं नरेन्द्रं

१९] सत्यं तं वत रुरवाम मा विषीद ॥१९॥ [१९]

इत्यार्षे रामायणे अयोध्याकाण्डे रामवाक्यं
नाम सर्गः ॥ [१२०] ॥

२ ब, म—वर्धनः ।

३ ल—श्रुतिगीता ।

४ ल—स्वयम् ।

५ घ, ल, म—महमपि वै वने

६ घ, ल, म—शिरसा ।

७ घ, म—०स्तु ।

[ब-११६]=[एकविंशत्यधिक-शततम-सर्गः]=[दा-१०८]

आश्वासयन्तं भरतं जावालिर्वाह्यणोत्तमः ।

२] उवाच रामं धर्मज्ञं धर्मोपेतमिदं वचः ॥१॥ [१

साधु राघव मा ते भूद् बुद्धिरेवं निरर्थका ।

३] नरस्य प्राकृतस्येव धीरबुद्धेस्तपस्विनः ॥२॥ [२

कः कस्य पुरुषो बन्धुः किं कार्यं केन कस्य चित् ।

१२] यद्येको जायते जन्तुरेक एव विनश्यति ॥३॥ [३

तस्मान्माता पिता चैव प्रतिश्रयसमायुधौ ।

१३] उत्तमस्तु स विज्ञेयो योऽत्र जानानि वै नरः ॥४॥ [४

यथा ग्रामान्तरं गच्छन् नः कस्मादपि क्वचित् ।

१४] उत्सृज्य च तमावासं प्रतिष्ठेतापरेऽहनि ॥५॥ [५

एवमेव मनुष्याणां पिता माता गृहं वसु ।

१५] अवासमात्रं काकुत्स्थ तत्र सज्जति वै नरः ॥६॥ [६

निरर्थं जनमुत्सृज्य स नार्हसि नरोत्तम ।

१६] आसितु विपमं दुर्गं विपिन बहुषण्टकम् ॥७॥ [७

समृद्धायामयोध्यायामात्मानमभिपेचय ।

१७] एकवेणीधरा हि त्वां नगरी संपतीक्षते ॥८॥ [८

राजभोगाननुभवन् महात्मन् पार्थिवो भव ।

१८] विहर त्वमयोध्यायां यथा शकस्त्रिविष्टपे ॥९॥ [९

न ते कश्चिद् दशरथस्त्व च तस्य न कथन ।

१९] अन्यो राजा त्वमप्यन्यस्तस्मात् कुरु यदुच्यसे ॥१०॥ [१०

गतः स नृपतिस्तत्र गन्तव्यं तेन यत्र वै ।

२१] मृष्टतिरेषा भूतानां त्वं तु मिथ्याऽनुतप्यसे ॥११॥ [१२

१] परलोकगता ये ये तांस्ताब् शोचति को नरः ।

- २२३] ते हि दुःखं परिप्राप्य विनाशं प्रेत्य भेजिरे ॥१२॥ [१३
 अष्टरूपा ऽपि ततः' कार्या इत्येवं प्राकृतो जनः ।
- २३] अन्नस्योपद्रवं पश्य मृतो हि किमशिष्यते ॥१३॥ [१४
 यदि भुक्तमिहान्येन देहमन्यस्य गच्छति ।
- २४] दद्यात् प्रवसतः श्राद्धं नास्य पाथेयमाहरेत् ॥१४॥ [१५
 दानसत्त्वपरा ह्येते ग्रन्था मेधाविभिः कृताः ।
- २५] यजस्व देहि दीक्षस्व तपस्तप्यस्व सन्त्यज ॥१५॥ [१६
 अनास्तिकपरामेवं कुरु बुद्धिं महामते ।
- २६] भृत्यक्षं यत्तदातिष्ठ परोक्षं पृष्ठतः कुरु ॥१६॥ [१७
 अमृत्यमाणाः पुनरुप्रतेजा
 निशम्यः तं नास्तिकवाक्यमुक्तम् ।
 अथाववीक्षं नृपतेस्तनूजो
- १] विगर्हमाणो वचनानि तस्य ॥१७॥ [N*
 त्यक्तो जना पूर्वतराः परे च
 बहूनि कर्माणि शुभानि कृत्वा ।
 जित्वा ह्यदोषं परमं च लोकं
- २] कस्मात् परास्ति हुतं कृतं च ॥१८॥ [N†
 निन्दाम्यहं कर्म पितुः कथं नु
 यस्तामृष्टहाद् भृशमर्थबुद्धिम् ।
 बुद्ध्या तयैवंविधया' चरन्त-
- ३] मनास्तिक धर्मपथाव्यपेतम् ॥१९॥ [N†

२ ल तथा ।

व-पितुः ।

३ य सेवावधिः ।

४ य ०नप्यश्च ।

५ ल-दानसत्त्वपरामेधं ।

* दाक्षिणात्ये पाठे नवोत्तर

शतमे सर्गे दृश्यम् ।

७ य-तयैवविधया ।

† दाक्षिणात्ये पाठे ११० सर्गे

दृश्यम् ।

[त्रं-११६]=[त्रयोविंशत्यधिक-शततमः सर्गः]=[दा-११०]

- क्रुद्धमाज्ञाय रामं तु वसिष्ठः प्रत्यभाषत ।
 १] जावालिरपि^१ जानाति लोकस्यास्य गतां^२ गतिम्^३ ॥१॥ [१
 निवर्त्तयितुकामस्वामेतद्वाक्यमयात्रवीत् ।
 २] इमां लोकसमुत्पत्तिं लोकनाथ निबोध मे ॥२॥ [२
 पूर्वं सलिलमेवासीत् पृथिवी यत्र निर्मिता ।
 ३] ततः समभवद् ब्रह्मा स्वयंभू र्वरदः प्रभुः ॥३॥ [३
 विष्णुर्वराहरूपेण उज्जहार^४ वसुन्धराम्^५ ।
 ४] असृजच्च^६ जगत् सर्वं पुत्रैः सह महर्षिभिः ॥४॥ [४
 आकाशप्रभवो ब्रह्मा शाश्वतोऽथाक्षयो^७ ऽव्ययः ।
 ५] तस्मान्मरीचिः संजज्ञे मरीचिः कश्यपः सुतः ॥५॥ [५
 ससर्जागिरसं ब्रह्मा प्रचेतसमयाङ्गिराः । [N
 N] मनुः प्रचेतसः पुत्रः इच्छाकुस्तु मनो [ः] सुतः ॥६॥ [६पू
 यस्येयं प्रथमं^८ वृत्ता समृद्धा^९ मनुना मही ।
 ७] स इच्छाकुरयोध्यायां राजा ऽभूद् विधिपूर्वकम् ॥७॥ [७
 इच्छाकोस्तु सुतः श्रीमान् कुत्तिरित्यतिविश्रुतः^{१०} ।
 ८] कुत्तेरप्यात्मजो वीरो विद्वन्निः समपद्यत ॥८॥ [८
 विकुत्तेस्तु महातेजा बाणः पुत्रः^{१०} मतापवान् ।
 ९] अनरण्यन्तु पुत्रोऽभूद् बाणस्यामिततेजसः ॥९॥ [९

१-ल, म-जावालिरमि ।

२-ल, म-गतागतिम् ।

३-ल, म-तज्जहार ।

४ ल, म-वसुन्धरम् ।

५ व-असृजत्तं ।

६ व-शाश्वतंवास्ययो० ।

७ ल, म-प्रथमम् ।

८ ल-समृद्धा ।

९ व, ल, म-कुत्तिरित्यमि० ।

१० कै-बाणपुत्रः ।

- नाऽनाट्टिभूत्तस्मिन्न दुर्भित्तं कथञ्चन ।
 १०] अनरण्ये महाभागे तस्करो वै न कश्चन ॥१०॥ [१०
 अनरण्यान्महातेजाः पुन पृथुरजायत ।
 ११] तस्मात् पृथोर्महाभागात् त्रिशङ्कुरूप(द)पद्यत ॥११॥ [११
 स सत्यवचनाद् धीरः सशरीरो दिवं गतः ।
 १२] त्रिशङ्कोरभवत् स्रुधुन्धुमारो महायशाः ॥१२॥ [१२
 धुन्धुमाराण्महाबाहुर्युवनाश्वो ऽभवत् सुतः ।
 १३] युवनाश्वसुतश्चापि मान्धाता सत्यसङ्करः ॥१३॥ [१३
 मान्धातुस्तु महातेजा सुसन्धिरुदपद्यत ।
 १४] सुसन्धेरपि पुत्रौ द्वौ ध्रुवसन्धिः प्रसेनजित् ॥१४॥ [१४
 यशस्वी ध्रुवसन्धेस्तु भरतो नाम धर्मवित् ।
 १५] भरतात्तु महाबाहुरसितः समजायत ॥१५॥ [१५
 तस्यान्ते प्रतिराजान उदपद्यन्त शत्रवः ।
 १६] हैहयास्तालजंघाश्च सर्वे^{११} च शशबिन्दवः^{१२} ॥१६॥ [१६
 तांस्तु स प्रतियुध्यन् वै युद्धे राजा क्षयं गतः । [१७पू
 १७] द्वे चास्य नार्यौ गर्भिण्यौ बभूवतुरिति श्रुतिः ॥१७॥ [८पू
 ततः शैलवरं रम्यं तपस्यभिरतो मुनिः । [१७उ
 १८] भार्गवश्च्यवनो नाम हिमवन्तमुपाश्रितः ॥१८॥ [२०पू
 तमृषिं चाप्युपागम्य गर्भं देवी न्यवेदयत् । [२०उ
 २०] स तामप्यवदद् विप्रो वरेष्णुं^{१३} पुत्रजन्मनि ॥१८॥ [२१पू
 ततः सा गृहमागत्य देवो पुत्रं व्यजायत । [२३उ

- २१] सह तेन गरेणैव ततः^{१४} स^{१५} सगरोऽभवत्^{१६} ॥२०॥ [२४व
 पू२२] ऐच्चाकः सगरो नाम यः समुद्रमखानयत् ।
 N] तद्वणा पर्वणि वेगेन भासय(यं)तमिमा प्रजाः ॥२१॥ [२५
 असमञ्जास्तु पुत्रोऽभूत् सगरस्येति नः श्रुतम् ।
 २३] जीवन्नेव निरस्तस्तु स पित्रा पापकर्मकृत्^{१५} ॥२२॥ [२६
 अंशुमान्नाम पुत्रोऽभूद् वीर्यवानसमंजसः ।
 २४] दिलीपोंऽश्रुमतः पुत्रो दिलीपस्य भगीरथः ॥२३॥ [२७
 N] येन भागीरथी गद्रा त्रिदिवादवतारिता । [N
 पू२५] भगीरथात्तु काकुत्स्थः काकुत्स्थेत्युच्यसे यतः ॥२४॥ [२८पू
 व२५] काकुत्स्थस्य च पुत्रोऽभूद् रघुर्येनासि राघवः । [२८उ
 पू२६] रघोस्तु पुत्रस्तेजस्वी सौदासः पुरुषादकः ॥२५॥ [२९पू
 योऽरिभिः सह सङ्ग्रामे बलवद्भिर्महाबलः ।
 N] युध्यमानो निहत्यारीन् सहसैन्यो^{१६} न्यवर्त्तत ॥२६॥ [N
 खड्गी^{१७} तु तस्य पुत्रोऽभूत् तस्य श्रीमान् सुदर्शनः ।
 २८] सुदर्शनस्याग्निवर्णो ह्यग्निवर्णस्य शीघ्रगः ॥२७॥ [३१
 शीघ्रगस्य मनुः पुत्रो मनोः पुत्रः ममृस्तकः ।
 २९] ममृस्तकस्य पुत्रोऽभूद् मन्वरीपो महाद्युतिः ॥२८॥ [३२
 अम्बरीपस्य पुत्रस्तु नहुषः सत्यसङ्गरः ।
 ३०] नहुषस्य तु पुत्रोऽभूद् ययातिरिति नः श्रुतम् ॥२९॥ [३३
 ययातेरपि धर्मात्मा पुत्रोऽजः समजायत ।
 ३१] अजस्यापि हि धर्मात्मा राजा दशरथः सुतः ॥३०॥ [३४
 पू३२] तस्य पुत्रोऽसि वै ज्येष्ठो राम इत्यभिसंज्ञितः ।

१४ ब ल-सगरः स ततोऽभवत् । १६ ल-ससैन्योऽपि ।

१५ ल-पापकर्मकृत् ।

१७ ब-खड्गपीः ।

[N] प्रतिगृहीष्वःराज्यं स्वमवेक्षस्व जगन्नुप ॥३१॥ [३५]

पू३३] इक्ष्वाकूणां तु सर्वेषां राजा भवति पूर्वजः ।

N] पूर्वजान्नावरः पुत्रो राज्ये समभिपिच्यते ॥३२॥ [३६]

स राघवेमं घत वंशमात्मनः

सनातनं नाद्य विहातुमर्हसि ।

प्रभूतरत्नामनुशाधि मेदिनीं

[३४] समृद्धराज्यां पितृवन्महायगाः ॥३३॥ [३७]

इत्यार्षे रामायणे अथोध्याकाण्डे वसिष्ठवाक्यं

'नाम सर्गः ॥ १२३ ॥



वं-१२०-१२१]=[चतुर्विंशत्यधिक-शततमः सर्गः]=[दा-१११

वसिष्ठस्तु तदा राममुक्त्वा राजपुरोहितः ।

१] अत्रवीद्धर्मसंयुक्तं पुनरेवापरं^१ वचः ॥११॥ [१

पुरुषस्येह जातस्य भवन्ति गुरवस्त्रयः ।

२] आचार्यश्चैव काकुत्स्थ पिता माता च ते त्रयः ॥१२॥ [२

पिता जनं जनयति माता संवर्धयत्यपि ।

३] मत्नां ददाति चाचार्यस्तस्मात्स गुरुच्यते ॥१३॥ [३

स तेऽहं पितुराचार्यस्तव चैव महाद्युते ।

४] मम त्वं वचनं राम नातिक्रमितुमर्हसि ॥१४॥ [४

वृद्धाया धर्मशीलाया मातुरर्हसि पूजितम् ।

६] अस्यास्तु वचनं कुर्वन् सतां पन्थानमाव्रज ॥१५॥ [६

भरतस्य वचः कुर्वन् याचतो^२ रघुनन्दन^३ ।

७] नात्मानमभिवर्त्तेयाः सत्यधर्मपरायणः ॥१६॥ [७

एवं मधुरमुक्तस्तु गुरुणा राघवः स्वयम् ।

८] प्रत्युवाच तमासीनं वसिष्ठं पुरुषपथः ॥१७॥ [८

माता पितृभ्यां यां वृत्तिं सम्यक् कुर्वन्ति मानवाः ।

९] न म्रुतिकरं ताभ्यां पित्रा मात्रा च यत्कृतम् ॥१८॥ [९

तथाऽशनप्रदानेन शयनाच्छादनादिना ।

१०] नित्यं च प्रियवादेन तथा संवर्धनेन च ॥१९॥ [१०

राजा गुरुर्दशरथस्तथा जनपिता मम ।

११] संश्रुतं यन्मया तस्य न तन्मिथ्या भविष्यति ॥१०॥ [११

एवमुक्ते^४ तु रामेण भरतस्तदनन्तरम् ।

१ ल-पुनरेव० ।

१ क-राघव ।

२ ब-याचमत्या ।

४ ल-एवमुक्तेन ।

- १२] उवाच चलितोरस्कः सूतं परमदुर्मनाः ॥११॥ [१२
इह मे स्थण्डिले शीघ्रं कुशानास्तर सारये ।
- १३] अह प्रत्युपवेक्ष्यामि यावदार्यः प्रसीदति ॥१२॥^० [१३
निराहारो निरालंबो धनहीनो यथा द्विजः ।
- १४] पुनः शयिष्ये शय्यायां वनं यावन्न यास्यति ॥१३॥^० [१४
(स तु राममवेक्षन्तं सुमन्त्रः प्रेक्ष्य दुर्मनाः) ।
- १५] कुशास्तीरेभ्युपस्थाप्य भूमावेवास्तरत् स्वयम् ॥१४॥^० [१५
तमुवाच महातेजा रामो राजीवलोचनः ।
- १६] किं मां भरत कुर्वाणमिह प्रत्युपवेक्षसि^० ॥१५॥ [१६
ब्राह्मणो ह्येकपाश्वेन स्वयमास्तीर्य संविशेत् ।
- १७] न तु मूर्धाभिपिक्तानां विधिः प्रत्युपवेशने^० ॥१६॥ [१७
उत्तिष्ठ राजशार्दूल हित्वैतदारुणं व्रतम् ।
- १८] पुरिवर्यामितः क्षिप्रमयोर्ध्या गच्छ राघव + १७॥ [१८
आसीनस्त्वेव भरतः पौरजानपदं जनम् ।
- २०] उवाच सर्वान् संप्रेक्ष्य किमार्यं नानुयाचथ ॥१८॥ [१९
पूर१] ते तमूचुर्महात्मानं पौरजानपदा जनाः ।
- पूर२] अभिजानीमं काकुत्स्थं सम्यक् स्निह्यति राघव ॥१९॥ [२०
पूर३] पितुर्यथा महाभागो वचने तिष्ठति ध्रुवम् ।
- पूर४] अतो न शक्नुमो ह्येनं विवर्तयितुमोजसा ॥२०॥ [२१
तेषां वचनमाज्ञाय रामो वचनमब्रवीत् ।
- N] एतन्निबोध वचनं सर्वेषां धर्मचक्षुषाम् ॥२१॥ [२२

५ ब--इहस्ये ।

६ ब--प्रत्युपवेशने ।

७ ब--मूर्धाभिपिक्तानाम् ।

= ल--परिवारान्वितः ।

उ२] एतच्चैवोभयं श्रुत्वा सम्यक् संपश्य राघव ।

N] उत्तिष्ठ त्वं महाबाहो संस्पृशस्व तयोदकम् ॥२२॥ [२३

[मं: १२१]

उ११] अथोत्थाय जलं स्पृष्ट्वा भरतो वाक्यमब्रवीत् ।

पू१२] शृण्वन्तु मे परिपदो मन्त्रिणः श्रेण्यस्तथा ॥२३॥ [२४

न याचे पैतृकं राज्यं नानुशोचामि मातरम् ।

१४] आर्यं परमधर्मज्ञं नानुजानामि राघवम् ॥२४॥ [२५

यदि त्ववश्यं गन्तव्यं कर्तव्यं वचनं पितुः ।

१५] अहमेव निवत्स्यामि चतुर्दश समा वने ॥२५॥ [२६

धर्मात्मनः स तेनाथ भ्रातुर्विक्रयेन विस्मितः ।

१६] उवाच रामः संप्रेक्ष्य पौरजानपदं जनम् ॥२६॥ [२७

विज्ञान[न]नाहतं* क्रीतं यत् पित्रा जीवता** मम ।

१७] न तत् कोपयितुं शक्यं मया वा भरतेन वा ॥२७॥ [२८

उपधिना मया कार्यो वनवासो जगुप्सितः ।

१८] अमुयोक्तं हि कैकेय्या पित्रा मे मुक्तं कृतम् ॥२८॥ [२९

जानामि भरतं ज्ञान्तं गुरुसत्कारकारकम्** ।

१९] सर्वमेवात्र कन्याणं सत्यसन्धे महात्मनि ॥२९॥ [३०

अनेन धर्मशीलेन घनात् प्रत्यागतः पुनः ।

२०] भ्रात्रा सह भविष्यामि पृषिष्यामहमीश्वरः ॥३०॥ [३१

कृतं हि मातुः कैकेय्या वचनं तन्मया त्रियम् ।

२१] अनृतान्मोचयानेन पितरं सं महामतिम् ॥३१॥ [३२

N] आसीत् पित्रानियुक्तं यत् तस्य नास्ति व्यतिक्रमः ॥३२॥ [N

इत्यार्षे रामायणे अयोध्याकाण्डे रामयाचनं

नाम सर्गः ॥ १२४ ॥

[वं १:२]=[पञ्चविंशत्याधिक-शानतमः सर्गः]=[दा-१:१२]

- N] अथ' तं देशमागम्य गन्धर्वसहिता द्विजाः । [N
 ७] भ्रातरौ तौ महावीरौ काकुत्स्था मशशंसिरे ॥१॥ [२७
 धन्यः स यस्य पुत्रौ वा धर्मज्ञौ सत्यविक्रमौ ।
 ३] श्रुत्वा वां तात संभापमुभाभ्यां स्पृहयामहे ॥२॥ [३
 ततो देवगणा सर्वे दशग्रीवधर्मपिणः ।
 ४] भरतं राजशार्दूलमित्यूचुः सद्गता मिथः ॥३॥ [४
 भो भो भरत सिद्धार्थं निवर्त्तस्व स्वतो लघु ।
 N] देवकार्यमशेषेण कर्तव्यं राघवेण वै ॥४॥ [N
 रामोऽथ लक्ष्मणः सीता मुखेन वनचारिणः ।
 N] ऋषिभिश्च स्वनुध्याता वने वत्स्यन्ति वै त्रयः ॥५॥ [N
 ७] राजर्षयश्च धर्मज्ञाः स्वं स्वं स्थानं ततो गताः ।६॥ [७७
 ह्यादितास्तेन वाक्येन शुभेन शुभदर्शनाः ।
 ८] रामः संहृष्टवदनस्तानृषीन्भ्यवादयत् ॥७॥ [८
 सस्तगात्रस्तु भरतो वाचा संसज्जमानया ।
 ९] कृताञ्जलिरिदं वाक्यं, राघवं पुनरब्रवीत् ॥८॥ [९
 राजधर्ममिमं प्रेक्ष्य कुलधर्मानुसन्ततिम् ।
 १०] कर्तुमर्हसि काकुत्स्थ मम मातृश्च याचतीः^२ ॥९॥ [१०
 रक्षितुं सुमहद्राज्यमहमेकस्तु नोत्सहे ।
 ११] पौरजानपदांश्चापि यन्नाद्रञ्जयितुं नृप ॥१०॥ [११
 ज्ञातपरचैव योधाश्च मित्राणि सुहृदश्च नः^३ ।
 १२] त्वामेव प्रतिकीर्त्तन्ते पर्जन्यमवि कार्पकाः^३ ॥११॥ [१२

इदं राज्यं महाराज प्रतिपद्यस्व सर्वतः ।

१३] शक्तिमानसि काकुत्स्थ लोकस्य परिपालने ॥१२॥ [१३

पादयोरपतद्भ्रातुर्भरतोऽथ प्रसादयन् ।

१४] भृशमाराधयामास राममेवं प्रियंवदः ॥१३॥ [१४

तमङ्गे भ्रातरं कृत्वा रामो वचनमब्रवीत् ।

१५] श्यामं नलिनपत्राक्षं हंसवल्गुस्वरः स्वयम् ॥१४॥ [१५

इयं ते यादृशी बुद्धिः स्थिरा विनयसंभृता ।

१६] भृशमुत्सहसे कृत्स्नां रक्षितुं पृथिवीमिमाम् ॥१५॥ [१६

अमात्यैश्च सुहृद्भिश्च बुद्धिमद्भिश्च मन्त्रिभिः ।

२५] सर्वकार्याणि संपन्व्य कारयेस्त्वं सदा जनघ ॥१६॥ [१७

लक्ष्मीश्चन्द्रादपक्रामेद्धिमवान्वा परिग्रजेत् ।

२६] सागरो वा त्यजेद्द्वे वेलान् न प्रतिन्नामहं त्यजे ॥१७॥ [१८

कामाद् वा यदि वा लोभान्मात्रा ते यदिदं कृतम् ।

२७] न तन्मनसि कर्तव्यं वर्तितव्यं च मातृवत् ॥१८॥ [१९

एवं ब्रुवाणं रामं तु वसिष्ठो वाक्यमब्रवीत् ।

२८] तेजसाऽऽदित्यसङ्काशं प्रतिमानं घनुष्पताम् ॥१९॥ [२०

प्रयच्छ पादुके पुत्र भरताय महात्मने ।

N] एते हि सर्वलोकस्य योगक्षेमं करिष्यतः ॥२०॥ [२१

इत्युक्तः स वसिष्ठेन रामोऽप्यानाद्य पादुके ।

N] प्रयच्छत् प्रीतिमान् भ्रात्रे भरताय महात्मने ॥२१॥ [२२

स पादुके ते भरतः प्रतापवा-

स्तदाऽनुरूपे प्रतिपद्य घर्षवित् ।

प्रदक्षिणं चैव चकार राघवं

A N] चकार चैवोत्तमनागमूर्धनि ॥२२॥ [२६

अयानुपूर्व्या प्रतिपूज्य तं जनं,

गुरून् वसिष्ठप्रभृत्वास्तथा ऽनुजान् ।

व्यसर्जयद्राघववंशवर्धनः,

स्थितः स्वधर्मे हिमवानिवाचलः ॥२३॥ [३०

तं मातरो वाप्पपरीतकण्ठयो

दुःखेन चामन्त्रयितुं न शकुः* ।

स एव मातुरभिवाद्य सर्वा

A N] उदक्कुटीं संप्रविवेश रामः ॥२४॥० [३१

इत्यार्षे रामायणे अयोध्याकाण्डे भरतप्रतियान

नाम सर्गः ॥[१२५]॥



[वि-१:४]=[पङ्क्तिंशत्यधिक-शततमः सर्गः]=[दा-११३]

ततः शिरसि कृत्वा तु पादुके भरतस्तदा ।

१] आरूरोह रथं हृष्टः शत्रुघ्नेन समन्वितः ॥ १ ॥ [१

यसिष्ठो वामदेवश्च जावालित्श्च दृढव्रतः ।

२] [प्र] यतः [ः]' प्रययुस्तस्य मन्त्रिणः सर्व एव ते ॥२॥ [२

नदीं ' मन्दाकिनीं ' प्राप्य प्राङ्मुखाः प्रययुस्ततः ।

३] प्रदक्षिणं च कुर्वाणश्चित्रकूटं महागिरिम् ॥३॥ [३

तस्य धातुसहस्राणि रम्याणि गिरिसानुषु ।

४] व्यतियान्तो ऽन्वपश्यन्त भरतस्यानुयायिनः ॥४॥ [४

श्चन्तरा चित्रकूटस्य ददर्श भरतस्ततः^३ ।

५] आश्रमं यत्र स मुनि भरद्वाजः कृतालयः ॥५॥ [५

स तमाश्रममासाद्य भरद्वाजस्य बुद्धिमान् ।

६] श्रवतीर्य रथात् पादौ ववन्दे कुलनन्दनः^४ ॥६॥ [६

महृष्टस्तु भरद्वाजो भरतं प्रत्युवाच ह ।

७] अपि कृत्यं कृतं तात रामेण च समागतः ॥७॥ [७

एवमुक्तस्तु भरतो भरद्वाजेन धीमता ।

८] प्रत्युवाच भरद्वाजं धर्मिष्ठो धर्मवत्सलम् ॥८॥ [८

याच्यमानोऽपि गुरुभि र्मया च दृढनिश्चयः ।

९] राघवः परमग्रीतस्तत्रेदं वाक्यमब्रवीत् ॥९॥ [९

पितुः प्रतिज्ञां धर्मेण पालयिष्याम्यतन्द्रितः ।

१०] चतुर्दश हि वर्षाणि प्रतिग्रा या कृता पुरा^५ ॥१०॥ [१०

१ व, ल, म—अप्रतः ।

२ व—मन्दाकिनी नदीं ।

३ व, ल—भरतस्तदा ।

४ ल—कुलवर्धनः ।

५ व, ल, म—पुस्तकेषु चेत्यमस्ति-

पितुः प्रतिज्ञा धर्मेण

प्रतिज्ञा वा कृता पुरा ।

सा पालनीया धर्मह

पाठना वा ममाद्य वै ॥

एवमुक्ते महातेजा वसिष्ठः प्रत्युवाच तम् ।

- ११] वाक्यज्ञं वाक्यकुशलो राघवं वचनं महत् ॥११॥ [११]
एते प्रयच्छ्वं संहृष्टः पादुके स्वर्णभूषिते ।
- १२] अयोध्याया नरव्याघ्र योगक्षेमाय राघव ॥१२॥ [१२]
एवमुक्तो वसिष्ठेन राघवः प्राङ्मुखः स्थितः ।
- १३] पादुके स्वर्णविकृते मम राज्याय वै ददौ ॥१३॥ [१३]
निवृत्तोऽहमनुज्ञातो रामेण विधृतात्मना ।
- १४] अयोध्यामेव गच्छामि श्रुत्वा पादुके शुभे ० ॥१४॥ [१४]
एतच्छ्रुत्वा शुभं वाक्यं भरतस्य महात्मनः ० ।
- १५] भरद्वाजस्तु भरतं मुनिर्वाक्यमथाब्रवीत् ॥१५॥ [१५]
नाश्चर्यमेतद् राजेन्द्र शीलवृत्तवर्ता वर ।
- १६] यच्छुभं त्वयि तिष्ठेत राजपुत्र महाबल ॥१६॥ [१६]
न मृतः स महाभागः पिता दशरथस्तव ।
- १७] यस्य त्वमीदृशः पुत्रो धर्मात्मा गुरुवर्त्तकः ॥१७॥ [१७]
तमृषिं भरतः श्रीमानुक्तवाक्यं कृताञ्जलिः ।
- १८] आमन्त्रयितुमारेभे चरणानुपगृह्य ह ॥१८॥ [१८]
ततः प्रदक्षिणीकृत्य भरद्वाजं महामुनिम् ।
- १९] भरतः प्रययौ श्रीमानयोध्या सह मन्त्रिभिः ॥१९॥ [१९]
नरगैश्च शकटैश्चैव हयैर्यानिश्च सा चमूः ।
- २०] पुनर्निवृत्ता विस्तीर्ण भरतस्यानुयायिनी ॥२०॥ [२०]
ततस्त्रिपथगां दिव्यां पुण्यां फेनोर्मिमालिनीम् ।

- २१] ददृशुस्ते पुनः सर्वे गङ्गां पुण्यजनावृताम् ॥२१॥ [२१
 तां नक्रमकराकीर्णामुत्तीर्य सह बन्धुभिः ।
- २२] शृङ्गवेरपुरं रम्यं प्रविवेश ससैनिकः ॥२२॥ [२२
 शृङ्गवेरपुरं गच्छन्नयोध्यां स ददर्श ह । [२३ पू
- २३] भरतो दुःखसन्तप्तस्तत्र सूतमथाब्रवीत् ॥२३॥ [२४ पू
 मारथे पश्य नगरीमयोभ्यां शून्यकाननाम् । [२४ उ
- २४] निराकारां निरानन्दां दीनां प्रतिदत्तस्वनाम् ॥२४॥ [२५ पू
 वियुक्तां पुरुषेन्द्रेण समृतेन महात्मना ।
- २५] रामा दशरथेनेह नोत्सहे प्रतिवीक्षितुम् ॥२५॥ [N
 हृत्पार्श्वे रामायणे अयोध्याकाण्डे भरतनिवर्त्तनं
 नाम सर्गः ॥ [१२६] ॥



[वं-१२५]=[सप्तविंशत्यधिक-शततमः सर्गः]=[दा०११४]

स्निग्धगंभीरघोषेण स्पन्दनेनोपयान् प्रभुः ।

१] अयोध्यां भरतः क्षिप्रं प्रविवेश महायशः ॥१॥ [१

मार्जारोलूकचरितां मलिनाम्बरधारिणीम् ।

२] तिमिराभ्याहतां कालीमप्रकाशां निशामिव ॥२॥ [२

राहुग्रस्तां चन्द्रपत्रीं प्रियां प्रज्वलितामिव ।

३] ग्रहेणाभ्युदितामेकां रोहिणीं पीडितामिव ॥३॥ [३

४पू] अत्युष्णस्वल्पसलिलां रूक्षस्वरविहङ्गमाम् । [४पू

५] विध्वस्तकनकस्तंभा गजवाजिविवर्जिताम् ॥४॥ [६पू

हतप्रवीरा विध्वस्तां चमूमिव महाहवे । [६उ

५] सफेनामम्बरोद्भिन्नां सागरस्य समुत्थिताम् ।

प्रशान्तमारुतोद्धतां जलोर्मीमिव विस्वनाम् ॥५॥ [७

५] त्यक्तयज्ञोत्सवैः सर्वैः सोमपैश्च सयाजकैः ।

५] पर्वकाले तु संवृत्ते वेदीं गतशिखामिव ॥६॥ [८

गोष्ठमध्ये स्थितामार्त्तामाचरन्तीं नवं वृणुम् ।

६] गोष्ठ्येण परित्यक्तां गोकन्यामिव सोत्सुकाम् ॥७॥ [९

प्रभाकरामैः मुक्तिर्भैः प्रज्वलद्भिर्महाशिखैः ।

७] विमुक्तां मणिभिर्जात्यैर्नागमुक्तावलीमिव ॥८॥ [१०

सहसा चलितां स्थानान्महीं पुण्यक्षयादिव ।

८] संहतद्युतिविस्तारां तारामिव नभश्च्युताम् ॥९॥ [११

पुष्पनदां वसन्तान्ते मत्तभ्रमरनादिताम् ३ ।

९] घोरदावाग्निविप्लुष्टां कान्तां वनलतामिव ॥१०॥ [१२

संमूढब्राह्मणजनां विक्षिप्त विपणापणाम् ।

१०] प्रच्छन्नशशिनक्षत्रां धामिवांबुधरैर्वृताम् ॥११॥ [१३

क्षीणपानोत्तमैर्भिन्नैः शरावैरभिसंघृताम् ।

११] गतशौण्डामिव ध्वस्तां पानभूमिमसंस्कृताम् ॥१२॥ [१४

रूक्षभूमिलतां निम्नां वृक्षगुल्मसमावृताम् ।

१२] उपयुक्तोदकां भिन्नां प्रपां निपतितामिव ॥१३॥ [१५

शुष्कतोयां महामत्स्यां कूर्मैश्च बहुभिर्वृताम् ।

प्रभिन्नाप्रतिविस्तीर्णां वापीमिव हतोत्पलाम् ॥१४॥ [५A

पुरुषस्याग्रहृष्टस्य प्रतिसिद्धानुलेपनाम् ।

[N चि

१६] सन्तप्तामिव शोकेन गात्रयष्टिमभूषणाम् ॥१५॥ [N

प्रावृषीव महाभ्रौघप्रविष्टस्याविसञ्चराम् ।

[N

प्रच्छन्नां नीलजीमूतैर्भास्करस्य प्रभामिव ॥१६॥ [१७

भरतस्तु रथस्थोऽथ श्रीमान् दशरथात्मजः ।

१८] बाहयन्तं रथश्रेष्ठं सारथिं ब्राम्हणमब्रवीत् ॥१७॥ [१८

किं नु खल्वद्य गंभीरो मूर्द्धितो न निशम्यते ।

१६] यथा पूर्वमयोध्यायायां गीतवादित्रनिःस्वनः ॥१८॥ [१६

वारुणीपानमत्तैश्च नरैरुत्तानशायिभिः^५ ।

२०] संपतद्भिरयोध्यायां नाभिभान्ति दिशो दश ॥१९॥ [N

वारुणीमण्डगन्धाश्च माल्यगन्धाश्च मूर्द्धिताः ।

२१] धूपेनागुरुगन्धाश्च नाथ वान्ति समन्तत ॥२०॥ [२०

यानमवरघोपश्च स्निग्धश्च हयनिस्वनः ।

२२] महानागनिनादश्च श्रूयते न यथा पुरा ॥२१॥ [२१

अयोध्यां तु प्रविश्यैव जगाम भवनं पितुः ।

२३] तेन हीनं नरेन्द्रेण सिंहहीनां शुहामिव ॥२२॥ [२८

इत्यापे रामायणे अयोध्याकाण्डे भरतप्रवेशो

नाम सर्गः ॥ [१२७] ॥

[चं-१२६, १२७] अष्टाविंशत्याधिक-शततमःसर्गः] = [दा११५]

अयोध्यायां तु निक्षिप्य मातुः सर्वाः परन्तपः ।

१] भरतः शोकसन्तप्तो गुरून् सर्वानुवाच ह ॥१॥

नन्दिग्रामं गमिष्यामि सर्वानामन्त्रयामि वः ।

२] तत्र दुःखमिदं सर्वं सहिष्ये राघवं विना ॥२॥ [२

पिता मेतश्च मे राजा वनस्थश्चैव राघवः ।

३] रामागमप्रतीक्षो ऽहं पालयिष्ये वसुन्धराम् ॥३॥ [३

एतच्छ्रुत्वा महद्वाक्यं भरतस्य महात्मनः ।

४] अन्नुवन् मन्त्रिणः सर्वे ते वसिष्ठपुरोगमाः ॥४॥ [४

सदृशं श्लाघनीयं च यदुक्तं भरत त्वया ।

५] वचनं भ्रातृवात्सल्यादनुरूपमिदं तव ॥५॥ [५

एतत्ते भ्रातृबुधस्य तिष्ठतो भ्रातृसौहृदे ।

६] आर्यमार्गप्रवृत्तस्य कः पुमान् न प्रशंसति ॥६॥ [६

स' मन्त्रिवचनं' श्रुत्वा यथाऽभिलषितं तदा ।

७] अव्रवीत् सारथिं वाक्यं रथो मे युज्यतामिति ॥७॥ [७

१२७सर्गः] संप्रहृष्टमना मातृर्गुरुंश्चाप्यभिवाद्य सः ।

१] भरतो रथमारोहच्छत्रुघ्नश्च परन्तप ॥८॥ [८

आरुह्य तु रथं दीप्तं भ्रातरौ सहिताबुधौ ।

२] ययतुः परमप्रीतौ वृतौ मन्त्रिपुरोहितैः ॥९॥ [९

अग्रतस्तु ययुस्तस्य वसिष्ठप्रमुखा द्विजाः ।

३] सर्वे च मन्त्रिप्रमुखा नन्दिग्रामो यतोऽभवत् ॥१०॥ [१०

४उ] बलं च सर्वमाहूय रथनागाश्वसङ्कुलम् ।

४पू] प्रययु भरतस्याग्रे श्रेष्ठाश्च पुर वासिनः ॥११॥ [११

रथस्यः स तु धर्मात्मा भरतो गुरुवत्सलः ।

५] पादुके शिरसि न्यस्य नन्दिग्राममुपागमत्^२ ॥१२॥ [१२

ततस्तु भरतः क्षिप्रं नन्दिग्रामं प्रविश्य ह ।

६] अबतीर्य रथात्तूर्णं गुरुनिदमुवाच ह ॥१३॥ [१३

एतद्राज्यं मम भ्रात्रा दत्तं मे न्यासवत् स्वयम् ।

७] योगक्षेमकरे चेमे पादुके स्वर्णभूपिते ॥१४॥ [१४

१३] इदानीं पालयिष्यामि राघवागमनं प्रति ॥१५॥

N] क्षिप्रमद्यैव संयोज्य राघवस्य च पादुके ।

चरणौ पद्मसदृशौ गुरोर्द्रक्ष्याम्यहं यदा ॥१६॥ [१६

N] निक्षिप्याहं तदा भारं राघवेण समागत ।

४] निर्यात्य गुरुवे राज्यं वर्तिष्ये रामशासने ॥१७॥ [१६

राघवस्य तु सन्यस्य पादुके रुचिरे त्विमे ।

११] राज्यं चेदमयोध्यायां दत्त्वा वत्स्यामि निर्भृतः^३ ॥१८॥ [२०

अभिषिञ्चते तु फाकुत्स्थे प्रहृष्टमुदिते जने ।

१२] प्रीतिर्मम यशश्चैव भवेद्राज्याचतुर्गुणम् ॥१९॥ [NA

एवं तु विलपन्वीरो भरतः सुमहायशा ।

१३] नन्दिग्रामे ऽकरोद्राज्यं राघवस्य गुणान् स्मरन् ॥२०॥ [NA

जटावन्कलधारी च मृनिवेशधरः प्रभुः ॥२०॥

१४] नन्दिग्रामेऽवसद्वीरः ससैन्यो भरतस्तदा ॥२१॥ [२१

रामागमनमाकाञ्चन् भरतो गुरुवत्सलः ।

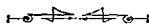
२ म-०मुपागतः ।

३ य, ल, म-निर्भृतः ।

४ य, ल-सुमहायशाः ।

A अय स्तोत्रः दाक्षिणात्ये पाठ
लेपकरूपेण विन्ध्यस्तः ।

- १५] भ्रातुर्वचनकारी च तस्य पादुक्रयोस्वहा ॥२२॥ [NA
 १६उ] स बालव्यजनं छत्रं धारयामास वै स्वयम् ॥२२॥ [२२पू
 स पादुकेऽभिषिच्याथ नन्दिग्रामे वसंस्तदा । [VA
 १७] भरतः शासनं सर्वं पादुकाभ्यां न्यरेदपत् ॥२३॥ [२२उ
 एवं कालोऽतिचक्राम भरतस्य महात्मनः ।
 १८] यावदागमनं तस्य रामस्य कृतकर्मणः ॥२४॥ [N
 इत्यार्षे रामायणे अयोध्याकाण्डे भरतव्रतग्रहणं
 नाम सर्गः [॥१२८॥]
 समाप्तश्चायमयोध्याकाण्डः ॥



॥ सूचियां ॥

(शब्दविशेषसूची-१)

अ		ऋ	
अकुतोभयः	२०६।१६॥	ऋतु	४५८।१६॥
अनास्तिक	४६४।१६॥	ऋषिः	३५।१३॥
अन्वयेक्षा	२१८।१४॥	वे	
अपेक्षा	२०६।१८॥	पेद्दुदम	४४७।१॥
अर्थशास्त्रम्	१२।१८॥	क	
अर्धसप्तशता	१७३।२०॥	कनकशोधकाः	३६५।१४॥
	१८८।३६॥	कपिलावधः	३३२।२०॥
अश्वमेधः	४३४।४॥	कर्मान्तिका	३५६।९॥
अश्लोपजीविनः	३६५।१२॥	काचकाराः	३६६।२५॥
आ		काण्डकाराः	३६५।२२॥
आगमा.	१३६।३६॥	कारपत्रिकाः	३६५।१६॥
आत्म	२७१।३९॥	कार्यासिकाः	३६५।२१॥
आधर्वणा	१३८।२५॥	कालदण्डः	३१६।३८॥
आरकूटकतः	२५५।२७॥	कुलपांसनी	३१८।२६॥
इ		कुसुमापीडा	२०८।११॥
इद्दुदिपियाकस	४४९।८॥	कुपकाराः	३५६।३॥
	४५०।१०॥	कोशव्ययः	१७७।५॥
इन्द्रमयनम्	१४६।२॥	कोशकारा	३६६।२४॥
इष्टकाकारकाः	३६५।१८॥	ऋतुगतम	२६५।१६॥
उ		ख	
उटजम्	४३२।२४॥	खण्डकारा	३६६।२५॥
उपाध्याय	२२२।१४॥	खण्डसंस्थापक	३६६।२६॥

		(२)	
खनकाः	३५६।१॥	ज	
खेलन	३६९।१८॥	जवनाः	२०२।१५॥
		ज्योतिर्गतिपु	२।२६॥
ग			१२।२६॥
गणिकाः	८४।१२॥	त	
गवाक्षः	२५८।१४॥	तक्षाणः	३६५।१६॥
गन्धर्वविद्या	५।२५॥	तन्तुवायः	३६५।१५॥
	८।४॥	ताम्रकाराः	३६६।२३॥
गन्धविक्रयिणः	३६५।१८॥	ताम्रोपजीविनः	३६६।२६॥
गणिकागण.	२१८।१८॥	तैत्तिरिकाः	३६५।१३॥
गाथाः	१२६।११॥	तैत्तिरीयाः	१६२।१७॥
गान्धिकाः	३६५।१५॥	त्रिदिक्	२६५।३०॥
गायक.	८।१४॥	त्रिलोकनाथः	१३९।३६॥
	४६।१४॥	त्रिविष्टपम्	८८।५०॥
गृहस्थाः	४८०।६४॥	द	
गोकुलम	२०६।१५॥	दन्तकाराः	३६५।१३॥
ग्रहाः	१३८।२८॥	दन्तोपजीविनः	३६५।१३॥
घ		दात्रिणः	३५६।२।
चत्वरः	२१८।१८॥	दाराः	२०८।८।
चतुष्पथ	३१८।१८॥	कुर्जातम्	२५०।२०॥
सूर्णोपजीविन	३३५।२१॥	देवः	३७।१३॥
चित्र.	३१।४॥	देवरः	१८७।२६॥
च्याययेत्	२३४।१॥	देवर्षयः	१३८।२६॥
छ		देवलोहः	७४।१॥
छाप्रकाराः	३६५।१२, १३॥	देवासुराः	२१६।६॥
	३६६।१५॥	द्विजाः	४५।७॥

:	३०२।२०॥२०३।२॥	नित्राप	२४७।२६॥
	२०८।४॥२५८।१०॥	निरामयन्	२५१।२।॥
द्विजातय	२०३।१४॥	नीतिशास्त्रम्	१३।२८॥
	२९९।१॥ ३००।१२॥	नीतिशास्त्रार्थः	८।२॥
द्विजसत्तमाः	३६६।-१॥		प
	ध	पर्णकुटी	४०३।१३॥
घनाध्यक्ष	१६४।३२, ३४।	पर्णशाला	४४७।२८॥
घनुर्वेद	१२।२८॥	पाङ्किकाः	२४७।२१॥
	१७।१८॥	पाणिका	३६५।२१॥
	१८।२०॥	पितर	२६५।५॥
घनुष्कारा	३६५।२१॥		१४१।४॥
घर्महै मुकुभिः	३५६।२१॥		३७।१३॥ २४७।२८॥
घर्मराजः	२८५।२५॥	वितृलोक	४४४।७॥
घर्मशास्त्रम्	१५।१२॥	विशाचा	१३८।३०॥
घर्मसञ्चयः	२७१।३६॥		१६८।२२॥
घर्मः सनार्तन	१०।१५॥	पुराणम्	११४।२२॥
धान्यविक्रयिण	३६५।१८॥	पेयम्	२१५।१४॥
	न	पौराणः -	२६४।९॥
नक्षत्राणि	१३८।२८॥	पौराणम् -	१३६।१०॥
• टनर्तकसघा	७६।१४॥	पौराणमिह चागमम्	२४०।२५॥
नानाधिलपविद्	८।४॥	पौष्पिका	३६५।१४।
नालीकः	२२।२३॥	प्रकृतय	२०१।४॥
नास्तिवः	३०१।१६॥		२०२।१२॥
निर्भराः	२०९।२४॥		३०६।१५॥ २०१।४
निर्वपद्धारमङ्गलाः	२५८।१८॥	प्राकारिका	३६५।१७॥
निष्ठय	२०५।३॥	प्राथारिका	३६५।१९॥

प्रेतः	१६८।२२॥	भूतेभ्यः	२४७।३९॥
प्रेतकार्यम्	४४५।१५॥	भूतग्रहविधिज्ञा	३१६।२३॥
प्रेष्या.	२१५।१५॥	मेदका	३६५।१३॥
	फ	भोज्यम्	२१५।१४॥
फलोपजीविनः	३६५।१८॥		म
	म	मज्जगी	४०८।११॥
वालानां त्रिकित्सकाः	३६६।२३॥	मणिकारा.	३६५।१२॥
वार्षनिका.	३६६।२॥	मन्त्रकोविदा	३५६।२॥
बार्हस्पती योग	१४२।११॥	मन्त्रपारगः	७।४॥
बोधका	३६६।२५॥	मन्त्रवित्	७।४॥
ब्रह्म	२०८।४॥	महर्षयः	१३६।४१॥
ब्रह्मचारी	४०८।६३॥	मायूरिका	३६५।१३॥
ब्रह्मवादीः	१७०।२०॥	मालाकारा	३६५।२०॥
ब्रह्मर्षयः	१३८।३६॥	मोदककाराः	३६५।२०॥
ब्राह्मण-	२०३।२८॥	मांसोपजीविन	३६५।२०॥
ब्राह्मणसंघाः	२०३।२८॥	म्लेच्छाः	३२।११॥
भक्तोपजीविनः	३६६।२४॥		२२।५५॥
भद्रपीठम्	८३।३॥		य
भरद्वाजाभमः	३३६।७,८॥	यज्ञ.	१३८।३०॥
	३३७।६॥३००।१॥		३३१।१०॥
	०२९।५३॥		४७८।६॥
	४०१।८०॥	यज्ञशीला.	३००।१२॥
भर्जकारा	३६६।३४॥	यज्या	३४७।४०॥
भर्तृपरायणा	२५४।२१॥	यन्त्रकर्मकृत	३६५।१०॥
भक्ष्यम्	३१५।१४॥	यन्त्रका	३६६।११॥
भवितात्मान.	२०३।१४॥	यमसादनम्	२५६।२७॥१८२।२३६

यवसम्	२०५।१०॥		घ	
	२१५।२५॥	घन्दिन.		२६०।३॥
	२१६।१५॥	घराङ्गना.		५०१।८१॥
यप्रसेनार्धी	२१६।२२॥	घराहरूपेशा		५६५।५॥
यवनाः	३२।११॥	घरुथिनी		३२५।१७॥
युवराज.	३१।२॥	घरुथिनी		३६५।२५॥
	२०।१९॥	घाजपेयिकैः		२०३।२३॥
योगक्षेमः	२०६।१८॥	वाणिजकाः		३६६।२५॥
	२०,२१॥	वानप्रस्थाः		५००।६३॥
यौवराज्यम्	२६।२॥	वारणस्थलम्*		३१०।७।
	२६५।८॥	वारमुष्पाः		७।५०॥
यौवराज्यपदम्	३१७।५२॥	वारुणी		२२५।१२॥
		वारुणीतीर्थम्*		३०३।१२॥
		वारुटाः		३६५।१६७
रजफः	३६५।१५॥	विनय		२१८।१२॥
रथशिता	१२।२८॥	त्रिपर्विद्या		३६६।२२॥
रक्षः	१६८।२२॥	विष्णोः पदम्*		३०३।१५॥
रक्षोघ्नी (ओषधी)	१३७।१६॥	वृक्षरोपका.		३५६।२॥
राजसूयः	५३५।५॥	वेन्नकार		३६५।१५॥
रुद्रः	२१।२९॥			
		वेदाः		५।२३॥१२५२८॥
लेह्यम्	२१५।१४५			१३८।२६॥
लोककृत्व	९२।२०॥			१५२।१५॥
लोकपालाः	१२२।२५॥			१६१।६१
	५३१।१६॥			२०३।२५॥ ३३१।३॥

वेदपारगः	१४२१५॥	शैलूयाः	३६६१७॥
	१६११६॥	शौण्डिकाः	३०५१५॥
वेदमन्त्रानुसारिणी	२०३१२४॥	ध्रुवम्	४६७१२१॥
वेदवित्	३६६१२९॥	धृतिः	४१२३॥२६५१६॥
वेदविद्वांसः	३५६१३॥		४५०११६॥
वेदविद्याः	१११२ ॥		४५५१७१
वेदवेदाङ्गपारगाः	३५४१४॥	श्लोकः	४६६११७॥
	३१११०॥		३६४१६॥
वेदवेदाङ्गशास्त्राणि	६१ ॥	स	
	९१२०॥	सक्तुकाराः	३६६१२४॥
वेश्या	७६०॥	सगरापत्यानि	११५१३७॥
वैदिकाः	३१३॥	सप्तकश्यः	२५०११८॥
वैयाः	३६५११५॥	सप्तशयः	१३०२०॥
वंशकर्मकराः	३५६१३॥	सभाकाराः	३१६१३॥
व्यपेक्षणम्	२०६१२१॥	सरीसृपः	२५३१६१
श		सर्वविद्याविशारदः	८५९॥
शका-	३२१११॥	सर्वशास्त्रांगमेन च	१८१२८॥
शकलोक्तः	२२०१६॥	सर्वशास्त्रवित्	१११२०॥
शर्मरी	२१८१२३॥	सामरङ्गमा	२२०१३॥
	२१६११३॥	साध्या	१३८१२०॥
शापः	२८११४०॥	सुधाकारा	३६५११३॥
शास्त्रम्	५१२३॥१९११९॥	सुरलोकः	४४७१२४॥
	३३८११९॥	सूत्रकर्मविशारदाः	३५६११॥
शास्त्रोपजीवी	३६५११७॥	सूत्रविक्रयिणः	३६५१११॥
शिल्पम्	५१२५॥	सूपकाराः	३६५११६, १९॥
	४३०१५॥	सेनानयः	१७११९॥

सोमपाः	४७८।६॥		ह	
स्तावकाः	३६५।१४॥	हरितीर्थम्*		३११।१४॥
ष्यपतयः	३६६।२॥	हर्म्यम्		२१८।१४॥
स्थूलवायाः	३६५।१७॥			२५८।१॥
जापकाः	३६५।१४॥	हविः		२४७।२७॥
स्तुपा	२६२।१३॥	हस्तिशिक्षा		१२।२८॥
स्वर्गः	३९९।६२॥	हुताग्निहोत्रः		२३६।१२॥
स्वर्णकाराः	३६५।१३॥	हैरण्यका		३६५।१६॥
स्वस्तिकाराः	३६६।२४॥	होतारः		३५५।४॥

(सूची-२)

॥ व्यक्तिविशेषनाम ॥

अ		अलकः	७८।५॥
अगस्त्या	२७९।१३॥	असमजाः	४६७।२२॥
	१६५।१६॥		१७८।१६, १६, २०॥
अङ्घ्रिः	४६५।६॥	असिताः	४६६।१५॥
अग्निवर्णः	११०।३९॥	अंशुमान्	४६७।२३॥
अनरण्यम्	४६५।९॥	आङ्घ्रिः	१६५।३८॥
अन्तकः	११०।३९॥	आदित्यः	१३८।२२, २५॥
अमरेन्दुः	३०९।२७॥		२६३।१॥
अम्यदीपा	४६७।२८॥		२९९।११०
अर्षः	२१३।२४॥		ह
अर्षमा	१३८।२१॥	इत्याहुः	२५।३।२०।१०, १५॥
अलम्बुः	३६५।१७॥		४०।४०॥
	३६८।४६॥		२०७।२५।२१।२१, २१

	१५।२१।४।७।		२०।३८।३।२।०।
	२२।१।१५।।२३।०।		३८।४।६।।
	७, ८ ।।२४।३।१।।		४१।२।।४।२।।१०।।
	२६।४।८।।२८।।५।१।।		३६।०।१।२।।
	२९।९।७।।		३७।१।१।६।।
	६०।१।३।१।।३६।०।१।३।।		३७।६।२।८।।
	३६।८।३।।		३८।३।१।९।।
	३६।३।३।३।।		२८।४।१।।
	४६।५।६।।		४६।७।२।५।।
इन्दुः	३२।२।१।८।।		४१।२।।
	४३।२।७।।		११।०।२।४।।
क	२६।२।७।।	काश्यपः	४६।५।७।८।।
कण्डु	११।५।३।६।।	कुक्षिः	४८।६, ९।।
	४६।५।५।।	कुब्जा	४९।१।२।।५।१।२।९।।
काश्यप.	४६।५।५।।		५६।१।।६।०।३।६।।
	३३।२।४।।		६०।४।२।।६।१।४।६, ५।२।।
	२६।६।१।।		६२।५।४।।
	१७।०।१।९।।		६३। ४।५।।
काकुत्स	४१।२।।४।२।।१०।।		६४।८, ९, १०, १२।।
	२७।८।६, १०।।२०।९।१।५।।		६५।१।५, १६, २२।।
	२१।२।१।८।।२३।७।२।।		२९।४।१।७।।
	२२।९।२।२।।३३।१।२।।		३२।६।२, ६, ८।।
	२३।४।६।।२३।९।१९, १९, १९।।		३२।७।१।३, १४, १७, २३।।
	२१।।३६।०।१।२।।३६।७।		३२।८।२।४, ३।।
	२५।।३७।१।१।।३७।६।	कुवेरा	२४।६।४।।
			८।८।५।। ३६।८।।४।६।।

कृतान्तः	४२९।१०॥		३७५।१०॥३७५॥
	११८।१०॥११९।१२॥		११॥३७५।७॥
	३२६।५॥		३७५।१२, १६॥
	३२९।२, ३, ५, ६॥		३८३।३०॥३८५।७,
	३२६६॥		८॥३८५।१२, १५॥
केकयराजः	३२९।११॥		३८७।१, २, १०॥
	३२०।२१॥		४२८।३, १६॥
केतु.	३२५।४०॥		४५९।३२५॥
कौशिकः	१६-११६॥	गुह्यकः	४१३।२२॥
	ख	गोपः	३६८।४८॥
खड्गी	४६७।२७॥	गोतम	२९९।२॥
	ग		घ
गया	४६१।११॥	घृताची	३९५।१७॥
गार्ग्यः	१६९।१६॥		घ
गुह्यः	२१३।२७।२१४।९॥	चन्द्रमा	२७७।१२॥
	२१५।११, १२, १७, १९॥		३०५।८॥
	२१६।२४, २५, २८॥	चित्ररथः	१६९।१६॥
	२१७।१, ६॥ २१८।२७॥	च्यवनः	४६५।१८॥
	२२०।४, ७।२३०।१, २,		ज
	५, ६, ७।२३१।१२५॥	जनकः	२९६।३२५॥
	२३२।२२, ३०॥	जायालि	१००।१६॥२६३।२॥
	२३३।३९।२४९।१॥		३३९।२०॥
	२५७।७।३७०।१,		४६३।१॥
	५, ६॥३७१।१२,		४७५।२५॥
	१४, १७॥३७२।२४,		४६५।१५॥
	३१॥३७३।१, ७, ८॥	जामदग्न्यः	११५।३३५॥

जैमिनिः	३४३।११॥	प	
तालराजंघः	४६६।१६॥	पद्मा	९१।८॥
तिमिध्वजः	५७।१२॥	पर्वतः	३९८।४८॥
तिलोत्तमा	३६५।१७॥	पुण्डरीकः	३६८।४८॥
तुम्बुरुः	३६५।४८॥	पुरन्दरः	४११।२॥ २६।६॥ ३२३।२२॥
त्रिजटः	१६४।३६, ४१, ४४॥	१२६।१३॥	
त्रिशङ्कुः	१६५।४६॥	पूषा	१३८।२१॥
त्वष्टा	३९५।१३॥	पृथुः	४६६।११॥
		पौलोमी	१६९।१०॥
द		प्रजापतिः	१३७।२०॥
दिवाकरः	२००।२२॥ २४४।१॥	प्रचेतः	४६५।६॥
देवराजः	२६६।१८॥	प्रसुस्तकः	४६७।२८॥
धुमत्सेनः	१५४।६॥	प्रसेनजित्	४६६।१४॥
		व	
ध		बलिः	७६।८॥
धन्वन्तरिः	२२२।२९॥	बाणः	१२४।४१॥ ४६५।६॥
धर्मपालः	३५२।१५॥ २३॥	बृहस्पतिः	१७।२२॥ ४३।२२॥ ४३२।
धाता	१३८।२॥		३८।१३६।२८। ४५२।३१॥
धुन्धुमारः	४६६।१२॥	ब्रह्मा	२८५।२०॥ ४६५।३॥ ४३२।२७॥
ध्रुवसन्धिः	४६६।१४॥		३९५।१८॥ १३९।३६॥ १३७।२०॥
		भ	
न		भरद्वाजः	२३९।२०॥ २४०।२८॥ २४१।
नहुषः	४२।१०॥		३५॥ २४३।२, ९॥ ३९९।२३,
	४६७।२९॥		२४॥ ३९०।६॥ ३९१।१२, १९
नारयाणाः	४५।१, ३॥		३९२।२८, ३१, ३२॥ ३६८।
नारदः	१३८।२८॥ ३६८।४८॥		४४, ४९, ५०॥ ४०१।२१॥

१८॥ ३४६१२०॥ ३५९११॥
 ३६११२३॥ ३६२११॥ ३९०॥
 ७,८॥ ३६५१२५॥ ४३०१२॥
 ४५५१२८॥ ४६५११॥ ४५६१॥
 ७॥ ४७३११६,२१॥ ४७७१॥
 २३॥ ४७५१२॥ ४७६१२,१३॥
 ४८०१४,१०॥

वामदेवः ३११३॥ १७०१९॥ २९६१
 १॥ ३४३१११॥ ४७५१२॥
 वामना ३९८॥४६॥
 वाल्मीकि ४०३११४॥
 वासव २३५१६॥ २४६१३॥ ३३११२॥
 ९२१२०॥ ३२३१२०॥

विकुक्षि ४६५१८॥
 विधाता १३८१२१॥
 विनता १३८१२४॥
 विबुधराज ४२२१३०॥
 विवस्वान् २७६११३॥
 विश्वामित्रः १७०१२०॥ २७७११३॥
 विश्वावसु ३९५११६॥
 विश्वकर्मा ३९५११३॥
 विष्णुः ४५४॥ ७६१८॥ १३७१२०॥
 १६५१४॥
 वृत्रहा १९६११०॥
 वृषिष्णु ४०६१२५॥
 देवस्यत २८६१३५॥

वैश्रवणः ८५१२०१२४१३॥
 श
 शक्र (१४१२५॥ २८६१२५॥ ३२३॥
 २२,२३॥ ३२४१२६॥ ३४८११॥
 ४५६१२८॥ ४६३१२॥

शची ४१११२॥
 शतक्रतुः १४६११५॥ १५११३॥
 १८८१३२॥

शत्रुञ्जयः १६११२॥
 शशविन्धवः ४६६११६॥
 शशी ९४१३॥ ३३५११॥
 शाण्डिल्य १६२११६॥
 शिवः ८५१२०॥ १३७१२०॥
 शिषि ७८१४॥
 शीघ्रगः ४६७१२७॥
 शुक्र १३८,२८॥ ४३३१३॥
 श्री ९११८॥

स

सगर १७८११६,१६॥ ४६६७१२०॥
 सत्यवान् १५४१६॥
 सविता २७५११६॥
 सावित्री १५४१६॥
 सिद्धार्थ १७८११८॥
 सुदर्शनः ४६७१२७॥
 सुचन्या ४३४१६॥
 सुपर्ण १३८१२४, २४५

सुमन्त्रः ३१८॥ ३२१, १६॥ ८०॥
 १५, २०॥ ८१॥ ८६, २९॥
 ८३॥ ८४॥ १७, १६॥ ८६॥
 ३५॥ ८७॥ ४१, ४३, ४६॥
 ९१॥ १०॥ १६॥ ८२॥ १७१॥
 २७॥ १७२॥ ३, ६, ८, ९ ॥
 १७३॥ १८॥ १८॥ १८॥
 १२॥ १९०॥ १६॥ १९१॥ १३॥
 १९३॥ ४६॥ २५॥ १०॥
 २१॥ ४६, ६, ८॥ २२०॥ १०॥
 २२१॥ १२, १७॥ २२२॥ २३॥
 २२४॥ १५, १७॥ २२७॥ १६॥
 २३१॥ २२॥ २३२॥ २८, ३०॥
 २४१॥ १, २, ६॥ २५१॥ २४ ॥
 २५६॥ ३२॥ २६७॥ १, ३॥
 २६६॥ १९, २७॥ २६१॥ २२॥
 २६३॥ २५॥ ३०२॥ ३४३॥
 ११॥ ३५०॥ ३६॥ ३६॥ ४, ६, १०॥ ३६३॥ २२॥
 ३७०॥ ५॥ ३८१॥ ४०६॥
 ३९॥ ४०६॥ ४१॥ ४३०॥ ३४३॥
 ४३३॥ ३८॥ ४४६॥ ४६ ॥
 ४७०॥ १४॥

सुयज्ञः १६०॥ ३२॥ १६१॥ २, ३,
 ६, १०, ११॥
 सुरभिः ३२३॥ १७, १६, २०, २२॥

सुसन्धिः ४६६॥ १४॥
 सूर्यः २७६॥ १०॥ २७८॥ २२॥ ३०४॥ ६॥
 ३३१॥ ४॥ ३७२॥ २३॥ ३८४॥ २॥
 ३६५॥ २०॥ ३६८॥ ४८॥
 सौदास ४६७॥ २५॥
 स्कन्दः १३८॥ २७॥
 स्वयंभूः १५८॥ १५६॥ २६॥ ४६१॥ १२॥
 ह

हृहय ४६६॥ १६॥

(सूची-६)

॥ पुर नाम ॥

अ
 अजकूलम् ३०३॥ १४॥
 अहिस्थलम् ३१०॥ ७॥
 क
 कलिङ्गनगरम् ३११॥ १३॥
 कोसलपुरम् १०१॥ ४०॥
 कोसल २१३॥ २७॥
 ग
 गिरिव्रजम् २६६॥ ६॥ ३०३॥ १६॥
 ३०४॥ १३॥ ३१७॥
 त
 त्रिलिङ्गा ३०३॥ १३॥
 न
 नन्दिग्राम ४८०॥ २, १०॥ ४८१॥ १२, १३, २०, २१॥ ४८२॥ २३॥

प	
प्रयागः २५७३॥३८७४, ६॥ ३८८॥	
१४, १८, २०॥ ३८८५०॥	
व	
षोडानां नगरम्	३०३१४॥
ल	
लौहित्यम्	३१११२॥
व	
वैजयन्तम्	५७१२॥
श	

शृङ्गवीरम्	२१२१६॥
शृङ्गवेरम्	४७७२२, २३॥

ह	
हस्तिनापुरम्	३०२१२॥

(सूची-४)

॥ नदि नाम ॥

आ	
आग्नेयी	३१०३॥
उ	
उत्तारिका	३१०१०॥
ए	
एकशल्या	३१११२॥
क	
कालिन्दी	२४४१२॥
कुलिना	३११११॥
ग	

गङ्गा ८३३॥ २१४१॥ २२०८॥ ॥
२३०४, ८॥ २३११३, १५.

२११२३२४५॥२३८॥२४०॥	
२२॥ २४२११, २०॥ २५७३॥	
२७४१७॥ ३०२१२॥ ३११॥	
१४॥ ३५१५॥ ३६६३१, ३२,	
३३॥ ३६७६६॥ ३६८१, ७॥	
३६९१२॥३८४३३३८५१३॥	
३८६२६, २७॥३८७१॥४६७	
२४॥४७७२२॥	

गोमती २११३, २०॥ ३११२२, १४,
१५, १६॥

च

चन्द्रभागा ३५१५॥

ज

जाह्नवी २२०३॥ ३५८२३॥

त

तमस्ता २०४३५॥ २०५१॥ २०६॥
१२, १५, १६॥ २०७२६, ३०॥
२११५॥

प

पद्मिनी २०८१०॥
पावनी ३१११२॥
पुष्करिणी २३३३६॥

भ

भागीरथी २३८२॥ १७७२६॥

म

मन्दाकिनी २४१३६॥ २४५८॥

२४६१४, १८॥२४८३३॥	शतद्रुद्रा	३०३१५॥	
४०३१२५॥४०७१॥४१४॥	शरदण्डा	३०३१२॥॥	
३, ६॥४१५॥२०, २२, १४॥	शल्यकर्तना	३१०३॥	
४३०॥७॥४३११३॥४४६॥	शाल्मली	३०३१६॥	
३०॥ ४४७३३॥४७५३॥	शिला	३१०३॥	
मालिनी	२४५१४॥	स	
य		सप्तस्पर्धा	३११११॥
यमुना८३३॥२३८२, ६॥२४०१२॥		सरयू १७८२०॥ १७२२३॥ २१०॥	
२४३३॥ २४४१४, १५॥३१०॥		१०॥२१२१२३, १४, १७१२७८	
५, ६॥ ३५१५॥ ४०६४१॥		१७॥ २८२, ४५॥ २८४१२॥	
घ		३५१२, ३, ४॥ ४१५१६॥	
विनता	३१४१२॥	सरस्वती ३०३१२॥३५१५॥३९७॥	
विपाशा	३०३१५॥३५१५॥॥	३१॥	
वीजावटी	३१०३॥	सुदर्शना	२३३३३॥
ज		स्थानवती	३१११२॥
शतद्रुः	३१०२॥ ३५१५॥	हिरण्योदा	३१०३॥

(सूची—५)

॥ पर्वत नाम ॥

क	१८॥ २४८३३॥ ४०३॥
केलासः ३३११७॥४२१५॥८७॥४६॥	११, १३ ॥ ४०७१९ ॥
८८॥६६॥६६१७॥	४०८१० ॥ ४११२ ॥
ग	४१२१७ ॥ ४१३२२;
गन्धमादन २४१३१, ३८॥२४३॥	२६॥ ४१६२०॥ ४१७॥
२५१५५, १०॥२४६॥	१, २५१५२४॥४२६॥

१०, १४, १६॥४३१॥	मलयाः	३८५३॥३९६१२४॥
१३॥४७७५३, ५॥	मेला	३३१२१॥८५१२६॥३३५६॥
म		ह
मन्दरा	२७०३०॥३९६१२४॥	हिमवान्
		२१४१२॥३७२१२७॥

(सूची—६)

॥ वन नाम ॥

आम्रवणम्	अ	२४३१७॥२७८८॥	द	दण्डकारण्यम् १०१ । ३६, ३६ ॥
कदलीवंतम्	क	३६०१३॥		१०३१६३ ॥ ४४२॥
कार्णिकारवनम्		२४५१८॥		२०॥४४३१२३॥
चिन्नकूटवनम्	च	२४५१७॥	नीलम्	२४४१९॥
चैत्ररथम्		३१०१४॥३६८५०॥	पलाशवनम्	२७८१८॥
			प्रयागवनम्	३८६१२७॥
तपोवनम्	त	२०६१२०॥	शल्यवनम्	श
			हैमवतं वनम्	३१०१९॥
				ह
				४१९१३०॥

(सूची—७)

॥ देश नाम ॥

अङ्गः	अ	६८१५॥	काशि	६८१५॥
अमरकण्टकः		३१०३॥	कुटक्षेत्रम्	३०३१२॥
उत्तरकुसु	उ	३६६१३॥	कुरुजाङ्गला	३०२१२॥
			केकय	६०३१८॥४४४१५॥
			केरलः	३५६१७॥
	क	३५६१७॥	कोसलः	६८ । १५ ॥ १३० । ७ ॥

तोरणाः	त	३१०।७।	घंगः	घ	६८।१५।
पञ्चालः	प	३०२।११।	सामुद्राः	स	३५६।७।
मगधः	म	६८।१५।	सिन्धुः		६८।१५।
			सुरसावर्तयः		६८।१५।
			सौवीरः		६८।१५।

(सूची—८)

॥ शस्त्रास्त्र नाम ॥

असि. १२३।३७ ॥ ४२६।३ ॥	अ	टङ्कः	ट	३५६।८।
४२८।३।			द	
असिरा १२३।३५।		दात्रम		३५६।२।
अश्वकर्णः ४३१।१८।			ध	
इ		घनुः १२३।३५ ॥ १५९।१९। १६०।		
इपीकास्त्रम् ४२१।४५, ४७। ४२२।		२५, २८। १६६।६। ४२५।३१।		
५३ ॥		४२६।३।		
क		न		
कार्मुकः ६०।२ ॥ ४२५।२० ॥		निर्हिंसः ३००।१६। ३६३।२७।		
४३१।१९।		प		
कुदालः ३५६।९।		पिटक		१५९।१९।
कुठारः ३५६।८।		प्रासः		६०।१।
ख		श		
यनित्रम् १५९।१९।		शरः २३३।५। ४२५।३१। ४२२।३।		
खड्ग. १३०।५। १५९।१९।		शरासनम्		१३३।४०।

(सूची—६)

॥ वृक्ष-लता आदि नाम ॥

अ	द
अगुरुः ३४६।३०॥	दीपः ४६।१८॥
अशोकाः ४१६।२७, २८, ३०॥	न
अश्वत्थः ३९८।५१॥	न्यग्रोधः २३०।२॥ २३३।३८॥ २३४।
आमलकाः १४६।१८॥ ३६६।५३॥	१॥ २३८।१॥ २४४।५॥
आमलक्यः ३९६।३०॥	२४४।१५, १८॥
इ	प
इक्षुदः १४९।१८॥	पनसः २४५।९॥ ३९६।३०॥
इक्षुदी २१४।६॥ ३७४।१४॥ ३८०।	पलाशः २४३।७।
२३॥ ३८१।१॥	पियालः १४६।१८॥
इक्षुः ३६६।५७॥	व
क	वदरः १४६।१८॥
कपित्थः ३९६।३०॥	विल्वः २४५।९॥ ३९६।३०॥
कुन्दः २८९।६५॥	भ
किशुकः २४५।७॥	मल्लतकः २४५।६॥
ख	म
चन्दनम् ३४६।२६॥	मधुकाः २४३।७॥
चूतः ३६६।३०॥ ४१६।१४॥	र
ज	रसालः ३९८।५१॥
जम्ब ३६६।३०॥ ३९९।५३॥	व
त	वज्रलः ३६६।५३॥
तालः ३६६।५३॥ ४३१।१८॥	वटः २३३।३२॥
तिन्दुकः १४९।१८॥ २४५।९॥	

	श	स
शिरापः	३९९।५३॥	समूलचैत्यम् ३०३।१३॥
श्यामः	२४३।५॥१४४।१५॥	साल ३५६।६॥४१८।१२।४३।१८॥
श्यामाक	१४६।१८॥	

(सूची—१०)

॥ उपमार्ये ॥

अथाधिशिश्ये पतितेव किन्नरी	६६।२४॥
अनिन्ददात्मनात्मानं सुरां पीत्वेव वेदवित्	१७१।२६॥
अवेक्षमाण सस्नेह चक्षुषा प्रपियन्निव	२०१।५॥
आदाय तानि वैदेही सपत्ना श्रीरिद्याभवत्	२३३।३७॥
इति नाग श्धारण्ये सहसा बन्धनं गतः	३२५।३९॥
उपासाञ्जकिरे प्रीताः महेन्द्रमिव देवताः	२२।५६॥
कामयानमिव स्त्रियः	४३७।३६॥
कुचेरमिव नैर्ऋता	२४।६४॥
क्रौञ्ची यथार्तामिव सारसस्त्री	३२८।३०॥
गन्धर्वराजप्रतिमम्	३२।१३॥
गुणैर्विकृते रामो दीप्तैः सूर्य इवांशुभि	१७।२४॥
गौर्विवत्सेव विह्वला	२८५।२८॥
ग्रहेणाभ्युदितामेका रोहिणी पीडितामिव	४७८।३॥
चरणौ पद्मचक्षुसौ	२६२।१६॥
झिष्ठिकाचिह्नैर्दीर्घै र्दन्तीव समन्ततः	४१७।१०॥
तमोवृता घौरिव नष्टमास्करा	६६।२५॥
प्रासयिष्यति मा भूयः कृष्णाहिरिव वेष्टमनि	१६६।३३॥
दिल्लीपनहुपोपम	३६०।१२॥
द्विव्यतोयाभिवाहिन्या मन्दाकिन्या यथा दिवम्	२३३।२५॥

धन्वन्तरिरिव ग्रणम्	३२३।२९॥
नरनारायणाविव	२५४।१०॥
निशश्वास महासर्पो विलस्य इव रोपितः	१२०।२॥
निशाकरपरिभ्रष्टां ताराहीनां निशामिव	२४९।६॥
पपात सहसा भूमौ कूलभ्रष्ट इव द्रुमः	३७८।२॥
पर्वसूदीर्णवेगस्य सागरस्येव गर्जतः	४७।२७॥
पिता पुत्रानिवोरस्तान्	३८।३४॥
पीतसोममिवाध्वरे	२७०।२८॥
पुरन्दरेणेव यथामरावती	१९६।१९॥
पूजयामास तां देवीमदितिं मघवानिव	१०८।१३॥
बृहस्पतिरिवेन्द्रेण सुधर्मां	३४२।६॥
भूमिकम्पादिव द्रुमः	३७८।४॥
मत्तमातङ्गगामिनम्	२२।१३॥
मरुतामिव वासवः	३२।१२॥
मरुद्भिरिव वासवः	४५६।१९॥
यतीव संप्रमत्तः	२८२।४८॥
यदृच्छया देवलोकात्संप्राप्तमिव वासवम्	१८७।१८॥
रराजामलताराढ्यं शारदं मगनं यथा	३२७।१६॥
लक्ष्मीं शीतांशुमानिव	३५९।५॥
लतामिव विनिष्कृत्तां पतित्तां देवतामिव	६७।५॥
लूनपक्षाविव द्विजौ	२८३।३॥
विजलां पद्मिनीमिव	२४२।५॥
विमलप्रहनत्तत्रा शारदी धौरिवेन्दुजा	३३।२२॥
विलपन् प्राविशद्राजा गृहं सूर्य इवाम्बुदम	१६८।३३॥
निवेश पार्थिवः, शशीव तारागणमण्डितं नभः	४४।२६॥
न्यपेतचन्द्रेव च निष्प्रभा निशा	२९८।५४॥

व्याघ्राभिपन्नो बलवानिन्द्रोऽक्षः

शचीपतेः केतुरिवोत्सवक्षये

सहसा चलितां स्थानान्महीं पुण्यक्षयादिव

सिंहेनेव गिरेर्गुहा

सिंहो यथा पर्वतकन्दरस्थः

स्रवद्भिर्मर्त्ययं शैलः स्रवन्मद इव त्रिपः

हव्यवाहमिवाध्वरे

हंस्तानामिव पङ्क्तयः

७३५४॥

३२५४०॥

४७८॥

२६२१९॥

३२११९॥

४१२१२॥

३५५१९॥

२०३१२९॥

टयानन्द महाविद्यालय, संस्कृत-ग्रन्थमाला ।

* प्रकाशित ग्रन्थ *

१—अथर्ववेदीया पञ्चपटलिका	१॥)
२—ऋग्वेद पर व्याख्यान	१॥)
३—जैमिनीय उपनिषद् ब्राह्मणम्	१॥)
४—दन्त्योष्ठविधि	॥)
५—अथर्ववेदीया माण्डूकी शिक्षा	१)
६—अथर्ववेदीया बृहत्सर्वानुक्रमणिका	४)
७—रामायणम्, अयोध्या-काण्डम् (समग्र)	७॥)
८—वैदिक कोष प्रथम भाग	१२)
९—काठकगृह्यसूत्रम् with extracts from three com Ed by Dr. W, Caland	७)

* यन्त्रस्थ *

- १—चारायणीय शाखा मन्त्रार्पाध्याय
२—ऋग्वेदभाष्य-उदीयाचार्यवृत्त [सायण से प्राचीन]



SUPDT. RESEARCH DEPARTMENT,

D A V College, Lahore.